॥ श्रीचंद्रप्रभस्वामिने नमः ॥

याद रखने योग्य उपयोगी सूचना.

१–आत्मार्थी हे! भव्यजीवों खरतरगच्छ, तपगच्छ, कमलागच्छ, अंचलगच्छ, पायचंदगच्छादिकके आग्रहकीबातँकरनेमें आत्मकल्याण मुक्तिनहींहै, किंतु जिनाज्ञानुसारभावसे शुद्धधर्मक्रियाकरनेमें मुक्तिहै.इसलिये अपने २ गच्छकी परंपरा रूढीको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी परीक्षाकरके उसमुजबधर्मकार्यकरो उससे श्रेयहो.

२–श्रीसर्वज्ञ भगवान्के कहे हुए अतीवगहनाशयवाले, अपेक्षा सहित, अनंतार्थयुक्त जैनशास्त्र अविसंवादीहैं, मगर "कत्थइ देसग्गहणं, कत्थइ घिप्पंति निरवसेसाइं । उक्कमकम जुत्ताइं,कारण वसओ निरुत्ताइं ॥ १ ॥" श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रकी वृत्तिके इस महावाक्य मुजब–सामान्य, विशेष, ओपमा, वर्णनक, उत्सर्ग, अपवाद, विधि, नय, निश्चय, व्यवहारादिक संबंधी शब्दार्थ, भावार्थ, लक्ष्यार्थ, वाच्यार्थ, संबंधार्थादि भेदोंवाले गंभीरार्थके भावार्थ संबंधी शास्त्रपर्यायों समझे बिनाही सभी अविसंवादी सर्वज्ञशासनमें कितने गच्छोंके भेदोंका आग्रह पडगयाहै. देखो–"गच्छना भेद बहु नयण निहालतां, तत्त्वनीघातकरतां न लाजे । उदरभरणादि निजकाज करतांथकां, मोहमडिया कलिकालराजे ॥ १ ॥ देवगुरुधर्मनी शुद्धि कहो किमरहे, किमरहे शुद्ध श्रद्धान आणो । शुद्धश्रद्धाविना सर्वकिरियाकरी, छारपर लिपणो तेह जाणो ॥ २ ॥ पापनहीं कोई उत्सूत्रभाषण जिस्युं, धर्मनहीं कोई जगसूत्र सरिखो । सूत्र अनुसारें जे भविक किरिया करें, तेहनो शुद्ध चारित्र परिखो ॥ ३ ॥ इत्यादि बातोंको विचार कर आत्मार्थियोंको अपना असत्य आग्रहको छोडकर अपनी आत्माको हितकारी, सुखकारी होवे, ऐसा सत्य ग्रहण करना चाहिये.

३–कितनेक मुनिमहाशय वर्षोंवर्ष पर्युषणापर्वके व्याख्यानमें अधिकमहीनेके व श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोंके निषेध संबंधी चर्चा उठाते हैं, उससे भोले लोगोंको अनेक तरहकी शंकायें उत्पन्न होतीहैं, और कितनेही महाशयतो इन बातोंमें तत्त्वदृष्टिसे सत्यासत्यका निर्णय किये बिनाही अपने पक्षको सत्य मान्य करके दूसरोंको झूठे ठहरानेका एकांत आग्रह करते हैं । शास्त्रोंमें एकांत आग्रहको और

[illegible] इत्यादि सब कामोंको सिद्धान्तकी बताई है, उसका विस्तार
करनेके लिये और शास्त्रानुसार सत्य बातोंका निर्णय बतलानेके लिये
[illegible] सब बातोंका समाधान सहित मैंने यह ग्रंथ बनाया है,
[illegible] किसी गच्छका नवीन विवाद खडा करनेके लिये न
[illegible] इसलिये इस ग्रंथके बनानेमें सूत्रोंकी, टीकाओंकी, [illegible]
[illegible] विशेष [illegible] मुनि महाराजोंकी साक्षीपूर्वक है, पाठकगण
इसको [illegible] किसी तरहका [illegible] न समझें, मैंने तो शब्दोंकी [illegible]
[illegible] किया है

४- सूत्र-टीकादि [illegible] अनुसार धर्मकार्य करें,
तो ही आत्म कल्याण [illegible] नहीं होवे और आपही लोगोंकी
[illegible] प्रकरणों होनेसे भोले जीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्य
बातकी [illegible] होना बहुत मुश्किल होरहा है. और अविसंवादी सब
आगम-पंचांगी [illegible] सर्वशास्त्रोंके मानने वालोंमें पर्युष-
णा-व कल्याणक-सामायिकादि विषयों सबंधी शास्त्रकारमहाराजों-
के अभिप्रायको न समझनेसे व्यर्थही विवाद होरहाहै, उनका निर्ण-
य करनेके लिये और सत्यअभिलाषी सुज्ञजनोंको सत्यबात समझा-
नेके वास्ते मैंने यह ग्रंथ बनायाहै। मगर किसी गच्छके
साधु-श्रावकोंको किसी अन्य गच्छमें ले जानेके लिये नहीं बनाया.
किसी गच्छमें रहो, परंतु आपसमें राग द्वेष निंदा ईर्षा मत्सरादि-
कको छोडकर शुद्ध श्रद्धापूर्वक आत्मिक कल्याण करनेके
लियेही इस ग्रंथकी रचना करनेमें आयी है. इसलिये पक्षपात छोड-
कर इस ग्रंथको वारंवार पूर्णरूप बांच, विचार, मनन कर सत्य समझ-
करके शांति पूर्वक शुद्ध श्रद्धासहित अपना आत्मसाधन करके आ-
त्मार्थी पाठकगण मेरे परिश्रमको सफल करेंगे.

५- जिनाज्ञानुसार शुद्धश्रद्धापूर्वकभावसे धर्मकार्य करनेका योग
महापुण्योदयहोवे तब प्राप्तहोताहै, इसलिये इसमें लोकपूजा बहुत
समुदायवगैरहकी मर्यादानुसार करना योग्यनहींहै. इसकालमें आत्मा-
र्थीभद्रही होते हैं. कदाचित् गच्छ-गुरुपरंपरा-बहुत समुदाय वगै-
रह व्यवहारोंसे आज्ञानुसार क्रियाकरनेका योग न बनसके तोभी
शुद्धश्रद्धा-प्ररूपणा तो आज्ञानुसार सत्यबातोंकीही करना योग्यहै, उ-
ससे भवांतरमें सुलभबोधिकी प्राप्ति हो सकेगी. मगर गुरु-गच्छ-
लोकसमुदायके कदाग्रहसे जिनाज्ञा बाहिर क्रिया करनेहुए आज्ञानुसार
द्वेष करनेसे भवांतरमें दुर्लभबोधिकी प्राप्ति होतीहै,

इसलिये भवाभिरुयोंको गुरु गच्छ व लोक समुदायादिकका पक्षरखनेके बदले जमालिके शिष्योंकी तरह जिनाज्ञाका पक्ष रखनाही योग्यहै, अर्थात्-जैसे-अपने गुरु जमालिके उत्सूत्रप्ररूपणाके पक्षकोछोडकर बहुत भव्यजीव भगवान्‌की आज्ञामुजब माननेलगगये,तैसेही-अभीभी आत्मार्थियोंको करना योग्य है. यही सम्यक्त्वका मुख्य लक्षण है.

६-मेरे बनाये इस एक ग्रंथके सामने अनेकग्रंथ लिखेजानेकी मेरेको कोई परवाह नहींहै, देखो-जैसे एकवीतराग सर्वज्ञभगवान्‌के परोपकारी जैन आगमोंके विरुद्ध हजारों मतवादी अनेक तरहसे अपना २ कथन करते हैं. मगर तत्त्व दृष्टिसे आत्महितकारी सत्य बात क्या है, यही देखा जाता है. तैसेही- मेरे बनाये इस ग्रंथपरभी १-२ नहीं; परंतु १०-२० लेखकभी अपना २ विचार सुखसे लिखें. मगर जिनाज्ञानुसार सत्य बात क्या है. यही देखना है. झूठे मतवादियोंका यही स्वभाव है, कि- हजारों सत्य बातें छोड देते हैं, और अतिशयोक्तिमें या क्रोधमें आकर क्लेश बढानेलगजातेहैं, मगर अपनी बात को छोडते नहीं. वैसे इस ग्रंथपर न होना चाहिये यही प्रार्थनाहै.

७- इस ग्रंथमें पर्युषणा संबंधी अधिक महीनेके ३० दिनोंकी गिनतीसहित आषाढचौमासीसे ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करनेका तथा श्रावण भाद्रपद आसोज अधिक महीने होवे तब पर्युषणाके पीछे कार्तिकतक१०० दिन ठहरनेका खरतर गच्छ,तपगच्छ, अंचलगच्छ,पायचंदगच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनानुसार और निशीथचूर्णि, बृहत्कल्पचूर्णि,पर्युषणाकल्पचूर्णि, स्थानांग सूत्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रपाठानुसार अच्छी तरहसे साबित करके बतलाया है। जैसे अधिक महीना होवे तोभी ५० दिने पर्युषणापर्व करनेकी सर्व शास्त्रोंकी आज्ञा है, वैसेही-अधिकमहीना होवे तोभी पीछे हमेशा ७०दिन रहनेकी आज्ञा किसीभी शास्त्रमें नहीं है. समवायांगसूत्रका पाठ तो सामान्य रीतिसे अधिक महीना न होवे तब ४ महीनोंके वर्षाकाल संबंधी है, उसका भावार्थ समझे विना अधिकमहीना होवे तब भी पांच महीनोंके वर्षाकालमेंभी उसी सामान्य पाठको आगे करना और १०० दिन पीछे रहनेसंबंधी अनेक शास्त्रोंके विशेष पाठोंकी बातको छोड देना यह सर्वथा अनुचित है।

८-लौकिकटिप्पणामें दो श्रावणादिमहीने होवे,तब पांचमहीनोंका वर्षाकाल मान्य करना यह बात अनुभवसिद्ध प्रत्यक्ष प्रमाणानुसार

पनेमें प्रकट होनेकालिखाहै. और 'महापुरुष चरित्र' में तथा 'त्रिषष्ठि-शलाका पुरुष चरित्र' आदिक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी ८२ दिन गये बाद इन्द्रका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्‌को देखकर नमुत्थुणं किया और त्रिशलामाताके गर्भमेंपधराये, जब त्रिशलामाता-ने १४महास्वप्न देखे,तब खास इन्द्रने त्रिशलामाताके पासमें आकर तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, और फजरमें स्वप्न पाठकोंसेभी तीर्थं-कर पुत्र होनेका सुनकर सबको तीर्थंकर भगवान्‌के उत्पन्न होने-की मालूम होगई. इसलिये कल्पसूत्रमें जो नमुत्थुणंका पाठ है, सो-भी आसोज वदी १३ के दिन संबंधी है, किंतु आषाढ शुदि६ के दि-न संबंधी नहींहै, क्योंकि देखो- 'नमुत्थुणं करके त्रिशलामाताके ग-र्भमें पधराये' ऐसा कल्पसूत्रादिमें खुलासालिखाहै, मगर आषाढ शु-दी६को आसनप्रकंपनसे नमुत्थुणं किया और फिर उसके बादमें ८२ दिन गये पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये. या ८२दिन तो इन्द्रको विचारकरते चलेगये. बा पूरे ८२ दिन गयेबाद आसोज वदी १३ को फिर आसन प्रकंपनसे त्रिशलामाताके गर्भमेंपधराये. अथवा ८२दिन ठहरकर पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये. ऐसे पाठ किसीभी शा-स्त्रमें नहींहै. मगर ८२दिन तक तो मालूमभी नहींपडी, परंतु ८२दिन जाने बाद आसन प्रकंपनहोनेसे मालूम पडी, तब नमुत्थुणं किया और उसी रोज पधराये, ऐसे पाठ तो "महापुरुष चरित्र" में तथा "त्रि-षष्ठिशलाका पुरुष चरित्र" आदि अनेक प्राचीन शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रत्यक्ष मिलतेहैं, इसलिये आसोज वदी १३ कोही 'नमुत्थुणं' वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेसे आगम पंचांगीकी श्रद्धावालोंको व श्रीवीरप्रभुकी भक्तिवालोंको यह दूसरा च्यवनरूप कल्याणक मान्य करनाही उचित है, बस ! आसोज वदी १३ कोही नमुत्थुणं करने वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेका मा-न्यकरो या आषाढ शुदी ६ को नमुत्थुणं करने वगैरह च्यवन कल्या-णकके तमाम कार्य होनेका खुलासा पूर्वक शास्त्रपाठ बतलावो,व्यर्थ विवाद करनेमें कोई सार नहीं है.

"११- श्रीआदीश्वर भगवान्‌के राज्याभिषेकमें तो कोईभी क-ल्याणकके लक्षण नहीं हैं, मगर गर्भापहारसे गर्भ संक्रमणरूप दूस-रे च्यवनमें तो च्यवन कल्याणकके सर्व लक्षण प्रत्यक्ष मौजूदहैं, इ-सलिये उसका भावार्थ समझे बिनाही राज्याभिषेककी तरह गर्भाप-हारकोभी कल्याणकपनेका निषेध करना यहभी बे समझ है।

१२- श्री आदीश्वरभगवान् १०८ मुनियोंके साथ 'अष्टापद'पर मोक्ष पधारे सो अच्छेरा कहतेहैं, तोभी उनको मोक्ष कल्याणक माननेमें कोईभी बाधा नहीं आसकती वैसेही-श्रीवीरप्रभुकेभी देवानंदा माताके गर्भमें आनेसे त्रिशलामाताके गर्भमें जाना पड़ा, सो अच्छेराकप कहते हैं, तोभी उनको च्यवनकल्याणक माननेमें कोईभी बाधा नहीं आसकती. इसलिये अच्छेरा कहकर कल्याणकपनेका निषेध करना यहभी बे समझही है.

१३- और श्री मल्लिनाथस्वामि स्त्रीपनेमें तीर्थंकर उत्पन्न हुएहैं, तोभी अनंतीस तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे पुरुषपनेसे कहनेमेंआतेहैं, वैसेही श्रीवीरप्रभुकेभी छ कल्याणक आचारांग-स्थानांगादि आगमोंमें विशेषतासे खुलासापूर्वक कहेहैं, तोभी 'पंचाशक' में सर्व तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे पांच कल्याणक कहेहैं. उसका भावार्थ समझे बिनाही सर्वजिनसंबंधी पांचकल्याणकोंका सामान्य पाठको आगे करके आचारांग-स्थानांगादि आगमोंमें कहे हुए विशेषतावाले छ कल्याणकोंका निषेधकरना यह भी बे समझका स्पष्टही आग्रह है।

१४-इसतरहसे आगमपंचांगीके अनेक शास्त्रानुसार तीर्थंकर, गणधर, पूर्वधरादि प्राचीन पूर्वाचार्योंके कथनमुजब गर्भापहारको दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपना प्रत्यक्षसिद्ध होनेसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजने चित्तोड़में छठे कल्याणककी नवीनप्ररूपणाकी, पहिले नहीं थी, ऐसा कहनाभी बे समझसे स्पष्टही है।

१५-और गर्भापहाररूप दूसरे च्यवनकल्याणकके अतीव उत्तम कार्यको 'सुबोधिका' टीकामें अतीव निंदनीक कहकरके निरादरकीहै, सोभी भगवान्की आशातनाकारक होनेसे सम्यक्त्वको व संयमको हानीपहुंचानेवालीहै, उसका तत्त्वदृष्टिसे विचारकियेबिनाही विद्वान् कहलानेवाले सर्व मुनिमहाराज वर्षोवर्ष पर्युषणापर्वके मांगलिक रूप व्याख्यान समय ऐसी अनुचित बातको बांचते हैं, यह बडीही शर्मकी बात है, भवभीरु आत्मार्थियोंको ऐसा करना कदापि योग्य नहीं है। इन सर्व बातोंका विशेष निर्णय प्रथम भागकी भूमिकामें और इस ग्रंथके उत्तरार्द्धमें अच्छी तरहसे लिखनेमें आयाहै, उनके बांचनेसे सर्व बातोंका निर्णय हो जावेगा.

१६- सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेसंबंधीभी आवश्यकचूर्णि-बृहद्वृत्ति-लघुवृत्ति-नवपदप्रकरण विवरणरूपवृत्ति-दूसरीवृत्ति-श्रावकधर्मप्रकरणवृत्ति-

इसग्रन्थके उत्तरार्द्धके तीसरे खंडकी- जाहिर खबर.

१-इसग्रंथके उत्तरार्द्धके तीसरेखंडमें आगमादि अनेकप्राचीन शास्त्रानुसार,व चंद्रगच्छ,वडगच्छ,खरतरगच्छ,तपगच्छ,अंचलगच्छ, पायचंदगच्छादि सर्वगच्छोंके पूर्वाचार्योंके बनायेग्रंथानुसार श्रीवीर प्रभुके छ कल्याणक मान्यकरनेका अच्छी तरहसे सिद्ध करके बतलाया है. और शांतिविजयजीने 'जैनपत्र'में, विनयविजयजीने 'सुबोधिका'में, कांतिविजयजी-अमरविजयजीने 'जैनसिद्धांत सामाचारी' में, श्रीआत्मारामजीने 'जैन तत्त्वादर्श'में, धर्मसागरजीने 'कल्पकिरणावली' 'प्रवचन परीक्षा' वगैरहमें जो जो छ कल्याणक निषेध संबंधी शंकायें की हैं. और शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझे विनाही अधूरे२ पाठ लिखकर उनके खोटे२ अर्थ करके भोले जीवोंको उलटा मार्ग बतलानेकी कोशिश की है, उन सर्वबातोंका समाधान सहित निर्णय इसमें लिखनेमें आया है।

२-और श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजसे वसतिवासी-सुविहित-खरतर बिरुदकी शुरुयात हुयीहै,इसलिये श्रीनवांगीवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज खरतर गच्छमें हुए हैं, यह बात प्राचीनशास्त्रानुसार तथा तपगच्छके पूर्वाचार्योंके बनाये ग्रंथानुसार सिद्ध करके बतलायाहै। और कोई महाशय श्रीजिनदत्त सूरिजी महाराजसे संवत् १२०४में खरतरगच्छकी शुरुयातहोनेका कहतेहैं, सोभी सर्वथा असत्य है. क्योंकि-इन महाराजसे सं. १२०४में खरतरगच्छकी शुरुयात होनेका कोईभी कारण नहीं हुआ है. व्यर्थ झूठे आक्षेप करने बडी भूलहै, देखो-१२०४में तो खरतर गच्छकी तीसरी शाखा हुईहै.इस बातका अच्छीतरहसे खुलासा इसग्रंथमें करनेमें आयाहै.

३-और जैनशास्त्रोंकी यह आज्ञा है, कि-यदि अपनी गच्छ परंपरामें ३-४ पेढीके आगेसेही शिथिलाचार चला आता होवे, तो क्रिया उद्धार करनेवाले दूसरेगच्छके अन्यशुद्ध संयमीके पासमें क्रिया उद्धार करे. अर्थात्- उनके शिष्य होकरके शुद्ध संयम पाले, उससे पहिलेकी शिथिलाचारकी अशुद्ध परंपरा छुटकर, क्रिया उद्धार करवानेवाले गुरुकीशुद्धपरंपरा मानीजावे. देखो जैसे-श्रीआत्माराम जीने ढूंढियोंके ढुंढमतको छोडकर तपगच्छमें दीक्षाली है. इसलिये यद्यपि पहिलेढूंढियेथे तोभी उनकीपरंपरा ढूंढियोंमेंनहींलिखी जावे; किंतु तपगच्छमेंही लिखीजावे. तथा कोई शिथिलाचारी यति अपने गुरु व गच्छको छोडकर अन्यगच्छवाले शुद्धसंयमीके पासमें क्रिया

खरतरवाले (जिनसे दीक्षा लीथी) उनकी मालिकोंकी अशुद्धपरंपरा छु-ड़ाकर जिनाज्ञानुसार पाटमें किस प्रकार लिया होगा. उन्हीं गुरुओंसु-द्ध परंपरा कहेंगे ॥ इसी तरहसे श्रीखरतरगच्छमें जयचंद्रसूरिजी म-हाराजने तपगच्छकी व सभी तपगच्छ परंपराको शिथिलाचारी अशुद्ध जानकर छोडदियाथा और श्रीखरतरगच्छकी शुद्ध परंपरावाले शुद्ध संयमी श्रीदेवभद्रोपाध्यायजीके पासमें किस प्रकार लियाथा,क्यों-कि-उनके शिष्य होकर शुद्ध संयमी बने थे और उनके बादमें बहुत तपस्या करनेसे 'तपा' बिरुद मिलाथा उस रोजसे इस महाराजकी समुदायवाले तपगच्छके कहलाये गये इसलिये श्रीदेवेंद्रसूरिजीम-हाराजने और श्री क्षेमकीर्तिसूरिजी महाराजने श्रीजगचंद्रसूरिजीम-हाराजकी पहिलेकी शिथिलाचारकी वडगच्छकी अशुद्ध परंपरा छो-डना छोडकर, उनमहाराजकी चैत्रवालगच्छकी शुद्ध परंपरा अपनी बनाई 'धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति' में और 'श्राद्धदिनकृत्य भाष्य वृत्ति' में लिखीहै वही शुद्ध परंपरा लिखना जिनाज्ञानुसार है, मगर पहिलेकी वडगच्छकी अशुद्ध परंपरा लिखना जिनाज्ञानुसार नहींहै.यह बात न्यायवाले अच्छी तरहसे समझसकतेहै जिसपरभी अभी वर्तमानि-क तपगच्छके विद्वान् मुनिमंडल देवेंद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी लिखी हुई जिनाज्ञानुसार चैत्रवालगच्छकी शुद्ध परंपराको छोड देते हैं.और जिनाज्ञाविरुद्ध शिथिलाचारी वडगच्छकी अशुद्ध परंपराको लिखते हैं. यह सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है. इन सर्व बातोंका विस्तार पूर्वक खुलासा इस ग्रन्थके उत्तरार्द्धमें लिखा गयाहै. सोभी छपकर तैयार होगयाहै. इस पूर्वार्द्धके प्रकट हुएबाद, थोडे समयमें उत्तरा-र्द्धभी प्रकट होगा. सो संपूर्ण तया वांचनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा.

विद्वान् सर्व मुनिमंडलसे विनति.

श्रीमान्-विजयकमलसूरिजी, विजयधर्मसूरिजी, विजयनेमि-सूरिजी, बुद्धिसागरसूरिजी, विजयवीरसूरिजी, विजयनीतिसूरिजी विजयसिद्धिसूरिजी, आनंदसागरसूरिजी, उपाध्यायइंद्रविजयजी, प्र० श्री कीर्तिविजयजी-मंगलविजयजी, पं० गुलाबविजयजी-धर्मविजयजी-केसरविजयजी-दानविजयजी-मणिविजयजी- अजितसागरजी, श्री हंसविजयजी-कपूरविजयजी- वल्लभविजयजी-कल्याणविजयजी-ल-ब्धिविजयजी-आनंदविजयजी आदि विद्वान्सर्व मुनिमंडलसेविनति.

आप यह तो जानतेहीहैं, कि-श्रीनिशीथचूर्णिमें वर्षाऋतुमेंही मु-

रमी देव द्रव्य संबंधी सर्व शंकाओंका समाधान व साधारण द्रव्यकी वृद्धिके लिये उपायवगैरह बहुतबातोंके खुलासे समाधान 'देवद्रव्य निर्णय' नामा पुस्तकमें लिखनेमें आवेंगे.

निवेदन और उपकार.

इसग्रंथकी कोईबात समझमें न आवे, या बांचते २ कोई शंका होवे, तो इस ग्रंथके कर्त्ताको लिखकर खुलासा मंगवानेका सबको हक है, ग्रंथ संबंधी सब तरहका जवाबदार लेखक है.

इस ग्रंथमें अनुमान ३०० शास्त्रोंके प्रमाण बतलाये गयेहैं, इस ग्रंथके बनवाने संबंधी शास्त्रोंके संग्रह करने वगैरहमें, श्रीमान् जिनयशःसूरिजीमहाराज, श्रीमान् शिवजीरामजीमहाराज, श्रीमान्जिनचारित्रसूरिजीमहाराज, श्रीमान् कृपाचंद्रसूरिजीमहाराज, पन्यासजी श्रीमान् केशरमुनिजीमहाराज, पं० श्रीमान्सुमानमुनिजीमहाराज और कलकत्तानिवासी उ. श्रीमान्जयचंद्रजीगणि व रायबहादुर बद्रीदास जौंहरीवगैरहोंने जो जो मदतदीहै, उनका मैं उपकार मानता हूं.

संवत् १९७८ वैशाखसुदी ३. हस्ताक्षर मुनि-मणिसागर.

विनाकिंमतभेटसे पुस्तक मिलनेके नाम व स्थान.

यहग्रन्थ एकहजार पृष्ठकाबड़ाहोनेसे दो विभागमें प्रकटकियाहै.

१ बृहत्पर्युषणा निर्णय पूर्वार्द्ध, प्रथम-दूसरा खंड.
२ बृहत्पर्युषणा निर्णय उत्तरार्द्ध, तीसरा खंड.
३ लघुपर्युषणा निर्णयका प्रथम अंक.
४ प्रश्नोत्तर विचार. ५-६-७ प्रश्नोत्तर मंजरीके १-२-३ भाग.
८-९ दर्शनरहस्य दर्पण १-२ भाग. १० आत्मभ्रमोच्छेदन भानुः.

यह ग्रन्थभी छपनेवाले हैं.

१ देवद्रव्यनिर्णय. २ व्याख्यान समीक्षा. ३ प्रवचनपरीक्षा निर्णय.

१ श्रीमद् अभयदेवसूरि ग्रन्थमाला कार्यालय, ठे० श्रीजैनश्वेतांबर मित्रमंडल कैनिंगस्ट्रीट नं २१, मु०--कलकत्ता.
२ श्रीमद् अभयदेवसूरि ग्रन्थमाला कार्यालय, ठे० बड़ा उपाश्रय देश-मारवाड़, मु०--बीकानेर.
३ श्रीजिनदत्तसूरिजी ज्ञानभंडार, ठे० गोपीपुरा-शीतलवाडी देश-गुजरात, मु०--सुरत.
४ जौंहरी माटूमलजी धनपतसिंहजी भणशाली, सुदर्शनबिल्डिंग ठे० फतहपुरी, मु०-- दिल्ली.

इस ग्रन्थकारके गुरुजी

श्रीमन्मुनिवर्य श्रीसुमति सागरजी महाराज।
ज्ञाति ओसवाल, नागौर मारवाड़।
जन्म संवत् १८१७। दीक्षा संवत् १८४४।

जाते हैं. और अपनी या अपने पक्षकारोंकी बडाई करने लग ते हैं। मगर शास्त्रोंमें तो कहा है. कि-आत्मप्रदेशगत मिथ्यात्वसेभी प्ररूपणागत मिथ्यात्व अधिक दोषवाला होनेसे अनेक भवभ्रमण करानेवाला होता है।

और अनादिकालसे ११ अंगादिकको देखकर अनंतजीव संसार परिभ्रमणके दुःखसे मुक्त होगये. और अनंतजीव संसार परिभ्रमणके दुःखको बढानेवालेभी होगये। इसका आशय यही है, कि. अतीव गहनाशयवाले, अपेक्षा गर्भित शास्त्रकारोंके अभिप्रायको समझकर वर्ताव करनेवाले मुक्तिगामी होते हैं। और शास्त्रकारोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर शब्दमात्रके आग्रहमें पडनेवाले संसारगामी होते हैं. । मगर जो आत्मार्थी होते हैं वो तो शब्द मात्रके विवादको छोडकर तात्पर्यार्थ तरफ दृष्टि करते हैं, और जो आग्रही होते हैं, वो तात्पर्यार्थको छोडकर शब्दमात्रके विवादको विशेष बढाते हैं। इसी ही कारणसे रागद्वेषादि भाव शत्रुओंको हटानेवाला वीतराग सर्वज्ञ भगवान्का कथन किया हुआ अविसंवादी शांतिप्रिय जैनशासनमें भभी विसंवादरूपी विरोध भावको स्थान मिलगया है।

और पहिले तो तीर्थंकर महाराजोंके जितने गणधर होतेथे उतने ही गच्छ [साधु समुदायकी ओलखान] होतेथे और पीछेभी प्रभावकाचार्योंकी बहुत समुदाय होनेसे कुल-गण-शाखा वगैरह होनेथे, मगर सबकी प्ररूपणा और क्रिया एक समान होनेसे संपसहित मिलके हुए आत्मकल्याण करतेथे, उस समय विरोधी प्ररूपणा के अभावसे किसीकोभी कोई तरहकी शंकाका कारण या अपने गच्छके आग्रहका कारण नहीं था. मगर श्रीवीरप्रभुके निर्वाण बाद बहुत काल होनेसे कितनेक शिथिलाचारी चैत्यवासी होगये, उन्होंसे गच्छोंका आग्रह और भिन्नभिन्न प्ररूपणा विशेष होने लगी. तबसे ही शास्त्रोक्त जिनपूजा विधिमें कुछ अविधिभी होगई, और जैन दर्शनके विच्छेद होनेपर जैनसमाज लौकिक दिखावा मानने लगा, उसमें आचार्यादिभी शामिल करते हैं उस मुजब वर्ताव शुरू किया, तबसे महामांगलिककारी शांतिमय अति उत्तम पर्युषणा जैसे पर्व आराधनमेंभी भेद पडगया. और शासन नायक श्रीवर्द्धमान ... के छ कल्याणक नहीं मानने वगैरह कितनीही बातोंका विवाद

उपस्थित होगया उसके विषयमें आगे लिखनेमें आवेगा, मगर इस जगह तो हम केवल पर्युषणा संबंधी थोडासा लिखतेहैं.

जैन पंचांगके अनुसार जब वर्ताव करनेमें आताथा तब पर्युषणासंबंधी " अभिवढ्ढियंमि वीसा, इयरेसु सवीसई मासो " इत्यादि निशिथ भाष्य-चूर्णि, बृहत्कल्प भाष्य-चूर्णि-वृत्ति, पर्युषणाकल्पनिर्युक्ति-चूर्णि-वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमें व्याख्यान किया है. कि [illegible]
[illegible]
रहना उसका नाम पर्युषणा है. इसलिये जब अधिक महिना होवे तब उसको तेरह (१३) महीनोंका अभिवर्द्धित वर्ष कहतेहैं, उस वर्षमें आषाढ चौमासीसे २० वें दिन प्रसिद्ध पर्युषणा करना । और जिस वर्षमें अधिक महिना न आवे तब उसको १२ महिनोंका चंद्रवर्ष कहतेहैं, उस वर्षमें आषाढ चौमासीसे ५० वें दिन प्रसिद्ध पर्युषणा करना [वर्षाकालमें रहनेका निश्चय कहना] उसीमेंही उसीदिन धार्मिक कार्य और उसका उत्सव किया जाता है, यह अनादि नियम है. इसलिये निशिथ चूर्णि, पर्युषणा कल्पनिर्युक्ति, चूर्णि, जियाभिगमसूत्रवृत्ति, धर्मरत्नप्रकरणवृत्ति, कल्पसूत्रमूल और उसकी सभी टीकाओंमें संवच्छरी शब्दकोभी पर्युषणा शब्दसे व्याख्यान कियाहै, और प्रसिद्ध पर्युषणा के दिनसे भिन्न (अलग) धार्मिक कार्योंका दिन कोईभी नहीं है, किंतु एकही है. इसीको पर्युषणा पर्व कहो, संवच्छरीपर्व कहो, सांवत्सरिकपर्व कहो या धार्मिक पर्व कहो, सबका तात्पर्य एकही है । और कारणवश " अंतरा वि य से कप्पइ, नो से कप्पइ तं रयणि उवायणा वित्तए " इत्यादि कल्पसूत्र वगैरह शास्त्र पाठोंके प्रमाणसे आषाढ चौमासीसे ५० वें दिन पहिले तो पर्युषणा करना कल्पताहै, मगर ५० वें दिनकी रात्रिको उल्लंघन करके आगे करना नहीं कल्पताहै । ५० वें दिनतक पर्युषणाकरनेको ग्रामनगरादि योग्यक्षेत्र न मिलसकेतो, जंगलमेंभी वृक्ष नीचे अवश्य पर्युषणा करनाकहाहै । और अभिवर्द्धितवर्षमें २० दिने, तथा चंद्रवर्षमें ५० दिने पर्युषणा न करे और विहार करेतो " छकाय जीव विराहणा " इत्यादि स्थानांगसूत्रवृत्ति वगैरह पाठोंसे छकाय जीवोंकी विराधना करनेवाला, आत्मघाती, संयम और जिनाज्ञाको विराधन करनेवाला कहा है । यह नियम जैन पंचांगानुसार पौष और आषाढ बढताथा तब चलताथा, मगर अबतो जैन पंचांग

विच्छेद हुआ, तबसे लौकिक टीप्पणा मुजब मास-पक्ष-तिथी-वार-नक्षत्र-मुहूर्तादि व्यवहार जैन समाजमें शुरू हुआ. उसमें श्रावण भाद्रपदादि मासभी बढने लगे. तब जैनसंघने श्रीवीर निर्वाणसे ९९३ वर्षे अधिक महिने वाला वर्षमें २० दिने पर्युषणापर्व करनेकी मर्यादा बंध करी और अधिक महिना हो, चाहे न हो, तो भी५० वें दिन पर्युषणापर्वमें वार्षिक कार्य करनेका नियम रक्खा. सो "जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाऽऽषाढ एव वर्धते नान्ये मासास्तट्टिप्पणकं तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते ततः पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा युक्तेति वृद्धाः" यह पाठ कल्पसूत्रकी सबी टीकाओंमें प्रसिद्धही है । उसके अनुसार श्रावण बढे तो दूसरे श्रावणमें और भाद्रपद बढे तो प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पर्युषणा पर्व करना जिनाज्ञा है । और पहिले मास वृद्धिके अभावसे ५० वें दिन पर्युषण करतेथे, तब पिछाडी कार्तिक तक ७० दिन ठहरतेथे, मगर जब मास वृद्धी होनेपर २० दिने पर्युषणा करतेथे, तब तो पर्युषणाके पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन ठहरतेथे, यह बात निशिथभाष्य-चूर्णि-पर्युषणाकल्पचूर्णि बृहत्कल्प चूर्णि-वृत्ति-जीवानुशासनवृत्ति, गच्छाचारपयन्नवृति, स्थानांगसूत्रवृति वगैरह शास्त्र पाठोंसे सिद्ध होती है । और वर्तमानमें श्रावण, भाद्रपद तथा आश्विन बढनेपरभी ५० दिने पर्युषणापर्व करनेसे पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन ठहरते हैं। यह भी कल्पसूत्रकी टीकाओंके अनुसार होनेसे जिनाज्ञानुसारही है, इसलिये इसमे किसी प्रकारका दोष नहीं है. ।

इस उपरके शास्त्रीय लेखपर दीर्घ दृष्टिसे निष्पक्ष होकर मध्यस्थ बुद्धिसे विचार किया जावे तो स्पष्ट मालूम हो जावेगा, कि-पर्युषणा पर्व करनेमें जैन टिप्पणानुसार या लौकिक टिप्पणानुसार अधिक मास या कोईभी मास या कोईभी दिन बाधक नहीं है. क्योंकि पर्युषणा पर्व करनेमें ५० दिनोंका व्यवहारिक गिनतीका नियम होनेसे पर्युषणा पर्व दिन प्रतिबद्ध ठहरता है. किंतु मास प्रतिबद्ध नहीं ठहर सकता । और ५० दिनोंकी गिनतीमें अधिक महिनेके ३० दिवस तो क्या मगर एक दिवस मात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता । जिसपरभी पर्युषणा पर्व- दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपद मास प्रतिबद्ध ठहराना १. अधिक महिनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोड देना २. पचास दिनोंसे पर्युषणा पर्व करने की बातको सर्वथा उडा देना ३. श्रावण भाद्रपद या आश्विन बढनेसे १००

दिन होनेपरभी उसको ७० दिन कहनेका आग्रह करना ४. सो सर्वथा शास्त्रकारोंके विरुद्ध है।

अब पर्युषणा पर्व करने संबंधी ५० दिनोंकी गिनती करनेमें अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोड़ देनेका आग्रह करनेके लिये कितनेक लोग शास्त्रविरुद्ध होकर कुयुक्तियें करतेहैं उसके विषयमें थोड़ासा लिखते हैं .—

१—कल्पसूत्रादिमें आषाढ चौमासीसे दिनोंकी गिनतीसे ५० वें दिन अवश्यही वार्षिककार्य पर्युषणापर्व करना कहाहै, उसमें अधिक महीनेका १ दिनमात्रभी गिनतीमें नहीं छूट सकता और ५०वें दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करना नहीं कल्पे, जिसपरभी वर्तमानिक श्रावण भाद्रपद बढनेपर ८० दिने पर्युषणापर्व करते हैं, सो शास्त्र विरुद्ध है इसका विशेष खुलासा इसीही ग्रंथकी आदिसे पृष्ठ २७ तक देखो.

२—अधिक महीनेके ३० दिन जैनशास्त्रोंमें गिनतीमें नहीं लिये, ऐसा कहते हैं सो भी शास्त्र विरुद्ध है, अधिक महिनेके ३० दिनोंको-दिनोंमें, पक्षोंमें, मासोंमें, वर्षोंमें और युगकी गिनतीमें खुलासा पूर्वक गिने हैं, विशेष खुलासा देखो पृष्ठ २८ से ४८ तक.

३—अधिक महीना काल चूलारूप है सो गिनतीमें नहीं लेना ऐसा कहतेहैं, सो भी शास्त्र विरुद्ध है. निशीथचूर्णि, दशवैकालिक बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें अधिक महीनेको काल चूलाकी शिखर रूप श्रेष्ठ,[उत्तम] ओपमादीहै और उसके ३० दिनोंको गिनतीमेंभी लिये हैं. इसका विशेष खुलासा देखो पृष्ठ ४९ से ६५ तक। तथा पृष्ठ ७५ से ९१ तक.

४-पर्युषणाकल्प चूर्णि तथा निशीथ चूर्णिके पाठसे दो श्रावण होवें तो भी भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करना ठहराते हैं सो भी शास्त्र विरुद्ध है, दोनों चूर्णिके पाठोंमें अधिक महीना पौष या आषाढ आवे तब उसके ३० दिन गिनतीमें लेकर आषाढ चौमासीसे २० वें दिन श्रावणमें पर्युषणा पर्व करना लिखाहै और अधिक महीना न होवे तब ५० वें दिन भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखाहै। और ५० वें दिनको उल्लंघन करनेवालोंको प्रायश्चित कहा है, इसलिये दो श्रावण होनेपरभी ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करना योग्य नहीं है। और अधिकमासके ३० दिन गिनतीमें छोड़देनाभी शास्त्र वि-

रुद्ध है. इसका विशेष खुलासा देखो दोनों चूर्णिके विस्तार पूर्वक पाठों सहित पृष्ठ ९१ से १०६ तक

५- जैन टिप्पणामें अधिक महीना होताथा तबभी २० वें दिन श्रावण शुदी पंचमीको पर्युषणा वार्षिक कार्य होतेथे, इसलिये २० वें दिनकी पर्युषणामें वार्षिक कार्य नहीं हो सकते, ऐसा कह-नाभी शास्त्र विरुद्धहै इसका विशेष खुलासा देखो पृष्ट १०७ से ११७ तक.

६- श्रावण भाद्रपद या आश्विन बढे तो भी ५० वें दिन पर्यु-षणापर्व करनेसे शेष कार्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसपरभी ७० दिन रहनेका आग्रह करते हैं सोभी शास्त्र विरुद्ध है ७० दिन मास वृद्धिके अभाव संबंधी हैं और मास वृद्धि होवे तब १०० दिन रहना शास्त्रानुसार है। इसका विशेष खुलासा पृष्ठ ११७ से १२८ तक, तथा १७४ से १८५ तक देखो.

७ अधिक महीना होनेसे उस वर्षमें १३ महीने तथा चौमा-सेमें ५ महीने होते हैं. तब उतनेही महीनोंके कर्मबंधनभी होते हैं, जिसपरभी १२ महीनोंके क्षामणे करने कहते हैं. सो भी शास्त्र विरुद्ध है. अधिक महीना होवे तब १३ महीनोंके क्षामणे करना शास्त्रानुसार हैं; इसका विशेष खुलासा पृष्ठ १३३ से १३६ तक तथा १७० से १७१ तक और पृष्ट ३६२ से ३७८ तक देखो.

८ अधिक महीनेमें सूर्यचार नहीं होता ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्धहै, छ छ महीने १८३ वें दिन, सूर्य दक्षिणायनसे उत्तरा-यनमें और उत्तरायनसे दक्षिणायनमें हमेशा होता रहता है, उसमें अधिक महीनेके ३० दिनोंमेंभी जैनशास्त्र मुजब या लौकिक टिप्पणा मुजबभी सूर्यचार होता है. इसका विशेष खुलासा देखो पृष्ठ १३७ से १३९ तक

९ अधिक महीने के ३० दिनोंमें देवपूजा मुनिदान वगैरह धर्मकार्य करने, मगर उसके ३० दिनोंको गिनतीमें नहीं लेनेका कहना, सो भी शास्त्र विरुद्ध है। जितने रोज देवपूजादि धर्मकार्य किये जावेंगे, उतने दिन अवश्यही गिनतीमें लिये जावेंगे, और जैसे मुनिदानादि दिन प्रतिबद्धहैं, वैसेही पर्युषणाभी ५० दिन प्रतिबद्धहै. इसका विशेष खुलासा पृष्ठ १४२ से १४३ तक देखो

१० अधिक महिनेमें विवाहादि शुभकार्य नहीं होते, उसमु-

उक्त पर्युषणा पर्वभी नहीं हो सकते. ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्ध है, गृहस्थोंके विवाहादि तो मासमास, अधिकमास, क्षयमास, १३ महीनोंके निरुक्त, अधिकतिथि, क्षयतिथि, शुभाशुभका काल और होरा लग्नका चौमासा वगैरह किसकेही तिथि-वार-नक्षत्र-मास वगैरह इन दोनोंसे नहीं किये जाते. मगर बिना मुहूर्तके धर्मकार्य करनेमें तो किसी समयका निषेध नहीं हो सकता इसी तरह पर्युषणा पर्वभी अधिकमासमें,१३ महीनोंके निरुक्तमें, और चौमासेमें करनेमें आते हैं। इससे अधिकमहीना या कोईभी योग बाधक नहीं हो सकता. इसका विशेष खुलासा पृष्ठ १९३ से २०४ तक देखो:—

११- अधिकमहीनेको वनस्पतिभी अंगीकार नहीं करती ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्ध है अधिक महीनेके ३० दिन तो क्या १ दिन मात्रभी वनस्पति नहीं छोड सकती, किंतु हरेक समय प्रत्येक दिवसको अंगीकार करती है इसका विशेष खुलासा पृष्ठ २०५ से २१० तक देखो —

इत्यादि मुख्य २ बातों संबंधी शास्त्रीय प्रमाण और युक्तिपूर्वक इस प्रथमभागमें अच्छीतरहसे खुलासापूर्वक लिखनेमें आया है.

और इस ग्रंथको पक्षपात रहित होकर संपूर्ण पढनेवाले सज्जनोंको सत्यासत्यकी परीक्षा स्वयं होसकेगी. इससे यहांपर विशेष लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

ग्रंथकारका उद्देश क्या है?

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

के लिये तपगच्छके मुनिमहाराज जो खंडन मंडनका विषय व्याख्यानमें चलाते हैं, सो सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है और समयके प्रतिकूल होनेसे-कर्मबंधन, कुसंप व शासनहिलना कराने वाला है (इसीका निर्णय इस ग्रंथमें अच्छी तरहसे लिखा गया है) उसको (इस ग्रंथके बांचे बाद) अवश्य बंध करना योग्य है.

पक्षपात रहित ग्रंथकी रचना

" पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु । युक्तिमद्वचनं यस्य, तस्य कार्यः परिग्रहः ॥ १ ॥ " इत्यादि महापुरुषोंके न्यायानुसार पक्षपात रहित होकर आगम पंचांगी सम्मत युक्तिपू

कि खरतरगच्छ, तपगच्छ, अंचलगच्छादि सब गच्छवालोंके वाक्योंका संग्रह इसग्रंथमें करनेमें आया है। मगर अमुक गच्छवालेके अमुक आचार्यके वाक्य हमको मंजूर नहीं, ऐसा एकांत आग्रह किसी जगहभी करनेमें नहीं आया. और शास्त्रविरुद्ध युक्तिबाधित वाक्य तो कोईगच्छवालेकाभी मान्य करना योग्य नहीं. यह बात सर्व जन सम्मतहीहै, वोही न्याय इस ग्रंथमें रक्खा गया है. इसलिये पाठकगणको किसी गच्छ समुदायका पक्षपात न रखकर अवश्य संपूर्ण अवलोकन करके सार निकालना चाहिये.

इस ग्रंथका लेखक मैं खास संसारीपनेमें तपगच्छका वीसापोरवाल श्रावकथा मगर उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके पास श्रीसिद्धक्षेत्र (पालीताणा) में विक्रम संवत् १९६० वैशाख सुदी ८ को खरतरगच्छमें दीक्षा अंगीकार की,तो भी दोनों गच्छोंके पूर्वाचार्योंपर तथा वर्तमानिक मुनिमहाराजोंपर पूज्यभाव था, और अभी। मगर जिस २ अंशमें शास्त्र विरुद्ध जिस २ बातोंका झूठाही आग्रह किया गया है,उन २ बातोंकी आलोचना करके शास्त्रानुसार सत्य बातें जनसमाजमें प्रकट करना, यह मेरा खास कर्तव्य समझ कर मैंने इस ग्रंथमें इतना लिखाहै। इसमें किसीका पक्षपात न समजना चाहिये. और किसीको नाराज होनेकाभी कोई कारण नही है। वर्तमानिक समयके अनुसार परंपराकी अंधरूढीको त्यागना और सत्यको ग्रहण करना, सब सज्जनोंको प्रिय है। और समय बदलता जाता है. संपसे शासनोन्नतिके कार्य करनेकी बहुत जरुरत है, इसलिये कुसंप बढानेवाला पर्युषणाके व्याख्यानमें आपसका खंडन मंडन चलाना योग्य नहीं है. विशेष दूसरे, तीसरे और चौथे भागमें अनुक्रमसे लिखनेमें आवेगा।

क्षमा याचना तथा अपनी भूल स्वीकार।

इसग्रंथकी रचना करते समय मेरी अल्पवय व अल्प अभ्यास होनेसे, इसग्रंथमें-लेखक दोष, भाषादोष, दृष्टिदोष, पुनरुक्ति दोष, प्रेसदोष व शास्त्रीय पाठोंकी विशेष अशुद्धताके दोषोंकी पाठक गण अवश्य क्षमा करें तथा हंसकी तरह दोष त्यागकर सार ग्रहण करें, और सुधारकर बांचे, दूसरी आवृत्तिमें इन दोषोंका संशोधन अच्छी तरहसे करनेमें आवेगा

और सुबोधिका व दीपिका, किरणावली आदिकमें शास्त्र विरुद्ध जो जो बातें लिखी हैं, उन सब बातोंका निर्णय इस ग्रंथमें लिखा

मुहूर्त्तके लोकोत्तर धर्मकार्य तो नियमित दिवससे आगे पीछे कभी नहीं हो सकते. इसलिये लौकिक वालेभी मुहूर्त्त वाले कार्य नहीं करते, मगर विना मुहूर्त्तके दान पुण्य परोपकारादि तो विशेष रूपसे करनेके लिये अधिकमहीनेको 'पुरुषोत्तम अधिक मास' कहते हैं,उसकी कथाभी सुनते हैं और सिद्दस्थमें नाशिकादि तीर्थोमें यात्राका मेलाभी भरते हैं। इसी प्रकार वर्तमानिक जैन समाजमेंभी मुहूर्त्तवालेकार्य अधिकमहीनेमें नहीं करते. मगर विना मुहूर्त्तके पर्युषणादि धार्मिक कार्य करनेमें कोई हरजा नहीं है। अधिक महीनेके ३० दिनोंको मुहूर्त्तादि कार्योंमें नहीं लेते, परंतु विना मुहूर्त्तके (दिवसोंकी संख्यासे प्रतिबद्ध) धार्मिक कार्योंमें लेतेहैं। बस! इसका मर्म सरल दिलसे न्यायपूर्वक समझ लिया जावे तो अधिकमहीनेमें पर्युषणादि धर्म कार्य नहीं हो सकते. ऐसा एकांत आग्रहका झूठा वहेम आपसेही निकल सकता है. इसका विशेष निर्णय इसग्रंथको वांचने वाले सज्जन स्वयंकर सकेंगे।

२–बे समझ या हठाग्रह॥

अधिक महिनेके अभावमें ५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखा है। ५० दिनके अंदर करनेवाले आराधक होतेहैं उपरांत करनेवाले विराधक होतेहैं. इसलिये ५० वें दिनकी रात्रिको किसी-प्रकारभी उल्लंघन करना नहीं कल्पताहै. यह बात जैन समाजमें प्रसिद्ध ही है। जिसपरभी सिर्फ भाद्रपद शब्दमात्रको पकडकर वर्तमानिक दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका आग्रह करतेहैं, मगर ८० दिन होनेसे शास्त्रविरुद्ध होता है, इसका विचार करते नहीं हैं।

और पर्युषणाके पिछाडी हमेशा ७० दिन रखनेका एकांत आग्रह करते हैं, मगर ७० दिनका नियम अधिक महिनेके अभावसंबंधीहै और अधिक महिना होवे तब निशीथचूर्णि,बृहत्कल्पचूर्णि, स्थानांगसूत्रवृत्ति और कल्पसूत्रकी टीकाओंमें १०० दिन रहनेका कहा है। इसलिये ७० दिन या १०० दिन यथा अवसर दोनों बातें मान्य करने योग्य हैं। जिसपरभी १०० दिन संबंधी शास्त्रप्रमाणोंको छोडकर सिर्फ ७० दिनके शब्द मात्रको आगेकरके १०० की जगहभी ७० दिन रहनेका आग्रहकरतेहैं. इसलिये उपरकी दोनों बातों संबंधी शास्त्रीय अपेक्षाकी बे समझ है, या समझने परभी

स्पष्ट है। इसका विचार स्वयं पाठकगणको करना चाहिये।

३–महीनेमें इनकार करतेहो, फिर भी [illegible]-आग्रह!

अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोड़देनेके आग्रह करनेवाले दो श्रावण होवें तो भी भाद्रपद तक ५० दिन हुए ऐसा कहते हैं, मगर उनका यह आग्रह युक्तिसे विचारकर देखा जावे तो यह कहना सर्वथा अनुचित मालूम होता है। देखिये-जिनको श्रावक या साधुओंने आषाढ़चौमासीसे उपवास करने शुरू किये होवें, उनको दूसरे श्रावण होनेपर ५० उपवास कब पूरे होवेंगे और ८० उपवास कब पूरे होवेंगे? इसके उत्तरमें छोटा बालक होगा वहभी यही कहेगा, कि–५० दिनोंके ५० उपवास दूसरे श्रावणमें और ८० दिनोंके ८० उपवास दो श्रावण होनेसे भाद्रपदमें पूरे होवेंगे। इसीतरह सब मनुष्योंके संसारव्यवहारमें, तथा सबके आयुष्यके प्रमाण समयकी गिनतीमें ७२ कर्मोंके शुभाशुभ बंधन होनेमें और धार्मिक पुरुषोंके धर्मकार्योंसे कर्मोंकी निर्जरा होनेमें व सूर्यके उदय अस्तसे परिवर्तन मुजब दिवसोंके व्यतीत होनेके हिसाबमें, इत्यादि सब कार्योंमें दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन कहते हैं। ५० उपवास दूसरे श्रावणमें, व ८० उपवास भाद्रपदमें पूरे होनेका भी कहते हैं. और उपवासादि उपरके सब कार्योंमें अधिक महिनेके ३० दिनोंको बीचमें सामील गिनकर ८० दिन कहते हैं, ८० दिनोंके शुभाशुभ-पुण्यपापके कार्य भी मंजूर करतेहैं. ऐसेही दो आश्विन होनेसे पर्युषणाके पिछाड़ी कार्तिक तक १०० दिन होते हैं, उनके १०० उपवास, व १०० दिनोंके कर्मबंधन तथा धर्मकार्य वगैरह सब कार्योंमें १०० दिन कहते हैं. और १०० दिनोंको आपभी व्यवहारमें मंजूर करते हैं। उसमें अधिक श्रावणके ३० दिनोंकी तरह अधिक आश्विनकेभी ३० दिनोंको गिनतीमें मान्य करना पड़ताहै, मगर दो श्रावण होवे तब भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं, व दो आश्विन होवे तब कार्तिक १०० दिन होते हैं उनोंको अंगीकार करते नहीं. और ८० दिनके ५० दिन व १०० दिनके ७० दिन कहते हैं यह जगत विरुद्ध कैसा जबरदस्त आग्रह कहा जावे इसको विवेकी जन स्वयं विचार सकते हैं।

४–कालचूलारूप अधिकमहीना पहिला या दूसरा?

यद्यपि जैनटिप्पणा विच्छेद है, इसलिये लौकिक टिप्पणा मु-

जब मास पक्षादि मानते हैं, मगर जैनशास्त्रतो मौजूदही हैं. इस-लिये पर्युषणादि धार्मिक कार्य जैनसिद्धांत मुजब करनेमें आते हैं। और जैनशास्त्र मुजबही सब गच्छवाले अधिक महीनेको कालचूला कहते हैं। किंतु कितनेक प्रथम महीनेको कालचूला कहतेहैं, मगर प्रवचनसारोद्धार, सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्ति, चंद्रप्रज्ञप्तिवृत्ति, लोकप्रकाश, ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्ति वगैरह शास्त्रप्रमाणोंसे दूसरा अधिक महीना कालचूला ठहरता है- देखिये - "सट्ठीए अईयाए, हवई हु अहिमासो जुगद्धंमि । बावीसे पव्वसए, हवइ हु बीओ जुगंतंमि ॥ १ ॥ इत्यादि सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिके अनुसार ६० पर्व (पक्ष) के ३० महीने व्यतीत होनेपर ३१ वा महीना दूसरा पौष अधिक होता है, और १२२ पक्षके ६१ महीने जानेपर कालचूला-रूप दूसरा आषाढ अधिक होताहै. उसी कालचूलारूप दूसरे अधिक आषाढमेंही चौमासी प्रतिक्रमणादि धार्मिककार्य सब गच्छवालोंके करनेमें आते हैं। और अधिक पौष व अधिक आषाढके दिनोंकी गिनती सहित, ६२ महीने, १२४ पक्ष, १८३० दिन और ५४९०० मुहूर्तोंके पांच वर्षोंका एक युग कहा है। इसलिये कालचूलारूप अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें नहीं आते १, तथा कालचूलारूप अधिक महीनेमें चौमासी प्रतिक्रमणादि धार्मिक कार्य नहीं हो सकते २, और प्रथम महीनेको कालचूलाकहना ३, यह सब बातें शास्त्रविरुद्धहैं। इसको विशेष पाठकगण स्वयंविचार लेवेंगे।

५- पूर्वापर विसंवादी (विरोधी) कथन ॥

जिस अधिक महीनेको कालचूला कहकर गिनतीमें लेनेका व पर्युषणादि धर्मकार्य करनेका निषेध करतेहैं, उसी कालचूलारूप दूसरे अधिक आषाढको गिनतीमें लेकर चौमासीप्रतिक्रमणादि कार्य आप करते हैं. जिसपरभी मुहसे कालचूलारूप अधिक महीनेको गिनतीमें नहीं लेना व उसमें धर्म कार्य नहीं करने कहतेहैं और काल-चूलारूप अधिक महीनेको गिनकर धर्मकार्य करने वालोंको दोष ब-
[illegible] छोड़ते
[illegible] करते हैं
[illegible] म पड़ने
[illegible] की तरह कैसा पूर्वापर [illegible] (विरोधी)
कथन है, सो भी विचारने योग्य हैं।

शेष शास्त्रकी बात अंगीकार करनेके समय सामान्य शास्त्रकी बात गौणयतामावमें रहती है. यह न्याय विद्वानोंमें प्रसिद्धही है। और-भी देखिये- जैसे भगवतीसूत्र बडा कहा जाता है, तो भी उसमें बहुत बातोंका कथन होनेसे संयमकी क्रियासंबंधी सामान्यशास्त्र कहा जावे, और आचारांग, दशवैकालिक छोटे सूत्र हैं, तो भी उस में मुख्यतासे संयमविधान होनेसे संयमक्रियासंबंधी विशेष शास्त्र कहे जाते हैं। इसीतरह समवायांगसूत्रमें अनेक बातोंका कथन होनेसे पर्युषणासंबंधी समवायांगसूत्र सामान्य शास्त्रहै, और कल्पसूत्रमें तो खास पर्युषणासंबंधी सामान्य व विशेष दोनो प्रकार-से विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ वर्षास्थितिरूप व वार्षिकपर्व रूप दोनों पर्युषणाका अधिकार है. इसलिये पर्युषणासंबंधी कल्पसूत्र विशेष शास्त्र है। यही कल्पसूत्ररूप विशेष शास्त्रको पर्युषणामें चतुर्विधसंघके मांगलिकके लिये वर्षोंवर्ष प्रत्येक गांव-नगरादिमें वांचनेमें आता है। उस विशेषशास्त्रके पर्युषणासंबंधी मूलमंत्ररूप पाठको छोडना और समवायांगके सामान्यपाठपर दृढ आग्रह करना विवेकीविद्वानोंको योग्यनहीं है। मगर अल्पज्ञ बिना समझवाले अपना आग्रह न छोडें तो उनकी खुशीकी बात है, इसको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार लेंगे.

२६-पर्युषणासंबंधी हमेशां नियत नियम ५० दिनका है या ७० दिनका है?

सर्व शास्त्रोंमें ५० दिनको उल्लंघन करना निवारण किया है, इसलिये ५० दिनका नियत नियम है। और ७० दिनसे ज्यादे होवें उसका कोईभी दोष किसी शास्त्रमें नहीं कहा, इसलिये ७० दिनका हमेशां नियत नियम नहीं है।

१. देखो-पहिले २० दिने पर्युषणा करतेथे, तबभी पिछाडी १०० दिन रहतेथे, इसलिये ७० दिनका नियत नियम नहीं है।

२. अभीभी श्रावण भाद्रपद या आसोज बढे तब तपगच्छके पूर्वाचार्योंके वाक्यसेभी ५० दिने पर्युषणा होवें तब पिछाडी १०० दिन रहते हैं। इसलियेभी ७० दिन रहनेका नियत नियम नहीं है।

३. पचास दिन उलंघतो प्रायश्चित्त कहा है, मगर ७० दिन उल्लंघे तो प्रायश्चित्त नहीं कहा, इसलियेभी ७० दिनकी नियत नि-

इस भी होसका मानना नहीं बन सकता।

४- पूनम दिने भी तथापि न होवे तो अंतमें चूर्णीसेभी चउत्थी पर्युषणा करनेकी आज्ञा बतलाई है और ७० दिनकी व्याख्यानमें लिखी बतलाई परन्तु पिछाडी ७० दिनकी आवश्यकता नहीं बतलाई. इसलियेभी ७० दिनका नियत नियम नहीं है।

५- ७० दिन रखना यह बात वृत्तिके समाय संबंधी है, इसलिये इसको शास्त्रोक्त ठहरानेवाले आगे करना शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध होनेसे योग्य नहीं है।

६- इन्हीं समवायांग सूत्रके टीकाकार महाराजने स्थानांग सूत्र. वृत्तिमें मासवृद्धि होवे तब पर्युषणाके पिछाडी कार्तिकतक १०० दिन ठहरनेका कहा है। उसको उत्थापना और शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध होकर १०० दिनके जगहमी ७० दिन ठहरनेका बतलाना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

७- निशीथचूर्णि - वृहत्कल्पचूर्णि - कल्पनिर्युक्तिचूर्णि-वृत्ति— समाचारीप्रकरणवृत्ति-जीवानुशासन वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमे, पर्युषणाके पिछाडी कालावग्रहमें, जघन्यसे ७० दिन, मध्यमसे ७५-८०-८५-९०-९५ यावत् १२० दिन, और उत्कृष्टसे १८० दिनका प्रमाण बतलाया है। उसके अंदरमें १ दिनमात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता. जिसपरभी शास्त्रविरुद्ध होकर पर्वके पिछाडीके अनियत व जघन्य ७० दिनोंको हमेशां नियम ठहरानेका आग्रह करना विवेकियोंको योग्य नहीं है।

८- निशीथचूर्ण्यादिमें द्रव्य-क्षेत्र-काल और भावसे पर्युषणाकी स्थापना करनी बतलायी है, उसमें कालस्थापना संबंधी समय-आवलिका-मुहूर्त-दिन-पक्ष-माससे अधिकमहिनेके ३० दिनोंकी गिनति सहित प्रत्येक दिवसको पर्युषणासंबंधी कालस्थापनाके अधिकारमें गिनतीमें लिये हैं। इसलिये पर्युषणाके व्यवहारमें १ दिन भी गिनतीमें निषेध नहीं होसकता. जिसपरभी जघन्य ७० दिनके अनियत नियमको मास बढनेपरभी आगे करते हैं और फिर १०० दिनके ७० दिन अपनी कल्पनासे बनातेहैं सो सर्वथा चूर्णिके विरुद्ध है, इसका विशेष विचार तत्त्वज्ञ जन स्वयं कर लेवेंगे।

९- सीत्तर दिनका नियत नियम न होनेसे ७० दिनके उपरान्त ज्यादेदिनभी होतेहैं, और "वासावासाए पज्जोसवियाए, वासोस क-

त्तिए या निग्गताणं, अट्ठ अतिरित्ता भवंति" इत्यादि निशीथचूर्ण्यादिकमें लिखे मुजब वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार करतो ७० दिनसे कमतीभी ४० दिन, या ४५-५० दिनभी होतेहैं। देखो-पहिले ५० दिने वार्षिक कार्य जबलग नहीं करें तबतक विहार करनेमें आताथा. मगर अभी वर्तमानमें तो आपाढचौमासीबाद विहार करनेकी रूढी नहीं हैं। तैसेही पहिले वर्षाके अभावसे आसोजमेंभी विहार करतेथे मगर अभीतो वर्षा नहीं होवे रस्तोंके कीचड सुककर साफ होगये होंवे तो भी कार्तिक पूर्णिमा पहिले आसोजमें विहार करनेकी रूढी नहीं हैं। इसलिये अभी वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार नहीं कर सकतें और दो आसोज हो तो भी कार्तिक तक १०० दिन ठहरते हैं. इसलियेभी ७० दिनका हमेशां नियत नियम नहीं हैं। इसको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार लेवेंगे।

२७- महीना बढे तब होली, दिवाली वगैरह लौकिक पर्व पहिले महीनेमें होवें या दूसरे महीनेमे होवें ?

कितनेक पर्व पहिले महीनेमें होते हैं, और कितनेक पर्व दूसरे महीनेमेंभी होते हैं. देखो-दो भाद्रपद होवें तब जन्माष्टमीका पर्व पहिले भाद्रपदमें करते हैं. और गणेश चौथका पर्व दूसरे भाद्रपदमें करते हैं. व दो आसोज होवें तब श्राद्धपक्ष पहिले आसोजमें करतेहैं, और दशहरा दूसरे आसोजमें करतेहैं. तथा दो कार्तिकहोवे तब दीवालीपर्व पहिले कार्तिकमें करतेहैं. इसतरहसे बारहीमासोंके सबी पर्व कृष्णपक्षसंबंधीपर्व पहिले महीनेमें और शुक्लपक्षसंबंधीपर्व दूसरे महीनेमें समझलेना और "मलमासो ज्ञेया अधिकमासः—क्षयमासश्चेति। तदुक्तं काठकगृह्ये, यस्मिन् मासे न संक्रांतिः, संक्रांति द्वयमेव वा मलमासो स विज्ञेयो मासः स्यात् तु त्रयोदशः। तथा च उक्तं हेमाद्रि नागर खंडे-नभो वा नभस्यो वा मलमासो यदा भवेत् सप्तमःपितृपक्षःस्यादन्यत्रैव तु पंचमः। इत्यादि" निर्णयसिंधु, धर्मसिंधु, निर्णयदीपकादि लौकिक धर्मशास्त्रोंके प्रमाणानुसार आषाढ चौमासीसे पांचवा पितृपक्ष (श्राद्धपक्ष) होता है, मगर श्रावण, भाद्रपद बढे तब उसकी गिनतीसे सात-[७] श्राद्धपक्ष होता है इसलिये लौकिकवालेभी अधिकमहि-३० दिन गिनतीमें लेते हैं। जिसपरभी लौकिकवाले अधिक ३० दिन गिनतीमें नहीं लेते, या प्रथम महीनेमें दीवाली,

व जन्माष्टमी वगैरह पर्व नहीं करते. ऐसा जान बुझकर माया युक्त कथन करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

२८-गणेशचौथकी तरह पर्युषणाभी दूसरे भाद्रपदमें हो सके या नहीं ?

भो देवानुप्रिय ! गणेशचौथ मासप्रतिबद्ध होनेसे मासवृद्धिके अभावमें आषाढचौमासीसे, दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने भाद्रपदमें होती है, मगर श्रावण या भाद्रपद बढे तब तो तीसरे महीनेके छट्ठे पक्षमें ८० दिने दूसरे भाद्रपद होती है। इसीतरह मास बढनेके अभावमें २॥ महीनोंसे पांचवा भाद्रपक्ष होता है। मगर मास बढे तब तो ३॥ महीनोंसे सातवा भाद्रपक्ष होता है तथा दीपालीपर्वभी मासवृद्धिके अभावमें ३॥ महीनोंमें ७ वें पक्षमें कार्तिकमें होता है, मगर श्रावणादि बढे तबतो ४॥ महीनोंसे ९ में पक्षमें होता है यह बात प्रत्यक्ष प्रमाणसे जगत् प्रसिद्ध सर्व सम्मत ही है। और पर्युषणापर्व तो दिन प्रतिबद्ध होनेसे दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने अवश्यही करने कहे हैं। इसलिये गणेशचौथकी तरह दूसरे भाद्रपदमें करें तो तीसरे महीनेके छठ्ठेपक्षमें ८० दिन होनेसे शास्त्रविरुद्ध होता है, इसलिये दूसरे भाद्रपदमें नहीं होसकते। किंतु दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने प्रथम भाद्रपदमें करना शास्त्रानुसार होनेसे आत्मार्थियोंको योग्य है। इसलिये मासप्रतिबद्ध लौकिक गणेशचौथकी तरह दिन प्रतिबद्ध लोकोत्तर पर्युषणापर्वको दूसरे भाद्रपदमें नहीं हो सकते। इसको विशेष तत्वज्ञ पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे।

२९-पौषादि मास बढतेथे तब कल्याणकादि तप कैसे करते थे ?

पौषादि मास बढनेसे दोनों महीनोंके च्यारों पक्षोंमें,-पहिले पक्षमें, या दूसरेपक्षमें, या तीसरेपक्षमें अथवा चौथेपक्षमें, जिसपक्षमें, जिसरोज, जिन जिन तीर्थंकर भगवान्‌के जो जो च्यवन-जन्मादि कल्याणक हुए होवें, उस उस पक्षमें दोनों महीनोंमें ज्ञानी-महाराजको पूछकर आराधन करतेथे. यह अनादि कालसे ऐसीही मर्यादा चली आती है। इसलिये अधिक महीनेमें कल्याणकादि

विशेष तरहसे जन स्वयं विचार सकते हैं। और इसका विशेष खुलासा इसी ग्रंथके पृष्ठ ३६२ से ३८२ तक छप गया है, उसके देखनेसे सब निर्णय हो जायेगा।

३१– पांच महीनोंके चौमासी क्षामणे संबंधी खुलासा.

पहिले पोष महीना बढताथा तबभी फाल्गुन चौमासा पांच महीनोंका होताथा, व आषाढ महीना बढताथा तबभी आषाढ चौमासा पांच महीनोंका होताथा, तैसेही अभी वर्तमानमें लौकिक श्रावणादि बढतेहैं तबभी कार्तिक चौमासा पांच महीनोंका होता है। यद्यपि सामान्य व्यवहारसे चौमासा ४ महीनोंका कहा जाता है मगर अधिक महीना होवे तब विशेष व्यवहारसे निश्चयमें पांच महीनोंके १० पाक्षिक प्रतिक्रमण सबी गच्छवालोंको प्रत्यक्षमें करनेमें आते हैं। और जितने मासपक्षोंका प्रायश्चित (दोष) लगा होवे, उतनेही मासपक्षोंकी आलोचना क्षामणा करना स्वयंसिद्धही है। और मास बढनेसे पांच महीनोंके दशपक्ष होनेपरभी उनमें ४ महीनोंके ८ पक्षोंके क्षामणा करना और दो पक्ष छोड देना सर्वथा अनुचित है। इसलिये ऊपर मुजब ३० वें नंबरके १३ मासी संवच्छरी क्षामणा संबंधी लेख मुजबही यथा अवसर पांच महीनोंके दशपक्षोंके क्षामणे करने शास्त्रानुसार युक्तियुक्त होनेसे कोईभी निषेध नहीं करसकता, इसका भी विशेष खुलासा इस ग्रंथके पृष्ठ ३६२ से ३८२ तकके क्षामणों संबंधी लेखमें छप गया है वहांसे जान लेना।

३२– १५ दिनोंके पाक्षिक क्षामणे संबंधी खुलासा।

जैन ज्योतिषके शास्त्रानुसार तो जिस पक्षमें तिथिका क्षय होवे, वो पक्ष १४ दिनोंका होता है। और जिस पक्षमें तिथिका क्षय न होवे,वो पक्ष १५ दिनोंका होता है। मगर लौकिक-टिप्पणामें तो अभी हरेक तिथियोंकी हानी और वृद्धि होती है, इसलिये कभी १३ दिनोंकाभी पक्षहोताहै, कभी १४ दिनोंकाभी पक्ष होताहै, कभी १५ दिनोंकाभी पक्ष होताहै और कभी १६ दि-... पक्ष होता है। मगर व्यवहारसे १५ दिनोंका पक्ष कहा ... है इसलिये व्यवहारसे पाक्षिक प्रतिक्रमणमें १५ दिनोंके क्षाम-... करनेमें आतेहैं. मगर निश्चयमें तो जितने रोजके कर्मबंधन

होवे, उतनेही रोजके कर्मोंकी निर्जरा होगी किंतु ज्यादे कम नहीं होगी, इसलिये निश्चय और व्यवहारके भावार्थको समझे विना शब्दमात्रको आगे करके विवाद करना विवेकी आत्मार्थियोंको तो योग्य नहींहै। इसकाभी विशेष खुलासा इसी ग्रंथके क्षामणासंबंधी लेखसे जान लेना।

३३- अपेक्षा विरुद्ध होकर आग्रह करना योग्य नहीं है।

मासवृद्धिकेअभावमें ४महीनोंकेचौमासीक्षामणे, व १२महीनोंके संवच्छरी क्षामणे करनेका कहा है, उसकी अपेक्षा समझेबिनाही मासवढनेपरभी उसीपाठको आगे करना और ५ मास १० पक्ष, व १३मास २६पक्ष शास्त्रोंमें लिखेहैं, उन पाठोंको छुपादेना, तत्वज्ञ आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है। इसीतरह पौष व चैत्रादि महीने बढे तब प्रत्येक महीनेके हिसाबसे विहार करनेवाले मुनिमहाराजोंको एक कल्प चौमासेका और नवमहीनोंके नवकल्प मिलकर दशकल्पीविहार प्रत्यक्षमें होता है। जिसपरभी महीना बढनेके अभावसंबंधी एककल्प चौमासेका और ८महीनोंके ८कल्पमिलकर ९ कल्पीविहार करनेका पाठ बतलाना और मास बढे तबभी दशकल्पी विहारको निषेध करनेके लिये भोलेजीवोंको संशयमें गेरना विवेकी सज्जनोंको योग्य नहीं है। इसीतरह मासबढनेके अभावकी अपेक्षासंबंधी हरेक बातोंको मास बढनेपर भी आगेलाकर उसका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है इसको विशेष विवेकी तत्वज्ञ पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे।

३४- विषयांतर करना योग्य नहीं है।

५० दिनोंकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषण पर्व करनेकी सत्यबात ग्रहण करसकतेनहीं और पचास दिनोंकी गिनती उडानेकेलिये ऐसा कोई दृढ बाधक प्रमाणभी दिखा सकते नहीं, इसलिये दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाका विषय छोडकर होली, दिवाली, ओली आदिक मास प्रतिबद्ध कार्योंका विषय बीचमें लाते हैं, सो असत्य आग्रहका सूचनरूप विषयांतर करना योग्य नहीं है। क्योंकि ऐसे तो मासप्रतिबद्ध कार्योंमें या मुहूर्त प्रतिबद्ध कार्योंमें कितनेही महीने, कितनेही वर्षभी छूट जातेहैं. देखो—मास प्रतिबद्ध कार्य जो एक महीनेसे करनेके होवें सो अधिक महीना होवे तब एक महीनेकी जगह कितनेक वर्ष दूसरे

महीनेमेमी किये जातेहैं। और दूज-पंचमी-अष्टमी-चतुर्दशी वगैरहके उपवास करनेका, ब्रह्मचर्य पालनेका, रात्रिभोजन त्याग करनेका इत्यादि, व्रत, नियम, पच्चखाण तो दोनों महीनोंमें दो दो वार करनेमें आते हैं। और पर्युषणपर्व तो मास बढे तो भी ५० दिनकी जगह ५१ वें दिनमी कभी नहीं होसकते. इसलिये दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्वके साथ, मास प्रतिबद्ध होली, दीवाली वगैरहका विषय लाना सो सर्वथा अनुचित है।

और महीना बढनेके अभावमें ओलियोंका पर्व छठ्ठे महीने करनेका शास्त्रोंमें कहाहै, मगर महीना बढे तबतो प्रत्यक्ष प्रमाणसे और शास्त्रीय हिसाबसे भी सातवें (७) महीने ओलियोंकापर्व होताहै, तो भी व्यवहारसे छठ्ठे महीने आंबीलकी ओलियें करनेका कहाजाताहै। जैसे—श्रीआदीश्वरभगवानने, चैत्र वदी ८ [गुजरातकी अपेक्षा फागण वदी ८] को दीक्षा अंगीकार की थी, और दीक्षाके दिनसे तपस्याका पारणा दूसरे वर्ष वैशाख शुदी ३ को हुआथा, तो भी व्यवहारसे सभी शास्त्रोंमें वर्षी तपका पारणा लिखा है. और ऐसेही वर्षीतपका पारणा सब कोई जैनीमात्र कहते हैं, मगर दिनोंकी गिनतीसे तो १३ महीनोंके ऊपर १० दिन होनेसे ४०० दिन पारणाके होते हैं, जिसमेभी कदाचित उस वर्षमें बीचमें अधिक महीना आजावे तो १४ महीनोंके ऊपर १० दिन होनेसे ४३० दिने पारणा होता है, तो भी व्यवहारसे वर्षी तपही कहा जाता है, और यह बात अभी वर्तमानमेंभी वर्षी तप करने वालोंके अनुभवमें प्रत्यक्षही आतीहै, इसलिये ४३० दिने पारणा करते हैं, तोभी व्यवहारसे वर्षीतप कहते हैं। और व्यवहारसे वर्षके ३६० दिन होते हैं मगर निश्चयमें तो ४३० दिने पारणा करने का बनताहै तो भी किसी तरहका विसंवाद या दोष नहीं आसकता. इसी तरहसे व्यवहारसे ओली ६ महीने, चौमासा ४ महीने व वार्षिक पर्व १२ महीने करनेका कहतेहैं, मगर अधिक महीना आवे, तब निश्चयमें तो, ओली ७ महीने, चौमासा ५ महीने, व वार्षिक पर्व १३ महीने होता है तोभी तत्त्व दृष्टिसे कोई तरहका विसंवाद या दोष नहीं है, मगर पर्युषण पर्वतो अधिक महीना होवे तब भी आषाढ चौमासीसे वर्षाऋतुके ५० वें दिनकी जगह ५१ वें दिनभी कभी नहीं होसकते. इसलिये मास प्रतिबद्ध होली, दीवाली, ओली वगैरहका दृष्टांत दिन प्रतिबद्ध पर्युषणामें बतलाना वि-

पर्यांतर होनेसे सर्वथा अनुचित है, इसको विशेष तत्वज्ञ जन स्वयं विचार लेवेंगे ।

३५– अधिक महीनाकी तरह क्षय महीनाभी मानना योग्य है या नहीं ?

पर्युषणादि धार्मिककार्योंका भेद समझे बिना अधिक महीनेके ३० दिनोंमें चौमासी व पर्युषणादि धर्मकार्य नहीं करनेका कितनेक लोग आग्रह करते हैं, मगर कभी कभी श्रावणादि अधिक महीनेवाला वर्षमें कार्त्तिकादि क्षयमासभी आते हैं, तबतो कार्त्तिक महीने संबंधी श्रीवीरप्रभुके निर्वाण कल्याणका तप, दीवाली पर्व, गौतम स्वामीके केवलज्ञान उत्पन्न होनेका महोत्सव, ज्ञानपंचमीका आराधन, चौमासी प्रतिक्रमण व कार्तिक पूर्णिमाका उच्छव वगैरह सभी कार्य तो उसी क्षयमासमें करते हैं। और लौकिकमें अधिकमहीना, या क्षयमहीना दोनों बरोबर माने हैं। जिसपरभी क्षय मासमें दीवालीपर्वादि धर्मकार्य करते हैं। और अधिक महीनेमें पर्युषणापर्वादि धर्मकार्य नहींकरनेका कहतेहैं। यहतो प्रत्यक्षमेंही पक्षपातका झूटा आग्रहहै- सो आत्मार्थियोंको तो करना योग्य नहींहै। इसलिये अधिक महीनेमें और क्षय महीनेमेंभी धर्मकार्य करने उचित हैं। इस बातकोभी तत्वज्ञ विवेकी पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे।

३६– धार्मिक खामणे या प्राणियोंके कर्मबंधन व आयु प्रमाणकी स्थिति किस २ संवत्सरकी अपेक्षासे मानते हैं ?

जैनशास्त्रोंमें पांच प्रकारके संवत्सर माने हैं, जिसमें नक्षत्रोंकी चालके प्रमाणसे ३२७ दिनोंका नक्षत्र संवत्सर मानते हैं। चंद्रकी चालके प्रमाणसे ३५४ दिनोंका चंद्रसंवत्सर मानते हैं। फलफूलादिक होनेमें कारणभूत ऋतु प्रतिबद्ध ३६० दिनोंका ऋतुसंवत्सर मानतेहैं। तथा अधिकमहीनाहोवे तब १३महीनोंके ३८३दिनोंका अभिवर्द्धित संवत्सर मानतेहैं, और सूर्यके दक्षिणायन उत्तरायनके प्रमाणसे ३६६ दिनोंका सूर्य संवत्सर मानते हैं। और पांच सूर्य संवत्सरोंके प्रमाणसेही १८३० दिनोंका एक युग मानते हैं। इसी युगके १८३० दिनोंका प्रमाण पांचोंही प्रकारके संवत्सरोंके हिसाबसे मिलनेकेलिये, एक युगमें दो चंद्रमास बढते हैं, सात नक्षत्रमास बढते

हैं और एकऋतुमास बढताहै, तब सब मिलकर १८३०दिनोंका एक युग पूराहोताहै, और एक युगके सभी दिनोंको अभिवर्द्धित महीनेके हिसाबसे गिने तब तो कुल ५७ अभिवर्द्धित महिनोंसेही १ युग पूरा होता है। इसलिये शास्त्रोंके नियमसे तो अधिकचंद्रमासके या अधिक नक्षत्रमासके किसीभी महीनेके १ दिनकोभी गिनतीमें निषेध करनेवाले, तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके कथनके प्रमाणका भंग करनेवाले होनेसे आशातनाके भागी बनते हैं। क्योंकी चंद्रादि अधिक महीनोंके दिनोंकी गिनती सहितही पांच वर्षोंके १ युगके १८३० दिनोंकाप्रमाण पूरा होसकताहै, अन्यथा पूरा नहीं होसकता.

और तिथि, वार, मास, पक्षादि व्यवहार चंद्रमासके हिसाबसे चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासे मानतेहैं। और प्राणियोंके कर्म बंधनकी स्थिति, व आयुप्रमाणकी स्थिति सूर्यमासके हिसाबसे सूर्य संवत्सरकी अपेक्षासे मानते हैं, इसलिये सूर्यसंवत्सरके हिसाबसेही मास, अयन, वर्ष, युग, पूर्व, पूर्वांग, पल्योपम, सागरोपमादिकके काल प्रमाणसे ४ गतियोंके सर्वजीवोंके आयुकाप्रमाण, व आठोंही प्रकारके कर्मोंकी जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टस्थितिके बंधका प्रमाण, और उत्सर्पिणी-अवसर्पिणीसे कालचक्रका प्रमाण, यहसबबातें सूर्यसंवत्सरकी अपेक्षासे मानते हैं. इसका अधिकार लोकप्रकाशादि शास्त्रोंमें प्रकटहीहै। और वार्षिकक्षामणे करनेका तो चंद्रमासके हिसाबसे चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासेमानतेहैं, मगर चंद्रसंवत्सरके ३५४ दिन होतेहैं, तो भी व्यवहारिक रूढीसे ३६० दिन कहनेमें आते हैं। तैसेही महीना बढे तब १३ महीनोंके ३९० दिन कहनेमें आते हैं, मगर कितनेक ऋतु संवत्सरकी अपेक्षासे ३६० दिनोंके वार्षिक क्षामणे करनेका कहते हैं, परंतु ऋतुसंवत्सर पूरे ३६० दिनोंका होता है, उसमें कोईभी तिथि क्षय होनेका अभाव हैं, व तीसरे वर्ष महीना बढनेकाभी अभाव है, और चंद्र संवत्सर ३५४ दिनोंका होनेसे संवत्सरीके रोज चंद्र संवत्सर पूरा होसकता है, मगर ऋतुसंवत्सर पूरा नहीं होसकता। और तिथि, वार, मास, पक्ष, वर्षका व्यवहारभी ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं चलता, किंतु चंद्र संवत्सर की अपेक्षासे चलता है, और ऋतु संवत्सरके ३६० दिनतो संवत्सरी पर्व हुए बाद ६ रोजसे दशमीको पूरे होते हैं, और संवत्सरीपर्वतो ४ या ५ को करनेमें आता है, इसलिये वार्षिक क्षामणे ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं, किंतु चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासे कर

मेका समझना चाहिये. और ३५४ दिने, या ३८३ दिने संवत्सरी-पर्वहोताहै, तोभी ३६०दिन या ३९०दिन कहनेमें आतेहै. सो ऋतुसंवत्सरसंबंधी नहीं किंतु चांद्र या अभिवर्द्धित संवत्सरसंबंधी व्यवहारसे कहनेमें आते हैं. देखो ~ चंद्रमासकी अपेक्षासे एक पक्ष १४ दिन ऊपर कुछ भाग प्रमाणे होताहै, मगर पूरे १५ दिनोंका नहीं होता, तो भी व्यवहारमें लोकसुखसे उच्चारण कर सकें इसलिये १५दिनोंका एकपक्ष कहनेमें आताहै । यह अधिकार ज्योतिषकरंडपयन्नवृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें खुलासालिखाहै । इसीतरहसे महीनेके३०दिन व वर्षके३६०दिनभी व्यवहारकी अपेक्षासे समझने चाहिये, मगर निश्चयमें तो जितने दिनोंसे संवत्सरीपर्वमें वार्षिक क्षामणे होवेंगे उतनेही दिनोंके कर्मोंकी निर्जरा होगी, किंतु ज्यादे कम नहीं हो सकेंगी ।

और संज्वलनीय, प्रत्याख्यानीय, अप्रत्याख्यानीय कषायकी अनुक्रमसे, एक पक्षके १५दिन, ४ महीनोंके १२०दिन, व १२महीनोंके ३६० दिनोंके १ वर्षकी स्थितिकाप्रमाण बतलाया है, सो, व्यवहारसे बतलायाहै । मगर निश्चयमें तो रागद्वेषादि तीव्र परिणामोंके अनुसार न्यूनादिकभी बंध पडताहै । इसलिये उसकी स्थितीके प्रमाणकी गिनती सूर्य संवत्सरकी अपेक्षासे होती है । और क्षामणे तो चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासे व्यवहारसे करनेमें आते हैं, सो उपरमें इसका खुलासा लिख चुके हैं । इसलिये ३५४ दिन वर्षके होने परभी व्यवहारिक दृष्टिसे ३६० दिनोंके क्षामणे करनेका, और कषायादि कर्मोंकीस्थिति परिपूर्ण ३६०दिनतक निश्चय भोगनेका, दोनों विषय भिन्न २ अपेक्षासे, अलग २ संवत्सरोंसंबंधी हैं, इसलिये इन्होंके आपसमें कोई तरहका विरोध भाव नहीं आसकता । जिसपरभी चंद्रसंवत्सरसंबंधी व्यवहारिक क्षामणे करनेका,और सूर्यसंवत्सरसंबंधी निश्चयमें कर्मोंकीस्थिति पूरेपूरीभोगनेका, रहस्यको समझेबिनाही अधिकमहीनेके ३०दिनोंकोगिनतीमेंलेनेका छोडदेनेके लिये, अधिक महीनेकोगिनतीमें लेवें-तो कषायस्थितिका प्रमाण बढजानेसे मर्यादाउल्लंघन होनेकाकहतेहैं,सो शास्त्रोंके मर्मको नहीं जाननेके कारणसे अ-
[illegible]

[illegible]

ड़ते हैं । इसलिये अधिक महीना गिनतीमें नहीं छुट सकता ।

और भी देखो— ३५४ दिने संवत्सरी प्रतिक्रमण करे तो भी व्यवहारमें ३६० दिनोंके क्षामणे करनेमें आते हैं, मगर अप्रत्याख्यानीय कषायके ३६० दिनोंके वर्षकी स्थितिका निश्चयमें बंध पडा होगा वह बंध, ३५४दिनोंमें (३६०दिनोंका) कभी क्षय न हो सकेगा, किंतु वो तो समय २ के हिसाबसे पूरे पूरे ३६० दिनही भोगने पडेंगे। इसीतरहसे चौमासी, व पाक्षिककाभी समझलेना. इसलिये व्यवहारिक क्षामणोंके साथ निश्चय कर्मस्थितिका दृष्टांतसे भोले जीवोंको मर्यादाउल्लंघनहोनेका भयबतलातेहुए अपनीविद्वत्ताके अभिमानसे अधिक महीना निषेध करना चाहते हैं सो शास्त्रविरुद्ध होनेसे सर्वथा अनुचितहै। इसकोभी विशेष तत्वज्ञजन स्वयं विचारलेवेंगे।

३७— चूलिका संबंधी एक अज्ञानता ॥

कितनेक लोग शास्त्रोंके रहस्यको समझे बिनाही कहतेहैं, कि जैसे-लाख योजनके मेरुपर्वतमें उसकी चूलिका नहीं गिनी जाती, तैसेही १२ महीनोंके वर्षमें अधिक महीनाभी नहीं गिना जाता। ऐसा कहकर अधिक महीनेकी गिनती उडाना चाहते हैं, सो उन्होंकी अज्ञानताहै, क्योंकि एक लाख योजनके मेरुपर्वत उपर ४० योजनकी उंची चूलिका है, उसपर एक शाश्वत जिन चैत्य है, उसमें १२० शाश्वत जिन प्रतिमायें हैं, इसलिये ४० योजनकी चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित एक लाख उपर ४०योजनके मेरुपर्वतका प्रमाण क्षेत्रसमासादि शास्त्रोंमें खुलासालिखाहै, तैसेही १२ महीनोंके ३५४ दिनोंके एकवर्षकेप्रमाणउपर अधिकमहीनेकेदिनोंकी गिनतीसहित ३८३ दिनोंका वर्षकी गिनतीमेंलियेहैं, इसलिये चूलिकाके दृष्टांतसे अधिकमहिना गिनतीमें निषेध नहींहोसकता,मगर गिनतीमें विशेष पुष्ट होताहै। औरभी देखो-पंचपरमेष्ठि मंत्र कहनेसे सामान्यतासे पांचपदोंके ३५ अक्षरोंका नवकार कहाजाताहै, मगर उसपरकी ४ चूलिकाओंके ४ पदोंके ३३ अक्षर साथमें मिलानेसे विशेषतासे नवपदोंके ६८अक्षरोंका 'नवकार' चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित कहनेमें आता है। इसतरह दशवैकालिक व आचारांगकी दो दो चूलिकाओंका प्रमाणभी गिनतीमें आता है। तैसेही सामान्यतासे एक लाख योजनका मेरुपर्वत, व १२ महीनोंका एक वर्ष कहनेमें आता है। मगर विशेषतासे तो चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित एकलाख चालीस योजनका मेरुपर्वत, व अधिक महीनेकी गिनती

ाकि पंक्तिकी समिक्षा करके (इसग्रंथमें) खुलासापूर्वक बतलाया है,
गर पर्युषणासंबंधी किसीभी लेखककी शंकाबाकी एकभी बाकी
ाही नहीं है। इसलिये इसग्रंथमें वादी प्रतिवादी दोनोंके सब पूरे
खोंको, और आगम पंचांगीके शास्त्र पाठोंको, पक्षपात रहित हो-
र न्याय बुद्धिसे संपूर्ण वांचने वाले सत्यके अभिलाषीयोंको अव-
यही जिनाज्ञानुसार सत्यकी परीक्षा स्वयंहीहो जावेगी।

४०– जिनाज्ञाकी दुर्लभता।

जैसे पुर्व दिशा तरफ कोई नगर होवे उसमें जानेके लिये
ोडा २ भी पुर्व दिशा तरफ चलनेसे अवश्यही उस नगरकी प्रा-
। होतीहै, । मगर पुर्वदिशा छोडकर पश्चिम दिशामें बहुत २ चलें-
ामी वो नगर दुर दूरही जायगा, मगर नजदीककभी नहीं आसकेगा
ीतरह जिनाज्ञानुसार थोडा २ धर्मकार्य किया हुआभी मुक्ति रूपी
ारमें आत्माको पहुचाने वाला होताहै, परंतु जिनाज्ञा विरुद्ध बहु-
२ तपश्चर्यादि धर्मध्यान व्यवहारमें करें, तो भी तत्वदृष्टिसे शून्य
ोनेसे मुक्तिनगरमें पहुचानेवाला नहीं होता.किंतु संसार बढानेवाला
ता है। और वर्तमानिक आग्रही जनोंकी भिन्न २ प्ररूपणा होनेसे
ले भव्य भद्रजीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी प्राप्ति होना ब-
त मुश्किल है. यही दशा पर्युषणा संबंधी विवादमेंभी हो गई है।
ालिये भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसार पर्युषणा जैसे उत्तमपर्वके आ-
धन होनेकी प्राप्ति होनेके लिये आगम पंचांगी सम्मत, व सब
खकोंकी शंकाओंका समाधान पूर्वक मैंने इसग्रंथमें इतना लिखा
। उसको अपने गच्छका आग्रह छोडकर तत्वदृष्टिसे पढनेवालों-
। अवश्यही जिनाज्ञानुसार सत्यकी प्राप्ति होवेगी.

और मनुष्यभवमें शुद्ध श्रद्धा पूर्वक जिनाज्ञानुसार धर्म कार्य करने-
ा सामग्री मिलना अनंतकालसे अनंत भवोंमेंभी महान् दुर्लभ है,
ारंवार ऐसा सुअवसर नहीं मिल सकता। इसलिये गच्छका पक्ष-
त,दृष्टिराग,लोकलज्जाकी शर्म, विद्वत्ताका झूठा अभिमान, जिनाज्ञा
रुद्ध अपने गच्छ परंपराकी रूढी,व बहुत समुदायकी देखादेखीकी
वृत्ति वगैरह बातोंको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यग्रहण करनेमेंही
ात्मसाधन होनेसे, नरकादि ४ गतियोंके जन्म-मरण-गर्भावास
ौरह अनंत दुखोंसे छुटना होता है, इसलिये जिनाज्ञानुसार सत्य-
ा समझे बादसी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे भोलेजीवोंको उन्मार्गमें

गेरनेकेलिये विद्वत्ताके अभिमानसे शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर झूठी २ कुयुक्तियें लगाना संसार वृद्धि व दुर्लभबोधि का कारण होनेसे आत्मार्थीयोंको सर्वथा योग्य नहीं है।

४१– पर्युषणापर्व ईधरके उधर कभी नहीं होसकते.

कितनेक लोग जिनाज्ञाका मर्म समझे विनाही कहते हैं, कि-पर्युषणापर्व अधिक महीना होंवे तब ५० दिने करो, या ८० दिने करो, मगर आगे या पिछे कभी करने चाहिये. ऐसा कहनेवाले सोने और पितल दोनोंको समान बनानेकी तरह जिनाज्ञानुसार सत्य बातको, और जिनाज्ञा विरुद्ध झुठी बातको, एक समान ठहराते हैं। इसलिये उन्होंका कथन प्रमाणभूत नहीं होसकता. किंतु मोक्षका हेतुभूत जिनाज्ञानुसार ५० दिनेही पर्युषणा पर्वका आराधना करना योग्य है, मगर ८० दिने करना जिनाज्ञा विरुद्ध होनेसे कदापि योग्य नहीं ठहर सकता. देखो—जमालि वगैरहोंने जप, तप, ध्यान, आगमोंका अध्ययन, परोपदेश, क्रिया अनुष्ठानादि बहुत २ किये थे तो भी जिनाज्ञा विरुद्ध होनेसे संसार बढाने वाले हुए, मगर वही कार्य अनुष्ठान जिनाज्ञानुसार करते तो निश्चय उसी भवमें मोक्ष प्राप्त करने वाले होते. इसलिये आत्मार्थी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारही ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करना योग्य है, मगर जिनाज्ञा विरुद्ध ८० दिने करना योग्य नहीं है। इसको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार लेवेंगे।

४२– पर्युषणा पर्वकी आराधना करनेके बदले विराधना करना योग्य नहीं है।

पर्युषणा जैसे आनंद मंगलमय शांतिके दिनोंमें जिनाज्ञानुसार धर्मकार्य करके पर्वकी आराधना करते हुए, सब जीवोंसे मैत्रभाव पुर्वक शांततासे वर्ताव करनाचाहिये. और वर्ष भरके लगेहुए अतिचारोंकी आलोचना करके सब जीवोंके साथ भावपूर्वक क्षमत क्षामणे करके अपनी आत्माको निर्मल करना चाहिये। जिसके बदले कितनेही आमही जन पर्युषणाकेही व्याख्यानमें सुबोधिका-दीपिका-कीरणावलि आदि वांचनेके समय श्रीमहावीर स्वामीके छ कल्याणक आगमोंमेंकहेहैं उन्होंको व अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लियेहैं उन्होंको निषेध करनेकेलिये,कितनीही जगहतो शास्त्रविरुद्ध,व कित-

ही जगह प्रत्यक्ष मिथ्या कथन करके, आपसमेंही खंडनमंडनके गड़े चलातेहैं, और सब जीवोंकी जगह केवल जैनीमात्रसेभी मित्रता हीं रख सकते, उससे मैत्री भावनाका भंग, विरोधभावकी वृद्धि खंडन मंडनसें रागद्वेष करके कर्म बंधनका कारण करते हैं। औ शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करनेसे जिनाज्ञाकीभी विराधना करते हैं- ससे परिणामोंकी मलिनता होनेंसे पर्व दिनोंमें वर्षभरके आतिचा- की आलोचना करके आत्माको निर्मल करनेकेबदले विशेष मली- करते है। और खंडन मंडनके झगडेके लिये सब जीवोंसे क्षमत मने करनेकेबदले अपने सब जैनीभाईयोंसेभी क्षमत क्षामणे नहीं रसकते. उससे अनन्तानुबंधी कषायके उदय होनेका प्रसंग आनेसे सम्यक्त्वकी व संयमकी विराधना होकर संसार भ्रमणका कारण रते हैं. इसलिये कर्मक्षय कारक महा मंगलमय शांतिके दिनोंमें ल्पसूत्रमें श्री महावीरस्वामीके छ कल्याणक आगमोंमें कहेहैं उ- न्होंको व अधिक महिनेके ३० दिनोंको गिनतीमें लिये हैं उन्होंको नेष करनेके लिये खंडनमंडनके विवादके झगडे कितनेक तपगच्छ मुनि महाराज जो चलातेहैं सो पर्वकी विराधना करनेवाले, [illegible] भंग करनेवाले, अनन्तकाल अशांतिको बढानेवाले, व आगु- [illegible] संसार बढानेवाले होनेसे, सत्यग्राही, विवेकी, आत्मार्थी- [illegible], सज्जनोंको अवश्यही छोडना योग्य है। इसको विशेष [illegible] पाठकगण स्वयं विचार सकते हैं।

४३ पर्युषणाके मांगलिक दिनोंमें क्लेशकारक अमांग- लिक करना योग्य नहीं है।

[illegible] प्रत्यक्ष अनुभवपूर्वक देखनेमें आती है, कि [illegible] कार्तिक [illegible] सुखशांतिसे हर्षपूर्वक व्यतीत होवे, [illegible] सुखशांतिसे व्यतीत होता है, मगर मांगलिकरूप [illegible] दिनोंमें [illegible] मात्र [illegible] होकर [illegible] होवे [illegible], बल्कि [illegible] आता है। इसलिये [illegible] दिनोंमें [illegible] शांति रखना योग्य है। इसप्रकार [illegible] [illegible] मुनिमहारा- [illegible] दिनोंमें शांतिसे नहीं बैठने, [illegible] [illegible] आगमपाठोंसे अने-

क शास्त्रोंमें कहेहैं उन्होंकों, व अधिकमहीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये हैं, उन्होंकोंनिषेधकरनेकेलिये. अपनेधर्मबंधुओंके सामने व्याख्यानमें महाशांतिके हेतुभूत व अमंगलरूप आपसके खंडनमंडनसे विरोध भा

[illegible]

ता करनेके बदले उसमें कोईभी अवगुण बतलाकर उसका खंडन करनेमें इत्यादि अमंगलरूप कलेशके कार्योंमें वर्ष चला जाता है। इसलिये दिनोंदिन शासनकी यह दशा होती हुई चली आती है। और इससे अपने आत्मके कल्याणमें व परोपकारके कार्योंमेंभी विघ्न आतेहैं। इसलिये मंगलिकरूप पर्वके दिनोंमें अमंगलिकरूप खंडन-मंडनसंबंधी विरोधभाव करना सर्वथा अनुचितहै। और अपनी सर्चाई जमानेकेलिये खंडनमंडन वैरविरोधके झगडेही करनेकी इच्छा हो तो पर्व दिन छोडकर अन्यसी बहुत दिन मौजूद हैं, मगर पर्युषणा पर्व आराधन करनेके लिये सबगच्छवाले श्रावक मुनिराजोंके पास उपाश्रय-धर्मशालामें आवें, उस वखत अपने आपसके खंडनमंडनके विरोधभाववाली बात चलाना, यह कितनी बडी अनुचित बात है। और मंगलिकरूपपर्वदिन किसीप्रकारसेभी कलेशकारक खंडनमंडनके विरोधभावसे अमंगलिकरूप नबनकर शास्त्रानुसार शांतिसे पर्वकाआराधन होवे तो आत्माभी निर्मल होवे, पर्वभी हर्षपूर्वक सुखशांतिसे जावे, बुद्धिभी अच्छी होवे, और आत्मसाधन व परोपकारभी विशेषरूपसे होवे, संपसे शासन उन्नतिके कार्योंमेंभी वृद्धि होनेसे वर्तमानिक दशाकाभी सुधारा होवे। इसलिये वार्षिक पर्वरूप पर्युषणा शांतिमय सब जीवोंके साथ मैत्रिभावपूर्वक आराधन करके उसमें मांगलिकके कार्य करने चाहिये। और विरोधभावके कारणरूप खंडनमंडनके अनुचित वर्तावको छोडनाही अपनेको व दूसरे भव्यजीवोंकोंभी कल्याणकारक है। और शासनकी उन्नतिकाभी हेतुभूत है. इसवास्ते जो आत्मार्थी होगा सो दीर्घ दृष्टिसे खूब विचारेगा और उपर मुजब शास्त्रविरुद्ध अनुचित व्यवहारको छोडकर, शास्त्रानुसार उचित व्यवहारको अवश्यमेव ही ग्रहण करेगा, व दूसरोंकोंभी ग्रहण करावेगा.

ध्यके भागी होते हैं, और अपने कुलको गच्छको समुदायकोभी सद्गतिके भागी बनाते हैं व आपभी अपनी आत्माको निर्मल करके अल्पकालमें निर्वाण प्राप्त करनेवाले होते हैं, गणधरादि उपकारी महाराजोंकी तरह। इसलिये संसारसे डरनेवाले आत्मार्थियोंको झूठा आग्रह छोड़कर बगैर विलंबसे सत्यग्रहण करना चाहिये, और अन्यभद्र जीवोंकोभी सत्य ग्रहण करवाना चाहिये । इसको विशेष विवेकी निष्पक्षपाती पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे।

४७- सुबोधिका-दीपिका-किरणावली वगैरहके पर्युषणा व छ कल्याणक संबंधी शास्त्रविरुद्ध भूलोंको सुधारनेकी खास आवश्यकताहै.

१- जैनपंचांगके अभावसे अभी महीना बढे तो भी "जैन टिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाषाढ एव वर्धते, तच्चेदानीं सम्यग् न ज्ञायते, ततः पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः" इस वाक्यसे सुबोधिका--दीपिका किरणावली इन तीनों टीकाकारोंने अपने तपगच्छकेही पूर्वाचार्योंकी आज्ञासे ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वकी आराधना करनेका लिखा, और उसीकोही उत्थापन करके ८० दिने शास्त्रविरुद्ध होकर कुयुक्तियोंका संग्रह किया है, यह सबसे बडी प्रथम भूलकीहै, उसको बगैर विलंबसे खास सुधारनेकी आवश्यकता है ।

२- निशीथ चूर्णिमें अधिक महीनेको कालचूला कहकर उसके ३० दिन पर्युषणासंबंधी गिनतीमें लियेहैं, उसकोभी कालचूलाके अभावसे निषेध किये सो दूसरी भूलकी है।

३- निशीथ चूर्णिके अधिकमासके अभाव संबंधी पाठके अक्षरोंको बतलाकर अभी दो श्रावण होवे तबभी शास्त्रविरुद्ध ८० दिने पर्युषणापर्वका मत न करके भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका हठाग्रह सो तीसरी भूलकी है।

४- अधिक महीनेके अभावसे सामान्यतासे पर्युषणाके पिछाडी कार्तिकतक ७० दिन रहनेका कहा है, उसको शास्त्र बिना अधिक महीना होवे तब पिछाडीसे १०० दिन होते हैं उसको भी कही ७० दिन रहनेका आग्रह दिखाते सो चौथी भूलकी है।

५- पौष-आषाढ-श्रावणादि बढ़ें तब पांच महीनोंसे फाल्गुन-आषाढ-कार्तिकमें चौमासी प्रतिक्रमण करनेमें आता है, जिसपरभी श्रावणादि बढ़ें तब आसोजमेंकी महीनोंसे चौमासी प्रतिक्रमण करनेका बतलाया सो भी पांचवी भूलकी है।

६- पहिले मास बढ़ताथा तबभी २०दिने वार्षिक कार्यकरतेथे, उसको सर्वथा उडादिये सो यह छट्ठी भूलकी है।

७- मास बढे तब १३ महीनोंके क्षामणे वार्षिक प्रतिक्रमणमें या पांचमहीनोंके क्षामणे चौमासी प्रतिक्रमणमें हम लोग करते हैं, जिसपरभी१२महीनोंके वार्षिक क्षामणे या ४ महीनोंके चौमासी क्षामणे करनेका प्रत्यक्ष झूठ लिखा सोभी यह सातवी भूलकी है।

८- पौष-चैत्रादि महीने बढ़ें तब प्रत्यक्षमें १० कल्पी विहार होता है, जिसपरभी मास वृद्धिके अभावसंबंधी ९कल्पी विहारकी बात बतलाकर १० कल्पीविहारका निषेध किया सोभी यह आठवी भूलकी है।

९- अधिक महीनेमें सूर्योचार होता है, जिसपरभी नहीं होनेका बतलाया सोभी यह नवमी भूलकी है।

१०- श्रावणादि महीने बढे, तब उसकी गिनतीसहित पांचवें महीनेके मध्यमें पक्षमें ४॥ महीनोंसे दिवाली पर्व करनेमें आता है, और कभी दो कार्तिक महीने होवे तब प्रथम कार्तिक महीनेमें दीवाली पर्व करनेमें आताहै. जिसपरभी दिवाली वगैरह पर्वोमें अधिक महीना नहींगिननेका प्रत्यक्षही झूट लिखा सोभी यह दशवी भूलकीहै

११-यज्ञोपवित, दीक्षा, प्रतिष्ठा, विवाह, शान्ती वगैरह मुहूर्तवाले कार्य तो अधिक महीनेमें, क्षय महीनेमें, चौमासेमें, और सिंहस्था [illegible] पर्व तो अधिक [illegible] भी करते हैं। [illegible] पर्युषणा करनेकाभी निषेध किया सो यहभी जिनाज्ञा विरुद्ध उत्सूत्रप्ररूपणारूप इग्यारहवी भूलकी है.

१२- ५०दिने प्रथमभाद्रपदमें पर्युषणाकरनाथादिये जिसकेबदले दूसरे भाद्रपदमें करनेका लिखा सो ८० दिन होनेसे यहभी शास्त्र-विरुद्ध बारहवी भूल की है।

१३- जैसे देवपूजा, मुनिदान आवश्यकादि कार्य दिन प्रतिबद्ध हैं, वैसेही पर्युषणापर्व भी ५० दिन प्रतिबद्धहैं, इसलिये जैसे अधिक

महीनेके ३० दिन देवपूजा मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें आते हैं, तैसेही पर्युषणामेंभी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें आते हैं, जिसपरभी पर्युषणामें अधिक महीनेंके ३० दिन नहीं गिननेका लिखा सोभी यह तेरहवी भूलकीहै ।

१४- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति बढती है। व फूल-फलादि भी होते हैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ समझे बिनाही अधिक महीनेमें वनस्पति पुष्पवाली नहीं होनेका लिखा सोभी यह चौदहवीं भूलकी है ।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेकेलिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप बहुत भूलेंकी हैं उन्होंकों खास सुधारनेकी आवश्यकता है ।

अब श्रीमहावीरस्वामिके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने संबंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं ।

१५- तीर्थंकर महराजोंके च्यवन-जन्मादिकोंको कल्याणकपना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो, चाहे च्यवनादि स्थान कहो, या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्द अनेकार्थवालेहैं तोभी तीर्थंकरमहाराजके चरित्रमें प्रसंगसे च्यवन जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायसूचक शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामिके तथा श्री नेमिनाथ स्वामिके च्यवनादि पांच पांच कल्याणकोंकी तरहही श्री महावीर स्वामिकेभी च्यवनादि पांच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छठा निर्वाण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूर्वककहाहै । जिसका मर्म समझे विना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थमें च्यवनादि छकल्याणकोंका निषेध करनेकेलिये छ वस्तु या स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थको उडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापन करनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसे बडी पंद्रहवी भूलकी है ।

१६- श्रीमहावीर स्वामिके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुआ, तथा इन्द्र महाराजने अवधिज्ञानसे भगवानको देखे भी नहीं और नमुत्थुणं वगैरह कुछभी नहीं किया, तोभी उन्हीको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हीकी सबी टीकाओंके अनुसार तो यही सिद्ध होता है, कि- ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे भगवानको देखे, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उतरके वार विधिपूर्वक 'नमुत्थु णं' किया और हरिणेगमेषिदेवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने आसोज वदी १३ की रात्रिको तीर्थंकर भगवानके अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखे हैं। और कलिकाल सर्वज्ञ बिरुद धारक श्रीहेमचन्द्रसूरिजी महाराजने तो 'श्रीत्रिषष्टिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवेपर्वमें श्रीमहावीरस्वामिके चरित्रमें लिखाहै, कि-गर्भापहारकेदिन आसोजवदी १३को इन्द्रमहाराजकाआसनचलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवानको देखकर नमस्काररूप 'नमुत्थु णं' किया और हरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके

[illegible]

उसका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहाहै, तथा धनदभंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बातें च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयी हैं। इसलिये इन्द्रको गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते हैं। उसका भावार्थ समझे बिनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवानके राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहीं हैं इसलिये राज्याभिषेकको कोईभी कल्याणक नहीं मानसकते. परंतु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजने किया, और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया, उसकी यादगिरीके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलाया है, उसका भावार्थ समझे बिना उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना सोभी गर्भापहारके और राज्याभिषेकके

भावार्थको समझे बिना व्यर्थ ही यह सोलहवी बडी भूलकीहै।

१७– जैसे श्री मल्लीनाथस्वामि स्त्रीत्वपनमें तीर्थंकर उत्पन्न हुयेहैं सो विशेषतासे प्रसिद्धही है, तो भी चौवीश तीर्थंकरमहाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे श्री मल्लीनाथ स्वामीकोभी पुरुषत्वपनेमें क-हनेमें आते हैं. मगर उसमे सामान्य विशेष संबंधी अपेक्षाकी भिन्न-ता होनेसे कोई तरहका विरोध भाव नहीं आ सकता। तैसेही श्रीमहावीर स्वामीकेभी विशेषतासे छ कल्याणक आचारांग-स्था-नांग– कल्पसूत्रादि आगमोंमें कहेहैं. तो भी अतित, अनागत, और वर्तमान कालसंबंधी भरतक्षेत्रके तथा ऐरवर्त क्षेत्रके सबी तीर्थंकर महाराजों की अपेक्षासे सामान्यतासे श्रीमहावीर स्वामिके भी पांच कल्याणक 'पंचाशक सूत्रवृत्ति' में कहे हैं, मगर उसमें सामान्य विशेष अपेक्षाकी भिन्नता होनेसे इनके आपसमें कोई तरहका विरो-धभाव नहीं आ सकता, जिसपरभी आचारांग, स्थानांगादि आग-मोंके छ कल्याणक संबंधी विशेषताके और 'पंचाशक' के पांच कल्याणक संबंधी सामान्यताके अभिप्रायको समझे बिनाही सामा-न्य पांच कल्याणक संबंधी पूर्वापार संबंध बिनाका अधूरापाठ भोले जीवोंको बतलाकर आगमोंमें विशेषतापूर्वक छ कल्याण-क कहे हैं उन्होंका निषेध करनेके लिये आग्रह किया है,सो भी अज्ञानता जनक सर्वथा अनुचित यह सत्तरहवी बडी भूलकी है।

१८– आचारांग, स्थानांगादि मूल आगमोंमें च्यवनादि अलग २ छ कल्याणक खुलासा पूर्वक बतलाये हैं, और उन्होंकी टीकाओंमे-भी कल्याणक अर्थकी सूचना करनेवाले पर्यायवाचक च्यवनादि छ स्थान बतलाये हैं उसका भावार्थ समझे बिनाही च्यवनादि कोंकों वस्तु या स्थान कहकर कल्याणकपनेका सर्वथा निषेध कि-या सोभी अनीयगहनाशयवाले आगमोंके भावार्थका अज्ञानपना हो-नेसे यहभी अठारहवी बडी भूलकी है।

१९– आषाढ शुदी ६ को भगवान देवानन्दामाताकी कुक्षिमें आ-ये, सो नीचगोत्रके कर्म विपाकका उदयरूप है, इसीलियेही शास्त्रका-रोंने आश्चर्यरूप अछेरा कहा है तोभी उसको प्रथम च्यवनकल्या-णक मानते हैं। और नीच गोत्रका कर्मविपाक क्षय हुए बाद उंच-गोत्रके कर्मविपाकका उदय होनेसे आसोज वदी १३ को त्रिशला-माताकी कुक्षिमें उत्तम कुलमें भगवान् पधारे तब अनादि मर्या-

हामुजब तीर्थंकरमहाराजोंकी माताओंकेगर्भमें तीर्थंकर उत्पन्न होने-
की सूचना करने वाले १४ महास्वप्न देखनेकी तरहही त्रिशलामाता-
नेंभी१४महास्वप्न आकाशसे उतरते हुएदेखेहैं,इसलिये यहतो दूसरा
च्यवनरूप कल्याणकपना प्रत्यक्षमेंही सिद्धहै। उन्हीको नीचगोत्रका
विपाकरूप और आश्चर्यरूप कहकर कल्याणकपनेका निषेध किया
सो यहभी पक्षोत्पणवालोंकीभी बडी भूलकी है।

२०- जैसे देवलोकसे देवभवसंबंधी आयु पूर्ण होने पर वहांसे
च्यवनरूप कारण होनेसे माताकेगर्भमें उत्पन्न होनेरूप (अवतार लेने
रूप) कल्याणकपनेका कार्य होता है, तो भी कारण कार्य भावसे
च्यवनकोही कल्याणकपना कहनेमें आता है। तैसेही गर्भापहाररूप
कारणहोनेसे तीर्थंकर पनेमें प्रकट होनेकेलिये गर्भसंक्रमणरूप(अव-
तारलेनेरूप) दूसराच्यवनरूप कल्याणकपनेका कार्य हुआ है, तोभी
कारण कार्यभावसे गर्भापहारको कल्याणकपना कहनेमें आताहै।
इसलिये उनको गर्भापहार कहो, गर्भसंक्रमण कहो, त्रिशलाकुक्षि-
में अवतार लेनेका कहो,या दूसराच्यवनरूप कल्याणक कहो. सबका
तात्पर्यार्थसे भावार्थ एकही है, इनमे किसी तरहका विरोध नहीं है.
इसप्रकार तीर्थंकरपनेमें प्रकट होनेके लिये त्रिशलाके गर्भमें अवता-
र लेनेरूप गर्भापहारके उत्तम कार्यके भावार्थको समझे विनाही ग-
र्भापहारको अतिनिंदनीक कहतेहैं सो तीर्थंकर भगवान्के अवर्णवाद
बोलनेरूप (आशातनाकरनेरूप) दुर्लभ बोधिपनेकी हेतुभूत यहभी
बीशवीं बडी भूल की है।

२१- जैसे श्रीआदीश्वर भगवान् १०८ मुनियोंके साथ एक स-
मयमें अष्टापदपर्वत ऊपर मोक्ष पधारे, उनको आश्चर्यरूप कहते हैं,
तो भी मोक्ष कल्याणकभी मानतेहैं. तथा श्रीमल्लीनाथ स्वामिके ज-
न्म, दीक्षा, व केवलज्ञानकी उत्पत्ति वगैरह सर्व कार्य स्त्रीपनेमें
हुए हैं, उन्होंको आश्चर्य कारक अच्छेरे कहते हैं. तोभी उन्होंकोही
जन्म, दीक्षादिक कल्याणकभी मानतेहैं। तैसे ही श्रीमहावीरस्वामि-
के गर्भापहारको आश्चर्य कारक अच्छेरा कहते हैं, तो भी उनको दू-
सरा च्यवनरूप कल्याणक माननेमें आता है. उसका आशय समझे-
विनाही गर्भापहारको आश्चर्य कहके कल्याणकपनेका निषेध किया
सोभी अज्ञानताजनक यह एकवीशवीं बडी भूल की है।

२२- जैसे श्रीसिद्धसेनदीवाकरसूरिजी महाराजने उज्जैनीनगरीमें

दबीहुई श्रीपर्वतिपार्श्वनाथजीकी प्राचीनप्रतिमाको फिरसे प्रकट करी, तथा गुजरातमें अणहिल्लपुर पाटणमें शिथिलाचारी चैत्यवासियोंने संयमधर्मको दबादियाथा, उसको श्रीजिनेश्वरसूरीजीमहाराजने यहां आकर फिरसे प्रकटकिया और श्रीनवांगीवृत्तिकारक खरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजने श्री स्थंभनपार्श्वनाथजीकी प्रतिमाको प्रकट करी. तैसेही कल्प-स्थानांग-दशा श्रुतस्कंध आचारांगादि आगमोंमें कहेहुए श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकोंको, मेवाडदेशमें चितोडनगरमें शिथिलाचारी, लिंगधारी, चैत्यवासियोंने दबा दिये थे, उन्होंकोंही श्री जिनवल्लभसूरिजी महाराजनें यहां आकर फिरसे प्रकट किये हैं, सो शास्त्रविरुद्ध नवीन नहीं किंतु आगमोक्त प्राचीनही हैं. जिसका भावार्थ समझे विनाही नवीन प्रकट करनेका कहतेहैं, सोभी अज्ञानता जनक प्रत्यक्षही मिथ्या भाषणरूप यह बावीशवीभी बडी भूल की है।

२३- जैसे अभी वर्तमानिक गच्छोंके पक्षपाती जन अहमदाबाद वगैरह शहरोंमें अपने गच्छके उपाश्रय या धर्मशाला वगैरह मकान खाली पडे होंवे तोभी अन्य गच्छवाले शुद्ध संयमी मुनियोंको उसमें ठहरने नहीं देते. और यति लोकभी अपने गच्छके आश्रित भगवान्‌के मंदिरमें अन्य गच्छके यतिको स्नात्र महोत्सवादि पूजा पढानें नहीं देते, जिसपरभी अन्यगच्छवाला यति अपनेगच्छके आश्रितमंदिरमें स्नात्रमहोत्सवादि पूजापढानेकोआवेंतो, वोलोग मरणे-मारणे-शिरफोडनेको तैयार होतेथे, और कहतेथे, कि-ऐसाकभी पहिले हुआ नहीं और अभी होनेदेंगेभी नहीं. यहबात गच्छोंके विरोधभावसे मारवाड, गुजरात वगैरहदेशोंमें पहिले प्रसिद्धहीथी और कोई शहरोंमें अबीभी देखनेंमें आतीहै। इसीतरहसेही पहिले चैत्यवासीलोगभी आपसके द्वेषसे या लोभदशासे अपने गच्छके आश्रित मंदिरमें अन्यगच्छवालेको स्नात्रपूजा महोत्सव, प्रतिष्ठादि कार्य नहींकरने देतेथे. उस अवसरमें श्री जिनवल्लभसूरिजी महाराज गुजरात देशसे विहार करके मेवाडदेशमें विशेष लाभ जानकर जिनाज्ञाविरुद्ध शिथिलाचारी चैत्यवासियोंका अविधिमार्गका खंडन करतेहुए, जिनाज्ञानुसार शुद्ध विधिमार्गका उपदेशद्वारा स्थापन करते हुए, भव्यजीवोंके उपकार केलिये चितोडनगरमेंपधारे। तब वहां वाले चैत्यवासियोंनें और उन्होंके पक्षपाती भक्तलोगोंने अपनी भूल प्रकटहोनेके भयसे महाराजको शहरमें ठहरनेके लिये कोईभी जगह नहीं दिया और द्वेषबुद्धिसे

चामुंडिया देवीके मंदीरमें ठहरनेका बतलाया, तब महाराज तो देवीकी आज्ञालेकर वहांही ठहरे. उनके संयमानुष्ठान, जप, तप, ध्यान, धैर्य, ज्ञानादिगुण देखकर देवीभी प्रसन्न होकर जीवहिंसा छोडकर, जीवदया पालनेवाली व महाराजकी भक्ति करनेवाली होगई. और शहर वालेभी पुण्यवान भव्यजीव जिनाज्ञानुसार सत्यधर्मकी परीक्षा करनेको वहां महाराजकेपास थोडे २ आनेलगे. और अन्य दर्शनियोंमेंभी महाराजके विद्वत्ताकी बडी भारी प्रसिद्धि होनेसे बहुत लोग अपना संशय निवारण करनेकेलिये महाराजकेपास आनेलगे, शहरभरमें बहुत प्रसंशा होनेलगी, तब कितनेक गुणग्राहीश्रावकलोगभी महाराजको गीतार्थ, शुद्धसंयमी और शास्त्रानुसार विधिमार्गकी सत्यबातें बतलानेवाले जानकर, चैत्यवासियोंकी शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाकी तथा चैत्यकी पैदाससे अपनी आजीविका चलानेकी स्वार्थीकल्पितबातोंको छोडकर महाराजकेपास शास्त्रानुसार सत्यबातोंको ग्रहण करनेवाले होगये, पीछे महाराजका चौमासाभी वहां करवाया. तब तो महाराज चैत्यवासियोंकी शिथिलता और अविधिको खूब जोरशोरसे निषेध करने लगे और जिनाज्ञानुसार विधिमार्गकी सत्यबातें विशेषरूपसे प्रकाशित करनेलगे, उसको देखकर बहुत भव्यजीव चैत्यवासियोंकी मायाजालसे छुटकर शास्त्रानुसार क्रिया अनुष्ठान करने लगे। तबतो चैत्यवासी लोग महाराजपर बहुत नाराज होगये और अपनी शास्त्रविरुद्ध भूलोंको सुधारनेके बदले पांचसौ चैत्यवासी इकट्ठे होकर लकडीयें वगैरह हाथमें लेकर महाराजको मारनेकेलिये आये, इसबातकी अच्छे २ आगेवान श्रावकोंद्वारा चितोड नगरके राजाको मालूम पडनेसे महाराज ऊपरका यह उपसर्ग रा-

[illegible]

लगे, तब पहिलेके विरोधभावके कारणसे राज्यमान आगेवान् श्रावकलोग साथमेंथे इसलिये चैत्यवासीलोग तो कुछबोल सके नहीं, मगर एक चैत्यवासीनी बुढिया अपने तुच्छ स्वभावसे अपनेगच्छके आश्रित मंदिरके दरवाजेपर आडी सोगई और क्रोधसे बोलने लगी कि 'पहिले ऐसा कभी हुआ नहीं और यह अभी करते हैं तो मेरे जीवते तो मंदिरमेंनहींजानेदूंगी, मेरेको मारकर पीछेमले अंदर आवो'

ऐसा उस चैत्यवासीनी बुढियाका क्रोधसहित अनुचितवर्तावको देखकर यद्यपि श्रावक लोग उसको दरवाजेसे हटाकर मंदिरमें दर्शन करनेको जा सकतेथे, तोभी स्त्रीकेसाथ ऐसा करना योग्य न समझ कर महाराजकेसाथ पीछे अपने स्थानपर चले आये. इत्यादि 'गणधरसार्धशतक' बृहद्वृत्ति वगैरहमें श्रीजिनवल्लभसूरिजीमहाराजका चरित्रसंबंधी पूर्वापरके आगे पीछेके प्रसंगको, व चितोड निवासी चैत्यवासियोंके विरोधभावको, विवेकीबुद्धिसे समझेविनाही अथवा तो जानबुझकर आगे पीछेका संबंधको छुपाकरके कितनेकलोग कहतेहैं, कि- ' श्रीजिनवल्लभसूरिजीने चितोडनगरमें छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणाकरी उसको बुढियाने मना किया तो भी माना नहीं.' ऐसा कहनेवाले अपनी अज्ञानता प्रकट करते हैं, क्योंकि देखो यो चैत्यवासीनी बुढिया अज्ञानी आगमोंके भावार्थको नहीं जाननेवालीथी, व शिथिलाचारी होकर अपनी आजीविकाके लिये चैत्यमें रहकरके चैत्यकी पैदाससे अपना गुजरानकरतीथी. और श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज चैत्यमें [मंदिरमें] रहनेका, व उसकी पैदाससे अपनी आजीविका चलानेका निषेध करनेवाले, तथा शास्त्रानुसार व्यवहार करनेवाले शुद्ध संयमी थे. इसलिये चितोडके सब चैत्यवासियोंकी तरह यह बुढियाभी महाराजसे द्वेष धारण करने वालीथी. और बुढियाके जन्मभरमें भी उसके सामने कोई भी शुद्ध संयमी चैत्यवासका निषेद्ध करनेवाला चितोड नगरमें पहिले कभी नहीं आयाथा. उससेही शास्त्रानुसार विधि मार्गकी बातोंकी उसको मालूम नहींथी. इसलिये इनमहाराजका आगमानुसार छठे कल्याणकका कथनभी उसबुढीयाको नवीन मालुमपडा. और अपने विरुद्ध चैत्यवासका तथा उससे अपनी आजीविका चलानेकी बातका खंडन करनेवाला तथा अपनी शिथिलाचारकी भूलोंको प्रकटकरनेवाला, ऐसा अपना विरोधी अपने तावेके मंदिरमें अपने सामने चला आवे सो इस बुढियासे सहन नहीं होसका. इसलिये क्रोधसे मंदिरके दरवाजे आडी पड गई, सो उस निर्विवेकी अज्ञानी क्रोधसे विरोध भाव धारण करने वाली बुढियाके कहनेसे प्रत्यक्ष आगम प्रमाण मंजूर होनेसे छठा कल्याणक नवीन नहीं ठहर सकता. जिसपरभी उस बुढियाके अज्ञानतामूलक वचनोंका भावार्थ समझेविनाही इस चैत्यवासीनी बुढियाकी परंपरावाले अभी वर्तमानमेंभी कितनेक आग्रही उन अज्ञानतासे बुढियाकी तरह द्वेष बुद्धिसे, छठे कल्या-

को च्यवन कल्याणकपना प्रकट तया सिद्धकरनेकेलियेही खासकल्प सूत्रमेंही च्यवनकल्याणकके सर्व कार्य देवानंदा मातासंबंधी वर्णन नहीं किये,किंतु त्रिशलामाता संबंधी वर्णन किये हैं,तथा समवायांग सूत्रवृत्तिमेंभी देवानंदामाताके गर्भसे८२दिन गयेबाद त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको अलग२भव गिनतीमें लियेहैं और कल्पसूत्र तथाउन्हीं की सबी टीकाओंमें तथा श्रीवीरचरित्रादि अनेकशास्त्रोंमेंभीदेवानंदा माताकेगर्भसे८२दिन गयेबाद,आसोजवदी१३को त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आयेहैं, यह अधिकार बहुत विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ कथन किया है। इसलिये देवानंदामाताकी कुक्षिसे जन्म होनेके बदले त्रिशलामाताकी कुक्षिसे जन्म होने संबंधी किसी तरहकीभी असंगतिरूप शंका नहीं हो सकती.जिसपरभी असंगतिरूप शंका निवारण करनेकेलिये गर्भापहारका नक्षत्रबतलानेका कहकर, उनमें अलग २ भव गिनने व १४ महास्वप्न देखने वगैरह बातोंको सर्वथा उडाकर दूसराच्यवनरूप गर्भापहारको कल्याणकपने रहित ठहरातेहैं और बहुततुच्छ समझकर बडीनिंदाकरीहै सोयहभी माया वृत्तिसे तीर्थंकरभगवान्की आशातनारूप चौवीशवी बडीभूलकीहै.

२५- श्रीऋषभदेवआदि तीर्थंकर महाराज पहिले होगये,तथा श्री सीमंधरस्वामिआदि वर्तमानमें हैं.उन्हीं सबीनें श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणक कथन कियेहैं, उन्होंकेही अनुसार गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंनेभी आचारांग, स्थानांगादि आगमोंमेंभी च्यवनादि छ कल्याणक कथन किये हैं, उसीकेही अनुसार तपगच्छके पूर्वज बडगच्छके श्रीविनयचंद्रसूरिजीने कल्पसूत्रके निरूक्तमें, तथा चंद्रगच्छके श्रीपृथ्वीचंद्रसूरिजीने कल्पसूत्रके टिप्पणमें और श्री पार्श्वनाथस्वामिकी पट्टपरंपरामें उपकेशगच्छीय श्रीदेवगुप्तसूरिजीने कल्पसूत्रकी टीकामें इत्यादि अनेक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी खुलासा पूर्वक च्यवनादि छ कल्याणक लिखे हैं। उसीकेही अनुसार तपगच्छकेभी पूर्वाचार्य श्रीकुलमंडनसूरिजी वगैरहोंनेभी श्रीकल्पावचूरि आदिमें च्यवनादि छ कल्याणक लिखे हैं। इसलिये श्रीतीर्थंकर- गणधर- पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके प्राचीन समयसेही आगमानुसार आत्मार्थी सर्व गच्छवाले च्यवनादि छ कल्याणक मानने वाले थे, जिसपरभी आगमादि सबी प्राचीनशास्त्रोंके प्रमाणोंको जानबूझकर छुपा करके, या अज्ञानतासे ' श्रीजिनवल्लभसूरिजीनें चित्तोडमें छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणा करी, ऐसा कहकर जो लोग छठे क-

ल्याणकका निषेध करते हैं. यो ऐसा भोलेपनका गणधर पूर्वाचार्योंकी और मान अपने मतवालेंकी। पूर्वाचार्योंकी आज्ञा-भंग करनेवाले ठहरते हैं। इसलिये आत्मार्थी भवभिरू विवेकी जनोंको तो छठे कल्याणकका निषेध करना सर्वथा योग्य नहीं है. मगर करनेवालोंने या धर्मसागरजीने बड़ी भूलकी है। इसकोभी विवेकी पाठकगण स्वयं विचार सकते हैं।

२१- सभा मंडलमें जाहीर व्याख्यान करतेहुए परोपकारकेलिये, सत्य बात प्रकट करनेमें अपनी स्वभाविक प्रकृतिसे, सबके आगे माफ़ीकितनेक धर्माचार्य घांची,टेबल,या पाटापर जोरसे धपाटा लगाते हुए अपना मंतव्य प्रकटकरते हैं, तथा कितनेक छातीठोक-ते हुए,या भुजा आस्फालन करते हुए, अपनी सत्यबात प्रकट करते हैं, और कोई विशेष प्रबल विद्वान् वादी तो हाथमें खूब ऊंचा झंडा लेकर नगारा बजाते हुए विवाद करनेकेलिये नगरमें उद्घोषणा क-रवाते हैं। मगर यहबात कोई प्रकारसे अनुचित नहीं है,किंतु सत्य बात प्रकाशित करनेमें अपनी हिम्मत बहादुरीकी स्वाभाविक प्रकृति है इसीतरहसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी स्वशिथिलाचारी चैत्यवासियोंके सामने चैत्यवासका निषेध व आगमानुसार श्रीमहा-वीरस्वामीके छ कल्याणक मानने वगैरह विषयों संबंधी सत्य बातें प्रकाशित करनेमें अपनी हिम्मत बहादुरीसे भुजास्फालन पूर्वक क-हा, कि- 'ऊपरकी बातें जो न मानने वाले होवें वो उन्होंकी शा-स्त्रकरनेकीताकत हो तो मेरेसामने आकर उनबातोंका शास्त्रार्थसे निर्णय करो' मगर उस समय किसीभी चैत्यवासीकी महाराजकेसा-थ शास्त्रार्थकरनेकी हिम्मत नहींहुई। तब महाराजने सबलोगोंके सा-मने उपरमुजब सत्यबातें प्रकाशितकी. इसतरहसे 'गणधरसार्धशत-क' बृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति वगैरहका भावार्थ समझेबिनाही श्रीजिन-वल्लभसूरिजीने ' स्कंधास्फालनपूर्वक ' छठा कल्याणक नवीन प्रकट किया ऐसा कहकर चैत्यवास वगैरह सब बातोंका संबंध छुपाकर छठे कल्याणकका निषेध करते हैं. सो मायावृत्तिसे या अज्ञानतासे भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेके लिये मिथ्या भाषण करके धर्मसागरजीने उत्सूत्रभाषणकी बडी भूल की है।

श्रीजिनवल्लभसूरिजीमहाराज चैत्यवासका खंडन करनेवाले थे इसलिये चैत्यवासियोंने महाराजको शहरमें ठहरनेको जगह नहीं दी तब द्वेषबुद्धिसे चामुंडिका देवीके मंदिरमें ठहरनेका बतला-

सम्बन्धी विशेष तात्पर्य पाठक गण स्वयं विचार करसकते हैं।

इस कल्याणक सम्बन्धी ऊपरके संक्षिप्त लेखसंबंधी जो आत्मार्थी सत्य ग्रहण करने वाले निष्पक्ष भव्य होंगे, वह तो थोड़ेमेंही सार समझ लेवेंगे, कि अभयदेवसूरिजीने सकल संघ जिनेश्वर तथा त्रिशलामाताने सर्व तीर्थंकर माताओंकी तरह भावतासे उत्पन्न हुए १४ महास्वप्नोंके देखने वगैरह कार्योंको दूसरा च्यवनकल्याणकपनेकी उपमासे स्वीकार किये, उन्होंकी ऐसे कल्याणककी निंदाकरना सर्वथा योग्य नहीं है और शास्त्रोंके अर्थ बदलकरके, आगमप्रकरणादि व युक्तियोंसे भोले जीवोंकोभी उलटा करनेके हेतुभूत गर्भापहारकी निंदा करवाने वाले बनवाकर तीर्थंकर भगवानकी आशातनाके अपहार जानेका कारण करना कदापि योग्य नहीं है। उपरकी इस सब बातोंका विशेष निर्णय शास्त्रोंके अपूर्व पाठोंके प्रमाणोंसहित इस ग्रंथके पृष्ठ ४१६ से ८५६ तक छप चुका है, सो आगे आगमें प्रकट होगा इसके वांचनेसे सब शंकाओंका खुलासा समाधान अच्छी तरहसे होजावेगा।

और शासन नायक श्रीमहावीरस्वामि आदि सर्व तीर्थंकर महाराजोंके चरित्र सम्बन्धियोंको कर्मोंकी निर्जरा करानेवाले कल्याणकारक मंगलरूपही है, इसलिये पर्युषणाके मांगलिक पर्व दिनोंमें आत्मकल्याणके लिये वांचनेमें आतेहैं. और श्रीमहावीरस्वामिके गर्भापहाररूप दूसरा च्यवनका कार्य सो त्रिशलामाता, सिद्धार्थपिता, व इन्द्रमहाराज वगैरह सर्व जीवोंको कल्याण मंगलरूप हर्षका देनेवालाहुआहै। तथा उसका आराधन करनेवाले भव्यसंसारी आत्मार्थी भव्यजीवोंकोभी अभिमानरहित कर्मोंकी विचित्रताकी भावनासे कर्मोंकी निर्जरा करानेवाला कल्याणकारक मंगलरूपहोता है। मगर गर्भापहारके नाम सुननेमात्रसेही भभकउठनेवाले और उसको नीचगोत्रविपाकरूप,आश्चर्यरूप अतीवनिंदनीककहकरनिंदाकरनेवालोंको तीर्थंकरभगवानके अवर्णवाद बोलनेसेसंसारपरिभ्रमणके बहुतविशेष दुःख भोगनेवाले होंगे.इसलिये उन्होंको यो कार्य अमंगलरूप अकल्याणरूप मालूमपड़ता होगा। इससे उनकार्यसे द्वेषरखकर पर्योषण पर्युषणाके मांगलिकरूप कल्याणकारक पर्वदिनोंके व्याख्यानमें उसकी निंदा करते हुए अकल्याणरूप अतिनिंदनीक ठहराकर तीर्थंकर भगवानकी आशातना करनेसे अपनेको और दूसरे भव्य जीवोंकोभी अकल्याणरूप दुर्लभबोधिका हेतुकरतेहैं. ऐसी २ अनर्थभूत, अनुचित बातोंसेही 'सुबोधिका' नाम रखाहै। मगर वास्तविक में,

तो 'दुर्लभबोधिका' नाम सिद्ध होताहै । इसबातको विशेष आत्मार्थी तत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे।

एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडती हैं ॥

देखो-एक अधिकमहीना व छ कल्याणक उत्थापनकरनेसे उसकी पुष्टिकेलिये, अनेक शास्त्रोंके अर्थबदलनेपडे। अनेक जगह शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध आग्रह करना पडा। कितनीही जगह मिथ्या बातें भी लिखनी पडी। कितनीक जगह शास्त्रोंके आगे पीछे के संबंधवाले पाठोंको छोडकर विनासंबंधके अधूरे २ पाठभी भोले जीवोंको बतलाकर अपनापक्षकी सत्यता बतलानेका परिश्रम करना पडा और कितनेही जगहतो शास्त्रोंकी, पूर्वाचार्योंकी व भगवानकी भी आशातनाके हेतुभूत अनुचित शब्दभी लिखने पडे. उसकाअनुभवतो सुबोधिक-किरणावलीआदिककी२८भूलोंवाले ऊपरकेलेखसे तथा इसभूमिकाके सबलेखपरसे और इस ग्रंथके अवलोकन करनेसे पाठकगणको अच्छी तरहसे होसकेगा, इसलिये 'एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडतीहैं' यह लोकरूढीकी कहावतकी बात ऊपरके विषयमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है।

इसप्रकार पर्युषणासंबंधी, व छ कल्याणक संबंधी अपना झूठा पक्ष स्थापन करनेकेलिये और भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेकेलिये, शास्त्र विरुद्ध होकर विनयविजयजीने सुबोधिकामें, तथा जयविजयजीने दीपिकामें, और धर्मसागरजीने किरणावलीमें, ऊपर मुजब अनेक भूलें की हैं, उन्हीं भूलोंको तपगच्छके कितनेक आग्रही जन पर्युषणाके व्याख्यानमें वर्षोवर्ष बांचते हैं. उससे जिनाज्ञाकी विराधनाहोकर भवबढनेका व दुर्लभबोधिका हेतुभूत अनर्थ होताहै. इसलिये अल्पसंसारी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारसत्यबातोंकी प्राप्ति होनेरूप उपकारकेलिये उपरकी सब बातोंका खुलासा निर्णय इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आया है। उसको देखकर यदि शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणासे संसार परिभ्रमणका भय लगता हो तो उन भूलोंको सुधारो, व्याख्यानमें बांचनेका बंध करो, और सत्यबातोंको ग्रहण करो या बडोदा वगैरह किसीभी राज्य दरबारमें इन भूलोंसंबंधी श्रीगौतमस्वामिआदि गणधरमहाराज व सिद्धसेनदिवाकर, हरिभद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी तरह सत्य ग्रहण करनेकी प्रति-

३- अधिक महीनेके अभावसंबंधी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेके व उसकेपीछे ७० दिन रहनेके और १२ मासी क्षामणे वगैरहके सामान्यपाठोंको अधिकमहीना होवे तवभी आगेलातेहैं। और अधिकमहीनेसंबंधी " पचाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः " कल्पसूत्रकी सर्व टीकाओंके इस विशेषपाठको, तथा स्थानांगसूत्रवृत्ति, निशीथचूर्णि,बृहत्कल्पचूर्णि,वृत्ति, पर्युषणाकल्प चूर्णि वगैरह शास्त्रोंके १०० दिन रहने संबंधीआदि विशेषताके पाठोंकी सत्यबातोंको छुपाकरके छोड देते हैं, सो यह सर्वथा अनुचित है।

४- धार्मिक कार्य करनेमें १२ महीनोंके सर्व दिन, या अधिक महीना होवे तब १३महीनोंकेभी सर्व दिन, या क्षय महीनेकेभी सर्व दिन बरोबर समानही हैं, उनमें कर्मबंधनके संसारिक कार्य और कर्म निर्जराके धार्मिक कार्य हमेशा बराबर होते रहते हैं, इसलिये तत्वदृष्टिसे तो उनमेंसे एक समय मात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता. जिसपरभी कार्तिकादि क्षयमहीनेके ३० दिनोंमें दीवाली, ज्ञानपंचमी, चैमासी वगैरह धार्मिक कार्य करते हुएभी अधिक महीनेके ३० दिनोंको तुच्छ समझकर बडी निंदा करते हैं, या कालचूलाके नामसे गिनतीमें छोड देनेका कहते हैं, सो सर्वथा जिनाज्ञाका उत्थापन करते हैं।

५-- जैन ज्योतिषविषयसंबंधी प्ररूपणा आगमानुसार करनी और श्रद्धाभी उसीमुजबरखनी,परंतु अभी पडताकालमें जैनटिप्पणा बंध होनेसे उस मुजब व्यवहार नहींकरसकते.और लौकिकटिप्पणा मुजब व्यवहार करनेमें आता है। इसलिये अभी जैन शास्त्रमुजब पौष-आषाढ अधिक होनेसंबंधी पाठ बतलाकर लौकिक टिप्पणासंबंधी चैत्र,श्रावणादि अधिकमहीनें मान्यकरनेका निषेध नहीं करसकते। और जैसे जिनकल्पी व्यवहार अभी विच्छेद है तोभी उनकी प्ररूपणाकरनेमें आतीहै, तैसेही पौष-आषाढ बढनेकी प्ररूपणा तो शास्त्रानुसार करसकते हैं, मगर मास-पक्ष-तिथि वगैरहका वर्ताव तो लौकिक टिप्पणा मुजबही करना योग्य है।

इन सर्व बातोंका विशेष निर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इस ग्रंथमें अच्छी तरहसे हो चुका है। यहां तो उसका संक्षिप्तसार मात्रही बतलाया है. मगर विशेष निर्णय करनेकी अभिलाषावाले पाठकगण इसग्रंथको संपूरणतया बांचेंगेतो सबखुलासा हो जावेगा

४- देवानंदामाताकी कुक्षिमें भगवान आये सो ही नीचगौत्र कर्म विपाकरूपहै, उनका क्षय हुए बाद उच्चगौत्रके कर्मका उदय होनेसेही गर्भापहार करनापडाहै,तो भी शास्त्रकार महाराजोंने तो देवानंदाकी कुक्षिमे आनेको तथा त्रिशलामाताकी कुक्षिमें आनेको,इन दोनों कार्योंको तीर्थंकर भगवानके चरित्रमें उत्तमतापूर्वक कल्याणकारक माने हैं। जिसपरभी त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको नीचगौत्र कर्म- विपाकरूप अतिनिंदनीक कहकर जो लोग वर्षोंवर्ष पर्युषणाके मांग लिक पर्व दिनोंके व्याख्यानमें प्रत्यक्ष झूठ बोलकर भगवानकी निंदा करतेहैं,सो तीर्थंकर भगवान्के अवर्णवाद बोलनेवाले होनेसे आशातनाके दोषी ठहरते हैं।

५- जैसे श्रीअभयदेवसूरिजीमहाराजने श्रीस्थंमनपार्श्वनाथजीकी प्रतिमाको प्रकट किया, उनका आशय समझेबिना कितनेक ढूंढिये व तेरहापंथी लोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कहें, तो उन्होंकी अज्ञानता समझी जावे. मगर तत्त्वदृष्टिवाले विवेकीलोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीनही कहेंगे। तैसेही श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी षट् कल्याणककी प्रकट किया, उनका आशय समझेबिना कितनेक लोग उनकी नवीन प्ररूपणा कहते हैं, वो उन्होंकी अज्ञानता समझनी चाहिये. मगर तत्त्व दृष्टिवाले विवेकीलोग उनकी नवीन प्ररूपणाकभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीन ही कहेंगे.

६- भगवानके शरीर-इन्द्रीय-पर्याप्तिके अवयव [पुद्गलपरमाणुं] देवानंदामाताके शरीरसे बने हुए थे, और उसी शरीरसे त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आगयेथे, यहबात आश्चर्यकारक होनेसे शरीर-इन्द्रीय-पर्याप्ति बदले बिनाभी शास्त्रकार महाराजोंने उनको अलग भव गिना है। उनमें प्रत्यक्षपने च्यवन कल्याणकपना दिखलानेके लियेही खास कल्पसूत्रके मूलपाठमें त्रिशलामाताने १४ स्वप्न देखेहैं उन संबंधी "ए ए चउदस सुमिणे, सव्वा पासेइ तित्थयर माया। जं रयणिं वक्कमई, कुच्छिंसि महायसो अरिहा ४७॥" यह पाठ लिखा है, और इसपाठकी सुबोधिका टीकामें इस प्रकार व्याख्या किया है "अत्र प्रसंगेन एतेषां स्वप्नानां गर्भकाले सकलजिनराजजननीविलोकनीयत्वं दर्शयन्नाह-एतान् चतुर्दश स्वप्नान्,सर्वाः पश्यंति तीर्थंकर मातरः। यस्यां रजन्यां उत्पद्यंते, कुक्षौ महायशसः अर्हन्तः॥४७॥ इसी तरहसेही सर्व टीकाओंमेभी वैसेही भावार्थका

पारजानेना. देखो जिसरातिको तीर्थंकर भगवान माताकेगर्भमें आक र उत्पन्नहोवें,उसरातिको उन्होंकीमाता गर्भकाल अर्थात् च्यवन क ल्याणक समय सर्व तीर्थंकरोंकी मातायें यह१४महास्वप्न देखती हैं। वैसेही श्री महावीरस्वामिभी त्रिशलामाताके गर्भमें आये,तब त्रिश- लामाताने भी १४महास्वप्न देखे हैं। इस ऊपरके पाठपर अच्छी तर- हसे सत्यग्राहीने विचारकिया जावे. सो-अनादिकालकी मर्यादा मुजब सर्व तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणककी तरहही आश्विन वदी १३ की रात्रिको त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आये, उनको खास सूत्र कारने और सुबोधिका, दीपिका, किरणावली वगैरह सर्व टी- काकारोंनेभी च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै। और तीर्थंकर महारा- जोंके च्यवन कल्याणकमें इंद्रमहाराजाका आसन चलायमानहोनेसे विधिपूर्वक नमस्काररूप'नमुत्थुणं'करना। तिनिजगतमें उद्योत होना, तथा सर्व संसारी प्राणी मात्रको थोडीदेर सुखकी प्राप्ति होना, वगैरह कार्यहोतेहैं। यह अनादि मर्यादा आगमानुसार प्रसिद्धहीहै। यही सर्व कार्य आसोज वदी १३को भगवान त्रिशलामाताके गर्भमें आये तब उसीरोज होनेका ऊपरके कल्पसूत्रके मूलपाठसे तथा उन्होंकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके प्रमाणोंसेभी प्रत्यक्ष सिद्धहोताहै,क्यों- कि देखो- आषाढ शुद ६ को भगवान देवानंदामाताके गर्भमें आये तब उसी समय तो सिर्फ देवानंदामाताने १४ महा स्वप्न देखे सो अपने पति ऋषभदत्त ब्राह्मणको कहे, उसने स्वप्नोंके अनुसार उत्तम लक्षण वाला गुणवान् पुत्र होनेका कहा, सो बात अंगीकार किया और उसके बाद दोनो दंपति संसारिक सुखभोगते हुए काल व्यती- त करने लगे. इसप्रकार कल्पसूत्रादि सर्व शास्त्रोंमें लिखाहै, मगर भगवान् देवानंदा माताके गर्भमें आषाढशुदी६को आये,तब उसीरोज १४ महास्वप्न देखनेके सिवाय इन्द्रका आसन चलायमान होनेका व नमुत्थुणं वगैरह कोईभी च्यवन कल्याणकके कार्य होनेका उल्लेख कल्पसूत्र व भगवानके चरित्र संबंधी किसीभी शास्त्रमें देखनेमें नहीं आता. और त्रिशलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भग- वान आये,उसीरोज तो 'महापुरुष चरित्र' व 'त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र' तथा कल्पसूत्र और उन्होंकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके पाठोंसे प्रत्यक्षमेंही 'नमुत्थुणं' वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य होनेका देखनेमेंआताहै. इसलिये कल्पसूत्रमें जो'नमुत्थुणं' होनेका पाठ है, सो. आषाढ शुदी ६ के दिन संबंधी नहीं है, किंतु

आसोज वदी १३ के दिन संबंधी है, ऐसा समझना चाहिये.क्योंकि देखो— इन्द्रमहाराजने भगवानको नमुत्थुणं करके अपने सिंहासन पर बैठकर, प्राचीन कर्म उदयसे देवानंदाके गर्भमें भगवानको उत्पन्न होना पडा, ऐसा अच्छेरारूप विचारके हरिणेगमेषिदेवको आज्ञाकरके आसोज वदी १३को त्रिशलामाताके गर्भमें भगवानको संक्रमण करवाये, इसलिये यह सववातें आसोज वदी १३को उसी समय हुईहैं, इसलिये ८२दिन तकतो इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान नहीं होनेसे भगवान देवानंदाके गर्भमें उत्पन्नहुएहैं,ऐसा मालूमभी नहीं पडा,मगर संपूर्ण ८२ दिन गये वाद अवधिज्ञानसे मालूम पडा; तब हर्षसे विधिपूर्वक नमस्कार रूप नमुत्थुणं किया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये। इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेके दिन आसोज वदी १३ को नमुत्थुणं करनेका कल्पसूत्रादि आगमानुसार प्रत्यक्षही सिद्ध होताहै,और तीर्थंकर भगवान माताके गर्भमें आकर उत्पन्न होवें, तब इन्द्रमहाराजको अवधिज्ञानसे मालूम पडे, उसी समय 'नमुत्थु णं' रूप नमस्कार करनेकी आगमानुसार अनादि मर्यादा है, मगर उस समय वहां सामान्य नमस्कार करनेकी मर्यादा नहींहै। इसलिये 'महापुरुष चरित्र' में और 'त्रिषष्ठिशालाका पुरुषचरित्र' के १० वें पर्वमें श्रीमहावीरस्वामिके चरित्रमें आसोज वदी१३को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवानको देवानंदाके गर्भमें देखकर नमस्कार किया ऐसा अधिकारहै, सो नमुत्थुणं रूप नमस्कार करनेका समझना चाहिये मगर सामान्य नमस्कार करनेका नहीं समझना। और तीर्थंकर भगवानके च्यवन समये इन्द्रमहाराज नमुत्थुणंरूप नमस्कार हमेशां करतेहैं,तथा उसीसमय तीनजगतमें उद्योत,और सर्व जीवोंको क्षणमात्र सुखकी प्राप्ति होती है,उन्हींकोही च्यवन कल्याणक मानते हैं, यही सर्व कार्य आसोज वदी १३ के रोज होनेका ऊपरके लेखसे आगमादि प्राचीन शास्त्रानुसार सिद्ध होताहै.और समवायांग सूत्रवृत्ति वगैरह आगमादि शास्त्रोंमें त्रिशलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भगवान् आये उन्हींकोही तीर्थंकर पनेके भवमें गिना है, इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको आसोज वदी १३ के रोज दूसरा च्यवनरूप कल्याणक पना मान्य करना आत्मार्थी निकट भव्य जीवोंको उचितहीहै. जिसपरभी उसको कल्याणकपनेका निषेध करनेके लिये देवानंदाके १४ महास्वप्न त्रिशलाने हरण हुए हैं, इस

जिसे जो कल्याणक नहीं होसकता ऐसा कहनेवालोंकी बडी अज्ञा-
नताहै, क्योंकि देखो- जैसे देवानंदाने मेरे १४ महा स्वप्न त्रिशला
ने हरण किये ऐसा स्वप्न देखा, वैसेही त्रिशलाभी मैंने देवानंदाके
१४ महा स्वप्न हरण किये हैं, ऐसा सिर्फ एकही स्वप्न देखती और
च्यवन कल्याणककी सिद्धि बतलानेवाले नमुत्थुणं वगैरह अन्य कोई-
भी कार्य आसोज न होने तथा कल्पसूत्रमेंभी "एए चउदस सुमिणा,
वरखा पासेइ तित्थयरमाया । जं रयणिं वक्कमइ कुच्छिंसि, महायसो
अरहा" यहपाठ अनादि मर्यादामुजब त्रिशला संबंधी न कहकर दे-
वानंदा संबंधी कहते और पार्श्वनाथस्वामीके तथा नेमिनाथस्वामीके
च्यवन कल्याणक संबंधी उन्होंकी माताओंने १४महास्वप्न देख,उसी
समय इन्द्रका आसन चलाय मान हुआ, तबविधिपूर्वक हर्षसे नमुत्थुणं
किया और प्रभातमें राजाओंने स्वप्न पाठकोंको बुलाकर स्वप्नोंका
फल पूछा, तब स्वप्न पाठकोंने १४ महास्वप्न देखनेसे रागद्वेषको
जितनेवाले जिन,त्रैलोक्य पूज्यनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा. इत्या-
दि च्यवन कल्याणकके कार्योंकी भलामणभी त्रिशला संबंधी न दे-
कर देवानंदा संबंधी देने और आषाढ सुदी६ को ही नमुत्थुणं होने
वगैरह उपरके तमाम कार्योंका उल्लेख कल्पसूत्रादिमें शास्त्रकार कर-
ते,व समवायांगसूत्रवृत्तिमें अलग भवभी न गिनते और आसोज व-
दी १३को नमुत्थुणं वगैरह च्यवन कल्याणकके कोईभी कार्य नहीं हो-
ते,तबतो त्रिशलाके गर्भमें आनेको च्यवनकल्याणक नहीं मानते तोभी
चल सकता,मगर ऐसा नहीं है,और आषाढ सुदी ६ को नमुत्थुणं व-
गैरह च्यवन कल्याणकके कार्य नहीं हुए, किंतु आसोज वदी १३को
हुए हैं. इसलिये आसोज वदी १३को ही च्यवन कल्याणकके तमाम
कार्य होनेसे उनको अवश्यही कल्याणकपना मान्य करना योग्य है।
और स्वप्न हरण वगैरहके बहानेसे कल्याणकपना निषेध करना सो
अज्ञानतासे शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करना योग्यनहींहै. और जन्म त्रि-
शलामाताकेगर्भसे हुआहै,तथा च्यवनकल्याणकके सर्वकार्यभी त्रिश-
लाके गर्भमेंआये तबहुए हैं,इसलिये त्रिशलाके गर्भमें आनेरूप च्यवन
माननाही आगम प्रमाण अनुसार और युक्तियुक्त है,च्यवनके सिवाय
जन्मभी नहींमानसकते.यह जगत विख्यात प्रसिद्ध न्यायकी बातहै.
त्रिशलाके गर्भमें आये तब अनादि मर्यादामुजब च्यवन कल्याणकके
सर्वकार्य खाससूत्रकारनेलिखेहैं, जिसपरभी उन्होंको उत्थापनकरके
अकल्याणकरूप ठहरानेके लिये उसबातको निरुपीक कहकर बाद

जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेका अनर्थ करना सर्वथा अनुचितहै.

और जैसे-देवलोकसे च्यवन हुए बाद तथा माताके गर्भमें अवतार होनेबाद नमुत्थुणं वगैरह च्यवन कल्याणकके कार्य होते हैं, तो भी 'कारणमें कार्यका उपचार' होता है, इसलिये च्यवनसमय नमुत्थुणं वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है। तैसेही यद्यपि देवानंदामाता-के गर्भमें नमुत्थुणं हुआ तो भी आषाढसुदी ६ के दिन नहीं, किंतु आसो-ज वदी १३ के दिन हुआहै, तथा उसी समय त्रिशला माताके गर्भ में आनेका होनेसे उन्हीके निमित्त भूतही 'कारणमें कार्यका उपचार' मानकर त्रिशला माताके गर्भमें आने संबंधी नमुत्थुणं वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है. और इन्द्रमहाराज भगवान्‌के विनयवान भक्त थे; इसलिये अवधिज्ञानसे भगवान्‌को देखतेही उसीसमय न-मुत्थुणं किया और त्रिशला माताके गर्भमें पधराये. यदि भगवान्‌को अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें देखकर त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये बाद पीछेसे नमुत्थुणं करते तो विनयभक्तिरूप मर्यादाका भंग होता, इसलिये विनय भक्तिरूप मर्यादा रखनेकेलिये पहिले नमुत्थुणं किया और पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये. देखो, जैसे कोई राजा महाराजा भगवान्‌का आगमन सुनने मात्रसेही हर्षयुक्त होकर उसी-समय उसी दिशा तरफ पहिले यहांसेही भगवान्‌को नमस्कार करते हैं, और बादमें भगवानके पास वहां जाकर उचित भक्ति करते हैं। तैसेही इन्द्रमहाराजनेभी अवधिज्ञानसे भगवानको देखतेही वहांसे नमुत्थुणंरूप नमस्कार किया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये, बाद त्रिशला माताके पासमें आकर तीन जगतके पूजनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा और देवताओंको आज्ञा करके धनधान्यादिककी वृद्धि करवाने वगैरह कार्योंमे भगवानकी उचित भक्ति करी। यह सर्व कार्य आसोजवदी १३ के दिन हुए हैं, इसलिये कारणमें कार्यका उपचार माननेसे नमुत्थुणं वगैरह तमाम कार्य त्रिशलामाताके गर्भमें आने-संबंधी समझने चाहिये किन्तु देवानंदाके गर्भमें नमुत्थुणं होने-का कहकर त्रिशलाके गर्भमें आनेसंबंधी आसोज वदी १३ के दिनको च्यवन कल्याणकपने रहित कहतेहैं उन्होंकी अज्ञानता है।

और जो बात नहीं बननेवाली होवे, असंभवरूप या असंबंधित होवे, वोही बात कभी कारणवशसे बनजावे, उसी बातको शास्त्रों-में आश्चर्य कारक अछेरारूप कहते हैं। इसलिये त्रिशलामाताको अ-च्छेरा कह दिया, इस बातमें अन्य शास्त्र प्रमाणकी मर्यादा बाधक

नहीं हो सकती.इसी तरहसे भगवानकेभी देवानंदा माता तथा त्रि-शलामाता दोनोंका गर्भकाल मिलकर ९ महीने और ऊपर ७॥ दिन मानतेहैं, मगर देवानंदाके गर्भमें आनेको शास्त्रकारोंने अच्छेरा कहा है. और ८२ दिन गये बाद त्रिशलाके गर्भमें आनेको तीर्थंकर पनेके [illegible]

और शरीर-इन्द्रीय-पर्याप्ति देवानंदामाताके शरीरसे बने हैं. इसलिये देवानंदाके गर्भमें आनेकोभी भगवानके प्रथम च्यवनरूप कल्याणक पना मानते हैं। और जैसे-मारवाड,गुजरात,दक्षिण, पूर्व वगैरह दे-[illegible]

[illegible] वानंदाके गर्भसे ८२दिन गये बाद आश्चर्यरूप त्रिशलाके गर्भमें आना पड़ा, उससे दो माता तथा दो पिता और दो च्यवन कल्याणक माननेमें आते हैं. इसलिये दोनों माताओंका गर्भकाल मिलकर ९महीने और ७॥ दिन हुए हैं, तो भी दो च्यवन कल्याणक माननेमें कोईभी शास्त्र बाधा नहीं आ सकती और कोई कुयुक्ति व वितर्कभी बाधक नहीं होसकती, इस बातको विशेष तत्त्वज्ञजन स्वयंविचार सकते हैं।

इन सर्ववातोंका विशेषनिर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इस ग्रंथमें अच्छीतरहसे सर्व शंकाओंका निवारणपूर्वक खुलासा हो चुका है, यहां तो उसका संक्षिप्तसार बतलाया है,और विशेष निर्णय क-रनेकी अभिलाषावाले तत्त्वसारग्रहण करनेवाले पाठकगण इस ग्रंथ-को संपूर्ण बांचेंगे तो सर्ववातोंका खुलासा अच्छी तरहसे होजायेगा

विवादवाले विषयों संबंधी अभिप्राय.

तपगच्छके श्रीमान् विजयधर्मसूरिजीके शिष्य श्रीमान् रत्न-विजयजीने विवादवाले विषयों संबंधी पौषशुदी ३ बुधवार, श्रीवीरनि-र्वाण संवत् २४४३ के जैन शासन पत्रके पृष्ठ ५९८ में श्रीपार्श्वनाथ-स्वामीकी परंपरासंबंधी उपकेशगच्छ (कवलागच्छ) की हकीकत छपाया है, उसका थोडासा उतारा यहांपर बतलाते हैं।

"श्रीरत्नप्रभसूरिजीकृत सामाचारीमां लख्युंछे के,पुष्पवती थया-बाद स्त्रीने पूजा नहीं करवी. आंबिलमां २-३ द्रव्य कल्पे. तथा देव-गुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रनी टीकामां ६ कल्याणिक लख्यां छे,पजोस-णा ५० दिवसे करवा इत्यादि" तथा "वीर प्रभुना २८ भव लख्या छे, सुधर्मा, जंबु, प्रभव, सिज्जंभव ए चारना ८४ शाखा, ४१ गण, ८ कुल थया. आ सामाचारी तथा कल्प टीका हालनां गच्छोथी घणी प्राचीन बनेली छे, प्राचीन समयथी ६ कल्याणिक, स्त्री पूजा निषेध विगेरे प्रवृत्तिओ चाली आवीछे, जिनदत्तसूरिजी, जिनवल्लभसूरिजी विगेराने लोको खाली निंदे छे, नवुं कोईए कर्युं नथी. पजोषण जे-वा वीतराग पर्वमां कल्पसूत्रना मांगलिक व्याख्यानमां चतुर्विध श्रीसंघमां अकारण कलह करी जैनभाईयोनां अंतकरण दुभावी ध-र्मनी निंदा करावी वर्षोवर्ष अनी अे वातने 'अभूतद्भावोचिच' क-रीने कितुना कलासमां दाखल करवी, ए कोई रीते इच्छवा योग्य नथी, शासन प्रेमी महाशयो आ बाबत बराबर समजी गया हशे, [अयं निजपरोवेत्ति, गणनालघु चेतसा। उदार चरितानां तु,वसुधैव कुटुंबकम्' ॥१॥] आमा 'वसुधैव कुटुंबकं' ए वाक्य अत्यंत श्रेष्ट छे पण अने बदले 'सर्व गच्छ कुटुंबकं' एवुं बनो,एज प्रार्थना, याचना अने सलाह"यहीलेख उसीअरसेमे जैनपत्रमेंभी प्रकाशित होगयाहै औरमीजेठवदि१बुधवार वीर सं०२४४४ के जैनशासनपत्रकेपृष्ठ१६८ में श्रीरत्नविजयजीने पर्युषणामें सममावरखनेसंबंधी लेख छपवाया-था,उसमेसे थोडासावतलातेहै."दरेकगच्छनीपट्टावलीजुओ.तेमांपर स्पर पठनपाठन साथे रहेता,वंदनादि व्यवहार करता,विनयमूल ध-र्मनी पुष्टि करनारहता,आमे विरोधभाव करनारा श्रीकनथीरावता-खरतरगच्छना आचार्योने सत्कारआपनारा तपगच्छना साधुओहता अने तपगच्छनाआचार्योने बहुमान आपनारा खरतरगच्छनासाधुओ हता, तपगच्छनां जेवा परम प्रभाविक पुरुषो थयाछे तेवाज खरतर गच्छमां परम प्रभाविक पुरुषो थया छे.जिनदत्तसूरिजी, जिनकुशल सूरिजी जेवे सवालाखनवा जैनो बनाव्या,हजारोराजा महाराजाओने जैन धर्म अंगीकार कराव्यो, हजारो क्षत्रीयोने ओसवाल बनाव्या, जिनचंद्रसूरि,जिनहर्षसूरि जिनप्रभसूरि आदि अनेक प्रभाविक पुरुषो थया. तेवा महा पुरुषोना अवर्णवाद बोलवा,आयने गधे जोम पाम वो मुश्केल छे. उपकारी नो उपकार रदी करवो महा भयंकर पाप छे, एक वाम मुर्ख तराहोके भाई साधुओ पत्राणमां टीकाओ

छापेछे तथा चरित्रोनां चोपडीओ छापेछे, ग्रंथो छापेछे ते घणेभागे खरतर गच्छना बनावेला ग्रंथो छे. खरतर गच्छवालाओ पोते छे सर्व गच्छवालाओमां श्रेष्ठ मानेछे ' पुण्य विश्वास चलन पि श्राप ' जेना बनावेला पुस्तको हाथमां लई मन्नुख धरी वांचो छो, तेने कोईपण जैन आचार्योनी वह यांचे कराय माटे दादा साहेबने मानवा वाला खरतर पादुकाना दर्शन करनारा तपगच्छवाला हजारो श्रावक मलो छे तथा श्री हीरविजयसूरि प्रमुखने माननारा खरतरगच्छना हजारो श्रावक मलेछे. आथी हंमेशां मेलामां चाली विरोध ऐसा करवाथी कोईनुं कल्याण थवानुं नथी " इत्यादि.

देखो-ऊपर मुजब खास तपगच्छके श्रीरत्नविजयजीके लेखपर खूब दीर्घ दृष्टिसे विवेकपूर्वक विचार किया जावे, तो श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी परंपराके श्रीदेवगुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रकी प्राचीन टीका वगैरह शास्त्रानुसार पहिले पूर्वाचार्योंके समयसेही श्रीवीर प्रभुके ६ मत, तथा ५ कल्याणक मानने वगैरह बातें प्रचलितथी थीं उन्होंके अनुसार श्रीजिनवल्लभसूरिजी वगैरह महाराजोंने चैत्यवासियोंको हटाते हुए, भव्य जीवोंके सामने विशेषरूपसे प्रकटपने कथन की है। परंतु शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणा नहीं की, जिसपरभी आगमप्रमाणोंको उत्थापन करके शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझेबिना अपनी मतिकल्पनासे शास्त्रपाठोंके खोटे खोटे अर्थ करके अर्थात् छट्ठे कल्याणककी प्ररूपणा करनेका झूठा दोष लगाते हैं, सो प्रत्यक्षपने मिथ्याभाषणकरके अपने दूसरे महाव्रतका भंग करना और भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरना सर्वथा अनुचित है।

और श्रीजिनवल्लभसूरिजी, श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जैसे शासन प्रभावक परम उपकारी पुरुषोंने, चैत्यवासियोंकी उत्सूत्रप्ररूपणाके तथा शिथिलाचारके मिथ्यात्वको हटाया, और क्षत्री-ब्राह्मणादि लाखों अन्य दर्शनियोंको प्रतिबोधकर जैनी श्रावक बनाये, उन्होंकी वंश परंपरा वाले अभी वर्तमानमेंभी गुजरात, कच्छ, मारवाड, पूर्व, पंजाब, दक्षिणादि देशोंमें लाखों जैनी विद्यमान मौजूद हैं। इसलिये उन महाराजोंने परंपराके हिसाबसे करोडो जीवोंको सम्यक्त्व प्राप्त कराने संबंधी बडाभारी महान् उपकार किया है। ... विद्या, मंत्र, देवसहाय, व संयमानुष्ठान-आत्मशक्ति प्रकाशित कर... बहुत बडाभारी जैनशासनकी प्रभावना करी. उन महाराजोंके प्रतिबोधे हुए श्रावकोंकी वंश परंपरावाले श्रावकोंसेही, वर्तमानिक

खरतरगच्छवाले बहुतसाधुओंको आहार,पानी,तथा संयम उपकरणोंसे निर्वाह होता है। ऐसे महान् शासन प्रभावक परम उपकारी महाराजोंने पूर्वाचार्योंकी प्रवृत्ति मुजब तथा आगमादि प्राचीन शास्त्रानुसारही सत्य प्ररूपणाकरीहै, मगर शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणानहींकरी. जिसपरभी कितनेक पक्षपातीजन उपकारी महाराजोंके उपकारोंको छुपादेतेहैं, और छठे कल्याणक प्रकटकरनेकी तथा स्त्रीपूजा निषेधकरनेकी नवीनप्ररूपणाकरनेकाझूठा दोषलगाकर अनेक तरहसे निंदा करते हुए आक्षेप करते हैं। उन्होंको परभवमें जीम मिलना मुश्किलहै यहबात तपगच्छवालेही गुणानुरागी मध्यस्थ भावसे लिखतेहैं। अर्थात् ऐसे उपकारोंको भूलकर झूठा दोष लगाकर निंदा करनेवाले एकेन्द्रिय होवेंगे, फिर उन्होंको जैनधर्म प्राप्त होना बहुत मुश्किल होवेगा, संसारमें बहुत काल परिभ्रमण करेंगे. इसलिये भवभिरु आत्मार्थी भव्य जीवोंको संसार परिभ्रमण के हेतुभूत उपकारी पुरुषोंकी झूठी निंदा करके भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेरूप अनर्थ करना सर्वथा अनुचित है।

और ऊपरके लेखसे श्रीरत्नविजयजीके लेखमुजब तपगच्छके तथा खरतरगच्छके आपसमें विशेषरूपसे संप की वृद्धि होना चाहिये और कुसंपके कारण भूत पर्युषणामें खंडनमंडनके विवाद वाले विषयोंको सर्वथा त्याग करके संपसे शासन उन्नतिके कार्योंमें कटिबद्ध होना, यही अपने और दूसरे भव्यजीवोंकेभी आत्म कल्याणका हेतु है। ऐसी ही श्रद्धा तथा प्ररूपणा और प्रवृत्तिका शुद्ध हृदयसे व्यवहारकरके उपकारी पुरुषोंकी झूठीनिंदा छोडकर। प्राचीन पूर्वाचार्योंकी परंपरामुजब शास्त्रानुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा पर्वका अराधन करके तथा श्री महावीर स्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकोंको आगमानुसार भावपूर्वक मान्य करके भगवान्की आज्ञानुसार धर्मकार्योंसे निज और परका कल्याणकरो,संसार परिभ्रमणके दुःखसे छुटो,और अक्षय सुख प्राप्त करो. यही आत्मिक हृदयकी विशुद्ध प्रेम भावसे आत्महितैषी पाठक गण भव्यजीवोंके प्रति प्रार्थनाहै. इति शुभम्.

विक्रम संवत् १९७७, प्रथम श्रावण शुदी १३ बुधवार.
हस्ताक्षर – श्रीमान् उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके लघुशिष्य—मुनि– मणिसागर. जैन धर्मशाल, धुलिया—खानदेश.

श्रीवीतरागाय नमः।

दूसरे भागकी पीठिका

इनकोंभी पहिले अवश्यही बांचिये.

अब हम यहांपर दूसरे भागकी पीठिकामें न्यायरत्नजी शांति-विजयजी संबंधी थोडासा लिखतेहैं, जिसमें ३ वर्ष पहिले दो भाद्र-पदहोनेसे पर्युषणापर्व प्रथम भाद्रपदमें करने या दूसरेभाद्रपदमें,इस विषयकी मुंबईशहरमें चर्चा खूब जोरशोरसे दोनोंतरफसे चलीथी. उससमय मैंनेभी 'वृहत्पर्युषणा निर्णयका प्रथमअंक' नामा छोटासा पुस्तकमें मुख्य २ सर्व बातोंकी शंकाओंका समाधान अच्छीतरहसे लिखदियाथा. यह पुस्तक एकश्रावकनेछपवाकर प्रसिद्धकरीथी.उस पर न्यायरत्नजीने उसपुस्तककी शास्त्रानुसार सत्य२ बातोंको ग्रहण तो नहींकरी और मेरे सबलेखोंको अनुक्रमसे पूरेपूरे लिखकर पीछेउ-सलेखका जबाब देनेकीभी ताकत न होनेसे जानबूझकर कुयुक्तियोंसे अनेकबातें शास्त्रविरुद्ध लिखकर'पर्युषणापर्वनिर्णय' तथा'अधिकमास निर्णय'में प्रकटकरीथी.उसपर मैंने उन दोनों पुस्तकोंकी शास्त्रविरुद्ध बातोंसंबंधी शास्त्रार्थसे सभामें निर्णय करनेकेलिये न्यायरत्नजीको जाहिररूपसे छपवाकर सूचना दीथी. उसका लेख नीचे मुजबहै.

विज्ञापन, नं० ७

न्यायरत्नजी शांतिविजयजी सावधान ! शास्त्रार्थके लिये जल्दी तैयार हो.

मैंने-आपको शहर पूनामें शास्त्रार्थ संबंधी विज्ञापन नंबर १-२-३-४ भेजेथे और वर्तमानिक पर्युषणाकी चर्चासंबंधी आपकीब-नाई ' पर्युषणापर्वनिर्णय ' किताब " शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध, जिनआज्ञा बाहिर और कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरने-वालीहै. " यह सूचना विज्ञापन नंबर पहिलेमें लिखकर,इसका वि-शेष खुलासा मुंबईकी सभामें शास्त्रार्थ द्वारा करनेके लिये आपको आमंत्रण कियाथा और श्रीकच्छी जैनअसोसीयन सभानेभी सब मु-निमहाराजोंकी तरह आपकोभी पर्युषणाका निर्णय करनेसंबंधी वि-ज्ञप्तिपत्र भेजाथा, जिसपरभी आपने मुंबईमें शास्त्रार्थकरना मंजूर न

और विशेष सूचनायें विज्ञापन, नंबर ६ से समझ लीजिये. और नियमभी जो आपकीइच्छा हो सो प्रतिज्ञापत्रके साथ १५ दिनके भीतरप्रगट करीये, आनंदसागरजी, विजयधर्मसूरिजी, विद्याविजयजी व न्यायविजयजीकी तरह आडीआडी बातें निकालकर शास्त्रार्थ करना मंजूर न करोंगे,तो-आपकोभी हार समझीजायेगी. अथवा श्री-कच्छी जैनएसोसीयनकी विनतीके अनुसार व मेरे विज्ञापनोंके अनुसार यदि आपको मुंबईमें ठहरकरसभामें शास्त्रार्थ करनेमें अनुकूलतानहोय तो लीजिये चलिये-लेख द्वाराही सही, मगर विज्ञापन नंबर६ मुजब प्रतिज्ञा वगैरह नियमोंके साथ उत्तर दीजिये देखो—

न दिया,यदि भूल गयेहो, तो अभीही देवो । और पृष्ठ १७ के अंतके पाठका खुलासाभी साथही करो ॥ और मैंने 'लघुपर्युषणा निर्णय' में निशीथचूर्णि और दशवैकालिक बृहद्वृत्तिके पाठसे अधिकमासको कालचूला कहकरकेभी दिनोंकी गिनतीमेंलेनेका सिद्धकर दिया. यांहै, इसलिये दिनोंकीगिनतीमें निषेधनहींहो सकता, देखो-लघुपर्युषणानिर्णयके पृष्ठ २४-२५ ॥ और लौकिक शास्त्रानुसारभी अधिकमासको दिनोंमें गिनाहै, देखो-लघु पर्युषणानिर्णय के पृष्ठ २८-२९ ॥ और अधिकमासमें मुहूर्तवाले शुभकार्य न होवें, उसीतरह चौमासेमें, सिंहस्थमें,गुरुशुक्रके अस्तमें, पौष चैत्र मलमासमें, क्षयमासमें, चर्दोपक्षकी १३-१४ और अमावास्या इन तीनक्षीणतिथियोंमें,और वैधृति-गंडांत-व्यतिपात-भद्रा वगैरह कुयोगोंमें, तिथी, वार, नक्षत्र

भार्गव जीवयोः कुदिने, मासाधिके वैधृतौ । गंडांते व्यतिपात विष्टिक शुभं, कार्यं न कार्यं बुधैः ॥ १ ॥ " मगर दान, शील, तप, भाव, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध वगैरह धर्मकार्य अधिक मासमें भी होसकतेहैं । उसी तरह पर्युषणापर्वभी दिन प्रतिबद्ध होनेसे अधिकमासमें करनेमें कोई बाधा नहींहै । देखो लघुपर्युषणा निर्णयके पृष्ठ

२७-२८ ॥ और मासवृद्धि होनेपरभी पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन र-
हनेका किसीभी शास्त्रमें नहींलिखा, समवायांगका पाठ तो मास वृ-
द्धिके अभावकाहै, इसलिये अधिकमास होनेपरभी ७० दिन रहनेका
कहना शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध होनेसे मिथ्याहै, देखो लघुपर्यु-
षणा निर्णयके पृष्ठ १८-१९-२०-२१ ॥ इसीतरहसे दोनोंआषाढ वगैर-
हका खुलासाभी लघुपर्युषणाके पृष्ठ २५-२६में अच्छी तरहसे दिखा-
ला दिया था ॥ जिसपरभी न्यायरत्नजी आपने मेरे लेखोंका आगे
पीछेका संबंध तोडकर मेरे अभिप्रायके विरुद्ध होकर अधूरे अधूरे
लेख, भोलेजीवोंको दिखलाकर अपनी दोनों किताबोंमें आप वारंवा-
र अधिकमहीनेके दिनोंको गिनतीमेंसे उडा देनेकेलिये कोईभीशास्त्र-
काराउ बतलाये बिनाही, और लघुपर्युषणाके पृष्ठ २७-२८ का लेख-
को पूरा दिखाए बिनाही,'अधिकमासनिर्णय'के दूसरे पृष्ठकी आदिमें
आप लिखते होकि'अधिकमहिनेमें विवाह शादी वगेरा कामनहीकि-
येजाते, दीक्षा प्रतिष्ठा वगेरा धार्मिक कामभी अधिकमहीनेमें नहीं-
किये जाते, फिर पर्युषणापर्व जैसा उत्तमपर्व अधिकमहिनेमें कैसे-
कियाजाय ' तथा ' पर्युषणापर्व निर्णय ' के मुखपृष्ठ परभी ' दीक्षा
प्रतिष्ठा और मुनिवादादिके विवाह शादी वगेराकाम अधिकमहीनेमें
नहींकियेजातेहै,तो फिर पर्युषणापर्व जैसा उत्तमपर्व कैसेकिया जाय'
यह दोनों लेख आपके जिनाज्ञाविरुद्ध उत्सूत्र प्ररूपणारूपहीहै. यदि
मुहूर्तवाले दीक्षा प्रतिष्ठा व संसारी विवाह शादीकी तरह पर्युषणा
का काम मानोंगे, तबतो चौमासेमें, तथा १३ महीनों तक सिंहस्थ-
वाले वर्षमेंभी पर्युषणा करनाही नहीं बनेगा, मगर शास्त्रोंमें तो चौ-
मासेमेंही और सिंहस्थवाले वर्षमेंभी पर्व आनुसेंही दिनोंकी गिनती
से ५० वें दिन अवश्यही पर्युषणा करनाकहाहै, मुहूर्तवाले विवाहशादी
वगैरह की तरह कार्योंके माफ़िक, बिना मुहूर्तवाले सांवत्सरिक पर्युषणा-
पर्व कोईभीमुहूर्तनहीं है.सिंहस्थ,अधिकमास,क्षयमास,गुरु शुक्रका
अस्त व बाल्य,व्यतिपात,भद्रा,और चंद्र व सूर्य ग्रहण वगैरहभीइसी
काम पर्युषणा करनेमें बाधक नहीं होसकते, इसलिये आपका उपयु-
क्त प्ररूपणाका और उसका मानना व विसंवादकरके भोले जीवों को-
दिखाना और मिथ्यात्वबढानेकाकारण करिये, नहीं तो समाजें मिथ्या-
त्वका निवारण हो जावेगा ॥ और भी आपने ' मानव धर्म संहिता '
के पृष्ठ ८०० में लिखा है कि " अगर अधिकमास गिनतीमें लियाजा-
य तो पर्युषणापर्व दूसरे वर्ष श्रावणमें और इसतरह अधिकमास

ईसोंके हिसाबसे हमेशां उन पर्व फिरते हुए चले आवेंगे जैसे मुसलमानोंके ताजिये-हर अधिकमासमें बदलतेहैं " यह लेखभी उत्सूत्र प्ररूपणारूपहीहै, क्योंकि जिनेंद्रभगवानने अधिकमहीना आनेपरभी वर्षाऋतुमेंही पर्युषणा करना फरमायाहै, मगर वर्षाऋतुबिना माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाखमें शरदी व धूपकालमें पर्युषणा करना नहीं फरमाया, जिसपरभी आप अधिकमहीनाके ३० दिन उडा देनेकेलिये मुसलमानोंके ताजियोंके दृष्टांतसे हर अधिक महीनेके हिसाबसे चारोंही महीनोंमें [छहो ऋतुओंमें] पर्युषणा फिरते हुए चले जानेका बतलाते हो, सो किस शास्त्र प्रमाणसे उसकाभी पाठ बतलाइये, या अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं दीजिये, अथवा सभामें सत्य ठहरानेको तैयार हो जाईये ॥ २ ॥ और भी ' पर्युषणापर्व निर्णय' के मुखपृष्ठपर 'अधिकमहीना जिसवर्षमें आये उसवर्षका नाम अभिवर्द्धित संवत्सर कहते हैं और वो अभिवर्द्धित संवत्सर तेरह महीनोंका होता है, मगर अधिक महीना कालपुरुषकी चूला यानी चोटी समान कहा इसलिये उसको चातुर्मासिक- वार्षिक और कल्याणिकपर्वके व्रत नियमकी अपेक्षा गिनतीमें नहीं लियाजाता' तथा ' अधिकमास निर्णय ' के प्रथम पृष्ठके अंतमें ' अधिक महीना कालपुरुषकी चूला यानी चोटीसमानहै, आदमीके शरीरके मापमें चोटीका माप नहीं गिनाजाता, इसतरह अधिक महीना अच्छे काममें नहीं लियाजाता ' इस लेखसे अधिक मासको वेदोंकी चोटी समान कहतेहो और गिनतीमें लेना निषेध करते हो सोभी सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्ध है, देखो-चोटी तो १०-२० अंगुल, अथवा १-२ हाथ लंबीभी होसकतीहै,व नहींभी होतीहै. और शरीरके मापमें चोटीका कुछभी माप नहींलियाजाता, इसीतरह यदि अधिकमासभी चोटी समान गिनतीमें नहीं लियाजाता तो फिर उसको गिनतीमें लेकर १३ महीनोंके, २६ पक्षोंके,३८३दिनोंका अभिवर्द्धित संवत्सर क्यों कहा ? देखिये-जैसे पर्वतोंकेशिखर और घास एकसमाननहीं है तथा मंदिरोंकेशिखर और ध्वज एक समाननहींहै. तैसेही चूला याने शिखर और चोटीएकसमाननहींहै इसलियेचोटीकहोंगे तो गिनतीमेंनहीं और गिनतीमें लेवोंगे तो चोटी समाननहीं. चोटीकहोंगे तो अभिवर्द्धित संवत्सर कैसे बना सकोंगे ! इसको विचारो, अधिकमासको चोटी समान कहकर गिनतीमें छोडना किसीभी जैनशास्त्रमें नहीं कहा, निशीथचूर्णि व दशवैकालिक वृत्तिमें कालचूला याने शिखरकहाहै,

और गिनतीमेंभी लियाहै, देखो लघुपर्युषणाके पृष्ठ २५ में. इसलिये शिखरको चोटी कहना और गिनतीमें छोड देना बडी भूल है ॥३॥ इसीतरहसे अधिकमहीनेमें धर्म, ध्यान, व्रत, पच्चख्खान, तप, जप, चौमासी, पर्युषणा, कल्याणकादि धर्म कार्य निषेध करना ॥ ४॥ वर्तमानिक श्रावण, भाद्रपद, आश्विन बढनेपरभी समवायांग सूत्रवृत्तिकारका अभिप्राय को समझे बिनाही पीछे ७० दिन ठहरनेका आग्रह करना ॥ ५ ॥ श्रावण-पौष बढनेपर एक महीनेमें कल्याणिक माननेसे दूसरे महीनेको छुटनेका कहकर अधिकमासके ३० दिन उडादेना ॥ ६ ॥ दो आषाढ होनेपर प्रथम आषाढको कालचूला ठहराना ॥ ७ ॥ दूसरे आषाढमें चौमासी करनेसे प्रथम छुट जानेका कहना ॥ ८ ॥ और नवतत्त्व—षट्‌द्रव्यके स्वरूपकी तरह चंद्र और अभिवर्धित दोनो वर्षोंका समानही स्वरूपकहा है, तथा दोनोंसेही मास-पक्ष-तिथि वर्ष वगैरहका व्यवहार चलता है, तिसपरभी दिनोंकी गिनतीके विषयमें दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाकी चर्चामें विषयांतर करके मास व ऋतु प्रतिबद्ध कार्योंको दिखलाकर अधिकमासके दिन गिनतीमें छोड देना ॥ ९ ॥ अधिकमास आनेसे ५० वें दिन पर्युषणा पर्व करनेको जैनशास्त्र खिलाफ ठहराना॥१०॥और पंचाशकके पूर्वापर संबंधवाले संपूर्ण सामान्य पाठको छोडकर शास्त्रकार महाराजके अभिप्रायको समझेबिना थोडासा अधूरा पाठ भोलेजीवोंको दिखलाकर, वीरप्रभुके विशेषतासे आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करना ॥ ११ ॥ और सुबोधिकाकी तरह समयसुंदरोपाध्यायजी कृतकल्पलतामें खंडन मंडनका विषय संबंधी कुछभी अधिकार नहींहै. तो भी झूंठा दोष आरोप रखना ॥ १२ ॥ इत्यादि अनेक बातें आपकी दोनों किताबोंमें शास्त्रविरुद्ध व प्रत्यक्ष मिथ्या और बालजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेवाली भरीहुईहैं, उसका लेख द्वारा या सभामें निर्णय करनेको तैयार हो जाइये, मगर झुंठेको क्या प्रायश्चित देना वगैरह नियम होने चाहिये. वीरनिर्वाण २४४४, विक्रमसंवत्१९७५, वैशाखवदी १२, हस्ताक्षर-मुनि-मणिसागर, लालबाग, मुंबई.

उपर मुजब छपाहुवा विज्ञापन न्यायरत्नजीको पहुंचाया मगर उसमें लिखेप्रमाणे सभामें आकर शास्त्रार्थ करनेका मंजूर नहीं किया तथा इन विज्ञापनमें बतलाई हुई उत्सूत्र प्ररूपणारूप अपनी भूलोंको सुधारनेकाभी प्रकट नहीं किया, और शास्त्रप्रमाणसे साबित करके भी बतला सकेनहीं.सर्वथा मौनकरबैठे तब हमने उनकीहारका विज्ञापन छपवाकर प्रकाशित कियाथा सो नीचे मुजब है :-

विज्ञापन नं० ९

न्यायरत्नजी शांतिविजयजी हार गये !

सत्याग्राही पाठकगणसे निवेदन कियाजाताहै, कि-न्यायरत्न-

[illegible]

के साथ १ पत्रभी उनको डाक मारफत रजिष्टरी द्वारा'ठाणे' भेजाथा, उसमें १५ दिनकी जगह २० दिनका करार लिखाथा, उसको आज २२दिन होगये, तोभी न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करना मंजूर नहींकिया और वैशाख सुदी १३ को फिरभी दूसरा पत्र भेजाथा उसमें हमने ठाणेमेंही शास्त्रार्थ करना मंजूर कियाथा. उसकाभी कुछभी उत्तर न मिला और लेखद्वारा शास्त्रार्थ शुरू करनेके लिये प्रतिज्ञापत्र व साक्षी वगैरह नियमभीप्रगटनहींकिये.इससे मालूमहोताहैकि,-न्यायरत्नजीमें न्यायानुसार धर्मवादका शास्त्रार्थकरनेकी सत्यता नहींहै, इसलिये चुप लगाकर बैठेहैं,उससे वो हारगये समझे जातेहैं.पाठकगणको मालूम होनेके लिये दोनों पत्रोंकी नकल यहां बतलाते हैं.

प्रथम पत्रकी नकल " श्रीमान् न्यायरत्नजी शांतिविजयजी विज्ञापन नं० ७-८ भेजता हूं. लघुपर्युषणा निर्णयके सत्य सत्य लेख छोडदिये और मेरेअभिप्रायविरुद्ध उलटा उलटाही लिखमारा,वैसा अब न करना. सबका पूरा उत्तर देना, आजसे १५-२० दिन तकमें वैशाख सुदी १० सोमवार. हस्ताक्षर मुनि—मणिसागर. "

दूसरे पत्रकी नकल "श्रीठाणा मध्ये न्यायरत्नजी शांतिविजयजी योग्य श्रीमुंबईसे मुनि-मणिसागरकी तरफसे सूचना.

१—आप ठाणेमें शास्त्रार्थ करनाचाहते हो तो, हम ठाणे आनेकोभी तैयार हैं. मगर विज्ञापन नं० ६ की ३-४-५ सूचना मुजब नियम मंजूरकरो और कल्पसूत्रकी कौन२ प्राचीनटीका आप मानते हो उत्तर दो, ठाणेकी कोटवालीमें शास्त्रार्थ होगा.

२—शास्त्रार्थ आपका और मेराहै, इसमें मुंबई के सब संघको व आगेवानोंको बीचमें लानेकी कोई जरूरत नहीं है, आप संघको बीचमें लानेका लिखो या कहो यही आपकी कमजोरी है, न सब संघ बीचमें पडे और न हमारी पोल खुले, ऐसी कपटता छोडो.

ताकत हो तो मुंबईकी पोलीश चौकी कोटवालीमें शास्त्रार्थ कर नेको आयो, दूसरे कागज काले करके मनमानी आडीटेढी लंबी चौडी झूठीझूठी बातें लिखकर भोलेजीवोंको भरमानेका काम नहीं करना.

३—दोनोंको सब लेख सिद्ध करके बतलाने पडेंगे.उसमें झूठेको क्या आलोयणा लेनी, सो लिखो. वैशाखसुदी १३."

न्यायरत्नजी आपकी धर्मवाद करनेकी ताकातहोती तो इतने दिन मौनकरके क्यों बैठे, खैर! ! ! जैसी आपकी इच्छा. मगर याद रखना सभामें योग्य नियमानुसार शास्त्रार्थ न करना, और अपने झूठे पक्षकी बात रखनेके लिये वितंडावाद करना या सामने न आकर साक्षि व प्रतिज्ञा विनाही दूसरे कागज काले करते रहना और विपर्यास व कुयुक्तियोंसे उत्सूत्रप्ररूपणाकी आपकी दोनों कीताबें सच्ची बनाना चाहो सो कभी नहीं हो सकेगा, किंतु इसके विपाक भवांतरमें अवश्यही भोगनेपडेंगे.मरीचि और जमालिसेंभी आपका उत्सूत्र बहुत ज्यादे है, आत्महित चाहते हो तो हृदयगम करके प्रायश्चित्त लेवो, उससे श्रेय हो. तथास्तु. सं० १९७१ ज्येष्ठ सुदी २ सोमवार. हस्ताक्षर-मुनि मणिसागर.

इसप्रकार उपरमुजब लेख प्रकटहोनेसे न्यायरत्नजी 'झूठेहैं इसलिये चुप लगाकर बैठे हैं' इत्यादि बहुत चर्चा होने लगी तब अपनी झूठी इज्जत रखनेकेलिये १ हेंडबील छपवाया उसमें लिखाथा कि, 'सभा हुईनहीं शास्त्रार्थ हुवानहीं फिर हारजीत कैसे होसके' इसके जबावमें हमनेभी विज्ञापन १०वा छपवाकर उनके लेखका अच्छीतरहसे खुलासा कियाथा वो लेखभी नीचे मुजबहै –

विज्ञापन, नंबर १०.

श्रीतपगच्छके न्यायरत्नजी शांतिविजयजीके हारका कारण, और उनकी अधिकमाससे शास्त्रार्थकी जाहिर सूचनाका उत्तर.

१-न्यायरत्नजी लिखतेहैंकि,-'सभाहुईनहीं शास्त्रार्थहुवानहीं फिर हारजीत कैसे होसके' जबाब-आपकी हारका कारण विज्ञापन ७वें में और ९ वें में लिख चुका हूं उसको पूरेपूरा लिखकर सबका उत्तर क्यों न दिया ? फिरभी देखिये-मेरे विज्ञापन नं. ७ के सब लेखोंका पूरेपूरा उत्तर नियम समयपर आप देसकेनहीं १, विज्ञापन ९ मुजब सभाके नियमभी मंजूर किये नहीं २, आजतक वारंवार मुंबईमें आ-

व आना जाना करतेहैं, मगर सभा करनेको खडे होते नहीं ३,सभामें सत्यग्रहण करनेकी प्रतिज्ञाभी करते नहीं ४, झूठे पक्षवालेको क्या प्रायश्चित्त देना सो भी स्वीकार करते नहीं ५, और श्रीकच्छीजैन एसोसीयन सभाकी विनतीसेभी सभा करनेको आप आते नहीं ६, और लेखीत व्यवहारसेभी शास्त्रार्थ शुरु किया नहीं, ७, इसलिये आपकी हार समझी गई, महाशयजी ! ९ महीनोंसे शास्त्रार्थ करनेके लिये आपसे लिखता हुं, मगर आपतो थाडी २ बातें बीचमें लाकर शास्त्रार्थ करनेसे दूरहीभटकतेहैं, फिर हारमें क्या कसररही. अबतक दूसरी आड छोडकर शास्त्रार्थकरनेको सामने न आवोंगे तबतकही आपकी कमजोरी समझी जावेगी-अभीभी अपनी हार आपको स्वीकार न करना होतो, थाणा छोडकर आगे पधारना नहीं. शास्त्रार्थ करनेको जल्दी पधारो. कंठशोष-शुष्क विवाद व वितंडवादसे कालक्षेप करनेकी व कालक्षेप करनेकी और व्यर्थ श्रावकोंके पैसे बरबाद करवानेकी कोई जरूरत नहीं है।

२- " शास्त्रार्थ आपका और मेरा है, इसमें मुंबईके सब संघको व आगेवानोंको बीचमें लानेकी कोई जरूरत नहीं है,आप संघको बीचमें लानेका लिखो या कहो यही आपकी कमजोरीहै, न सब संघ बीचमें पडे और न हमारी [न्यायरत्नजीकी] पोल खुले, ऐसी कपटता छोडो " इसतरहसे विज्ञापन नं० ९ वें के मेरे पूरे सब लेखको आपने छोडदिया और मेरे अभिप्राय विरुद्ध होकर आप लिखतेहैं, कि " शास्त्रार्थ करना और फिर जैन संघकी जरूरत नहीं यह कैसे बन सकेगा " महाशयजी ! यह आपका लिखना सर्वथा अर्थ-[illegible]

मनाई नहीं, सभामें आना व सत्य ग्रहण करना मुंबईके संघको तो क्या मगर अन्यत्रकेभी सब संघको अधिकारहै, और इतनी बडी सभामें हजारों आदमियोंके बीचमें पक्षपाती व अल्प विचार वाले कोईभी किसी तरहका बखेडा खडाकरदेवे,या अपना निजका द्वेषसे आपसमें गडबड करदेवे,तो मुंबईके संघको व आगेवानोंको सुरतके झगडेकी तरह कर्मबंधा, धनहानी, शासनहिलना व कुसंप वगैरह-

प्रपंचमें फँसना पडे,इस अभिप्रायसे मैंने मुंबईके सब संघको बीच-मे न पडनेका लिखाथा, जिसपर आप "संघकी जरूरत नहीं" ऐसा उलटा लिखते हो सो अनुचित है, मुंबईके, व अन्यत्रकेभी सब संघको सभामें आना व शांतिपूर्वक सत्यग्रहण करना, यह खास जरूरत है, इसलिये-सभामें अवश्य पधारना और पक्षपात रहित होकर सत्यग्राही होना चाहिये.

३-और आपभी अपनी बनाई 'पर्युषणापर्वनिर्णय'के पृष्ट २२ वें की पंक्ति ४-५-६ में लिखतेहैं, कि-" सभामें वादी-प्रतिवादी-सभा-दक्ष-दंडनायक और साक्षी ये पांचबातें होना चाहिये.दोनों पक्षवालोंकी रायसे सभा करनेका स्थान और दिन मुकरर करना चाहिये" देखिये-न्यायरत्नजी यह आपकेलेख मुजबही हममंजूर करतेहैं, अब आपकोभी अपना यह लेख मंजूर हो तो सभा करना मंजूर करो,आपका और हमारा शास्त्रार्थ कबहोवे, यह देखनेको सारी दुनिया उत्सुक हो रही है. जब सभाका दिन मुकरर होगा तब मुंबईके व अन्यजगहकेभी बहुतसे आदमी स्वयं देखनेको आजावेंगे" सभाका २ महीनेका समय होनेसे देशांतरकेभी श्रावक सभाका लाभ ले सकेंगे " यहकथन दादर और बालकेश्वरमें आपहीकाथा, अब आपकेलेख मुजबही साक्षीवगैरहके नाम व अन्य नियमभी मिलकर करनेचाहिये, पहिले विज्ञापनमें मैंभी लिख चुकाहूं.

४ आप लिखतेहैं कि "संघका मेरेपर आमंत्रण आवे तो मैं स.

[illegible]

वादी प्रतिवादीको संघ तरफसे आमंत्रण हो या न हो, मगर अपना पक्षकी सत्यता दिखलानेको स्वयं राजसभामें जातेथे.या अपनेपक्षके संघ अपनेविश्वासी गुरुको विनती करताथा, मगर सब संघ दोनोंपक्षवाले विनती कभीनहीं करसकते,इसलिये आपको संघकीविनतीकी आवश्यकतानहींहै, स्वयं आनाचाहिये, या आपके तपगच्छके संघको आपपर पूराभरोसा [विश्वास]होगा तो वो विनतीकरेंगे अन्य सब नहीं करसकते देखो· 'आनंदसागरजी पहिलेदेवी राजसभामें शास्त्रार्थ करनेको तैयारहुयेथे, और मुंबईमेंभी शास्त्रार्थकरनेका मंजूर-कियाथा तबभीसंघकी विनतीनहीं मांगीथी,स्वयं आनेको तैयारहुए·

थे.मगर अब शास्त्रार्थ क्यों नहींकरते,तो उनकी आत्मा जाने' इतने-परभी आप संघके आमंत्रणका लिखते हो सो भी 'श्रीकच्छीजैन एसोसीयन सभा' ने सर्व जैनश्वेतांबर मुनिमहाराजोंको सभाकरनेकी विनती की थी, सो आमंत्रण हो ही चुका फिर वारंवार क्या? यदि आप मुनिमंडलमें हैं तबतो आपकोभी आमंत्रण होचुका, यदि आप अपनेको भिन्न समझतेहैं तो संघ आमंत्रणभी कैसे कर सकताहै, मैं पहिलेही लिखचुकाहूं कि 'न सब संघ बीचमें पडे और न न्यायरत्नजीको शास्त्रार्थ करनापडे'ऐसी कपटता क्यों रखतेहो,आपके गच्छवालोंको आपका भरोसा न होवे, तो वे आपको विनती न करें, अथवा आपकी बात सच्ची मालूम न होवे तो मौनकर जावें,इसमें हम क्याकरें. आप अपनापक्ष सच्चा समझतेहोतो शास्त्रार्थको पधारो. आप दूरदूरसे खंडनमंडनका विवाद चलाते हैं, किताबें छपवाते हैं, तबतो संघसे पूछनेकी दरकार रखतेनहींहै, फिर उसबातका निर्णय करनेकी अपनेमें ताकत न होनेसे संघकी बात बीचमेंलाते हैं, यहभी एक तरहकी कमजोरी व अन्यायकीही बातहै और यह विवाद तो [illegible] श्रावक तो [illegible] हैं,इस-

५-पहिले राजा महाराजाओंकी सभामें शास्त्रार्थ होताथा और अभीके भारतकेमहाराज लंडनमें हजारों कोशबहुतदूरहैं,उनकी आज्ञाकारिणी और प्रजापालीनी कोर्ट व कोतवाली है, इसलिये यहां सभामें किसी तरहका बखेडा न होनेके लिये और शांतिसे पक्षपात रहित पूरा न्याय होनेके लिये विद्वानोंकी साक्षीपूर्वक शास्त्रार्थ होने में कोई तरहकाभी हरजा नहींहै यह तो जगतप्रसिद्धही बातहै,कि अदालतमें जो न्यायालय है,उसमें सुलह शांतिसे पूरा न्याय मिलताहै इसलिये न्यायाधीशके समक्ष इन्साफ मिलनेके लिये शास्त्रार्थ करने का हमने लिखा सो न्याय युक्तही है. देखो-पंजाबमें जैनियोंके और आर्यसमाजियोंके अदालतमेंही शास्त्रार्थ हुआथा उससेही जैनियोंको पूरा न्याय मिला, विजय हुईथी उसीतरह न्यायसे धर्मवाद करनेको यहां हम बहुत खुशीसे तैयार हैं, अब आपभी जलदी पधारो, हम तो सिर्फ न्यायसे इन्साफ चाहते हैं. यहांभी बहुत आदमी देखनेको आसकते हैं, सचेको भय नहीं रहता झूठेको भय रहता है.इस लिये यो बीचमें आडी२ बातोंसे झूठे२ बहाने बतलाकर किसी तरह-

सेभी अपनी इज्जतका बचावकरके शास्त्रार्थकरनेसे भगने चाहताहै।

६- आपकी इच्छा धर्म स्थानमेंही सभा करनेकी हो तो भी हम तैयार हैं, देखो- आपकेही गच्छके आपके वडील आचार्य आनंदसागरजीजोअभी मुंबईमें श्रीगौडीजीकेउपाश्रयमेंहैं,उनके व्याख्यानमें हजारों आदमियोंकीसभामरातीहै, वहां आपका और हमारा शास्त्रार्थहोतोभी हमेंमंजूरहै,मगर ऊपर लिखेमुजबनियमानुसार होनाचाहिये. अथवा मुंबईमें अन्य स्थानभी बहुतहैं, जहां आप लिखे वहांही सही. धालकेश्वरमें हमारे गुरुजी महाराजके पास २-३ श्रावकोंके समक्ष आपने कहाया, कि- आनंदसागरजी शास्त्रार्थ करेंगे, तो मैं साक्षीरहूंगा औरयदि मैं शास्त्रार्थ करूंगातो आनंदसागरजीको साक्षी बनाऊंगा सो यह योगभी आपके बन गया है, अब अपनी प्रतिज्ञासे आपको बदलना उचित नहींहै,और सभादक्ष-दंडनायक वगैरह नियमभी मिलकर जलदी करीयेगा.

७- और आप लिखतेहैं, कि " पर्युषणापर्व निर्णय,छपनेको नव महीने होगयें हरेक बयानका पूरेपूरा उत्तर दीजिये" जबाब-महाशयजी श्रावकोंके विशेष पैसे खर्च न होनेके लिये व किताबें छपवानेसे बहुत बर्षोंतक खंडन मंडनका प्रपंच नहीं चलानेके लियेही आपकी किताबोंका उत्तर सभामें देनेका विचार रक्खा है,सो प्रथम विज्ञापनमें लिखभी चुका हूं. इसलिये ९ महीनेका लिखना आपका अनुचितहै, और श्रीमान् पन्यासजी केशरमुनिजीके बनाये ' प्रश्नोत्तर विचार " और ' हर्षहृदयदर्पण'का दूसरा भागके पर्युषणासंबंधी लेख, व 'प्रश्नोत्तर मंजूरी'के तीन (३) भागके ४००-५०० पृष्ट छपेको आज ४ वर्ष ऊपर हो चुका है,उनकी प्रत्येक बातका उत्तर आजतक आप कुछभी नहींदेसकते, तो फिर ९ महीने किस हिसाबमें हैं,और मैंरे लघुपर्युषणा निर्णयके सब लेखोंकाभी पूरा उत्तर ११ महीने हो गये तो भी आजतक आप न दे सके, बल्कि सत्य सत्य लेखोंके पृष्ठकेपृष्ट और पंक्तियेंकी पंक्तियें छोडकर अधूरा२लेख लिखकर उलटार्थ ही जवाब देतेहैं, यह जवाब नहीं कहा जा सकता,सत्यता तभी मानी जा सकेगा कि पूरे पूरा लेख लिखकर अभिप्राय मुजब बरोबर उत्तर दिया जावे, सो तो आपने अपनी दोनों किताबोंमें कहींभी नहीं किया,और उलट पुलट झूठाझूठाही लिख दिखलायाहै, सो यह युक्ती है सत्यको कौन असत्य बना सकताहै।मगर कुक्तियोंसे बात को अपनी तरफ खींचना अलग बात है। देखिये हमनें तो आपकी

दोनों किताबोंकी उत्सूत्र प्ररूपणासंबंधी १२ भूलेंतो विज्ञापन नं ७में दिखलादी हैं, और भी बहुत हैं सो सभामें विशेष खुलासा होगा. और ७वें विज्ञापन का तो पहिले कुछभी उत्तर आपने नहीं दिया. और नवमेंका देनेलगे, यह भी आपका अन्याय है, और सभामें निर्णय होनेवाला है, जिसपरभी आप अभी किताब द्वारा जवाब मांगते हैं, इससे साबित होताहै, कि शास्त्रार्थ करनेकी आपकी इच्छा नहीं है, अन्यथा ऐसा क्यों लिखते, यदि हो तो कब विचार है, सो लिखो आपकी तीसरी पुस्तककाभी उत्तर उस समय सभामें मिलजावेगा मगर दोनों किताबोंमें जैसी उत्सूत्रता भरी है, वैसी तीसरीमेंभी होगा,तो सभामें सिद्धकरके बतलाना मुश्किलहोगा. और उसकीआलोयणा लेनीपडेगी. अधिकमहीनेके दिनोंकी गिनती,व आषाढचौमासीसे ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करना,तथा श्रीवीरप्रभुके ६ कल्याणक मान्यकरने और श्रावकके सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीकरना शास्त्रानुसार होनसे इनबातोंको कोईभी निषेधनहीं करसकता.

विशेष सूचना-गये चौमासेमें हमने सब मुनिमहाराजोंको पर्युषणापर्वका निर्णयकरनेकी सभा करनेकेलिये विनतीपत्रसे आमंत्रण भेजाथा.तथा 'श्रीकच्छीजैन एसोसियन सभा'नेभी सब मुनिमहाराजोंको सभा भरकर पर्वोपर्वके अधिकमाससंबंधी इस विवादके निर्णय करनेकी विनती कीथी, जिसपरभी कोई सभा करनेको न आये, सबने चुप लगादी, अब आप लोगभी चौमासा वगैरहके बहाने बतलाकर सभा न करोगा, तो फिर आपकीभी हार समझी जावेगी. तथा आपके पक्षके सब मुनियोंकीभी सत्यताकी परीक्षा दुनिया स्व-

हस्ताक्षर-मुनि-मणिसागर, मुंबई.

हठको छोडाभी नहीं. यह कितना बडा भारी अभिनिवेशिक मिथ्या-
त्वका आग्रह कहाजावे सो दीर्घदर्शीतत्त्वज्ञ जनस्वयंविचार सकतेहैं.

और भी न्यायरत्नजीने एक हँडबील तथा 'अधिकमासदर्पण'
नामा छोटीसी एक किताब छपवाया, उनमेंभी विज्ञापन ७ वेंमें जो
हमने उनकी १२ भूलें बतलायीथी, उन सब भूलोंका अनुक्रमसे पूरे
पूराखुलासाकरनेके बदले १भूलकाभी पूरेपुरा खुलासा करसके नहीं
और मास वृद्धिके अभावसे पर्युषणाके बाद ७० दिन रहनेका व दू-
सरेआषाढमें चौमासी कार्य करनेका तथा श्रावण-पौषसंबंधी कल्या-
णक तप वगैरह सब बातोंका स्पष्ट खुलासापूर्वक निर्णय 'लघुपर्यु-
षणा'में और सातवे विज्ञापनमें अच्छीतरहसे हमबतला चुकेहैं, तो-
भी उन्ही बातोंको बालहठकी तरह वारंवार लिखे करना और स्था-
नांगसूत्रवृत्ति, निशीथचूर्णि, कल्पसूत्रकी टीकायें आदि बहुत शास्त्रों-
मे मास बढे तब पर्युषणाके बाद १०० दिन ठहरनेका कहा है, तथा
अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये हैं, इसलिये अधिक महीना
होवे तब ७० दिनकी जगह १०० दिन होवें उसमे कोई दोष नहीं है.
मगर पर्युषणापर्व किये बिना ५०वें दिनको उल्लंघन करे तो जिनाज्ञा
भंगका दोष कहाहै,इसीलिये ५०दिनकी जगह ८०दिनतो क्या परंतु
५१ दिनभी कभी नहीं होसकते इत्यादि बहुत सत्य २ बातोंको उडा-
देनेका उद्यम किया सो सर्वथाअनुचितहै,इनसब बातोंका विशेषनि-
र्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इन ग्रंथमें विस्तार पूर्वक शास्त्रों-
के प्रमाणोंसहित अच्छी तरहसे खुलासासे छपचुका है, इसलिये
यहांपर फिरसे लिखनेकी कोई आवश्यकता नहींहै, पाठक गण ऊप-
रके लेखसे सब समझ लेंगे।

अब हम यहां पर 'खरतरगच्छ समीक्षा' के विषयमें थोडासा
लिखतेहैं,न्यायरत्नजी'खरतरगच्छ समीक्षा' नामा किताब छपवा-
ने संबंधी वारंवार जाहेर खबर लिखतेहैं, यह किताब आज लगभ-
ग १२—१३ वर्षहुए उनोंने बनायाहै, जब हम संवत् १९६५ को श्री-
अंतरिक्ष पार्श्वनाथजी महाराजकीयात्रा करनेकेलिये बराड देशमें गये
थे, तब बालापुरमें न्यायरत्नजी हमकोमिलेथे, उससमय उस किता-
बकी कॉपी उन्होंनेहीखास मेरेको बंचायाथा,तब मैने उस किताबपर
महानिशीथ वगैरह कितनेही शास्त्रोंका प्रमाण मांगा, तब न्यायरत्न-
जी बोले अभीमेरे पास महानिशीथसूत्र वगैरह शास्त्र यहांपर मौजूद
नहींहै, फिर कभी आगेदेखाजायेगा,ऐसा कहकर उस समय बातको

डाल दिया. अब वोही किताब छपवानाचाहतेहैं, उस किताबमें सामायिक—कल्याणक-पर्युषणा-अभयदेवसूरिजी-तिथि वगैरह बातोंसंबंधी शास्त्रानुसार सत्य २ बातोंको झूठी ठहरानेके लिये शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे २ पाठ लिखकर उन पाठोंके अपनी कल्पना मुजब जान बुझकर खोटे खोटे अर्थ करके कुयुक्तियोंसे उत्सूत्र प्ररूपणारूप और प्रत्यक्ष मिथ्या बहुतजगह लिखाहै, उसका थोडासा नमूना पाठकगणको यहांपर बतलाते हैं, जिसमें प्रथम सामायिक संबंधी लिखतेहैं :—

१ – श्रावकको सामायिक करनेकी विधि संबंधी सर्व शास्त्रोंमें पहिले करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका लिखाहै, देखो-श्रीजिनदासगणिमहत्तराचार्यजी कृत आवश्यक सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीहरिभद्रसूरिजीकृत बृहद्वृत्तिमें २, तिलकाचार्यजी कृत लघुवृत्तिमें ३, देवगुप्तसूरिजी कृत नवपदप्रकरण वृत्तिमें ४, रत्नशेखरसूरिजी कृत श्रावकधर्म प्रकरण वृत्तिमें ५, श्रीनवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी कृत पंचाशक सूत्रकी वृत्तिमें ६, विजयसिंहाचार्यजीकृत वंदीतासूत्रकीचूर्णिमें ७, हेमचंद्राचार्यजी कृत योगशास्त्र वृत्तिमें, ८, तपगच्छीय देवेंद्रसूरिजी कृत श्राद्धदिनकृत्यसूत्रकीवृत्तिमें ९, कुलमंडनसूरिजी कृत विचारामृत संग्रहमें १०, मानविजयजी कृत धर्मसंग्रह वृत्तिमें ११, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें खास तपगच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंने प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका बतलायाहै.

२ – श्रीमान् देवेंद्रसूरिजी कृत श्राद्धदिनकृत्य सूत्रवृत्तिका पाठ यहां पर बतलाताहूं. सो देखिये :—

" श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं, ततोऽसौ साधुसमीपे गत्वा किं करोति इत्याह-साधुसाक्षिकं पुनः सामायिकंकृत्वा इर्यापथिकयाःप्रतिक्रम्यागममालोचयेत्। तत आचार्यादीन् वंदित्वा स्वाध्यायं काले आवश्यकं करोति " इत्यादि

इस पाठमें गुरुपास जाकर करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीकरके आचार्यादिकोंको वंदनाकरके स्वाध्यायकरना बतलायाहै और पीछे अवसर आवे तब छ आवश्यक रूप प्रतिक्रमण करनेकाभी बतलाया है।

३— श्रीहीरविजयसूरिजीके संतानीय श्रीमानविजयजीउपाध्यायजीकृत धर्मसंग्रह वृत्तिका पाठभी देखोः—

" साध्वाश्रयंगत्वा साधूनमस्कृत्य सामायिकं करोति, तत्सूत्रं यथा – ' करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं, मणेणं वायाए काएणं, न करेमि न कारवेमि, तस्स भंते पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ' त्ति, एवं कृतसामायिकं ईर्यापथिक्याप्रतिक्रामति, पश्चादागमनमालोच्य यथा ज्येष्ठमाचार्यादीन्वंदते, पुनरपि गुरुं वंदित्वा प्रत्युपेक्षितासने निविष्टः शृणोति पठति पृच्छति वा " इत्यादि

इनपाठमेंभी उपाश्रयमें जाकर साधुमहाराजको वंदना करके पहिले करेमिभंतेका पाठउच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीकर के अनुक्रमसे बडील आचार्यादिकोंको वंदनाकर फिर शास्त्र सुने, वांचे या धर्म चर्चाकी बातें गुरुसे पूछता रहे- ऐसा खुलासा लिखाहै.

४– श्री लक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रावक धर्म प्रकरण वृत्तिका पाठभी यहांपर बतलाताहूं, सो देखो :—

" चैत्यालये विधि चैत्ये, स्वनिशांते स्वगृहे, साधुसमिपे, पौषो-शालादीनां धियते-अस्मिन्निति पौषधं पर्वानुष्टानं, उपलक्षणत्वात्सर्व धर्मानुष्टानार्थं शालागृहं; पौषधशाला तत्र वा, तत् समायिकं कार्यं श्राध्धैः सदा नोभयसंध्यमेवेत्यर्थः । कथं तद्विधिना इत्याह– ' खमासमणं दाउं, इच्छाकारेण संदिस्सह भगवन् सामाइय मुहपत्ति पडिलेहेमित्ति भणियं, बीयखमासणपुव्वं सामाइयं ठाविंत्ति, वुत्तुं खमासमण दाणपुव्वं अध्धावणगत्तो पंच मंगलं कड्डिता ' करेमिभंते ' ...

स ...

होवे तब किसीभी समयमें सामायिक करनेका बतलाया है, सो पहिले खमासमणसे आज्ञा लेकर सामायिक मुहपतिकापडिलेहण करके फिरभी दो खमासमणसे सामायिक संदिसाहणेका तथा सामायिक ठाणेका आदेशलेकर विनयसहित करेमिभंतेका पाठ उच्चारण करके पीछेसे इरियावही करनेका खुलासापूर्वक स्पष्ट बतलाया है ।

५– इसीही तरहसे श्री हरिभद्रसूरिजीने आवश्यकबृहद्वृत्तिमें, श्रीनवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजीने पंचाशकवृत्तिमें, श्रीहेमचंद्राचार्यजीने योगशास्त्रवृत्तिमें इत्यादि अनेक प्रभावक प्राचीन आचार्योंने अनेक शास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछे इरियावही करनेका खुलासा पूर्वक स्पष्ट बतलाया है ।

६-" पयमक्खरंपि इक्कं, जो न रोएइ सुत्तनिद्दिट्ठं । सेसं रोअंतो वि हु, मिच्छादिट्ठी जमालिव्व ॥१॥" इत्यादि शास्त्रीय प्रमाणके इस वाक्यसे सर्वशास्त्रोंकी बातोंपर श्रद्धा रखनेवालाभी यदि शास्त्रोंके एक पद या अक्षरमात्रपरभी अश्रद्धाकरे, तो उसको जमालिकीतरह मिथ्या दृष्टि समझना चाहिये । अब इस जगह श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सज्जनोंको विचार करना चाहिये, कि—श्रीहरिभद्रसूरिजी, नवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी, हेमचंद्राचार्यजी, लक्ष्मीतिलकसूरिजी, देवेंद्रसूरिजी, वगैरह महापुरुषोंके कथन मुजब आवश्यक वृहद्वृत्ति वगैरह प्रामाणिक व प्राचीन शास्त्रोंके पाठोंसे श्रावकके सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करने संबंधी जिनाज्ञानुसार सत्य बातपर श्रद्धा नहीं रखने वाले, तथा इस सत्य बातकी प्ररूपणाभी नहीं करनेवाले, और उसमुजब श्रावकोंकोभीनहीं करवानेवाले, व इससे सर्वथाविपरीत प्रथमइरियावही पीछे करेमिभंते करवानेका आग्रह करनेवालोंको ऊपरके शास्त्रवाक्य मुजब जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सम्यग्दृष्टि कैसे कहसकतेहैं, सो आपने गच्छके पक्षपातका दृष्टिरागको और परंपराके आग्रहको छोडकर शुद्ध दृष्टिसे सत्यशोधक पाठकगणको खूब विचार करना चाहिये ।

७- ऊपर मुजब सत्यबातको न्यायरत्नजीने 'खरतर गच्छ समी-

[illegible]

इहा, सयासवेट्ठ चेव उवउत्ते से भवेज्जा, जयाणं से तवट्ठ उवउत्ते भवेज्जा, तया तस्सणं परमेगग्गचित्त समाही हवेज्जा, तयाचेव सव्वजगजीवपाणभूयसत्ताणं अहिट्ठफलसंपत्ती भवेज्जा, ता गोयमा णं अपडिक्कंताए इरियावहियाए नकप्पइ चेवकाउं किंचिवि चेइयवंदण सज्झायझाणाइयं काउं, इट्ठफलासायममभिकंखुगाणं, एएणं अट्ठेणं गोय-

भी एवं वुच्चइ,जहाणं ससुत्तत्थोभयं पंचमंगलं थिरपरिचिअं काउणं तओ इरियावहियं अज्झीए त्ति. से भयवं कयराए विहिए तं इरियावहीयाए अज्झीए गोयमा जहाणं पंचमंगलं महासुयखंधं. से भयवं इरियावहीयमहिज्जित्ताणं, तओ किमहिज्जे गोयमा सक्कत्थयाइयं चेइयवंदणं विहाणं, णवरं. सक्कत्थयं एगट्ठम बत्तीसाए आयंबिलेहिं इत्यादि ”

इसपाठमें अशुभकर्मोंके क्षयके लिये तथा अपनी आत्माको हितकारी होवे वैसे चैत्यवंदनादि करने चाहिये, इसमें उपयोगयुक्त होनेसे उत्कृष्टचित्तकी समाधी होती है, इसलिये गमनागमनकी आलोचनारूप इरियावही किये बिना चैत्यवंदन,स्वाध्याय,ध्यानादिकरना नहीं कल्पता है, अतएव चैत्यवंदनकरनेके लिये पहिले पंचपरमेष्ठि नवकारमंत्रके उपधान वहनकरने चाहिये उसके बाद इरियावही, नमुत्थुणं, अरिहंत चेइयाणं वगैरहके आयंबिल उपवासादि पूर्वक उपधान वहन करने चाहिये.

९ — देखिये ऊपरके पाठमें उपधान वहन करनेके अधिकार में विधिसहित उपयोगयुक्त चैत्यवंदन-स्वाध्याय-ध्यानादिकार्यकरने संबंधी पहिले इरियावही करके पीछेसे चैत्यवंदनादिकरें,ऐसा खुलासासे बतलाया है. इसलिये ऊपरका पाठ पोषधमाही उपधान वहन करनेवालों संबंधीहै, और पौषध(पोसह) करनेवालोंको तो इरियावही कियेबिना चैत्यवंदन, स्वाध्याय-पढना गुणना, तथा ध्यानादि नोकरवालीफेरना वगैरह धर्मकार्यकरना नहींकल्पताहै,इसलिये यहबात तो अभीवर्तमानमेंभी सर्वगच्छवाले उसी मुजब करतेहैं. मगर इस पाठमें सामायिकके अधिकारमें, प्रथम इरियावही किये बाद पीछेसे करेमिभंतेका उच्चारणकरने संबंधी कुछभी अधिकारका गंधभी नहींहै.जिसपरभीसूत्रकारमहाराजोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर आगे पीछेके उपधानके संबंधवाले संपूर्णपाठको छोडकर बीचमेंसे थोडासा अधूरापाठ लिखकर उसकाभी अपना मनमाना अर्थकरके सामायिककरने संबंधी प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहराना. सो ऊपर मुजब आवश्यक चूर्णि वगैरह अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध होनेसे सर्वथा उत्सूत्रप्ररूपणारूपही है।

१० — श्रीदशवैकालिकसूत्रकी दूसरीचूलिकाकी ७ वी गाथाकी टीकामें साधुके गमनागमनादि कारणसें इरियावही करनेका कहा है, सो पाठभी यहांपर बतलाता हूं. देखो :—

मा एवं वुयाई,जहाणं ससुत्तत्थोभयं पंचमंगलं थिरपरिचिअं काउणं तओ इरियावहियं अज्झीए त्ति. से भयवं कयराए विहिए तं इरिया- वहीयाए अज्झीए गोयमा जहाणं पंचमंगलं महासुयखंधं. से भयवं इरियावहीयमहिज्झित्ताणं, तओ किमाहिज्झे गोयमा सक्कत्थयाइयं चेइयवंदणं विहाणं, नवरं. सक्कत्थयं एगट्ठम बत्तीसाए आयंबिलेहिं इत्यादि "

इसपाठमें अशुभकर्मोंके क्षयके लिये तथा अपनी आत्माको हितकारी होवे वैसे चैत्यवंदनादि करने चाहिये, इसमें उपयोगयुक्त होनेसे उत्कृष्टचित्तकी समाधी होती है, इसलिये गमनागमनकी आलोचनारूप इरियावही किये विना चैत्यवंदन,स्वाध्याय,ध्यानादिकरना नहीं कल्पता है. अतएव चैत्यवंदनकरनेके लिये पहिले पंचपरमेष्ठि नवकारमंत्रके उपधान वहनकरने चाहिये उसके बाद इरियावही, नमुत्थुणं, अरिहंत चेइयाणं वगैरहके आयंबिल उपवासादि पूर्वक उपधान वहन करने चाहिये.

९. — देखिये ऊपरके पाठमें उपधान वहन करनेके अधिकार में विधिसहित उपयोगयुक्त चैत्यवंदन-स्वाध्याय-ध्यानादिकार्यकरने संबंधी पहिले इरियावही करके पीछेसे चैत्यवंदनादिकरें,ऐसा खुलासासे बतलाया है. इसलिये ऊपरका पाठ पौषधग्राही उपधान वहन करनेवालों संबंधीहै, और पौषध(पोसह) करनेवालोंको तो इरियावही कियेबिना चैत्यवंदन, स्वाध्याय-पढना गुणना, तथा ध्यानादि मोक्षदायक धर्मकार्य करना नहीं कल्पता है.इसलिये पहिले तो अभीवर्तमानमेंभी सर्वगच्छवाले उसी मुजब करते हैं. मगर इस पाठमें सामायिकके अधिकारमें. प्रथम इरियावही किये बाद पीछेसे करेमिभंतेका उच्चारणकरने संबंधी कुछभी अधिकारका संबंधही नहीं है जिसपरभी सूत्रकारमहाराजोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर आगे पीछेके उपधानके संबंधवाले संपूर्णपाठको छोडकर बीचमेंसे थोडासा अधूरापाठ लिखकर उसकाभी अपना मनमाना अर्थकरके सामायिककरने संबंधी प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहराना. सो ऊपर मुजब आवश्यक चूर्णि वगैरह अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध होनेसे सर्वथा उत्सूत्रप्ररूपणारूपही है।

१० – श्रीदशवैकालिकसूत्रकी दूसरी चूलिकाकी ७ वी गाथाकी टीकामें मात्रुंद गमनागमनादि कार्यमें इरियावही करनेका कहा है, सो पाठभी यहांपर बतलाता हूं. देखो।—

"अभीक्षणं, पुनः पुनः पुष्टकारणाभावे, निर्विकृतिकश्च, निर्गत विकृतिपरिभोगश्च भवेत् । अनेनपरिभोगोचित्तविकृतिनामप्यकारणे प्रतिषेधमाह. तथा अभीक्षणं, गमनागमनादिषु, विकृति परिभोगेऽपि चान्ये किमित्याह-कायोत्सर्गकारीभवेत्, ईर्यापथिकीप्रतिक्रमणमकृत्वा न किंचिदन्यत् कुर्यादनुष्ठतापत्तेरितिभावः। तथा स्वाध्यायोगे,वाचनाद्युपचार व्यापार आचामाम्लादौ यतोऽतिशय यत्नपरो भवेत्सैव तस्य फलचरशाद्विपर्यय उन्मादादि दोष प्रसंगादिति"

यावही किये विना कायोत्सर्गकरना,स्वाध्याय-सूत्रपाठपढना गुणना, ध्यानादि करना नहीं कल्पे, इस लिये पहिले इरियावही करके पीछे सूत्र वाचनादि कार्योंमे प्रवृत्ति करें, इत्यादि.

११ — इस ऊपरके पाठमेंभी साधुओंके गमनागमनादिकारणसे व स्वाध्यायादि करनेकेलिये इरियावहीकरनेका बतलाया है, मगर श्रावकके सामायिक करनेसंबंधी प्रथम इरियावही करके पीछे करेमि भंते उच्चारण करनेका नहीं बतलायाहै,जिसपरभी पंचमहाव्रतधारी सर्व विरति साधुओंके इरियावहीके पाठका आगे पीछेका संबंध छोड़ कर अधूरे पाठसे सामायिकका अर्थ करना बडी भूल है.

१२— इसी तरहसे किसी जगह पौषधसंबंधी इरियावहीके, किसी जगह उपधानसंबंधी इरियावहीके, किसीजगह साधुओंके गमनागमन संबंधी इरियावहीके,किसी जगह प्रतिक्रमण संबंधी इरियावहीके, किसीजगह चैत्यवंदन– स्वाध्याय-ध्यानसंबंधी इरियावहीके अक्षरोंको देखकर, उन जगहके प्रसंगसंबंधी शास्त्रकारोंके अभिप्रायकोसमझेबिनाही अथवा तो अपना झूठा आग्रह स्थापन करनेके लिये आवश्यक चूर्णि-बृहद्वृत्ति-लघुवृत्ति-श्रावकधर्मप्रकरणवृत्ति वगैरह अनेकशास्त्रपाठोंकोविरुद्धहोकर पौषधादिसंबंधी इरियावहीको सामायिकमें जोडकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेके पाठका उच्चारण करनेका ठहराना सो सर्वथा प्रकारसे अज्ञानतासे या जानबुझकरके उत्सूत्रप्ररूपणारूपही मालूम होता है.

देखिये— सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवालोंको अनेक दोषोंकी प्राप्ति होतीहै, सोही दिखाताहूं :-

१३ – जैनाचार्योंकी शास्त्ररचना अविसंवादी पूर्वापर विरोध

रहित होती है, तथा पूर्वापर विरोधी विसंवादीको शास्त्रोंमें मिथ्यात्वी कहा है, और श्री हरिभद्रसूरिजी महाराजने आवश्यक बृहद्वृत्तिमें तथा श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्तिमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका साफ खुलासा लिखाहै, और महानिशीथ सूत्रका उद्धारभी इन्हीं महाराजने किया है, इसलिये महानिशीथ सूत्रके पाठसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेमें आवें, तो श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजको विसंवादी कथनरूप मिथ्यात्वके दोष आनेकी आपत्ति आतीहै, इसलिये आवश्यक वृत्ति आदिके विरुद्ध होकर इन्ही महाराजके नामसे महानिशीथसूत्रके पाठसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनासो पूर्वापर विसंवादरूप मिथ्यात्वका कारण होनेसे सर्वथा अनुचित है।

१४- महानिशीथसूत्रके पाठसे 'इरियावही किये बिना कुछभी धर्म कार्य नहीं कल्पे,' इसलिये सर्व धर्मकार्य इरियावही करके ही करने चाहिये, ऐसा एकांत आग्रह करोगे तो भी नहीं बन सकेगा, क्योंकि देखो-देव दर्शनको या गुरु वंदनको जाती वक्त १, जिनप्रतिमाको या गुरुको देखतेही नमस्काररूप वंदना करती वक्त २, तीर्थयात्राको जाती वक्त ३, नवकारसी,पोरसी, उपवासादि पच्चक्खाण करती वक्त ४, मंदिरमें जघन्य चैत्यवंदन करती वक्त ५, गुरुमहाराजको आहारपाण्यादि वहोराती वक्त ६,इत्यादि अनेक धर्मकार्य इरियावही कियेबिनाही प्रत्यक्षपने करनेमें आते हैं, इसलिये इरियावही किये बिना कुछभी धर्मकार्य नहीं करना, ऐसा एकांत आग्रह करना सो सर्वथा विवेक बिनाकाही मालूम होताहै,इसलिये कोन२ कार्योंमें पहिले इरियावही करना, कौन २ कार्योंमें पीछेसे इरियावही करना, व कौन २ कार्य इरियावही किये बिनाभी हो सकतेहैं, इन बातोंका गुरुगम्यतासे भेद समझे बिना सामायिकमें प्रथम इरियावही करनेका एकांत आग्रह करना सो अज्ञानतासे सर्वथा शास्त्र विरुद्धहै.

१५-और भी देखिये-व्याख्यान,व्याख्यानादिमें प्रथम इरियावही करनाकहाहै,इसमें आदि पदसे सामायिकमेंभी प्रथम इरियावही करनेका अभिप्राय दिखलाते हैं, सो भी सर्वथा अनुचित है,क्योंकि,देखो श्रीखरतरगच्छनायक श्रीनवांगीवृत्तिकारक अभयदेवसूरिजी, तथा कलिकाल सर्वज्ञ बिरुद धारक श्रीहेमचंद्राचार्यजी और खास तपगच्छनायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी आदि पूर्वाचार्योंने महानिशीथसूत्र अवश्यही देखाथा इसका व्याख्यान आदिपदका अर्थभी अच्छीतरहसे जानतेथे

लिये इरियावही करनेका बतलायाहै,उसका आशय समझे विनाही अपने गच्छके पूर्वज आचार्य महाराजकोभी विसंवादरूप मिथ्यात्व-का दोष लगानेका भय नहीं करते हुए सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करते हैं, सो भी यही भूल करते हैं.

१९ – औरभी देखो धर्मरत्नप्रकरण वृत्तिमें "इरियं तु पडिकंतो कइ समइयं" इरियावही पूर्वक स्वाध्याय करें; ऐसा पाठ है,उसमें 'समइय' शब्दकीजगह 'सामाइय' शब्द बनाकर दो मात्राज्यादे अधिक पाठमें मिलाकर करके स्वाध्यायकी जगह सामायिकका अर्थ बदलातेहैं सो यहभी सर्वथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणारूप बडीभूलहै.

२०– श्रीधर्मघोषसूरिजीने 'संघाचारभाष्यवृत्ति'में चैत्यवंदन संबंधी दृष्टांतके अधिकारमें सातवी विकमें तीनवार भूमिप्रमार्जन करके इरियावहीपूर्वक-चैत्यवंदन करनेका बतलाया है, उसकेभी पूर्वापरका संबंध छोडकर उसपाठका भावार्थ समझे विना उसपाठसे भी सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहराते हैं, और इन महाराजकेही गुरु महाराज श्रीदेवेंद्रसूरिजीने प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही लिखा है, उस बातके विरुद्ध प्ररूपणाकरनेवाले बनते हैं, सो भी बडी भूल है.

२१-वंदीत्तासूत्रकी टीकाके पाठसेभी सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहराते हैं, सोभी सर्वथा अनुचित है, क्योंकि देखो-वंदी-त्तासूत्रकी प्राचीन चूर्णि और श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्ति वगैरह अनेक प्राचीन शास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका खुलासा लिखा है और खास वंदीत्तासूत्रकी टीकामेंभी सबसे सामायिक लेनेकी विधि-संबंधी आवश्यकचूर्णि, पंचाशकचूर्णि, योग शास्त्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार सामायिक करनेकी विधि दिखाई उन्हीं सर्व शास्त्रोंमें भी प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही लिखाहै, इसलिये प्राचीन चूर्णि आदि अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध होकर पूर्वापर विसंवादीरूप विरोधी कथन — एकही विषयमें; एकही ग्रंथमें; कभी नहीं हो सकताहै, जिसपरभी एकही विषयमें, एकही ग्रंथमें विसंवादी कथन करनेवाले या कहनेवाले शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करनेवाले [illegible] [illegible] समझने चाहिये.

२२- पंचाशकसूत्रकी चूर्णिके पाठसेभी सर्वथा सामायिक मध्ये प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका स्थापन करते हैं, सो भी सर्वथा अनुचित है, क्योंकि उसी चूर्णिमें सबसे सामायिकग्रहण संबंधी प्रथम

करेमिभंतेपीछे इरियावहीकरनेकापूरणपाठलिखाहै,जिसपरभी चूर्णिके लिये गच्छ वालोंको दूषण देना, और चूर्णिकारके अभिप्रायके पाठोंके छेदके ((या शंकास्पद संबंधी इरियावही लिखी है, उसको चूर्णि-कारके अभिप्राय विरुद्ध होकर १, वे सामायिक प्रथम बोले औघों-को दिखलाना,सो मायावृत्तिरूपप्रपंचसे अन्यशास्त्रपाठोंको लेकर शास्त्रवि-रुद्ध प्ररूपणा करना संसारवृद्धिका कारण होनेसे आत्मार्थियोंको क-रना योग्य नहीं है.यद्यपि न्यायरत्नजी ऐसी प्रपंचताकी बातें नहीं है, किंतु सर्वत्र शासनकी बातें है. इसलिये यहांही प्रथमसे,यहांही वि-चमें, यहांही पूर्वाचार्योंको पूर्वापर विरोधी विसंवादी कथन करने वाले ठहराना, सो यही न्यायरत्नजी अपना ज्ञान भूलकर पूर्वाचार्यों-की आशातनाका और शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाका भय न रखकर इस टोलेकी पूजा मानताकेलिये अपना झूठा आग्रह स्थापन करनेकेलिये स्वयंही ऐसी शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते होंगे, सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने. हम इस बातमें विशेष कुछभी नहीं कहसकते हैं।

६१-इसीतरहसे सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कह-नेका स्थापनकरनेवाले न्यायरत्नजीमहाराजको पूर्वाचार्योंको विसंवा-दीके झूठे ठहरानेमें हेतुभूत तथा अनेक शास्त्रोंके विरुद्धप्ररूपणा करनेरूप अनेक दोषोंके भागी होनापडता है,और पूर्वाचार्योंको झूठा ठहराकर उनसंबंधी आशातनासे तथा शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्धप्ररू-पणा करनेसे आपने व अपने पक्षके आग्रहकरनेवाले बालजीवोंकोभी संसारवृद्धिका कारणरूप महान् अनर्थ होता है, यही सर्व बातें न्या-यरत्नजीने ' खरतरगच्छ समीक्षा ' में सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेकी आवश्यक चूर्णि, बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रानु-सार सत्य बातको निषेध करनेके लिये और प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेके लिये महानिशीथ-दशवैकालिक सूत्रकी टीकाकारवगैरह बहुतशास्त्रकारमहाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरेअधूरे पाठोंसे उलटा संबंध लगाकर उत्सूत्रप्ररूपणासे बड़ा अनर्थ किया है, उसका नमूनारूप थोड़ासा सामायिक संबंधी पाठकगण को निःसंदेह होनेके लिये हमने ऊपरमें इतना लिखाहै. मगर इस प्र-करणका विशेष खुलासा पूर्वक इसीही "बृहत्पर्युषणा निर्णय" ग्रंथके पृष्ठ३०९.से३२९.तक अच्छी तरहसे छप चुका है, वहांसे विशेष जान लेना और "आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः" नामा ग्रंथमेंभी विस्तारपूर्वक शास्त्रोंके पाठोंसहित निर्णय हमारी तरफसे छप चुका है, इस लिये

यहांपर फिरसे ज्यादे विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है।

२४-अब सत्यप्रिय पाठकगणसे हमारा इतनाही कहनाहै, कि-महानिशीथसूत्रके उपधान चैत्यवंदनसंबंधी इरियावहीके अधूरे पाठसे,तथा दशवैकालिककी टीकाके साधुओंके स्वाध्याय करनेसंबंधी इरियावहीके अधूरे पाठसे,श्री हरिभद्रसूरिजीमहाराजके अभिप्राय विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करतेहैं,और इन्हीं महाराजने जिनाज्ञानुसारही प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासा पूर्वक आवश्यकसूत्रकी बडी टीकामें लिखा है, उसको निषेध करतेहैं,या उसपर अविश्वास लाकर कुयुक्तियोंसे भोलेजीवोंकोभी उस बातपर शंकाशील बनातेहैं, वो लोग जिनाज्ञा विरुद्धहोकर उत्सूत्रप्ररूपणाकरतेहुए अपने सम्यक्त्वकोमलिन करतेहैं.

२५-और किसीभी प्राचीन पूर्वाचार्यमहाराजनेंअपने बनाये किसीभी ग्रंथमें, किसी जगहभी ९ वें सामायिकव्रतसंबंधी प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते नहींलिखा.मगर खास तपगच्छादि सर्व गच्छोंके सर्वपूर्वाचार्योंने प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही स्पष्ट खुलासा पूर्वक लिखा है, इसलिये इस बातमें पाठांतरसे पहिले इरियावहीभी नहीं कह सकते, जिसपरभी पाठांतरके नामसे पहिले इरियावही स्थापन करें सो भी शास्त्रविरुद्ध होनेसे प्रत्यक्ष मिथ्या है.

२६- और कितनेक अज्ञानी लोग अपनी मति कल्पनासे कहते हैं, कि- पहिले इरियावही करें तो क्या, और पीछे करें तो भी क्या, किसी तरहसे सामायिक तो करनाहै,ऐसा मिश्र भाषण करने वालेभी सर्वथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते हैं, उन लोगोंको सामायिकमें प्रथम करेमिभंते कहनेसंबंधी शास्त्रकारोंके गंभीर अभिप्रायको समझमें नहीं आया मालूम होताहै, नहीं तो ऐसा शास्त्रविरुद्ध मिश्र भाषण कभी नहीं करते. क्योंकि देखो-सर्व शास्त्रोंमें स्वाध्याय, ध्यान,प्रतिक्रमण,पौषधादिधर्मकार्योंमें पहिले इरियावही कहाहै,और सामायिकमें करेमिभंते पहिले कहे बाद पीछेसे इरियावही करनेका कहा है, सो इसमें गुरुगम्यताका अतीव गंभीरार्थवाला कुछभी रहस्य होना चाहिये, नहीं तो सर्व शास्त्रोंमें महान् शासन प्रभावक श्री हरिभद्रसूरिजी, नवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी, कलिकाल सर्वज्ञविरुदधारक हेमचंद्राचार्यजीआदिगीतार्थमहाराज प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही कभी नहीं लिखते. इसलिये इनमहाराजोंके गंभीरआशयको समझेबिना इनसे विरुद्ध प्ररूपणा करना बडी भूलहै.

चैत्यालये ऽवनिशांते, साधूनामंतिकेऽपि वा ॥
कार्ये पौषधशालायां, श्राद्धैः स्वगृहेऽथवा सदा ॥ १ ॥

व्याख्या- चैत्यालये जिनचैत्ये, अवनिशांते स्वगृहेऽपि विजन-स्थाने इत्यर्थः । साधुसमीपे, पौषो धर्मपोषकं पर्वाष्टम्यादि तत्र पौषधं पर्वानुष्ठानं उपवासादि तदर्थमनुष्ठानार्थं शाला गृहं पौषधशाला, तत्र वा तत् सामायिकं कार्यं श्राद्धैः सदा श्रीमच्चंद्रप्रभसूरिभिरुक्तं । अ-त्रविधिमाह-सामायिकं काउं इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामाइयमुहपत्तिं पडिलेहेमि त्ति भणिय, बीय खमासमणे मुहप-त्तिं पडिलेहिय, पुणरवि पढम खमासमणेण सामाइयं संदिसाविय, बी-य खमासमणपुव्वं सामाइयं ठामि त्ति वुत्तं, खमासमणदाणपुव्वं अ-द्धावणय गत्तो पंचमंगलं कड्ढित्ता 'करेमि भंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पडिक्कमामि निं-दामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ' त्ति सामाइय सुत्तं भणति, त-ओ पच्छा इरियं पडिक्कमति, इत्यादिपूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन। अत्र च ईर्यां प्रतिक्रम्यैव सामायिकोच्चारणं यत्केचिद्वाचयन्ते तत्सिद्धांतोत्तीर्णम्, यत उक्तमावश्यक चूर्णि-बृहद्वृत्त्यादौ- यथा " करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणमिति, काउण पच्छा इरियं पडिक्कमइ त्ति " इत्यादि

११-श्रीपार्श्वनाथस्वामीके संतानीय परंपरामें श्रीउपकेशगच्छीय श्रीदेवगुप्तसूरिजी महाराजने श्री नवपदप्रकरणवृत्तिमेंभी प्रथम करे-मिभंते पीछे इरियावही सामायिक संबंधी कहा है, सो पाठभी यहां पर बतलाते हैं, यथा :—

" आवश्यक चूर्ण्याद्युक्त समाचारी त्वियं-सामायिकं श्रावकेण कथं कार्यं ? तत्रोच्यते- श्रावको द्विविधोऽनृद्धिमानः ऋद्धिमांश्च, तत्रायश्चैत्यगृहे, साधुसमीपे,पौषधशालायां, स्वगृहे वा. यत्र वा वि-श्राम्यति तिष्ठति च निर्व्यापारस्तत्र करोति, चतुर्षु स्थानेषु नियमेन करोति, चैत्यगृहे, साधुमूले पौषधशालायां स्वगृहे वा अवश्यं कुर्वा ण इति. एतेषु च यदि चैत्यगृहे साधुमूले वा करोति,तत्र यदि केनाऽ-पि सह विवादो नास्ति,यदि भयं कुतोऽपि न विद्यते, यस्य कस्यापि किंचिद् न धारयति,मा तत्कृताकर्षापकर्षौ भूतां, यदि वाऽधम चर्ण्यं-मवर्ण्यमवलोक्य न गृह्णीयात्, मा भांक्षीत् इति बुद्धया यदि वा ग-च्छन् न किमपि व्यापारं व्यापारयेत् तदा गृहे एव सामायिकं गृही-

स्वा चैत्यगृहं साधुमूलं वा यथा साधुः पंचसमितिसमितस्त्रिगुप्ति-गुप्तस्तथा याति, आगतश्च त्रिविधेन साधून् नमस्कृत्य तत्साक्षिकं पुनः सामायिकं करोति " करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्च-क्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं " इत्यादि सूत्रमु-च्चार्य, तत , ईर्यापथिकीं प्रतिक्राम्यति, आगमनं चालोचयति. ततः, आचार्यादीन् यथारत्नाधिकतयाभिवंद्य सर्वसाधून् , उपयुक्तोपविष्टः पठति, पुस्तक वाचनादि वा करोति । चैत्यगृहे तु यदि वा साधवो न संति, तदा ईर्यापथिकी प्रतिक्रमण पूर्वमागमनालोचनं च विधाय चैत्यवंदनां करोति,पठनादि विधत्ते,साधुसद्भावे तु पूर्व एव विधिः । एवं पौषधशालायामपि । केवलं यथा गृहे आवश्यकं कुर्वाणोऽपृच्छा ति—तथैव गमनविरहितं इत्यादि । तथा ऋद्धिप्राप्तस्तु चैत्यमूलं साधुमूलं वा महद्धर्यैव याति, येन लोकस्य आस्था जायते चैत्यानि साधवश्च सत्पुरुषपरिग्रहेण विशेष पूज्यानि भवंति. पूजित पूजक स्यात् लोकस्य । अतस्तेन गृहे एव सामायिकमादाय नागतव्यमधि-करण भयेन हस्त्यश्वाद्यानयनप्रसंगात् ,आगतश्च चैत्यालये विधिना प्रविश्य चैत्यानि च द्रव्य-भावस्तवेनाभिष्टुत्य, यथासंभवं साधुस-मीपे मुखपोतिका प्रत्युपेक्षणपूर्वं "करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जो-गं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वा-याए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि " त्ति उच्चार्य ईर्यापथिक्यादि प्रति क्रम्य यथा रत्नाधिकतया सर्वसाधूंश्चाभिवंद्य प्रश्नादि करोति, सा-मायिकं च कुर्वाण एव मुकुटमुपनयति कुंडलयुगलनाम मुद्रे च पु-ष्प-तांबूल-प्रावरणादिव्युत्सृजति। किंच यदि एव श्रावक एव तदाऽ-स्यागमनवेलायां न कश्चिदुत्तिष्ठति, अथ यथा भद्रकस्तदाऽस्यापि सन्मानो दर्शितो भवति,इति बुद्ध्या आचार्याणां पूर्वरचितमासनंप्रि-यते अस्य च, आचार्यास्तु उत्थायैवतस्ततश्चंक्रमणं कुर्वाणा आसते तावद् यावदेष आयाति, तत समभेवोपविशंति । अन्यथा उत्था-नानुत्थानदोषाविभाव्या , एतच्च प्रासंगिकमुक्तम् । प्रकृतं तु सामा-यिकस्थेन विकथादि न कार्यं,स्वाध्यायादिपरेण आसितव्यं" इत्यादि.

३२-श्रीतपगच्छनायक श्रीदेवेंद्रसूरिजी महाराज कृत श्राद्धदिन-कृत्यसूत्रकी वृत्तिका पाठभी देखो.-

"तओ वियाल वेलाए,अत्थमिए दियायरे।पुप्फंसेल विहाणेन,पुणो वंदे जिणोत्तमे ॥२८॥ तओ पोसहसालं तु,गंतुण तु पमज्जए। ठाविता

तीर्थसूरिं, तओ सामाइयं करे ॥२९॥ काऊणय सामाइयं, इरियंपडि- क्कमिय,गमणमालोए। वंदित्तु सूरिमाइ, सज्झायावस्सयं कुणइ ॥३०॥

व्याख्या— सांप्रतमष्टदशं सत्कार द्वारमाह– ततो वैकालिका- नंतरं, विकालवेलायां अंतर्मुहूर्त्तरूपायां, नामेवव्यनक्ति अस्तमितेदि- वाकरे अर्द्धबिंबादयाक् इत्यं। पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाकृत्वेतिशेषः। पुनर्वंदते जिनोत्तमान् प्रसिद्ध चैत्यवंदन विधिना ॥ २८ ॥ अथैकोन विंशति वंदनकोपलक्षितमावश्यक द्वारमाह—ततस्तृतीय पूजा नंत- रं श्रावकः पौषधशालांगत्वा यतनया प्रमार्ष्टि, ततो नमस्कार पूर्वकं व्यवहित तुशब्दस्यैवकारार्थ त्वात् स्थापयित्वैव तत्र सूरिं स्थापना- चार्यं, ततो विधिना सामायिकं करोति ॥ २९ ॥ अथ तत्र साधवोऽ विसंति श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं, ततोऽसौसाधुसमीपे गत्वा- किं करोति इत्याह– साधुसाक्षिकं पुनः सामायिकं कृत्वा ईर्यापथिक- स्यागमनमालोचयेत् तत आचार्यादीन् वंदित्वा स्वाध्यायं काले चा- वश्यकं करोति ॥ ३० ॥ इत्यादि"

३३-अब देखिये-ऊपरके सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंमें श्रावकको सामायिक कैसे करना चाहिये? इस सवालके जवाबमें सर्व शास्त्र कार महाराजोंने इस प्रकार खुलासा पूर्वक लिखा है.

१-सामायिक करनेवाले राजादि धनवान् व व्यवहारिक धन रहित ऐसे दो प्रकारके श्रावक बतलाये.

२- धन रहित श्रावकको भगवान्के मंदिरमें १, उपद्रवरहित एकांत जगहमें अपने घरमें २, साधु महाराजके पासमें ३, या पौषध शालामें ४, ऐसे ४ स्थान सामायिक करनेके लिये बतलाये.

३ – जब श्रावकको संसारिक कार्योंसे निवृत्ति होवे [फुरसत मिले] तब हरेक समय सामायिक करनेका बतलाया.

४-धर्म कार्योंमें अनेक तरहके विघ्न आतेहैं, और उपयोगी वि- वेकवाले श्रावकको धर्मकार्योंके विना समय मात्रभी खाली व्यर्थ गमानायोग्यनहींहै,इसलिये संसारिक कार्योंसे फुरसद मिलतेही रस्ते चलनेमें यदि किसीके साथ लेने देने वगैरहसे कोईतरहका भयनहीं होवे तो अपनेघरमें सामायिकलेकर पीछे गुरुपासजानेकाबतलाया.

५-जैसे उपवासादिकके पच्चक्खाण अपनेघरमें करलिये होंतो भी गुरुमहाराजकेपास आकर फिर गुरु साक्षिसे उपवासादि पच्च- क्खाण करनेमेंआतेहैं. तैसेही– श्रावकको अपने घरमें सामायिक ले-

कर सावद्य योगका त्याग करके साधुकी तरह पंचसमिति और तीन गुप्तिसहित उपयोगसे गुरुमहाराजपास आकर फिर सामायिकका उच्चारणकरके पीछे इरियावहीपूर्वक स्वाध्यायादि करनेकाबतलाया.

६-श्रावकको छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेकेलिये पहिले मंदिरमें देवदर्शन, पूजा आरति वगैरहकरके पीछे उपाश्रय या पौषधशालामें आकर गुरुके अभावमें भूमिका प्रमार्जनपूर्वक सामायिककरनेके लिये नवकार गुणकर स्थापनाचार्यकी स्थापनकरनेका बतलाया.

७- सामायिक करनेके लिये खमासमण पूर्वक गुरुसे आदेश लेकर सामायिकलेनेसंबंधी मुहपत्तिका पडिलेहणकरनेका बतलाया.

८- मुहपत्तिका पडिलेहणकरके प्रथम खमासमण पूर्वक सामायिक संदिसाहणेका, तथा फिर दूसरा खमासमण पूर्वक सामायिक ठाणेका आदेश लेनेका बतलाया.

९- विनय सहित मस्तक नमाकर नवकारपूर्वक 'करेमिभंते! सामाइयं' इत्यादि सामायिकका पाठ उच्चारण करनेका बतलाया.

१०- करेमिभंतेका पाठ उच्चारण कियेबाद पीछेसे इरियावहीकरनेकाबतलाया सो 'इरियावही' कहनेसे इरियावही, तस्स उत्तरी, अन्नत्थ उससिएणं, कहकरके ४ नवकार या १ लोगस्सका काउसग्ग करनेका और ऊपर संपूर्ण लोगस्स कहनेका समझलेना चाहिये.

११- जैसे पौषधवाला देवदर्शनादिक कार्योंमें गमनकरके आया होवे वो इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करे, अर्थात्-इरियासमिति इत्यादि अष्टप्रवचनमाताके विराधनाकी आलोचनाकरके मिच्छामि दुक्कडं देताहै, तैसेही-यदि श्रावक अपने घरसे सामायिक लेकर इरियासमिति आदि पांच समिति और तीन गुप्ति सहित उपयोगसे गुरुपास आया होवे तो फिर गुरु साक्षिसे 'करेमि भंते!' इत्यादि सामायिक लेकर पीछे इरियावहीपूर्वक इरियासमिति इत्यादि आगमनकी आलोचना करनेका बतलाया.

१२-सामायिक लेकर पीछे इरियावही करके आगमनकी आलोचना करे, बाद यथा योग्य आचार्यादिक बडोंको अनुक्रमसे सर्व साधुओंको वंदना करनेका बतलाया.

१३ — 'पूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन' तथा 'पडिलेहित्ता' अर्थात्-जगह आसनादिकका प्रमार्जन पडिलेहण पूर्वक बैठके स्वाध्यायादि करनेका आदेश लेकर अपना धर्मकार्य करनेका बतलाया.

१४- सामायिक लिये बाद गुरुके साथ धर्म वार्ता करें या कोई

शंका होवे तो गुरुसे पूछे या पुस्तकादि यांचे, अथवा दूसरा कोई पुस्तकादि यांचता होवे तो उपयोगयुक्त सुनता रहे.

१५- अपने घरसे सामायिक लेकर भगवान्के मंदिरमें आया होवे, वहां पासमें साधु न होवे तो भी भगवान्के समक्ष फिरसे सामायिक लेकर इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करके पीछे चैत्यवंदन, शास्त्रपाठ पढना गुणनादि धर्म कार्य करनेका बतलाया.

१६ — उपाश्रयमें गुरु महाराज होवे, तो उपर मुजब सामायिक करनेकी विधि बतलायी है, ऐसेही पौषधशालामेंभी सामायिक करनेकी विधि समझ लेना चाहिये.

१७— उपाश्रयमें गुरु महाराज न होवे, या समयके अभावसे कारणवशात् गुरु पास आकर सामायिक करनेका अवसर न होवे और केवल अपने घरमेंही छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेकेलिये सामायिक ग्रहण करें, तो भी ऊपर मुजब खमासमणपूर्वक सामायिक मुहपत्तिके पडिलेहणका, सामायिक संदिसाहणेका व ठाणेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक करेमिभंतेका उच्चारणकरके पीछेसे इरियावही पूर्वक अपना धर्मकार्य करें, मगर यहांसे गुरु पास जाने वगैरह कार्योंसे गमनागमन नहीं होनेसे आगमनकी आलोचना न करें. परंतु शेष बाकीकी उपर मुजब सर्व विधि करनेका बतलाया.

१८- यहांपर कोई पहिले इरियावही करके पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करनेका कहतेहैं, वोलोग शास्त्रोंके भावार्थको नहींजाननेवालेहैं, क्योंकि आवश्यकचूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीनशास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही साफ खुलासा पूर्वक कहा है।

१९- कभी गुरुके अभावमें अपनेघरमें या पौषधशालामें सामायिक करें, तब वहां "जाव नियम पज्जुवा सामि" ऐसा पाठ उच्चारणकरें और उपाश्रयमें गुरु समक्ष सामायिक करें, तब वहां "जाव साहू पज्जुवा सामि" ऐसा पाठ उच्चारण करें और इरियावही पूर्वक अपने धर्मकार्योंमें समय व्यतीत करनेका बतलाया.

२०-राजा-महाराजादि महर्द्धिक होवे, उन्होंको शहरकेरस्तोंमें नंगे पैर पैदल चलना योग्य न होनेसे वो अपने घरसे सामायिक लेकर गुरु पास उपाश्रयमें नहीं जावें, किंतु-हाथी, अश्व, पदातिक आदिक राज्यऋद्धिकी शोभा युक्त भेरी भंभादि वाजित्र सहित बडे आडंबरसे सामायिक करनेकेलिये गुरुपास आवें, उससे शासनकी प्रभाव-

ना होवे, तथा भगवान् उपर और गुरुमहाराज उपर लोगोंकी श्रद्धा बढे, बहुत जीवोंको धर्म प्राप्तिका महान् लाभ होवे, इसलिये घरसे सामायिक लेकर नंगे पैरसे पैदल इरियासमितियुक्त आनेके बदले बडे आडंबरसे गुरुपास आकर पीछे सामायिक करें.

२१ — राज्यऋद्धिकी सोभा युक्त गुरुपास आकर जो नजदीक भगवान्का मंदिर होवे तो पहिले वहां मंदिरमें जाकर विधिसहित उपयोग युक्त भावसे- केशर चंदनादिसे पहिले द्रव्य पूजा करें बाद पीछे चैत्यवंदन स्तवनादिसे भाव पूजा करें उसके बादमें गुरुपास आकर "यथासंभवं साधु समीपे मुखपोतिका प्रत्युपेक्षणपूर्वं" अर्थात्- खमासमणपूर्वक मुहपत्तिकापडिलेहणकरके सामायिक संदिसाहणे वगैरहको आदेश लेकर ऊपर मुजब विधिसे पहिले करेमिभंतेका उच्चारणकरके पीछे इरियावही पूर्वक स्वाध्यायादि करें.

२२– राजादिक सामायिक करें तब तक राज्यचिन्ह मुकुटादिकको अलग रक्खें, त्याग करें.

२३-इसप्रकार सामायिक करनेवाले वहां विकथादि कर्मबंधनकेहेतुभूत कोईभी कार्य न करें, किंतु स्वाध्याय ध्यानादि कर्मोकीनिर्जराके हेतुभूत धर्मकार्य करनेमें अपना समय व्यतीत करें, इत्यादि,

२४- अब देखिये-ऊपर मुजब सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंपर विवेक बुद्धिसे तत्व दृष्टिपूर्वक विचार किया जावे तो सामायिक करनेके लिये प्रत्येकवार खमासमण सहित 'सामाइय मुहपत्ति पडिलेहेमि' 'सामाइयंसंदिसावेमि' 'सामाइयंठावेमि' इत्यादि वाक्योंसे सामायिक करनेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक विनयसहित 'करेमिभंते ! सामाइयं' इत्यादि संपूर्ण सामायिकका पाठ उच्चारण कियेबाद पीछेसे इरियावही करनेका सुस्पष्टतासे साफ खुलासा पूर्वक सब शाखकार सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंने लिखा है, सो अल्प बुद्धिवालाभी ऊपरके शास्त्र पाठोंपरसे सामायिकका अधिकारको अच्छी तरहसे समझ सकताहै. जिसपरभी ऊपरकी तमाम सर्व बातोंको छोडकर " ऊपरके शास्त्रपाठ आलोयणा संबंधी हैं, या स्वाध्याय संबंधी हैं, या वंदनासंबंधी हैं, अथवा सामायिक संबंधी हैं. इसकी हमको अच्छी तरहसे मालूम नहीं पडती, इसलिये ऊपरके शास्त्र प्रमाणोंसे सामायिकमें प्रथम करेमि भंते और पीछे इरियावही कैसे किया जावे?" ऐसी २ कुतर्क जान बुझकरके या ऊपरके शास्त्रपाठोंको बांचे, विचारे, समझे बिनाही परंपराकी अज्ञानतासे करते हैं, सो तो भी-

मायिकको सबपूरी विधि करलेना चाहिये. जिसके बदले उसको अधूरी विधि कहकर निषेध करने वालोंको व उसके सर्वथा विरुद्ध अपनी कल्पनानुसार करवाने वालोंको ओभावश्यकसूत्रादि आगमाधीरूप पं चांगीके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप दोषके भागी होनापड़ता है इसलिये आत्मार्थी भवभिरुयोंको ऐसा करना योग्य नहीं है।

३७- औरभी देखिये जैसे-जिनमंदिरमें विधियुक्त 'द्रव्य भाव पूजा कर निजघर गया' ऐसा किसी शास्त्रमें संक्षेपमें सूचनारूप अधिकार आया होवे, उसका विशेष भावार्थ तत्त्वदृष्टिसे समझे विनाही उसमें स्नान करने, पवित्र वस्त्र पहिरने, मुख कोश बांधने, केशर चंदना दि सामग्री लेने वगैरहके अक्षर न देखकर उसको जिनपूजाकी अधू री विधि कहकर सर्वथा जिनपूजाका निषेध करने वालोंको अज्ञानी समझनेमें आतेहैं, क्योंकि उपयोगयुक्त भावसे हमेश जिनपूजा करने वाले तो जिनपूजाकी सब पूरी विधिको अच्छी तरहसे जाननेवाले होते हैं, उन्होंके लिये विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, किंतु 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे उपयोग युक्त स्नान करने, पवित्र वस्त्र धारन करने, मुखकोश बांधने, जिन मंदिरमें प्रवेश करने, निसीही कहने, मंदिरकी सार संभाल लेने, ३ प्रदिक्षणा देने, केशर-चंदन-धूप-दीप-अक्षतादि सामग्री लेने, और चैत्यवंदन-शक्रस्तव-जिनगुण स्तुति आदिसे दृढ त्रिकसहित उपयोगसे पूजा करने वगैरहकी सब बातें तो अपने आपही समझलेतेहैं. इसलिये 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे संक्षेपमें जिनपूजाकी सब पूरी विधि समझनी चाहिये, तैसेही सामायिककी विधिको जानने वाले उपयोग युक्त हमेश सामायिक करनेवालोंके लिये तो- 'अपने घरसे सामायिकलेकर साधुकीतरह इरिया समिति पूर्वक उपयोगसे गुरुपास आवे' इस वाक्यसे, तथा 'गुरुको वंदनाकरके फिर सामायिकका उच्चारण करे बाद इरियावहीपूर्वक पढे सुने या पूछे' इस वाक्यसे सामायिक करनेके लिये पवित्रवस्त्र धारणकरनेका तथा मुहपत्ति आदि सामग्री लेनेका और खमासमणपूर्वक सामायिक संबंधी मुहपत्ति पडिलेहणादिकके आदेश लेने वगैरहसे सामायिककी सब विधिपूरी समझ लेना चाहिये, जानकारोंकेलिये उसजगह इससे विशेष लिखें तो पुनरुक्ति दोष आवे, पिष्टपेषण जैसे होवे, उससे यहां 'जागृतको जगाने' की तरह विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, इसलिये गुरुगम्यतासे तत्त्वदृष्टिपूर्वक विवेकबुद्धिसे शास्त्रकार महाराजोंके गंभीर आशयको स-

ज्ञानीजीमहाराज जाने. मगर ऐसी २ कुतर्क करके जिनाज्ञानुसार प्रत्यक्ष अनेक शास्त्र प्रमाण मुजब सत्य बात परसे भोले जीवोंकी श्रद्धा उडादेते हैं, और जिनाज्ञाविरुद्ध कोईभी शास्त्रप्रमाण विनाही अपने झूठे हठवादके आग्रहकी बातको स्थापन करनेकेलिये शास्त्रों के सत्य२ पाठोंपरभी झूठी२ शंका लाकर उत्सूत्र प्ररूपणासे उन्मार्ग को पुष्ट करते हैं, सो यह काम संसार बढानेवाला अनर्थ भूत होनेसे आत्मार्थी भवभिरुयोंको तो करना योग्यनहींहै. इसविषयको विशेष तत्वज्ञ पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे.

३५-कितनेक कहतेहैं,-'सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इ रियावही करनेसंबंधी आवश्यक सूत्रकी चूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह शा स्त्रपाठोंमें सामायिकमुहपत्ति पडिलेहणके, सामायिक संदिसाहणके, सामायिक ठाणेके आदेशलेनेवगैरह सबपूरी विधिनहींहै,ऐसा कहने वालेभी प्रत्यक्षही मिथ्या भाषण करके जिनाज्ञाका उत्थापन करतेहैं, क्योंकि देखो-श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति तथा वंदित्तासूत्रकी चूर्णि व गैरह शास्त्रपाठोंमें सामायिक मुहपत्ति पडिलेहणके,सामायिक संदि साहणके, सामायिकठाणेवगैरहके आदेशलेकर नवकारपूर्वक विनय सहित 'करेमि भंते' इत्यादि पाठ उच्चारण करके पीछेसे इरियावही किये बाद स्वाध्यायादि करनेका संक्षेपमेंभी साफ बतलायाहै, उसके भावार्थमें गुरुगम्यतासे सामायिकमें सब पूरीविधि समझना चाहिये.

३६-आवश्यक निर्युक्ति, उत्तराध्ययनादि शास्त्रोंमें सामान्यतासे संक्षेपमें प्रतिक्रमणकी विधि बतलायाहै,परंतु उसका विस्तारपूर्वक विशेष अधिकार भावपरंपरानुसार पूर्वाचार्योंके सामाचारियोंके ग्रं थोंसे जाननेमें आताहै, और उसी मुजबही अभी प्रतिक्रमणकी सर्व [illegible]

[illegible]

उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप मिथ्यात्वके दोषके भागी होनापडता [illegible]

[illegible]

मायिककी सबपूरी विधि करलेमाचाहिये. जिसकेबदले उसको अधूरी [illegible]

[illegible]

३७- औरभी देखिये जैसे-जिनमंदिरमें विधियुक्त 'द्रव्य भाव पूजा कर निजघर गया' ऐसा किसी शास्त्रमें संक्षेपमें सूचनारूप अधिकार आया होवे, उसका विशेष भावार्थ तत्वदृष्टिसे समझे विनाही उसमें स्नान करने, पवित्र वस्त्र पहिरने, मुख कोश बांधने, केशर चंदना-दि सामग्री लेने वगैरहके अक्षर न देखकर उसको जिनपूजाकी अधूरी विधि कहकर सर्वथा जिनपूजाका निषेध करने वालोंको अज्ञानी समझनेमें आतेहैं, क्योंकि उपयोगयुक्त भावसे हमेशा जिनपूजा करने वाले तो जिनपूजाकी सब पूरी विधिको अच्छी तरहसे जाननेवाले होते हैं, उन्होंके लिये विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, किन्तु ''द्रव्य भाव पूजा ' कहनेसे उपयोग युक्त स्नान करने, पवित्र वस्त्र धारन करने, मुखकोश बांधने, जिन मंदिरमें प्रवेश करने, निसीही कहने, मंदिरकी सार संभाल लेने, ३ प्रदिक्षणा देने, केशर-चंदन-धूप-दीप-अक्षतादि सामग्री लेने, और चैत्यवंदन-शक्रस्तव- जिनगुण स्तुति आदिसे दश त्रिकसहित उपयोगसे पूजा करने वगैरहकी सब बातें तो अपने आपही समझलेतेहैं. इसलिये 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे संक्षेपमें जिनपूजाकी सब पूरी विधि समझनी चाहिये. तैसेही सामायिककी विधिको जानने वाले उपयोग युक्त हमेशा सामायिक करनेवालोंके लिये तो- 'अपने घरसे सामायिकलेकर साधुकीतरह इरिया समिति पूर्वक उपयोगसे गुरुपास आवे ' इस वाक्यसे, तथा ' गुरुको वंदनाकरके फिर सामायिकका उच्चारण करे बाद इरियावहीपूर्वक पढे सुने वा पूछे' इस वाक्यसे सामायिक करनेके लिये पवित्रवस्त्र धारणकरनेका तथा मुहपत्ति आदि सामग्री लेनेका और [illegible]

[illegible]

थे, पिष्टपेषण जैसे होवे, उससे यहां ' जागृतको जगाने ' की तरह विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, इसलिये गुरुगम्यतासे तत्वदृष्टिपूर्वक विवेकबुद्धिसे शास्त्रकार महाराजोंके गंभीर आशयको स-

मझे बिना अधूरी विधिके नामसे सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही करनेकी सत्यबातको सर्वथा उडादेना सो उत्सूत्रप्ररूपणारूप होनेसे आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है.

३८-देखो ! विवेकबुद्धिसे खूब विचारकरो- श्रीजिनदासगणिमहत्तराचार्यजी पूर्वधर, श्रीहरिभद्रसूरिजी, अभयदेवसूरिजी, देवगुप्तसूरिजी, हेमचंद्राचार्यजी, देवेंद्रसूरिजी, आदिगीतार्थ शासन प्रभावक महाराजोंको तो सामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछे इरियावहीकी बात तत्त्वज्ञानसे जिनाज्ञानुसार सत्यमालूमपडी, इसलिये अपने२ बनाये ग्रंथोंमें निःसंदेहपूर्वक लिखगये तथा आत्मार्थी भव्यजीवभी शंकारहित सत्य बात समझकर उस मुजब सामायिककी सब विधिभी करतेथे और अभी करतेभी हैं। जिसपरभी कितनेक लोग अपने तपगच्छ नायक श्री देवेंद्रसूरिजी महाराज वगैरह पूर्वाचार्योंकेभी विरुद्ध होकर इस बातमें सर्वथा विपरीत रीतिसे प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते स्थापन करके जिनाज्ञाके आराधक बनना चाहतेहैं और प्रथम करेमिभंते पीछेइरियावहीको शास्त्रविरुद्ध ठहराकरनिषेधकरतेहैं. अब विचारकरना चाहिये, कि- प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही स्थापनकरनेवाले जिनाज्ञाके आराधक ठहरतेहैं, या प्रथम इरियावही पीछे करेमि भंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक ठहरतेहैं, यदि-प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक बनेंगे, तो प्रथम करेमि भंते पीछे इरियावही स्थापन करने वाले प्राचीन सर्व पूर्वाचार्य जिनाज्ञाविरुद्ध मिथ्यात्वकी खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरेंगे. और यदि प्राचीन सर्व पूर्वाचार्य प्रथम करेमि भंते पीछे इरियावही स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक सत्यप्ररूपणा करने वाले मानेंगे, तो, उन सर्व पूर्वाचार्योंके विरुद्ध होकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापनकरनेवाले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वकी खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरजावेंगे. तथा इस बातमें पाठांतरभी न होनेसे पूर्वापर विरोधी दोनों बातेंभी कभी सत्य ठहर सकतीनहीं. और प्राचीन सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंकोभी खोटी प्ररूपणा करनेवालेभी कभी ठहरासकतेनहीं. मगर उन्हीं गीतार्थ महाराजोंके विरुद्ध आग्रह करनेवालेही खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरतेहैं, इसलिये सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंको जिनाज्ञाके आराधक सत्य प्ररूपणा करनेवाले समझ करके उन सर्व महाराजोंकी आज्ञा मुजब सामायिकमें प्रथम करेमि भंते पीछे इरियावही मान्य करना और इनके

विरुद्ध प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेकी शास्त्र विरुद्ध और पूर्वाचार्योंकी आज्ञाबाहिर कल्पितबातकोछोड़देना यही जिनाज्ञाके आराधकभवभिरु निकटभव्य आत्मार्थियोंकोउचितहै. ज्यादे क्या लिखें.

३९- कितनेकलोग शंका करतेहैं,कि-पौषध,प्रतिक्रमण,स्वाध्याय, ध्यानादि कार्योंमें पहिले इरियावही करनेका कहा है, और सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका कहा है, उसका क्या कारण होना चाहिये ? इसका समाधान यह है कि-पौषध-प्रतिक्रमणादिक कार्य तो आत्माको निर्मलकरनेके हेतुभूत क्रियारूपहैं सो मनकी स्थिरतासे होसकते हैं, इसलिये मनकी स्थिरता करनेकेलिये गमनागमनकी आलोचनारूप इरियावहीकरके पीछे इनकार्योंमें प्रवृत्ति करें तो शांततापूर्वक उपयोग शुद्धरहताहै, इसलिये इनकार्योंमें पहिले इरियावही करनेका कहा है. मगर सामायिकको तो श्रीभगवती-आवश्यकादि आगमोंमें " आया खलु सामाइअं " इत्यादि पाठोंसे सामायिकको खास आत्मा कहाहै, इसलिये आत्माकीस्थापनाकरनेकेलिये और आत्माके साथ कर्मबंधनकेहेतुरूप आतेहुए आश्रवको रोकनेकेलिये प्रथम करेमिभंतेका पच्चक्खाण करनेका कहा है. पहिले आत्माकी स्थापनारूप और आश्रवनिरोधरूप सामायिकका उच्चारण होगया, तो, उसके बादमें पीछे आत्माको निर्मल करनेके लिये स्वाध्याय ध्यानादि कार्य करनेके लिये इरियावही करनेकीआवश्यकताहुई. इसलिये पीछेसे इरियावहीपूर्वक स्वाध्याय, ध्यानादिधर्मकार्यकरनेचाहिये,और आत्माकी स्थापनारूप व आश्रव निरोधरूप जबतक सामायिकके पच्चक्खाण न होंगे, तब तक एकवार तो क्या मगर हजारवार इरियावही करतेही रहेंगे तो भी आश्रवनिरोध बिना निजआत्मगुणकी प्राप्ति कभी नहीं होसकेगी, इसलिये सर्वशास्त्रोंकी आज्ञामुजब पहिले आत्माकी स्थापनारूप सामायिकके पच्चक्खाण करके पीछेसे आत्माकी शुद्धिके लिये इरियावही पूर्वक स्वाध्यायादि धर्मकार्य करने चाहिये. इस प्रकार सामायिकमें प्रथम करेमिभंते कहने संबंधी शास्त्रकारोंके गंभीर आशयको समझे बिना पौषधादि कार्योंकी तरह सामायिकमेंभी प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये पहिलेसेही इरियावही स्थापन करनेका आग्रह करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

४०- कितनेकमहाशय कहतेहैं,कि-श्रीनवकारमंत्रके पीछे इरिया-

यहीके उपधानकहेहैं, मगर इरियावहीके पहिले करेमिभंतेकेउपधान नहींकहेहैं, इसलिये सामायिकमेंभी पहिले इरियावही करना योग्यहै, ऐसा कहनेवालोंको सामायिकके स्वरूप संबंधी शास्त्रकारमहाराजों के अभिप्रायको समझमें नहीं आया मालूम होताहै। क्योंकि देखिये-शास्त्रोंमें सामायिकको आत्मा कहा है, और इरियावही वगैरह क्रियारूपसूत्र कहेहैं, और आत्माके उपधान तो कभी होसकतेनहीं, किंतु आत्माकीशुद्धिरूप क्रियाके उपधान होसकतेहैं. आत्मा तो स्वयं उपधान करनेवालाहै, और उपधान क्रियारूपहैं, सामायिकरूप आत्माके उपधान तो इरियावहीके पहिले या पीछेभी किसी शास्त्रमें नहींकहेहैं, इसलिये आत्माके निजगुणरूप सामायिक संबंधी और इरियावही वगैरह आत्माकी शुद्धिरूप क्रियासंबंधी शास्त्रकार महाराजोंके भावार्थकोसमझेबिनाही पहिले इरियावहीके उपधानकरनेका पाठ देखकर सामायिकमेंभी पहिलेइरियावही स्थापनकरतेहैं, उन्होंकी अज्ञानताहै.

४१– कितनेकआग्रहीलोग नवांगीवृत्तिकार श्रीअभयदेवसूरिजी के नामसे अथवा उन्होंके शिष्य श्रीपरमानंदसूरिजीके नामसे सामायिकमें पहिलेइरियावही पीछेकरेमिभंते कहनेसंबंधी श्रीअभयदेवसूरिजीकृत 'सामाचारी' ग्रंथका पाठ भोलेजीवोंको बतलातेहैं, सोभी प्रत्यक्ष मिथ्याहै, क्योंकि–देखो श्रीनवांगीवृत्तिकार महाराजने खास 'पंचाशक' सूत्रकीवृत्तिमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही खुलासापूर्वक लिखीहै, सर्व प्राचीन पूर्वाचार्यभी वैसेही लिखे गयेहैं, यही बात जिनाज्ञानुसार है। इसलिये इन्हीं महाराजने खास 'सामाचारी' ग्रंथमेंभी प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही लिखी थी, उसपाठको निकाल देना और प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कहनेका पाठ अपनी मति कल्पना मुजब नवीन बनाकर वह प्रौढ प्रामाणिकपुरुषोंके बनाये ग्रंथमें प्रक्षेपकरके भोलेजीवोंकोबतलाकर अन्याय चलाना यह बडाभारीदोषहै, देखिये-कोईभीपूर्वाचार्यमहाराजने सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते नहीं लिखी, किंतु प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सर्व प्राचीन पूर्वाचार्योंने सर्वशास्त्रोंमें लिखीहै. तो फिर श्रीनवांगीवृत्तिकारक जैसे प्रौढ प्रामाणिक सर्वसम्मत यह महाराज सर्व पूर्वाचार्योंके विरुद्ध होकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कैसे लिखेंगे, ऐसा कभी नहीं हो सकता.इसलिये इन महाराजके नामसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते करनेका ठहराने वाले प्रत्यक्ष मिथ्यावादी हैं।

४२- औरभी देखो खूब विचारकरो- शास्त्रोंमें विसंवादी कथन करनेवालोंको मिथ्यात्वी कहेहैं, और जैनाचार्य तो अविसंवादीहोतेहैं. इसलिये श्रीनवांगीवृत्तिकारक यह महाराजभी विसंवादीनहींथे. किंतु अविसंवादीथे, इसलिये इन्हीं महाराजके बनाये वृत्ति-प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमेंसे एकही विषयमें पूर्वापर विरोधी विसंवादी वाक्य किसीभी ग्रंथमें किसी जगहभी देखनेमें नहीं आते, इसलिये इन महाराजकी बनाई सामाचारीमेंभी विसंवादी वाक्य नहींहैं, किंतु 'पंचाशकसूत्रवृत्तिके अनुसार प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करने का पाठथा, उसको उडा करके इन महाराजके सत्य कथनके पूर्वापर विरोधी विसंवादीरूप प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंतेकहनेका पाठबनाकर भोलेजीवोंको बतलाकर खोटी प्ररूपणा करनेवालोंकी बडी भारीभूलहै. यह महाराज तो विसंवादी कथन करनेवाले कभी नहीं ठहरसकते,मगर ऐसे महापुरुषोंके नामसे झूठापाठ बनानेवालेही मिथ्यात्वीठहरतेहैं। अबपाठकगणसे मेराइतनाहीकहनाहै,कि-नवांगीवृत्तिकारकने या उन्होंकेशिष्योंने अथवा अन्यकिसीभी जिनाज्ञाकेआराधक पूर्वाचार्य महाराजने किसीभी ग्रंथमें सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते किसी जगहभी नहीं लिखी, व्यर्थ भोले जीवोंको भरमानेका काम करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

४३-कितनेक श्रीउत्तराध्ययनसूत्रकी बडी टीकाके नामसे सा-[illegible]

[illegible]

किं जणेइ ? दंसण विसोहिं जणइ ॥

व्याख्या-' सामायिकेन ' उक्तरूपेण सहावद्येन वर्तत इति सावद्याः-कर्मबंधनहेतवो योगा-व्यापारास्तेभ्यो विरतिः-उपरमः सावद्ययोगविरतिस्तां जनयति, तद्विरति सहितस्यैव सामायिक संभवात्, न चैवं तुल्यकालत्वेनानयोः कार्यकारण भावासंभव इति वाच्यं, केषुचित्तुल्यकालेष्वपि वृक्षच्छायादिषु कार्यकारण भावदर्शनात्, एवं सर्वत्र भावनीयं ॥ सामायिकं च प्रतिपत्तुकामेन तत्प्रणेतारः स्तोतव्याः ते च तत्वतस्तीर्थकृत एवेति,तत्सूत्रमाह 'चतुर्विंशतिस्तवेन' एतदवसर्पिणी प्रभवतीर्थकृदुत्कीर्तनात्मकेन दर्शनं सम्यक्त्वं तस्यविशुद्धिः

अभिप्रायविरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते का स्थापन करनेके लिये 'खरतरगच्छ समीक्षा' में अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध व कुयुक्तियोंसे अनर्थ किये हैं, उसका खुलासा ऊपरके लेखसे पाठकगण स्वयं विचार लेंगे. इसी तरहसे आनंदसागरजीने 'धर्म संग्रह' की प्रस्तावनामें, चतुरविजयजीने 'संबोधसत्तरिप्रकरण वृत्ति'की टिप्पणिकामें,श्रीकांतिविजयजी अमरविजयजीने 'जैनसिद्धांतसामाचारी'में, धर्मसागरजीने इरियावही षट्त्रिंशिका प्रवचन परीक्षादिकमें और भी कोईभी महाशय कोईभी ग्रंथमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका निषेधकरके, प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले सब शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करनेवाले उपरके लेखसे समझ लेने चाहिये.

और पर्युषणासंबंधी,तथा छ कल्याणक संबंधीभी न्यायरत्नजीने अनेक शास्त्रविरुद्ध और कुयुक्तियोंके संग्रहसे ऐसे२ ही अनर्थ कियेहैं, उन सबका खुलासा समाधान पूर्वक निर्णय इसी ग्रंथमें और इस ग्रंथके प्रथम भागकी भूमिकाके ४७ प्रकरणोंमें और सुबोधिकादिककी २८ भूलोंवाले लेखमें अच्छी तरहसे खुलासा सहित छप चुका है। इसलिये यहां पर फिरसे विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहींहै, सत्य तत्वाभिलाषी पाठक गण वहांसे समझ लेंगे। औरभी न्यायरत्नजीने श्रीअभयदेवसूरिजी संबंधी व तिथि संबंधी जो जो शास्त्रविरुद्ध बातें लिखी हैं, उन सबका खुलासा श्रीमान् पन्यासजी श्री केशर मुनिजीने 'प्रश्नोत्तरमंजरी' के तीनों भागोंमें अच्छी तरहसे छपवाकर प्रसिद्ध कियाहै, उनके वांचनेसे सब खुलासा हो जायेगा. और मैं भी तीसरे भागकी उद्घोषणा में थोडासा नमूनारूप लिखूंगा तब यहां जैनमुनियोंको रेल विहार निषेध, व व्याख्यानके समय मुंह पत्तिका बांधना और देशकालानुसार विशेष लाभ जानकर स्त्री-पुरुषोंकी सभामें साध्वियोंको धर्म शास्त्रका व्याख्यान करना [धर्म का उपदेश देना] वगैरह बातों संबंधीभी खुलासा लिखनेमें आयेगा. पाठक गण वहांसे सर्व निर्णय समझ लेना. इति शुभम्.

विक्रम संवत् १९७८ वैशाख वदी पंचमी बुधवार.

हस्ताक्षर श्रीमान्-उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजीमहाराजके लघु शिष्य मुनि--मणिसागर. जैन धर्मशाला, खानदेश--धूलिया.

मुनि महाराज श्रीसुमति सागरजीके लघु शिष्य

मुनि श्रीमणिसागरजी इस ग्रन्थके लेखक।
ज्ञाति वीशापोरवाल। बड़गांम मारवाड़।
संसारीपक्ष श्रीतपगच्छ दीक्षा श्रीखरतरगच्छ में
जन्म संवत् १८४२। दीक्षा १८६०।

॥ ओम् ॥

॥ श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः ॥

श्रीपर्युषणा निर्णय नामाग्रंथः प्रारभ्यते

नत्वा श्रीशासनाधीशं, विघ्न व्यूह विदारणं,
पर्युषणादि कार्याणां, निर्णयः क्रियते स्फुटं ॥१॥
भव्यात्मानां हिताय, पाखण्ड पथ शान्तये
वाणी गुरु प्रसादेन, शास्त्रयुक्त्यनुसारतः ॥२॥ युग्मम्

विघ्नोंके समूहको नाश करने वाले शासन नायक श्रीवर्द्ध-
मानस्वामीजीको नमस्कार करके श्रीसरस्वती देवी तथा श्रीगुरु
महाराजके प्रसादसे, शास्त्रोंके प्रमाण पूर्वक तथा युक्तियोंके
अनुसार, आत्मार्थि भव्यजीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी प्राप्ति रूप
लाभके वास्ते और दृष्टिरागरूप पाखण्डमार्गकी शा-
न्तिके लिये श्रीपर्युषणपर्वादि सम्बन्धी कार्योंका निर्णयके साथ
निर्णय करता हूं। सो इस ग्रन्थमें सम्बन्ध सो मुख्य करके
अधिक मासके ३० दिनोंकी गिनतीसे प्रमाण करनेका है।
और दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसे आषाढ़ चौमासी
से ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें श्रीपर्यु-
षणपर्वका आराधन करने सम्बन्धी निर्णयरूप कथन कर-
ना इस ग्रन्थमें मुख्य विषय है और वर्तमानकालमें गच्छोंके
पक्षपातसे आपसमें जूदी जूदी प्ररूपणाके होनेसे भोले
जीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धामें मिथ्यात्वरूप भ्रम
होता है, इसीको निवारण करनेके लिये पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक
... अनुसार इस ग्रन्थकी रचना करता हूं, सो इसको

अवलोकन करनेसे असत्यको छोड़कर सत्यको ग्रहण करके मोक्षाभिलाषी जन अपने आत्म कल्याणमें उद्यम करें, एही इस ग्रन्थकारका तथा इस ग्रन्थका मुख्य प्रयोजन है। और इस ग्रन्थका अधिकारी तो वही होगा जो कि अपने गच्छ संबंधी परंपराके पक्षपातका कदाग्रह रहित तथा जिनाज्ञा इच्छक और शास्त्रोक्त शुद्ध व्यवहारको अङ्गीकार करनेवाला सम्यक्त्वधारी मोक्षाभिलाषी, नतु अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी बहुलसंसारी गड्डरीह प्रवाही।

मङ्गलाचरण और सम्बन्ध चतुष्टय कहे बाद सर्वसज्जन पुरुषोंको निवेदन करनेमें आता है कि-वर्त्तमानकालमें संवत् १९६६ के लौकिक पञ्चाङ्गमें दो श्रावण होनेसे श्री-खरतर गच्छादिवाले पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक तथा श्रीपूर्वा-चार्योंकी आज्ञानुजब आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्राव-णमें श्रीपर्युषणपर्वका आराधन करते हैं जिन्होंको प्रथम श्रीवल्लभविजयजीने अपनी मति कल्पनासे कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना जैनपत्रद्वारा आज्ञा भङ्गका दूषण लगाकरके कुसंपके दृक्षका बीज लगाया तथा प्रत्यक्ष श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें यावत् ८० दिने श्रीपर्युषणपर्वका आराधन करके भी मायावृत्तिसे आप आज्ञाके आराधक बनना चाहा, तथा उन्हींकाही अनुकरण करके दूसरे काशी से श्रीधर्मविजयजीने अपने शिष्य विद्याविजयजीके नामसे 'पर्युषणा विचार' का लेख प्रगट कराया जिसमें भी वारंवार भावणोंका तथा कुयुक्तियोंका संग्रह करके अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे शास्त्रोंके आगे पीछेके पाठोंको छोड़करके विना

प्यमें ३, और श्रीजिनदासगणि महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर कृत श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिमें ४, श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत श्री-दशाश्रुत स्कन्ध सूत्रमें ५, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत तत्सूत्रकी चूर्णिमें ६, श्रीपार्श्वचंद्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजीकृत तत्सूत्रकीवृत्तिमें ७, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत श्रीवृहत्कल्पसूत्रके लघुभाष्यमें ८, वृहद्भाष्यमें ९, तथा चूर्णिमें १०, और श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पसूत्रकी वृत्तिमें ११, श्रीसुधर्मस्वामीजी कृत श्रीसमवायांगजी सूत्रमें १२, तथा श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध श्रीनवअंगीवृत्तिकार श्रीअभयदेव सूरिजी कृत तत्सूत्रकी वृत्तिमें १३, और उक्त महाराज कृत श्रीस्थानांगजीसूत्रकी वृत्तिमें १४, श्रीभद्रबाहुस्वामीजी कृत श्रीकल्पसूत्रमें १५, तथा निर्युक्तिमें १६, और श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी श्रीसन्देहविषौषधि वृत्तिमें १७, तथा निर्युक्तिकीवृत्तिमें १८, और विधिप्रपा नाम श्री समाचारी ग्रन्थमें १९, और श्रीखरतरगच्छके श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी कल्पद्रुमकलिकावृत्तिमें २० तथा श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुन्दरजी कृत श्रीकल्पकल्पलतावृत्तिमें २१ और उक्त महाराज कृत श्रीसमाचारीशतकनाम ग्रन्थमें २२, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीकल्पावचूरिमें २३, तथा श्रीतपगच्छके श्रीधर्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें २४, और श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिकावृत्तिमें २५, और श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुबोधिकावृत्तिमें २६, श्रीसंघविजयजी कृत श्रीकल्पप्रदीपिकावृत्तिमें २७, श्रीविजयदिनज कृत श्रीकल्प[illegible]वृत्तिमें २८ श्रीअञ्चलगच्छके [illegible]जी कृत श्रीकल्पावचूरिवृत्तिमें २९, श्रीखरतर

गच्छके श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसमाचारीग्रन्थमें १० तथा श्रीसंघपट्टकबृहद्वृत्तिमें ११ और श्रीहर्षराजजी कृत श्रीसंघपट्टककी लघुवृत्तिमें १२, और श्रीपूर्वाचार्योंके बनाये तीन श्रीकल्पान्तरवाच्योंमें १५ इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसे ५० दिन जानेसे अवश्यमेव पर्युषणा करना कहा है उसीकेही अनुसार तथा श्रीपूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसार वर्त्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें अथवा दो भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पर्युषणा करनेमें आती है इसी विषयकी पुष्टिके लिये पाठकवर्गको निःसन्देह होनेके वास्ते शास्त्रोंके थोड़ेसे पाठ भी लिख दिखाता हूं।

१ श्रीकल्पसूत्रके पृष्ठ ५३ से ५४ तकका पर्युषणा संबंधी पाठ नीचे लिखे मुजब जानो, यथा—

तेणंकालेणं तेणंसमएणं समणेभगवंमहावीरे वासाणं सवीसइराएमासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ॥१॥ सेकेणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ समणेभगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ। जओणं पाएणं, अगारीणं अगाराइं, कडियाइं, उक्कंपियाइं, छन्नाइं, लित्ताइं, घट्ठाइं, मट्ठाइं, संपधूमियाइं, खाओदगाइं, खायनिद्धमणाइं, अप्पणो अट्ठाए कडाइं, परिभुत्ताइं, परिणामियाइं भवंति ॥ सेतेणट्ठेणं एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ॥२॥ जहाणं समणेभगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ। तहाणं गणहरावि वासाणं सवीसइ राए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति ॥ ३ ॥ जहाणं गणहरावि

श्रावणमें पर्युषणा करनेवालोंको वृथा द्वेषबुद्धिसे आज्ञा-भङ्गका दूषण लगाना और दो श्रावण होते भी आषाढ़ चौमासीसे दो मास उपर बीस दिन याने ८० दिने (प्रत्यक्ष पंचाङ्गी विरुद्ध अपनी मति कल्पनासे) पर्युषणा करके भी आज्ञाके आराधक बनना सो गच्छकदाग्रहि उत्सूत्र भाषण करनेवालोंके सिवाय और कौन होगा सो विवेकी सज्ज-नोंको विचार करना चाहिये । और दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें तथा दो भाद्रपद होनेसे भी दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करनेवाले महाशयोंको हर वर्ष पर्युषणा में प्राय करके सब जगह पर वंचाता हुआ मूलमन्त्ररूप उपरोक्त सूत्रपाठको विवेक बुद्धिसे विचारके असत्यको छोड़ कर सत्यको ग्रहण करना चाहिये ।

और अब ऊपरके सब पाठकी सब व्याख्याओंके सबपाठ बहोत विस्तार हो जानेके कारणसे नहीं लिखता हूं परंतु (अन्तरा वियसे कप्पइ नोसे कप्पइ तं रयणिं उवायणा वित्तए) इस अन्तके पाठकी थोड़ीसी व्याख्याओंके पाठ लिखके पाठक वर्गको विशेष निःसन्देह होनेके लिये लिख दिखलाता हूं ।

२ श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुन्दरजी कृत श्रीकल्पकल्प-लता वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तकका तत्पाठः—

अन्तराविषसेकप्पइ पज्जोसवित्तए । अन्तरापि च अर्वा-गपि कल्पते पर्युषितुं, "नोसेकप्पइ तं रयणिं" परं न कल्पते तां रात्रींभाद्रपद शुक्लपञ्चमीं, "उवाइणावित्तएत्ति," अति-क्रमितुं । वसनिवासे इत्यागमिकोधातुः, इह पर्युषणाद्विधा-गृहिज्ञाता गृहज्ञाताच, तत्र गृहिणामज्ञातायां वर्षा योग्य

वीरकल्पवाही प्राग् कथितेन द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते, सा स्थापना आषाढपूर्णिमायां, योग्यक्षेत्राभावे तु पञ्च पञ्च दिनवृद्ध्या यावद्भाद्रपद शुक्ल पञ्चम्यां एकादशसु पर्वति-थिषु क्रियते गृहिज्ञातायां तु तस्यां सांवत्सरिकातिचारा-लोचनं १, लुञ्चनं २, पर्युषणायां कल्पसूत्राकर्षणं वा कथनं ३, चैत्यपरिपाटी ४, अष्टमंतपः ५, सांवत्सरिकंप्रतिक्रमणं क्रियते, यथाक्रमं पर्यायवर्षाणि गण्यंते सा च भाद्रपदशुक्ल-पञ्चम्यां, युगप्रधान श्रीकालकसूरिभिः चतुर्थ्यामपि जनप्रकटा कार्या यत्तु अभिवर्द्धितवर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यं, तदपि द्युगसिद्धान्तानुसारेण तत्रहि युगमध्ये पौषो युगान्ते च आषाढ एव वर्द्धते, नान्येमासाः तानि च अधुना न सम्यग् ज्ञायंते अतो दिनपञ्चाशतैव पर्युषितव्यम् ॥

३ और श्रीखरतरगच्छके श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पद्रुमकलिकावृत्तिके पृष्ठ १४२ से १४३ तकका तत्पाठः—

(मूलम्) अन्तरावियसे कप्पइ-इत्यादि, अर्थ-अन्तरापिच अर्वागपि महःकार्यविशेषात् भाद्रपद शुक्लपञ्चमीतः इतः कल्पते पर्युषणापर्वकर्त्तुं, परं न कल्पते तां रजनीं भाद्रपद शुक्ल-पञ्चमीं अतिक्रमितुं । पूर्वं उत्सर्गनयः प्रोक्तः अन्तरावियसे इत्यादिना अपवादनयः प्रोक्तः । एकादशसु पञ्चकेषु कुर्वत्सु आषाढ पूर्णिमादिवसे प्रथमं पर्व, एवमपि पञ्चभिः पञ्चभि-र्दिवसैः द्वितीयं पर्व, एवं कुर्वतां साधूनां पञ्चाशद्दिनैः एकादश पर्वाणि भवन्ति, एतेषु एकादशपर्वदिवसेषु पर्युषणापर्व कर्तव्यं। पर्वसु एकस्मिन्दिने न्यूनेपि कारण विशेषेण पर्युषणा कर्तव्या, परं एकादशभ्यः पर्वभ्यः यदि अधिके एकस्मिन्नपि दिने गते पर्युषणा पर्व न कर्तव्यमुपरिदिन नोल्लङ्घनीय मित्यर्थः।

के धातुः, वध निवास इति गणसंबंधीया धातुः। इहहि पर्युष
द्विविधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात् तत्रगृहिणामज्ञाता यस
यथायोग्य पीठ फलकादी प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, का
भाव, स्थापना क्रियते, सा च आषाढ़पूर्णिमायां योग्यक्षेत्र
भावे तु पंच पंच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भा
पद्सित पंचमोमेवेति। गृहिज्ञाता तु द्विधा सांवत्सरिककृत
विशिष्टा गृहिज्ञातमात्रा च तत्र सांवत्सरिक कृत्यानि, "सां
त्सरिकप्रतिक्रमणं १, लुंचनं २, अष्टमं तपः ३, चैत्यपरिपाटी
संघक्षामणं" एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रपद्सित पंचम्यां कालका
चार्यादेशाच्चतुर्थ्यां जनप्रकट कार्या, द्वितीयातु अभिवर्द्धितव
चातुर्मासिकदिनादारम्य विंशत्यादिनैः वयमत्रस्थिताः
इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति सातु गृहिज्ञातमात्र
तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगां
च आषाढ़ एव वर्द्धते नान्येमासाः तच्चाधुना सम्यग् न ज्ञाय
अतः पंचाशतैव दिनैः पर्युषणासङ्गतेति वृद्धाः ॥

७ और श्रीतपगच्छके श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुख
बोधिकावृत्तिके पृष्ठ १४६ में तथाच तत्पाठः—

अंतराविय से कप्पइ, अंतरापिय अर्वागपि कल्पते पर्युषि
परं न कल्पते तां रात्रिं भाद्रपदशुक्लपंचमीं, "उवायण
वित्तए त्ति" अतिक्रमितुं, तत्र परितासमस्त्येन उषणं वसन
पर्युषणा, साद्विधा गृहस्थैरज्ञाता गृहस्थैर्ज्ञाताच, तत्र
गृहस्थैरज्ञाता यस्यां यथायोग्य पीठफलकादौ प्राप्ते कल्पोक्त
द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्थापना क्रियते साचाषाढ़पूर्णिमायां
योग्य क्षेत्राभावेतु पंच पंच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण
यावत् भाद्र पद सितपंचम्याम्, एवं गृहिज्ञाता तु द्विधा

सांवत्सरिककृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्रापि, तत्र सांव-
त्सरिककृत्यानि 'सांवत्सर प्रतिक्रांति १ लुंचनं २ चाष्ट-
मंतपः ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजाच ४ संघस्यक्षामणं मिथः ५ ॥ १ ॥"
एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रपदसित पंचम्यामेव कालिकाचार्या-
देशाच्चतुर्थ्यामपिकार्या, केवलं गृहिज्ञातातु सा यद् अभि-
वर्द्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्रस्थिता-
स्मइति पृच्छतां गृहस्थानां पुरोवदंति तदपि जैनटिप्पनका-
नुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांतेचाषाढएव वर्द्धते
नान्येमासास्तट्टिप्पनकन्तु अधुनासम्यग् न ज्ञायते अतः
पंचाशतैवदिनैः पर्युषणायुक्तेतिवृद्धाः ॥

उपरोक्त श्रीखरतरगच्छ तथा श्रीतपगच्छ इन दोनों गच्छ-
वालोंके इ पाठोंका संक्षिप्त भावार्थः—अंतरा वियसे कप्पइ ।
असरापिस अर्वागपि कल्पते पर्युषितुं, इत्यादि
कहनेसे-जो आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करनेमें
आती है जिसमें कारण योगे ५० दिनके अंदर ४९ मे दिन
पर्युषणा करना कल्पता है परन्तु ५० मे दिनकी जो भाद्रपद
शुक्लपंचमीकी रात्रिहै उसीको उल्लंघन करना नहीं कल्पता है
और उपधातुसे उपणा बनता है तथा परिउपसर्ग लगनेसे
पर्युषणा बन जाता है सो उपधातु निवास अर्थमें वर्तती है
पर्युषणा शब्द संबंधी वस धातु भी निवासार्थमें वर्तती है और
ग्रामानुग्राम विहार करनेका निवारण करके सर्वथा प्रकारसे
वर्षाकालमें एकस्थानमें निवास करना सो पर्युषणा कही जाती
है और पर्युषणा यहां दो प्रकारकी है गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई
और गृहस्थी लोगोंकी नहीं जानीहुई तिसमें गृहस्थीलोगों
से नहीं जानी हुई पर्युषणा जिसमें वर्षाकालके स्थि

पाट पाटलादि द्रव्योंका योग बननेसे यत्न करके शास्त्रो
विधिसे द्रव्य क्षेत्र काल और भावकी स्थापना करनी जिस
उपयोगी वस्तुओंका संग्रहसो द्रव्य स्थापना, और विहारक
निषेध परन्तु आहारादि कारणसे मर्यादा पूर्वक जानेक
नियम सो क्षेत्रस्थापना, और वर्षाकालमें जघन्यसे ७० दि
तक तथा मध्यमसे १२० दिन तक और उत्कृष्टसे १८० दि
तक एक स्थानमें निवास करना सो कालस्थापना, औ
रागादि कर्मबन्धके हेतुओंका निवारण करके ईरियासमिति
आदिका उपयोग पूर्वक वर्ताव करना सो भावस्थापना, ए
तरहसे यो द्रव्यादि चतुर्विध स्थापना आषाढ़ पूर्णिमासे करन
परन्तु योग्य क्षेत्रके अभावमें तो आषाढ़ पूर्णिमासे पांच पां
दिनकी वृद्धि करके दशपंचक तिथियोंमें क्रमसे यावत् भाद्र
पद शुदी पंचमी तक, आषाढ़ पूर्णिमासे दशपंचकमें परन्
आषाढ़ शुदी १० मी के निवासकी गिनतीसे एकादशपंचकों
जहां द्रव्यादिका योग मिले वहां पूर्वोक्त कहे वैसे दोषोंक
निमित्त कारण न होनेके लिये अज्ञात पर्युषणा स्थापन क
रनी और आषाढ़ चौमासीसे ५०दिने गृहस्थी लोगोंकोजान
हुई पर्युषणा जिसमें वार्षिकातिचारोंकी आलोचना करनी
केशोंकालुंचन करना,श्रीकल्पसूत्रकाश्रुनना या पठनकरना, अष्ट
मतप करना, चैत्यपरिपाटी (जिन मन्दिरोंमें दर्शनकरने) औ
सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करना, और सर्व संघकोक्षामणे करन
और दीक्षापर्यायके वर्षोंकी गिनती करना सो ज्ञातपर्युषणा
पंचमीमें होती थी, परन्तु युग प्रधान श्रीकालक
आदेशसे भाद्रशुक्लचतुर्थीके दिन करनेमें

शुक्लकी पञ्चमी को भाद्र पदकी पर्युषणा मासवृद्धिके
अभावसे चन्द्रसंवत्सर संबन्धिनी जाननी । और मासवृद्धि
होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें तो आषाढ़चौमासीसे बीस
दिन करके याने श्रावणशुक्लपंचमी को गृहस्थी लोगोंकी
जानी हुई पर्युषणा करनेमें आती थी सो तो जैन सिद्धान्त
का टिप्पणानुसार युगके मध्यमें पौषमास और युगके
अन्तमें आषाढ़मासकी वृद्धि होती थी परन्तु और किसी भी
मासकी वृद्धिका अभाव था। सो टिप्पणा तो अभी इस कालमें
अच्छी तरहसे देखनेमे नहीं आता है इसलिये मासवृद्धि हो
तो भी ५० दिनोंसे पर्युषणा करनी योग्य है इस तरहसे
पूज्याचार्य कहते हैं अर्थात् मासवृद्धि होनेसे जैनपंचांगा-
नुसार बीस दिने श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती थी
परन्तु जैनपंचांगके अभावसे लौकिक पंचांगानुसार मासवृद्धि
दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होवे तो भी उसीको गिनती
पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्यु-
षणा करनेकी प्राचीनाचार्योंकी आज्ञा है इसी ही कार-
णसे श्रीलक्ष्मीवल्लभ गणिजीने अधिकमासकी गिनती पूर्वक
५० दिने पर्युषणा करनेका खुलासा लिखा है। उसी मुजब
आत्मार्थियोंको पक्षपात छोड़कर वर्तना चाहिये।

और श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी
इन तीनों महाशयोंके बनाये (श्रीकल्पकिरणावली श्रीकल्प
दीपिका श्रीसुखबोधिका इन तीनों वृत्तियोंके) पर्युषणा
सम्बन्धी पाठ ऊपरमें लिखे हैं उसीमें इन तीनों महा-
शयोंने, चार मासे गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा दो
प्रकारकी लिखी है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ़ चौमा-

मीसे बीस दिने पर्युषणा करनेमें आती थी उसीको वार्षिक कृत्योंरहित केवल गृहस्थोंलोगोंके कहने मात्रही ठहराई है सो कदापि नहीं बन सकता है क्योंकि अधिक मास होनेसे बीस दिनकी पर्युषणाकोही जैन पंचाङ्गके अभावसे अधिक मास होते भी ५० दिने पर्युषणा पूर्वाचार्योंने ठहराई है इस लिये बीस दिनकी पर्युषणा कहनेमात्रही ठहरानेसे ५० दिनकी पर्युषणा भी कहनेमात्रही ठहर जावेगी और वार्षिक कृत्य उसी दिन करनेका नहीं बनेगा इसलिये जैसे मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य होते हैं तैसेही मासवृद्धि होनेसे बीस दिनकी ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य मानने चाहिये क्योंकि ज्ञात पर्युषणा एकही प्रकारकी शास्त्रोंमें लिखी है परन्तु बीस दिने ज्ञात पर्युषणा करके फिर आगे वार्षिक कृत्य करे ऐसा तो किसी भी शास्त्रमें नहीं लिखा है इसलिये जहां ज्ञात पर्युषणा वहांही वार्षिक कृत्य शास्त्रोक्त युक्ति पूर्वक सिद्ध होते हैं इनका विशेष विस्तार इनही तीनों महाशयोंके लिखे (अधिक मासकी गिनती निषेध सम्बन्धी पूर्वापरविरोधि) लेखोंकी आगे समीक्षा होगी वहां लिखनेमें आवेगा ।

अब देखिये बड़ेही आश्चर्यकीबातहै कि श्रीतपगच्छके इतने विद्वान् मुनीमहली वगैरह महाशय उपरोक्त व्याख्या-ओंकों हर वर्ष पर्युषणाके व्याख्यानमें वांचते हैं इसलिये उपरोक्त पाठार्थोंको भी जानते हैं तथापि मिथ्या हठवादसे भोले जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेके लिये पौष अथवा आषाढ़के अधिक होनेसे उनोंको गिनती पूर्वक जैनपचांगानुसार प्राचीनकालमें आषाढ़ चौमासीसे बीस दिने श्रावण सुदीमें

पर्युषणा होती थी परन्तु जैन पंचांगके अभावसे वर्त्तमान-कालमें तो लौकिक पंचांगानुसार अधिक मास होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी मर्यादा है ऐसा उपरोक्त पाठार्थोंसे खुलासा दिखता है तथापि उपरोक्त पाठार्थोंका भावार्थ बदला करके मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने भाद्र-पदमें पर्युषणा कही है जिसीकोही वर्त्तमानमें मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने जिनाज्ञा विरुद्धका भय न करते हुए भाद्रपदमें ठहरानेका वृथा आग्रह करते हैं सो क्या लाभ प्राप्त करेंगे। तथा उपरोक्त व्याख्याओंमें "अभिवर्द्धित वर्षे" इस शब्दसे श्रीखरतरगच्छके श्रीसमय सुंदरजी तथा श्रीतपगच्छके श्रीकुलमंडनसूरिजी श्रीधर्म-सागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन सबी महाशयोंके लिखे वाक्यसे अधिक मासकी गिनती प्रत्यक्षपने सिद्ध है इसलिये अधिकमासकी गिनती निषेध भी नहीं हो सकती है तथापि कोई निषेध करेगा सो उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे श्रीअनंत तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वजोंकी आज्ञा उल्लंघनका दूषण लगेगा क्योंकि श्रीअनंत तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वा-चार्योंने तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्व-जोंने अधिकमासके दिनोंकी गिनती पूर्वक तेरह मासोंका अभिवर्द्धितसंवत्सर कहा है इसका विस्तार आगे शास्त्रोंके पाठार्थों सहित तथा युक्ति पूर्वक लिखनेमें आवेगा—

और भी पार्श्वचंद्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुत स्कन्ध सूत्रकी वृत्तिके पृष्ठ ११२ से ११५ तकका पर्युषणा सम्बन्धी पाठ यहां दिखाता हूं तथाच तत्पाठः—

तेणं कालेणं तेणं समएणमित्यादि। व्याख्यातार्थः वाषार्णां आषाढ़चातुर्मासिक दिनादारभ्य सविंशति रात्रेमासे व्यतिक्रान्ते भगवान् "पज्जोसवेइति" पर्युषणामकार्षीत्। परिसामस्त्येन उपणं निवासः। इत्युक्तेशिष्यःप्रश्नयितुमाह सेकेणट्ठेणमित्यादि प्रश्नवाक्यंसुबोधं गुरुराह। जउणमित्यादि निर्वाहवाक्यं यतः णंप्राग्वत् पएणमित्यादि अगारिणां गृहस्थानां, अगाराणि गृहाणिः, कडियाइंत्ति कटयुक्तानि,उक्कंपियाइं-धवलितानि, छन्नाइं-तृणादिभिः, लित्ताइं-लिप्तानि छगणाद्यैःक्वचित् गुत्ताइंत्ति पाठ स्तत्र गुप्तानि वृत्तिकरणं द्वारपिधानादिभिः,घट्टाइं-विषमभूमिभंजनात्,मट्टाइंश्लक्ष्णीकृतानि क्वचित्सम ट्ठाइंतिपाठ स्तत्र समन्तात्मृष्टानि मसृणीकृतानि, संधूपियाइंति-सौगन्ध्यापादनार्थं धूपनैर्वासितानि, खातोदगाइं कृतप्रणालीरूपजलमार्गाणि, खायनिद्धमणाइं-निद्धमणं खालं गृहात्सलिलं येन निर्गच्छति, अप्पणोअट्ठाए आत्मार्थं स्वार्थं गृहस्थैः कृतानि परिकर्मितानि करोति, कायइं करोतीत्यादि विविधपरिकर्म्मार्थत्वात्, परिभुतानि तैः स्वयं परिभुज्यमानत्वात्, अतएव परिणामितानि अचित्तीकृतानि भवन्ति, ततः सविंशतिरात्रे मासे गते अमी अधिकरणदोषा न भवन्ति। यदि पुनः प्रथममेव साधवः स्थितास्म इति ब्रुयुस्तदा ते प्रव्रजितानामवस्थानेन सुभिक्षं सम्भाव्यं गृहियस्ततायो गोलकस्या दंताल क्षेत्रकर्षण, गृहच्छादनादीनि कुर्युः, तथा चाधिकरणदोषा अतः पञ्चाशद्दिनैः स्थिता स्म इति वाच्यं, गणहराविति गणधरापि एवमेवाकार्षुः, अज्जत्ताए इति अद्यकालीना आर्य्यतया व्रतस्थविरा इत्येके,अम्हंपित्ति मस्माकमपि आचार्योपाध्याया, अम्हेविति वयमपीत्यर्थः॥ अन्तरा-

वियते कप्पइ इत्यादि अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते युज्यते प
र्युषितुं परं न कल्पते तां रजनीं भाद्रपदशुक्लपञ्चमीं उवायण
वित्तएति अतिक्रमितुं । एव निवासे इत्यागमिको पाठः पर्युषितु
मनुजिनि मुखार्थः ॥ अथ अन्तरा वियते कप्पइ इति कथ-
नात् पर्युषणा द्विधा सूचिता, गृहिज्ञाताज्ञातभेदात् । तत्र
गृहिणामज्ञाता यस्यां, वर्षायोग्य पीठफलकादौ प्राप्ते यत्नेन
कल्पोक्त-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव स्थापना क्रियते, सा आषाढ
शुक्लपौर्णमास्यां, योग्यक्षेत्राभावे तु पञ्च पञ्च दिन वृद्ध्या याव-
द्भाद्रपदसितपञ्चम्यां श्रावणादयस्तु पर्वतिथिषु क्रियते । गृहि-
ज्ञाता तु यस्यां सांवत्सरिकातिचारालोचनं, लुञ्चनं, पर्युषणा
कल्पसूत्रकथनं, चैत्यपरिपाटी, अष्टम, सांवत्सरिकप्रतिक्रमणं
च क्रियते, यया च व्रतपर्याय वर्षाणि गण्यन्ते सा नभस्य
शुक्लपञ्चम्यां, एतावता यदा भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां सांवत्सरिक-
प्रतिक्रमणं कृतं ततः ऊर्ध्वं तु न कल्पते विहर्तुं, ततस्तदपि
विहर्त्तव्यं । अन्तरापिचैकादयश्च पर्वतिथिषु क्रियते निवासो
ननु प्रतिक्रमणं । कोऽपिदुच्यते यत्र वासस्यैव प्रतिक्रमणमपि
इदं,यदित्रैव वासस्यैव प्रतिक्रमणंचेत्तर्ह्याषाढशुक्ल पञ्च-
दृश्यामपि तस्करत्वं न चैवं दृष्टमिष्टं वा, ततो नियत
निवासएव वासोपयुक्त इति परमार्थः । अमुमेवार्थं श्रीसुधर्म-
स्वामिपादाः प्रतिपादयन्ति । श्रीसमवायाङ्गे यथा समणे
भगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राए मासे विइक्कंते सत्तरि-
एहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइत्ति । व्याख्यातु
समणे इत्यादि वर्षाणां चातुर्मासप्रमाणस्य वर्षाकालस्य सविं-
शतिदिवसाधिके मासे व्यतिक्रान्ते पञ्चाशतिदिनेष्वतीते-
ष्वित्यर्थः । सप्तत्यां च रात्रि दिवसेषु शेषेषु संवत्सरप्रतिक्रम-

णरूप धर्मदिवसे भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थः । वर्षास्वावाशे वर्षावासः वर्षावस्थानं 'पज्जोसवेइत्ति' परिवसति सर्वथा करोति पञ्चाशद्दिनेषु व्यतिक्रान्तेषु तथाविध वसत्यभावादि कारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति, पर भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि निवसतीति हृदयं । चन्द्रसंवत्सरस्यैवायं नियमः मासिवर्द्धितस्येत्यादि । तथाहि निर्युक्तिकारः—एत्थउ पणगं पणगंकारणीयं जाव सवीसइमासो ॥ सुद्धदसमी ठियाण आसाढीपुण्णिमो सरणं ॥१॥ इयसत्तरी जहण्णा असीइ णवई दसुत्तर सयंच ॥ जइ वास मग्गसिरे दसरायातिण्णि उक्कोसा ॥२॥ काउण मासकप्पं तत्थेव ठियाण जइवास मग्गसिरे सालंबणाणं छम्मासितो जेठोग्गहोहोइ ॥३॥ सुगमाश्चैता नवरमाद्यगाथा द्वयस्य चूर्णिः ॥ आसाढपुण्णिमाए ठियाण जति तण डगलादीणि गहियाणि पज्जोसवणाकप्पो ए कहितो तो सावणबहुल पञ्चमीए भ्वज्जोसवेंति । असति खेत्ते सोवणबहुलदसमीए । असति खेते सावणबहुलपण्णरसीए एवं पञ्च पञ्च उस्सारं तेणं जाव असतिखेत्ते भद्दवयसुद्धपञ्चमीए। अतोपरेण ण वट्टति अतिक्कमितुं आसाढपुण्णिमा तो आढत्तं मग्गंताणं जाव भद्दवय जोयहस्स पञ्चमीए एत्यन्तरे जतिवासखेत्तं ण लद्धं ताहे रुक्खसहेट्ठे ठितो तोवि पज्जोसवेयव्व एतेसु पव्वेसु जहालंभे पज्जोसवेयव्वमिति अपव्वे ण वट्टति अत्र पूर्वोक्तानि एकादशपर्वाणि अन्यानि तु वसतिमाश्रित्य अपर्वाणि ज्ञेयानि संवत्सरप्रतिक्रमणं तु भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामेवेति द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्थापना तु समप्रत्यध्ययने दर्शितैवेति न पुनरुच्यते ततएवावसेया। नवरं कल्पमाश्रित्य अपन्यतो नभस्य सितपञ्चम्यारारभ्य कार्त्तिकचातुर्मासंयावत् सप्ततिदिनमानं एतावता

यदा चतसृभिर्मासैः वर्षाकालातिक्रमणं विहितं तद्-भगवतः पर्युषणं विहर्त्तव्यं कारणान्तराभावे। तदभावे तु मार्ग-शीर्षेणापि सह आषाढ़ मासेनापि च सह षण्मासा इति : यत् पुनरभिवर्द्धितवर्षे दिन विंशत्या पर्युषितव्यमिति, उच्यते तत्सिद्धान्त टिप्पनानुसारेण तत्र हि प्रायो युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ़एववर्द्धते तानि च नाधुना सम्यग् ज्ञायन्ते अतो लौकिकटिप्पनानुसारेण यो मासो यत्र वर्द्धते स तत्रैव गणयितव्यः मान्याकल्पनाकार्य्यौ द्वष्ट परित्यक्ष्याग्रहग्रह-रूपनामकस्थला आचार्या उपरिष्ठानात् कल्पनापि न नियमित-तव्येति सामन्तं तु कालकाचार्य्योपरोधात्तुर्थ्यामपि पर्युषणां विदधति इत्यादि।

देखिये ऊपरके पाठमें श्रीसमवायाङ्गजी यथा तद्वृत्ति और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी निर्युक्ति तथा उसीकी चूर्णिके पाठोंके प्रमाण पूर्वक दिनोंकी गिनतीसे आषाढ़ चौमासीसे ५० वें दिन मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें निश्चय निवास पूर्वक ज्ञात पर्युषणामें सांवत्सरिक प्रतिक्रम-णादि करनेका प्रगटपने खुलासे दिखाया है और योग्य क्षेत्रके अभावसे ५० वें दिनकी रात्रिको भी उल्लंघन न करते हुए जंगलमें वृक्ष नीचे पर्युषणा करलेनेका भी खुलासा लिखा है और चन्द्रसंवत्सरमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे कार्त्तिक तक स्वभावसेही ७० दिन रहते हैं सो जघन्यकालावग्रह कहा जाता है और प्राचीनकालमें जैन पञ्चाङ्गानुसार पौष वा आषाढ़की वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धितसंवत्सरमें आषाढ़ चौमा-सीसे बीस दिने श्रावण सुदीमें ज्ञात पर्युषणा करनेमें आती थी तब भी पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक स्वभावसेही

१०० दिन रहते थे इसलिये वर्तमानमें मास वृद्धि दो श्रावणादि होते भी पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखनेका आग्रह करना सो अज्ञानतासे प्रत्यक्ष अनुचित है और जैन पंचाङ्ग इस कालमें अच्छी तरहसे नहीं जाना जाता है इसलिये उसीके अभावसे लौकिक पंचाङ्गानुसार जिस महीनेकी जिस जगह वृद्धि होवे उसीकोही उसी जगह गिनना चाहिये परन्तु अन्य कल्पना नहीं करनी, अर्थात् जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार पौष, आषाढ़के सिवाय चैत्र, श्रावणादि मासोंके वृद्धिकी गिनती निषेध करनेके लिये गच्छाग्रहसे अपनी मति कल्पना करके अन्यान्य कल्पनायें भी नहीं करनी चाहिये क्योंकि लौकिक पंचाङ्गानुसार चैत्र, श्रावणादि मासोंकी वृद्धि होनेका प्रत्यक्ष प्रमाणको छोड़ करके पौष आषाढ़की वृद्धि होनेवाला जैन पंचाङ्ग वर्त्तमानमें प्रचलित नहीं होते भी उसी सम्बन्धी मास वृद्धिका अप्रत्यक्ष प्रमाणको ग्रहण करनेका आग्रह करना सो भी योग्य नहीं है क्योंकि जैन पचाङ्गके अभावसे लौकिक पंचाङ्गानुसार वर्ताव करते भी उसी मुजब मास वृद्धिकी गिनती नहीं करना एसा कोई भी शास्त्रका प्रमाण नहीं होनेसे गच्छाग्रहकी युक्ति रहित कल्पना भी मान्य नहीं हो सकती है और आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना सो तो शास्त्रोक्त प्रमाण पूर्वक तथा युक्ति सहित प्रसिद्ध न्यायकी बात है।

और अब प्राचीनकालमें जैन पंचाङ्गानुसार पर्युषणाकी मर्यादावाला एक पाठ वांचक वर्गको ज्ञात होनेके लिये दिखाता हूं श्रीचैत्रवालगच्छके श्रीजगचंद्र सूरिजीकी परंपरामें

श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजी कृत श्रीबृहत्कल्पसूत्रकी वृत्तिका तीसरा खण्डका तीसरा उद्देशाके पत्र ५८ से ५९ तकका पाठ नीचे मुजब जानो, यथा—

अथ यस्मिन् काले वर्षावासे स्थातव्यं यावन्तंवा कालं येन विधिना तदेतदुपदर्शयति । आसाढ़पुण्णिमाए वासावासतु होति अतिगमणं मग्गसिरबहुल दसमीउ जावएक्कंमि खेत्तंमि ॥ आषाढ़पूर्णिमायां वर्षावास प्रयोग्य क्षेत्रे गमनं प्रवेशः कर्त्तव्यं भवति तत्र चापवादतो मार्गशीर्ष बहुलदशमी यावदेकत्र क्षेत्रे वस्तव्यं एतच्च चिक्खिल्ल वर्षादिकं वक्ष्यमाणं कारणमङ्गीकृत्योक्तं,उत्सर्गतस्तु कार्त्तिकपूर्णिमायां निर्गन्तव्यं इदमेव भावयति ॥ वाहिट्ठिया वसभेहिं खेत्तंगाहित्तु वास पाउग्गं कप्पंकहेतुट्ठवणा सावणबहुलस्स पञ्चाहे ॥ यत्राषाढ़मासकल्पं कृतस्तत्राऽन्यत्र वा प्रत्यासन्नग्रामेस्थिता वर्षावासयोग्यक्षेत्रेवृषभासाधुसामाचारीं ग्राहयन्ति,तेच वृषभा वर्षा प्रयोग्यं संस्तारकं तृण डगल क्षार मल्लकादिकमुपधिं गृह्णन्ति, तत आषाढ़पूर्णिमायां प्रविष्टाः प्रतिपदमारभ्य पञ्चभिरहोभिः पर्युषणा कल्पं कथयित्वा श्रावण बहुल पञ्चम्यां वर्षाकाले सामाचार्याःस्थापनां कुर्वन्ति पर्युषयन्तीत्यर्थः ॥ इत्थय अणभिग्गहिय वीसतिरायं सवीसइ मासं तेण परमभिग्गहियं गाहिणायं कत्तिओजाव ॥ अत्रेति श्रावण बहुल पञ्चम्यादौ आत्मना पर्युषितेऽपि अनभिगृहीतमनवधारितं गृहस्थानां पुरतः कर्त्तव्यं किमुक्तं भवति यदि गृहस्थाः पृच्छेयुरार्यायूयमत्र वर्षाकाले स्थितावा न वेति एवं पृष्टे सति स्थितावयमत्रेति सावधारणं न कर्त्तव्यं, किन्तु तत्संदिग्धं, यथा माद्यापि निश्चितः स्थिता अस्थिता वेति,इत्यमनभिगृहीतं कियन्तं कालं वक्तव्यं उच्यते

यत्राभिवर्द्धितो ऽसौ संवत्सरस्ततो विंशतिरात्रि दिनानि,अथ चान्द्रोऽसौ ततः स विंशतिरात्रं मासं यावदनभिगृहीतं क-र्त्तव्यं, तेन विभक्ति व्यत्ययात् ततः परं विंशति रात्र मासादूर्ध्वमभिगृहीतं निश्चितं कर्त्तव्यं गृहिज्ञातञ्च गृहस्थानां पृच्छतां ज्ञापना कर्त्तव्या, यथा वयमत्र वर्षाकालेऽस्थिता एतच्च गृहिज्ञातं कार्त्तिकमासं यावत् कर्त्तव्यं किं पुनः कारणम् क्रियति काले ऽप्यतीते एव गृहिज्ञातं क्रियते नार्वागित्यत्रो-च्यते ॥ असिवाइ कारणेहिं अहवा वासं न सुट्ठु आरद्धं अभिवड्ढियंमि वीसा इयरेसु सवीसइ मासो ॥ कदाचित्तत्-क्षेत्रे अशिवं भवेत् आदिशब्दात् राजद्विष्टादिकं वा भयमुप-जायेत एवमादिभिः कारणैः, अथवा तत्र क्षेत्रे न सुष्ठु वर्षं वर्षितुमारब्धं येन धान्यनिष्पत्तिरुपजायते ततश्च प्रथममेव स्थिता वयमित्युक्ते पश्चादशिवादि कारणे समुपस्थिते यदि गच्छन्ति ततो लोको ब्रूयात् अहो एते आत्मानं सर्वज्ञ पुत्र तया ख्यापयन्ति परं न किमपि जानन्ति मृषावादं वा भाषन्ते स्थिता स्म इति भणित्वा सम्प्रति गच्छन्तीति । अथाशिवादि कारणेषु सञ्जातेष्वपि न गच्छन्ति तत आज्ञाऽतिक्रमणादि दोषाः अपि च स्थिता स्म इत्युक्ते गृहस्था चिन्तयेयुरवश्यं वर्षं वर्षिष्यति येनैते वर्षा रात्रमत्र स्थिताः ततो धान्यं विक्री-णीयुः गृहं वाच्छादयेयुः हलादीनि वा स्थापयेयुः यत एवं अतो अभिवर्द्धितवर्षे विंशतिरात्रे गते इतरेषु च त्रिषु चान्द्रसंवत्सरेषु सविंशतिरात्रे मासे गते गृहिज्ञातं कुर्वन्ति ॥ एत्थ य पणगं पणगं कारणीयं, जाव सवीसइ मासो, सुद्ध दसमी ट्ठियाण,आसाढी पुण्णिमोसरणं ॥ अत्रेति आषाढपूर्णि-मास्यां स्थिताः पञ्चाहं यावदेव [illegible] एवं पञ्चकादि वृद्धि

रात्री च पर्युंषणाकल्पं कथयन्ति ततः श्रावण बहुलपञ्चम्यां पर्युषणां कुर्वंन्ति, अथाषाढ़पूर्णिमायां क्षेत्रं न प्राप्तास्तत एव- मेव पञ्चरात्रं वर्षावास प्रायोग्यमुपधिं गृहीत्वा पर्युंषणा कल्पं च कथयित्वा श्रावणबहुलदशम्यां पर्युंषणयन्ति एवं कारणेन रात्रि दिवानां पंचकं पंचकं वर्द्धयता तावत्स्थेयं यावत् सविंशति रात्रो मासः पूर्णः। अथवा ते आषाढ़शुद्ध दशम्यामेव वर्षाक्षेत्रे स्थितास्ततस्तेषां पंचरात्रेण डगलादौ गृहीते पर्यु- षणा कल्पे च कथिते आषाढ़ पूर्णिमायां समवसरणं पर्युंषणं भवति एषउत्सर्गः॥ अत ऊर्द्ध्वं कालं पर्युंषणमनुतिष्ठतां सर्वो- ऽप्यपवादः। अपवादेऽपि सविंशतिरात्रात् मासात् परतो नातिक्रमयितुं कल्पते यद्येतावत्कालेऽपि गते वर्षायोग्यक्षेत्रं न लभ्यते ततो वृक्षमूलेऽपि पर्युंषितव्यं॥ अथ पंचक परिहा- णिमधिकृत्य ज्येष्ठकल्पावग्रहप्रमाणमाह। इयसत्तरी ...हसा असीइ णउई दसुत्तरसयं च जइवास मग्गसिरे दसराया ...तिन्नि उक्कोसा॥ इयइति उपदर्शने ये किलाषाढ़पूर्णि- ...याः सविंशतिरात्रे मासे गते पर्युंषयन्ति तेषां सप्ततिदिव- ...नि जघन्यो वर्षा वासावग्रहो भवति, भाद्रपदशुद्धपंचम्या- ...तरं कार्तिकपूर्णिमायां सप्ततिदिनसद्भावात्। एवं भाद्र- ...बहुलदशम्यां पर्युंषयन्ति तेषामशीतिर्दिवसा मध्यमो ...कालावग्रहः। श्रावणपूर्णिमायां नवतिर्दिवसाः। श्रावण ...दशम्यां दशोत्तरशतंदिवसा मध्यमएवकालावग्रहो भ- ...मन्यथापांनेनुक्रमपि द्रष्टव्यं वक्तव्यं। भाद्रपदामावास्यायां ...ी क्रियमाणे पंचसप्ततिदिवसाः। भाद्रपदबहुलपंचम्यां ...ीति। श्रावणशुद्धदशम्यां पञ्चनवतिः। श्रावणामावस्यां ...शतं। श्रावण बहुलपंचम्यां पंचदशोत्तरशत। आषाढ़

२० दिने तथा ५० दिने काल याने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई प्रसिद्ध पर्युषणा करे और यावत् कार्तिकतक उसी क्षेत्रमें ठहरे और जघन्यसे ७० दिन, तथा मध्यमसे १२० दिन और उत्कृष्टसे १८० दिनका कालावग्रह होता है ।

और भी पर्युषणा सम्बन्धी-भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, समाचारी, तथा प्रकरणादि ग्रन्थोंके अनेक पाठ मौजूद हैं परन्तु विस्तारके कारणसे यहां नहीं लिखता हूं। तथापि श्रीदशाश्रुत स्कन्ध सूत्रकी चूर्णि, श्रीनिशीथचूर्णि, श्रीवृहत्कल्पचूर्णि वगैरह कितनेही शास्त्रोंके पाठ आगेप्रसंगोंपात लिखनेमें भी आवेंगे ।

अब मेरा सत्यग्रहणाभिलाषी श्रीजिनाज्ञा इच्छुक सज्जन पुरुषोंको इतनाही कहना है कि वर्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार जिस मासकी वृद्धि होवे उसीके ३० दिनोंमें प्रत्यक्ष पने सांसारिक तथा धार्मिक व्यवहार सब दुनियांमें करनेमें आता है तथा समय, आवलिका, मुहुर्त्तादि शास्त्रोक्त कालके व्यतीतकी व्याख्यानुसार और सूर्योदयसे तिथि वारोंके परावर्त्तन करके दिनोंकी गिनती निश्चयके साथ प्रत्यक्ष सिद्ध है तथापि उसीकी गिनती निषेध करते हैं सो निःकेवल हठवादसे संसारवृद्धिकारक उत्सूत्र भाषणरूप बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये वृथा प्रयास करते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोंकी गिनती पूर्वक उपरोक्त व्याख्याओंके अनुसार आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो श्रीजिनाज्ञाका आराधनपना है। इसलिये-मैं-प्रतिज्ञा पूर्वक आत्मार्थियोंको कहता हूं कि-वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमहाशयो वगैरह विद्वान् महाशय पक्षपात रहित हो करके विवेक बुद्धिसे उपरोक्त श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओंका तात्पर्यको विचारेंगे तो मासवृद्धि होनेसे अपने पूर्वजोंकी

मर्यादाके प्रतिकूल तथा पञ्चाङ्गीके प्रमाणोंके भी विरुद्ध होकरके गच्छाग्रहके पक्षपातसे दो श्रावण होते भी प्रत्यक्षपने ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका वृथा आग्रह कदापि नहीं करेंगे। और उपरोक्त शास्त्रानुसार तथा युक्ति पूर्वक ५० दिनें दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करनेवाले श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषों पर द्वेष बुद्धिसे वृथा उत्सूत्र रूप मिथ्याभाषणसे आज्ञा भङ्गका दूषण लगाकर बाल-जीवोंको भ्रममें गेरनेका साहस भी कदापि नहीं करेंगे।

और फिर अपनी चातुराईसे आप निर्दूषण बननेके लिये जैन शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें नहीं गिना है ऐसा उत्सूत्र भाषणरूप कहके अज्ञजीवोंके आगे मिथ्यात्व फैलाते हैं उसीका निवारण करनेके लिये और भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेके लिये इसजगह अधिक मासकी गिनतीके प्र-माण करने सम्बन्धी पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाण यहां दिखाता हूं।

श्रीसुधर्मस्वामीजी कृत श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्रमें १, तथा श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रमें २, औरसंवत् १३०० के अनुमान श्रीमलयगिरिजी कृत उपरोक्त दोनों सूत्रोंकी दोनों वृत्ति-योंमें ४, श्रीभद्रबाहुस्वामिजीकृत श्रीदशवैकालिकसूत्रके चूलिकाकी निर्युक्तिमें ५, तथा श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत तत् निर्युक्तिकी वृहद्वृत्तिमें ६, श्रीनिशीथसूत्रके लघुभाष्यमें, वृह-द्भाष्यमें ७, चूर्णिमें ८ श्रीवृहत्कल्पके लघुभाष्यमें, वृहद्भाष्यमें९, चूर्णिमें १० और वृत्तिमें ११ श्रीसमवायांगजीमें १२, तथा तद्वृत्तिमें १३ औरश्रीस्थानांगजीसूत्रकी वृत्तिमें १४, श्रीनेमीचन्द्रसूरिजी कृत श्रीप्रवचनसारोद्धारमें १५, श्रीसिद्ध-सेनसूरिजी कृत तत्सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें १६, श्रीउदयसागरजी कृत तत्सूत्रकी लघुवृत्तिमें १७, श्रीजिनपतिसूरिजीकृत श्रीसमा-चारीमें १८, श्रीसंघपट्टक लघुवृत्तिमें, वृहद्वृत्तिमें १९ श्रीजि[illegible] कृत श्रीविधिप्रपासमाचारीमें २० और श्रीमलय

सुन्दरजी कृत श्रीसमाचारी शतकमें २१ और श्रीपार्श्वचन्द्र गच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुतस्कन्ध सूत्रकी वृत्तिमें २२ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको गिनतीमें प्रमाण किया हैं इसलिये जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुष अधिकमासकी गिनती कदापि निषेध नहीं कर सकते हैं इस जगह भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेके वास्ते थोड़ेसे अधिकमासकी गिनतीके विषयवाले पाठ लिख दिखाता हुं—

श्रीतपगच्छके पूर्वज कहलाते श्रीनेमिचन्द्र सूरिजी महाराज कृत श्रीप्रवचनसारोद्धार मूलसूत्र गुजराती भाषा सहित मुंबईवाले श्रावक भीमसिंह माणककी तरफसें श्रीप्रकरण रत्नाकरके तीसरे भागमें छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके पृष्ठ ३६४ में ३६५ तक नीचे मुजब भाषा सहित पाठ जानो—

अवतरण—मासाण पञ्चभेयत्ति एटले मासना पांचभेदोमुं एकसोने एकतालीसमुंद्वार कहे छे। मूलः—मासाय पंचमुत्ते, नक्खत्ते चंदीओय रिउमासो ॥ आइच्चोविये अवरो, भिवड्ढिओ तहय पंचमओ ॥८८४॥

अर्थः-सूत्र जे श्रीअरिहंत परमात्मानुं प्रवचन तेने विषे मास पांच कह्या छे। तेमा प्रथमजे नक्षत्रनी गणनाये थाय तेनी रीतकहे छेः-चंद्रमाचारके० संचरतो जेटले काले अभिजितादिकथी विचरतो उत्तराषाढ़ा नक्षत्र सुधी जाय तेने प्रथम नक्षत्र मास कहिये। बीजो चंदिओयके० चंद्रयकोथाय ते अंधारा पड़वायकी आरंभीने अजवाली पूर्णिमा सुधी चंद्रमास केहेवाये। त्रीजोरिओके० ऋतु ते लोक कहिये साठ अहोरात्रीये ऋतु कहिये। तेनो अर्धमास एटले त्रीस अहो-

रात्री प्रमाणनो ते ऋतुमास जाणवो। चोथो, आदित्य जे सूर्य तेहनुं अयन एकशोने ऋयासी दिवसनुं होय। तेनो छट्ठोभाग ते आदित्य मास कहिये। पांचमो अभिवर्द्धित ते तेर चंद्रमासे थाय। बार चंद्रमासे संवत्सर जांणवो परन्तु जेवारे एक वधे तेवारे तेने अभिवर्द्धित मास कहिये एनुंज प्रमाण विशेष देखाडे छे। मूल—अहरत्तसित्तवीस तिसत्त सत्तट्ठि भाग नरकतो॥ चंदोअ उणत्तीस यसट्ठिभागाय यत्तीसं॥ ८०५॥

अर्थः—सतावीस अहोरात्री अने एक अहोरात्रीना शडसठ भाग करिये तेवा एकवीस भागे अधिक एक नक्षत्र मासथाय। अने मासना उगणत्रीस अहोरात्री तेना उपर एक अहोरात्रिना बासठभाग करिये एवा बत्रीस भागे अधिक एक चंद्रमास थाय।

मूलः—उउमासो तीसदिणो, आइच्चोवि तीस होइ अद्धंच। अभिवद्‌ढिओअ मासो चउवीस सएण छेएण॥८०६॥ अर्थः—ऋतुमास ते संपूर्ण त्रीसदिवस प्रमाणनो जाणवो तथा आदित्यमास ते त्रीसदिवस अने उपर एक दिवसना साठिया त्रीसभाग करिये तेटला प्रमाणनो जांणवो। अने अभिवर्द्धितमास ते चउवीसे अधिक एकशतछेद एटले भाग तेज देखाडे छे॥ ८०६॥ मूलः—भागाणिगवीससयं, तीसाएगाहिया दिणाणंच। एएणइ निप्पत्तिं, लहंति समयाऊतह-नेयं॥ ८०७॥ अर्थः—ते पूर्वोक्त एकसोने चोवीसभाग एक अहोरात्रना करिये तेवा एकसो एकवीसभाग अने एक-अधिक त्रीस एटले एकत्रीस दिवस अर्थात् एकत्रीस एक अहोरात्रीना एकसो [illegible] मांहेला

एकसोने एकवीसभाग उपर एटोलुं अभिवर्द्धित मासनुं प्रमाण जाणवु एटलेज पांचमासनो शेष निःष्पति एटले मासिथाय छे तेमजयर्क० सिद्धान्त थकी जांणवो इति गाथाचतुष्टयार्थे ॥ ९०७ ॥ अवतरणः—वरिसाणपंचभेयत्ति एटले वर्षना पांचभेदनुं एकसोने बेतालीसमु द्वार कहे छे ।

मूलः—संवछराउ पंचउ "चंदे चंदे भिवड्ढिए चेव । चंदे भिवड्ढएतह बासट्ठिमासे हि जुगमाणं॥९०८॥ अर्थः—चंद्रादिक संवत्सर पांचकह्याछे तेमा पूर्वोक्त चंद्रमासे जे नीपन्योते चंद्रसंवत्सर जांणवो । तेनु प्रमाण त्रणसे चोपनदिवस अने एक दिवसना बासठभाग करिये तेवा बारभाग उपर जाणवा तेमज बीजा चंद्रसंवत्सरनु पण मानजाणवु । हवे चंद्रसंवत्सर थी एक अधिकमास थाय ऐटले तेने अभिवर्द्धित संवत्सरजांणवो तेनु प्रमाण त्रणसे त्र्यासीदिवस अने एक दिवसना बासठभाग करी तेमांना चुमालीसभाग एवो एक अभिवर्द्धित संवत्सर जाणवो एकत्रीश अहोरात्र अने एकदिवसना एकसो चोवीसभाग करिये तेमांहिला एकसो एकवीसभाग उपर ए अभिवर्द्धित मासनुं मान जाणवु । हवे पूर्वोक्त माने अभिवर्द्धित संवत्सर बे अने चंद्रसंवत्सर त्रण एवा पांच संवत्सरे एक युगमान थाय छे ते बासठचंद्रमास प्रमाणक छे । सारांश एकयुगमां त्रण चांद्रसंवत्सर ते चांद्रसंवत्सरना प्रत्येक बारमास मली छत्रीस चांद्रमास अने बे अभिवर्द्धित संवत्सर तेमां एक अभिवर्द्धित संवत्सरना तेरे चांद्रमास ए प्रमाणे बीजा वर्षना पण तेरे मली एकंदर छवीसमास अने पूर्वोक्त चांद्रमास छत्रीस मलीने बासठ चांद्रमासे एक युगनुं मान थाय ॥ ९०८ ॥ इति—

देखिये नपरमें श्रीतपगच्छके पूर्वज श्रीनेमिचंद्रसूरिजी अधिक मासकी गिनती मंजूर करके तेरह चंद्रमासमे अभि वर्द्धित संवत्सर कहा और एकयुगके बासठ (६२) मास गिनती दिखाइ अधिक मासके दिनोंकी भी गिनती खुलासे लिखी हैं इस लिये वर्तमानमें श्रीतपगच्छवाले महाशयोंको अपने पूर्वजके प्रतिकुल होकर अधिकमासकी गिनती निषेध करनी नही चाहिये किन्तु अधिकमासकी गिनती अवश्य मेव मंजूर करनी योग्य हैं ।

औरसुनिये—श्रीमलयगिरिजी कृत श्रीचंद्रप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ ९९ से १०० तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरः पंचविधः प्रज्ञप्त स्तद्यथा। चंद्रश्चंद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव उक्तंच चंदो चंदो अभि वड्ढितोय, चंदो अभिवड्ढितो चेव। पंचमहियं जुगमिणं दिट्ठं ते लोकदंसीहिं ॥ १ ॥ पढम विइयाउ चंदात्तइयं अभि वड्ढियं वियाणाहिं। चंदे चेव चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण ॥ २ ॥ तत्र द्वादशपूर्णमासी परावर्त्ता यावता कालेन परिसमाप्ति मुपयाति तावत्काल विशेषश्चंद्रसंवत्सरः उक्तंच। पुन्निम परियट्टा पुण बारस मासे हवइ चंदो। एकश्च पूर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रोमासस्तस्मिंश्च चंदे मासेऽहोरात्र परिमाण चिंतायामेकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वापष्टि भाग अहोरात्रस्य एतत् द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रिंदिवानां द्वादशच द्वापष्टि भागा रात्रिंदिवस्य एवं परिमाणश्चंद्रः संवत्सरः तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेन त्रयोदश चंद्रस्य मासा ...ः सोऽभिवर्द्धित संवत्सरः ॥ उक्तंच ॥ तेरसय चंद्रमासा

यासो अभिवड्ढिओय मासद्धो । एकस्मिन् चंद्रमासे अहो-
रात्रा एकोनत्रिंशद् भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागस्य अहो-
रात्रस्य एतच्चानन्तरं चोक्तं तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुणितो
जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वा-
रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्रप्रमाणोऽभि-
वर्द्धितसंवत्सरं उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धित
संवत्सरं उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते
इह युगं चंद्राऽभिवर्द्धितरूप पञ्चसंवत्सरात्मक सूर्य्यसंवत्सरा-
पेक्षया परिभाव्यमान मन्यूनातिरिक्तानि पञ्चपर्वाणि
भवन्ति सूर्य्ये रात्रत्र सार्द्धत्रिंशदहोरात्रि प्रमाण चंद्रमास
एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्य ततो
गणितपरिभावनया सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे
एकश्चंद्रमासोऽधिको लभ्यते तथाच पूर्वाचार्य्यप्रदर्शितेयं क-
रण गाथा॥ चंदस्स जो विसेसो आइच्चस्स य हविज्ज मासस्स
तीसइ गुणिओ संतो हवइ हु अहिमासओ एक्को॥१॥ अस्याक्षर-
गमनिका आदित्यस्य आदित्य संवत्सरः सम्बन्धिनो मासस्य
मध्यात् चंद्रस्य चंद्रमासस्य यो भवति विश्लेष इह विश्लेष
कृते सति यदवशिष्यते तदुच्यते विश्लेषः स त्रिंशता
गुण्यते गणितः सन् भवत्येकोऽधिकमासः तत्र सूर्य्यमासपरि-
माणात् सार्द्ध त्रिंशदहोरात्ररूपात् । चन्द्रमासपरिमाणमेकोन-
त्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्येव रूप शो-
ध्यते तत स्थितं पश्चाद्दिनमेकमेकेन द्वाषष्टिभागेन न्यूनं तच्च
दिनं त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रिंशद्दिनानि एकश्च द्वाषष्टिभाग
त्रिंशता गुणितो जातास्त्रिंशत् द्वाषष्टिभागाः ते त्रिंशद्दिनेभ्यः
शोध्यन्ते ततस्थितानि शेषाणि एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिं-

शश्च द्वाषष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्य्यसंवत्सर मत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्य्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्य्यसम्वत्सरः मत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगंमि बावीसे पव्वसए हवइ हु बीओ जुगंतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीताया षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिनवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिकान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिदिक्षुः प्रतिवर्ष पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालंकृतौ चन्द्रस्स संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्व संख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं [illegible] इर्षैरपि तीर्थकृद्भिरेवा चेति।

और सो इस महाराज कृत श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्ति
पत्र १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संव
त्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभि
वर्द्धितश्चैव ॥ उक्तंच ॥ चंदो चंदो अभिवड्ढिओय चंदोऽभि
वड्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठं ते लोक दंसीहि ॥ १
पढम बिइयाउ चदा तइयं अभिवड्ढिअं वियाणा हि चंदेचे
चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण ॥२॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी
परावर्त्ता यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत
कालविशेषश्चान्द्र संवत्सरः ॥ उक्तंच ॥ पुण्णिम परियट्टा
पुण बारसमाओ हवइ चंदो ॥ एकस्य पौर्णमासी परावर्त
एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चाद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां
एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिव-
सस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चा-
शदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि
दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संव-
त्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभि
वर्द्धितसंवत्सरः ॥ उक्तंच ॥ तेरसय चंदमासा वासो अभि-
वड्ढिओय नायव्वो ॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिं-
शद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तर-
मेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि
अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टि-
भागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर
उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर
उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

चन्द्राभिवर्द्धितरूप पञ्चसंवत्सरात्मकं सूर्यसंवत्सरापेक्षया परि भाव्यमानमन्यूनातिरिक्तानि पंचवर्षाणि भवन्ति सूर्यमासश्च सार्द्धत्रिंशदहोरात्रिप्रमाण चन्द्रमास एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्य ततो गणितसंभावनया सूर्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकश्चन्द्रमासोऽधिको लभ्यते। स च यथा लभ्यते तथा पूर्वाचार्यप्रदर्शितेयं करणं गाथा ॥ चंदस्स जो विसेसो आइच्चस्सजइ हविज्ज मासस्स तीसइ गुणिओ संतो हवइ हु अहिमासगो एक्को॥१॥अस्याक्षरगमनिका आदित्यस्य आदित्यसंवत्सरसम्बन्धिनो मासस्य मध्यात् चंद्रस्य चंद्रमासस्य यो भवति विश्लेष इह विश्लेष कृते सति यदव-शिष्यते तदम्बुरवाराद्विश्लेषः स त्रिंशता गुण्यते गुणितः सन् भवत्येकोऽधिकमासः तत्र सूर्यमासपरिमाणात् सार्द्धत्रिंशदहोरात्ररूपं चंद्रमासपरिमाणमेकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्येत्येवं रूप शोध्यते ततः स्थितं पश्चाद्दिनमेकमेकेन द्वाषष्टिभागेन न्यूनं तच्च दिनं त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रिंशद्दिनानि एकश्च द्वाषष्टिभाग त्रिंशता गुणितो जातास्त्रिंशद्द्वाषष्टिभागास्ते त्रिंशद्दिनेभ्यः शोध्यन्ते तत स्थितानि शेषाणि एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्य एतावत्परिमाणश्चान्द्रोमास इति भवति सूर्य संवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्यमासाः षष्टिस्ततो भूयोऽपि सूर्य सम्वत्सर सत्कत्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति । उक्तं च सट्ठीए अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धंमि बावीसे पव्वसए हवइहु बीओ जुग- ॥१॥ अस्यापि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनंतरोदित पर्वणां पक्षाणां षष्टी अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेष्वति-

चान्द्रेषु इत्यर्थः एतस्मिन्नन्तरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिको
मासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वाविंशत्यधिके पर्वशते
(पर्वशते) अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगस्य पर्यन्तवर्त्तिनि भवति तेन
युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युग
अभिवर्द्धितसंवत्सरौ तस्मात् युगे पर्वसंख्यया चत्वारि
पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिष्टानि प्रतिवर्षं पर्वसंख्या
माह ॥ चान्द्रसंवत्सरेत्यादि गा इति तत्र युगे प्रथमस्य
चान्द्रस्य सांवत्सरिको चान्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिः
पर्वाणि यतः द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एके-
कस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणी ततः सर्वसंख्यया चान्द्रसंवत्सरे
चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति द्वितीयस्यापि चान्द्रसंवत्सरस्य
चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्-
विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्र
संवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याभिवर्द्धितसंव-
त्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेव
उक्तेनैव प्रकारेण सपूर्वापरेणेति पूर्वापरगणितमिलनेन पञ्च-
सांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं
सर्वदर्शि तीर्थकृद्भिर्मया चेति ।

देखिये ऊपरके दोनु पाठमें खुलासा पूर्वक प्रथम चन्द्र
संवत्सर दूसरा चन्द्र संवत्सर तीसरा अभिवर्द्धित संवत्सर
चौथा फिर चन्द्रसंवत्सर और पांचमा फिर अभिवर्द्धित
संवत्सर इन पांच संवत्सरों में एक युगकी संपूर्णता लोक-
दर्शी केवली भगवान् ने देखी हैं कही हैं जिसमें एक चन्द्र
मासका प्रमाण एकोनतीस संपूर्ण अहोरात्रि और एक अहो
रात्रिके बासठ भाग करके बत्तीस भाग ग्रहण करनेसे २९ ।

६२ अर्थात् २९ दिन ३० घटीका और ५८ पल प्रमाणे एक
चन्द्रमास होता है इनको बारह चांद्रमासों से बारह गुण
करने से एक चन्द्रसंवत्सरमें तीनसे चौवन सम्पूर्ण अहोरात्रि
और एक अहोरात्रिके बासठ भाग करके बारह भाग
ग्रहण करनेसे ३५४।१२।६२ अर्थात ३५४ दिन ११ घटीका और
३६ पल प्रमाणे एक चन्द्र संवत्सर होता है और जिस
संवत्सरमें अधिकमास होता है उसीमें तेरह चन्द्रमास
होने से अभिवर्द्धित नाम संवत्सर कहते हैं जिसका
प्रमाण तीनसे त्रियासी अहोरात्रि और एक अहोरात्रिके
बासठ भाग करके चौमालीस भाग ग्रहण करनेसे ३८३।४४।६२
अर्थात् ३८३ दिन ४२ घटीका और ३४ पल प्रमाणे एक
अभिवर्द्धित संवत्सर तेरह चन्द्रमासोंकी गिनतीका
प्रमाण से होता है इस तरहके तीन चंद्रसंवत्सर और दोय
अभिवर्द्धित संवत्सर एसे पांच संवत्सरों से एक युग होता
है अब एक युगके सर्वपर्वोंकी गिनती कहते हैं
प्रथम चन्द्र संवत्सरके बारहमास जिसमें एक एक मासकी
दोय दोय पर्वणि होनेसे बारहमासों की चौवीश (२४)
पर्वणि प्रथम चन्द्र संवत्सरमें होती हैं तैसे ही दूसरा चन्द्र
संवत्सरमें भी २४ पर्वणि होती हैं और तीसरा अभिवर्द्धित
संवत्सरमें छवीश (२६) पर्वणि मासवृद्धि होने से तेरह-
मासोंकी होती हैं तथा चौथा चन्द्र संवत्सरमें २४ पर्वणि
होती हैं और पांचमा अभिवर्द्धितसंवत्सरमें २६ पर्वणि होती
हैं सो कारण उपरके दोनुं पाठमें कहा हैं इस सबे पर्वोंकी
गिनती मिलनेमें पांच संवत्सरोंके एक
(१२४) पर्वणि अर्थात

पर्वों की व्याख्या सर्वतीर्थंकर महाराजों में अर्थात् अनन्त तीर्थंकरों में कही है वैसे ही वृत्तिकार मलयगिरिजीने चन्द्र प्रज्ञप्तिकी तथा सूर्य्यप्रज्ञप्ति की वृत्तिमें खुलासे लिखी है और श्रीचंद्रप्रज्ञप्ति वृत्तिमें पृष्ठ १११ में ११३ में तथा १३५ में और श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिमें पृष्ठ १२४ से १२८ तक नक्षत्र संवत्सर १ चन्द्र संवत्सर २ ऋतु संवत्सर ३ आदित्य (सूर्य) संवत्सर ४ और अभिवर्द्धित संवत्सर ५ इन पांच संवत्सरों का प्रमाण विस्तार पूर्वक वर्णन किया है जिसकी इच्छा होवें सो देखके नि सन्देह होना इस जगह विस्तार के कारण से सब पाठ नहीं लिखते हैं।

और भी श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायांगजी सूत्रमूल तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेव सूरिजी कृत वृत्ति और श्रीपार्श्वचन्द्रजी कृत भाषा सहित (श्रीमक-सूदाबाद निवासी राय बहादुर धनपतसिंहजीका जैनागम संग्रह के भाग चौथेमें) छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके ६१ मा और ६२ मा समवायाङ्गमें मासोंकी गिनतीके सम्बन्ध वाला पृष्ठ ११९ और १२० का पाठ नीचे मुजब जानो यथा—

पंचसंवच्छरियस्सणं जुगस्सरिऊ मासेणं मिज्जमाणस्स इग-सट्ठिं उऊ मासापन्नता ।

अथैकषष्टिस्थानकं तत्र पञ्चेत्यादि पञ्चभिः संवत्सरैर्नि-र्वृत्तमिति पञ्चसांवत्सरिकं तस्यपञ्चमित्यलङ्कारे युगस्य कालमान-विशेषस्य ऋतुमासेन चन्द्रादिमासेन मीयमानस्य एकषष्टिः ऋतुमासाः प्रज्ञप्ताः इह चायं भावार्थः युगं हि पञ्चसंवत्सरा निष्पादयन्ति तद्यथा—चन्द्रश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितश्च-श्चेति तत्र एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशच्च द्विषष्टिभागा

अहोरात्रस्येत्येवं प्रमाणेन २९ । ३२ । ६२ । कृष्णप्रतिपदा-रभ्य पौर्णमासी निष्ठितेन चन्द्रमासेन द्वादशमास परिमाणश्चन्द्रसंवत्सरस्तस्य च प्रमाणमिदम् त्रीणि शतान्यह्नां चतुःपञ्चाशदुत्तराणि द्वादश च द्विषष्टिभागा दिवसस्य ३५४ । १२ । ६२ । तथा एकत्रिंशदह्नां एकविंशत्युत्तरं च शतं चतुर्विंशतीत्युत्तरशतभागानां दिवसस्येत्येवं प्रमाणोऽभिवर्द्धितमास इति एतेन ३१ । १२१ । १२४ । च मासेन द्वादशमास प्रमाणोऽभिवर्द्धित संवत्सरो भवति स च प्रमाणेन त्रीणि शतान्यह्नां त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्विषष्टिभागा दिवसस्य ३८३ । ४४ । ६२ । तदेवं त्रयाणां चन्द्रसंवत्सराणां द्वयोरभिवर्द्धित संवत्सरयोरेकीकरणे जातानि दिनानां त्रिंशदुत्तराणि अष्टादशशतानि अहोरात्राणां १८३० ऋतुमासश्च त्रिंशताहोरात्रैर्भवतीति त्रिंशताभागहारे लब्धा एकषष्टिः ऋतुमासा इति ।

हिवे ६१ मो लिखे छे । चन्द्र १ चन्द्र २ अभिवर्द्धित ३ चन्द्र ४ अभिवर्द्धित ५ एम पांचवर्षनो १ युगथाय ते ऋतुमासे करी नीपमानथे चन्द्रमासनोमान २९ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ३२ भाग ६२ ठिया ते कृष्णपक्षनी पडिवाथी पौर्णमासीये पूरोथाय एहमासमान १२ गुणोकीजे तिवारे वर्षनो मान ३५४ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना १२ भाग ६२ ठियाथाय तेहने त्रिगुणो कीजे तिवारे १०६२ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ६२ ठिया ३६ भागथाय एम अभिवर्द्धित मासनो मान ३१ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना १२४ भाग हाइय १२१ भाग प्रमाणे थाय तेहने १२ गुणो कीजे तिवारे अभिवर्द्धित वर्षनो मान ३८३ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना

६२ चन्द्र मासके १८३० दिन एक युगकी पूर्ति करनेवाले दिखाये हैं तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादि वाले मेरे धर्मबन्धु अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं जिनोंको विचार करना चाहिये ॥

और भी श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्यजी श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी कृत श्रीबृहत्कल्पवृत्ति खंभायतके भंडारवालीके दूसरे उद्देशे दूसरे खण्डमें—नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से ६ प्रकारके मासोंकी व्याख्या किवी हैं जिसमें से इस जगह एक काल मासकी व्याख्या वर्तमानिक श्रीतपगच्छवालोंको अपने पूर्वजका वचन याद करानेके वास्ते और भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेके लिये पृष्ठ १९८ वें का पाठ दिखाते हैं तथाच तत्पाठ—

कालमासः श्रावणादिः यद्वा कालमासो नक्षत्रादिकः पञ्चविधस्तद्यथा नक्षत्रमासः चंद्रमासः ऋतुमास आदित्यमास अभिवर्द्धितमास अमीषामेव परिमाणमाह गाथाः नक्खत्ते खलु मासो, सत्तावीसं हवंति अहोरत्ता ॥ भागाय एक्कवीसं, सत्तट्ठि कएण छेएणं ॥१॥ अउण तीसं चंदो, बिसट्ठि भागाय हुंति बत्तीसा ॥ कम्मो तीसइ दिवसो, तीसा अद्धंच आइच्चो ॥२॥ अभिवड्ढि इक्कतीसा चउवीसं भाग सयं इगवीसं चायी मुणेअव्व सव्वग्गं पुण कम्म मासेणं ॥३॥ नक्षत्रेषु भवो नक्षत्र. स खलु मासः सप्तविंशत्यहोरात्राणि सप्तषष्टी कृतेन छेदेन दिवसस्याहोरात्रस्यैकविंशति सप्तषष्टिभागाः तथाहि चंद्रस्य नक्षत्रमंडलाद्धीक्षेत्राणि चरित्वा गतनिवत् मासानि षट्नक्षत्राणि पञ्चदशमुहूर्त भोग्यानि नित्य शततारः पुनर्वसु रोहिणी विशाखा चेति षट् पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त भोग्यानि शेषाणि तु

पञ्चदशनक्षत्राणि त्रिंशन्मुहूर्त्तानीति जातानि सर्वसंख्यया मुहूर्त्तानामष्टाशतानि दशोत्तराणि एतेषां च त्रिंशन्मुहूर्त्तैरहो-रात्रमिति कृत्वा त्रिंशता भागो ह्रियते लब्धानि सप्तविंशति रहोरात्राणि अभिजिद्योगश्चैकविंशति सप्तषष्टीभागा इति तैरभ्यधिकानि सप्तविंशतिरहोरात्राणि सकल नक्षत्रमण्ड-लोपभोगकालो नक्षत्रमासो उच्यते १ चंद्रे भवश्चांद्रः कृष्ण-पक्षप्रतिपदारभ्य यावत् पौर्णमासी परिसमाप्तिस्तावत् कालमानः स च एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशत् द्वाषष्टि-भागा अहोरात्रस्य २ कर्म्ममास ऋतुमास इत्येकोऽर्थः स त्रिंश-द्दिवसप्रमाणः ३ आदित्यमासस्त्रिंशदहोरात्राणि रात्रि दिव-सस्य चार्द्धं दक्षिणायनस्योत्तरायणस्य वा षड्भागमान इत्यर्थः ४ अभिवर्द्धितो नाम मुख्यतस्त्रयोदशचंद्रमास प्रमाण· संवत्सरः परं तत् द्वादशभागप्रमाणो मासोऽपि अयमर्थे समु-दायोपचारादभिवर्द्धितः स चैकत्रिंशदहोरात्राणि चतुर्विंश-त्युत्तरशतभागी कृतस्य चाहोरात्रस्य त्रिकहीनं चतुर्विंशति-भागानां भवति एकविंशमिति भावः एतेषां चानयनाय इयं करण गाथा॥ जुगमासेहिं उभइए, जुगंमिलद्धे हविज्ज मासधुं॥ मासाणं पंचण्ह, विषमं राइंदियपमाणं॥१॥ इह सूर्यस्य दक्षिण मुत्तरं वा अयनं त्र्यशीत्यधिकदिनशतात्मकं द्वि अयने वर्ष-मिति कृत्वा वर्षे षट्षष्ट्यधिकानि त्रिणि शतानि भवन्ति पञ्च-संवत्सराद्युगमिति कृत्वा तानि पञ्चभिर्गुण्यन्ते जातानि अष्टा-दशशतानि त्रिंशद्दिवसानां एतेषां नक्षत्रमासदिवसानयनाय सप्तषष्टियुगे नक्षत्रमासा इति सप्तषष्ट्या भागा ह्रियते लब्धाः सप्तविंशतिरहोरात्रा एकविंशतिरहोरात्रस्य सप्तषष्टीभागाः १ तथा चंद्रमास दिवसानयनाय द्वाषष्टियुगे चंद्रमासा इति

द्वापष्ट्या तस्यैव युगदिन राशेर्भागा ह्रियते लब्धाहि एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशत् द्वापष्टिभागाः एवं युगदिवसानामेवैकषष्टियुगे कर्म्ममासा इत्येकषष्ट्या भाग ह्रियते लब्धानि कर्म्ममासस्य त्रिंशत् दिनानि ३ तथा युगे षष्टि सूर्य्यमासा इति षष्ट्या युगदिनानां भाग ह्रियते लब्धाः सूर्य्यमासदिवसास्त्रिंशदहोरात्रस्यार्द्धं च ४ तथा युगदिवसा एव अभिवर्द्धितमासा दिवसानयनाय त्रयोदशगुणाः क्रियन्ते जातानि त्रयोविंशतिसहस्राणि सप्तशतानि नवत्यधिकानि तेषां चतुश्चत्वारिंशते सप्तभि शतैर्भागो ह्रियते लब्धा एकत्रिंशद्दिवसा शेषाश्चावतिष्ठन्ते षट्विंशत्यधिकानि सप्तशतानि चतुश्चत्वारिंशत्सप्तशतभागानां ततः उभयेषामप्यङ्कानां षड्भिरपवर्तना क्रियते जातामेकविंशशतं चतुर्विंशत्युत्तरशतभागानामिति उक्ताः पञ्चापि कालमासाः ॥ १ ॥

देखिये उपरके पाठमें श्रीतपगच्छके मुख्याचार्य्यजी श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी अपने (स्वयं) नक्षत्रमास १ चंद्रमास २ ऋतुमास ३ आदित्यमास ४ और अभिवर्द्धितमास ५ इन पांचमासोंकी व्याख्या करते पांचमा अभिवर्द्धित मासकी और अभिवर्द्धित संवत्सरकी विशेष व्याख्या खुलासे कर दिखाइ हैं कि—

अभिवर्द्धितनाम संवत्सर मुख्य तेरह चंद्रमासोंसें होता हैं एक चंद्रमासका प्रमाण गुनतीस दिन बत्रीस बासटीया भाग अर्थात् २९ दिन ३२ घटीका और ५८ पल प्रमाणे होता हैं जिसकों तेरह चंद्रमासोंसें तेरह गुना करने सें दिन ३८३। ४४। ६२ भाग अर्थात् ३८३ दिन ४२ घटीका और ३४ पल प्रमाणे एक अभिवर्द्धित संवत्सर होता हैं चंद्रमासकी व्याख्या

ऊपरमें लिखीहै वोही तेरह चंद्रमास के अभिवर्द्धि त संवत्सर का प्रमाणको बारह भागमें करनेसे एक भागमें ३१।१२१।१२४ होता है वोही प्रमाण एक अभिवर्द्धि त मासका जानना, याने ३१ अहोरात्रि और एक अहोरात्रि के १२४ भाग करके उसके तीन भाग छोड़कर बाकीके १२१ भाग ग्रहण करना अर्थात ३१ दिन तथा ५८ घटीका और ३३ पलसे कुछ अधिक व्यवहारमें स्थूल रूपसे प्रमाणका एक अभिवर्द्धित मास होताहै वो अवयवोंके उदाहरणसे अभिवर्द्धि त मास कहतेहैं अर्थात् जिस संवत्सरमें जब अधिक मास होताहै तब तेरह चंद्रमास प्रमाणसे अभिवर्द्धि त संवत्सर कहतेहैं उसीके तेरहवा चंद्रमासके प्रमाणको बारह भागोंमें करके बारह चंद्रमासोंके साथ मिलानेसे बारह चंद्रमासोंमें तेरहवा अधिकमासके प्रमाणों (अवयवों) की वृद्धिहुई इसलिये अवयवोंके उदाहरणसे मासका नाम अभिवर्द्धि त कहाजाता है ऐसे बारह अभिवर्द्धि त मासोंसे जो हुवा संवत्सरका प्रमाण उसीको अभिवर्द्धित संवत्सर कहतेहैं परंतु अधिक मासके कारणसे तेरह चंद्रमासोंसे अभिवर्द्धित संवत्सर होताहै वो गिनतीके प्रमाणसेतो तेरहाही मास गिनेजावेंगे देखो श्रीप्रवचनसारोद्धार, श्रीचंद्रप्रज्ञप्तिवृत्ति, श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिवृत्ति श्रीसमवायांगजीसूत्रवृत्ति के जो पाठ ऊपरमें छपगये हैं उनपाठोंसे खुलासा दिखता है ।

और पांचाही प्रकारके मासोंके भिन्न भिन्न मास प्रमाणसे भिन्न भिन्न संवत्सरका प्रमाण तथा भिन्न भिन्न मासके और भिन्न भिन्न संवत्सरके प्रमाणसे पांच वर्षोंसे एक युगके १८३० दिनोंकी गिनती का हिसाब संबंधी आगे यंत्र (कोष्टक) लिखनेमें आवेंगे जिससे पाठक वर्गको सरलता पूर्वक जल्दी अच्छी तरहसे समझमें आसकेगा ।

और भी अधिक मासकी गिनती प्रमाण करने सम्बन्धी सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि वृत्ति और प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठ मौजूद हैं परंतु विस्तारके कारण से यहां नहीं लिखता हूं तथापि विवेकी सज्जन उपरोक्त पाठोंसे भी स्वयं समझ जावेंगे ।

अब इस जगह जिनाज्ञा विरुद्ध प्ररूपणासे तथा वर्तने वर्तानेसे संसार वृद्धिका भय रखनेवाले और जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी निष्पक्षपाती सज्जनपुरुषोंको मैं निवेदन करता हूं कि देखो ऊपरमें श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिवृत्तिमें तथा श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिमें स्वयं (अनन्त) श्रीतीर्थंकर महाराजोंके कथनानुसार श्रीमलयगिरिजीने । तथा श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्मस्वामीजीने और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिमें श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजीने और श्रीप्रवचनसारोद्धारमें श्रीतपगच्छके पूर्वज श्रीनेमिचन्द्रसूरिजीने । तथा श्रीबृहत्कल्पवृत्तिमें श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्ति सूरिजीने इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर किया हैं जैसे बारे मासोकी गिनतीमें कोई न्यूनाधिक नहीं हैं तैसे ही अधिकमास होनेसे तेरहमासोंकी गिनतीमें भी कोई न्यूनाधिक नहीं हैं सभी ही बरो बर हैं सो उपरोक्त पाठोंसे प्रत्यक्ष दिखता विशेष करके अधिक मासकोभी मुहूर्त्तोंमें, दिनोंमें, मासोंमें वर्षोंमें, गिनकर पांचसंवत्सरोंके एकयुगकी के दिनोंका, पक्षोंका, मासोंका, वर्षोंका प्रमाण ... गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्यों ने और श्री तथा श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोंने कहा है सो

आत्मार्थी जिनाज्ञाके आराधक पुरुषोंको प्रमाण करने योग्य है।

इस संसारको अनन्ते काल हो गये हैं जिसमें अनन्त चौवीशी व्यतित हो गई चन्द्र सूर्य्यादिके विमान भी अनन्त कालमें मरू है इस लिये जैनज्योतिष भी अनन्ते कालमें प्रचलित हैं जिसमें अधिक मास भी अनन्ते कालमें चला आता हैं—मास वृद्धिके अभावसें बारह मासके संवत्सरका नाम चन्द्र संवत्सर हैं और मासवृद्धि होनेसें तेरहमासकी गिनतीके कारणसें संवत्सरका नाम अभिवर्द्धित संवत्सर हैं तीन चन्द्रसंवत्सर और दोय अभिवर्द्धित संवत्सर इन पांच संवत्सरोंसें एकयुग होता हैं एकयुगमें पांच संवत्सरोंके बासठ (६२) मासोंकी बासठ (६२) पुर्णिमासी और बासठ (६२) अमावस्याके एकसो चौवीश (१२४) पर्व्वोंकि अर्थात् पाक्षिक अनन्त तीर्थंङ्करादिकोंनें कही हैं जिसमें अनन्तकाल हुए अधिकमासकी गिनती दिन, पक्ष, मास, वर्षादिमें चली आती हैं किसीने भी अधिकमासकी गिनतीका एकदिन मात्र भी निषेध नही किया हैं तथापि बड़े अफसोस की बात हैं कि, वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमास की गिनती बड़े जोरके साथ वारंवार निषेध करके एकमासके ३० दिनोंकी गिनती एकदम छोड़ देते हैं और श्रीअनन्त तीर्थंङ्कर महाराजोंकी श्रीगणधर महाराजोंकी श्रीपूर्वधर पूर्वाचार्य्योंजी की तथा इनलोगोंके माने पूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविकाचार्य्योंजी की आज्ञा भङ्गका भय नही करते हैं और श्रीअनन्त तीर्थंङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंजी की आज्ञा मुजब वर्तमानमें श्रीखरतरगच्छादिवाले अधिक-

मासकों प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर करते हैं जिन्होंकों आज्ञा भङ्गका मिथ्या दूषण लगाके उलटा निषेध करते हैं फिर आप आज्ञाके आराधक बनते हैं यह कितनी बड़ी आश्चर्य्यकी बात हैं ।

श्रीअनन्त तीर्थङ्करादिकोंने अधिकमासको गिनतीमें प्रमाण किया हैं इसलिये जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुष कदापि निषेध नही कर सकते हैं तथापि वर्तमानमें जो अधिक मासको गिनतीमें निषेध करते हैं जिन्होंकों श्रीतीर्थंङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपने पूर्वजोंकी आज्ञाभङ्गके सिवाय और क्या लाभ होगा सो निर्पक्षाती आत्मार्थी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगें ।

प्रश्नः—अजी तुम तो श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंजी की शास्त्रिनें अधिकमासको दिनोंमें पक्षोंमें, मासोंमें, वर्षोंमें, गिनती करनेका प्रत्यक्षप्रमाण उपरोक्त शास्त्रोंके प्रमाणसे दिखाया हैं परन्तु वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमास तो एककाल चूलारूप हैं इसलिये गिनतीमें नही लेना एसा कहते हैं सो कैसें ।

उत्तरः—भो देवानुंप्रिये वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमासको कालचूला कहके गिनतीमें निषेध करते हैं सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि अधिकमासको कालचूला किस कारणसे कही हैं जिसका अभिप्राय और कालचूला कहनेसें भी [illegible] गिनती [illegible] योग्य हैं तथा [illegible] दिखी [illegible] आराधन [illegible]

और गिनती भी करनें योग्य है जिसका कारण शास्त्रोंके प्रमाण सहित दिखाते हैं श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रकी चूर्णि श्रीमोहनलालजी महाराजके सुरतका ज्ञानभंडारसें आई थी जिसके प्रथम उद्देशेके पृष्ठ २१ में सत्पाठ—

इयाणिं चूलेति दारं ॥ णाम ठवणा गाहा णिरकेव गाहा ॥ कंठा ॥ णाम ठवणाउमयाउ दव्वचूला दुविहा आगमतो णो आगमतोय आगमउ जाणए अणुवउत्ते णो आगमतो जाणय भव्वसरीरं जाणयभव्वसरीरवइरित्ता तिधा य दव्वचूला गाहा पुव्वद्धं ॥ कंठं ॥ पढमो चसद्दो घधारणे चिंतिउत्त सुहुये पुव्वद्धे जहा संखंमि ॥ उदाहरणा ॥ सचित्तचूड़ा कुक्कुटचूला सा मंसपेसी चेव केवला लोकप्रतिता मीसाचूहा मोरसिहा तस्स मंसपेसीए रोमाणि भवंति अचित्ता चूला मणीकुंतगा वा आदिसद्दाउ सीहकण्ण पासाद थूभअग्गाणि ॥ दव्वचूलागता ॥ इदाणिं खेत्तचूला सा तिविहा ॥ अह तिरिय उड्ढ । गाहा ॥ अह इति अधोलोकः तिरिय इति तिरियलोकः उड्ढ ॥ इति ऊर्द्ध्वलोकः लोगस्स सद्दो पत्तेगं चूला इति सिहा-होंति । भवति । इमाइति प्रत्यक्षो तु सद्दो सेवावधारणे अहोलोगा होण पच्छद्धेण जहा संखं उदाहरणा सीमंतग इति सीमंतगो णरगो रयणप्पभाय पुढवीए पढमो सो अह लोगस्स चूला । मंदरोमेरु सो तिरियलोगस्स चूलातिक्रान्तत्वात् अहवा तिरिय लोगपति ठियस्स मेरोवरि चत्तालीसं जोयणा चूला सो तिरिय लोगचूला चसद्दो समुच्चये पाय पूरणे वा इसिति अप्पभावे पद्दति प्रायो वृत्याभार इति भारक्कंतस्स पुरिसस्स गायं पाय सो इसिणयं भवति जाव एयं ठितासा पुढवी

मासकों प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर करते हैं जिन्होंकी आज्ञा भङ्गका मिथ्या दूषण लगाके उलटा निषेध करते हैं फिर आप आज्ञाके आराधक बनते हैं यह कितनी बड़ी आश्चर्य्यकी बात हैं।

श्रीअनन्त तीर्थङ्करादिकोंने अधिकमासको गिनतीमें प्रमाण किया हैं इसलिये जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुष कदापि निषेध नही कर सकते हैं तथापि वर्तमानमें जो अधिक मासको गिनतीमें निषेध करते हैं जिन्होंकों श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपने पूर्वजोंकी आज्ञाभङ्गके सिवाय और क्या लाभ होगा सो निर्पक्षाती आत्मार्थी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगें।

प्रश्नः—अजी तुम तो श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंजी की शास्त्रिमें अधिकमासको दिनोंमें पक्षोंमें, मासोंमें, वर्षोंमें, गिनती करनेका प्रत्यक्षप्रमाण उपरोक्त शास्त्रोंके प्रमाणसें दिखाया हैं परन्तु वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमास तो एककाल चूलारूप हैं इसलिये गिनतीमें नही लेना एसा कहते हैं सो कैसें।

उत्तरः—भो देवानुप्रिये वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमासको कालचूला कहके गिनतीमें निषेध करते हैं सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि अधिकमासको कालचूला किस कारणसें कही हैं जिसका अभिप्राय और कालचूला कहनेसें भी विशेष करके गिनती करने योग्य हैं तथा कालचूलाकी ओपमा बहुत उत्तम श्रेष्ठ शास्त्रकारोंने दिवी हैं सो इसको क्या कुल जैन श्वेतांबर जिनाज्ञाके आराधन करनेवाले आत्मार्थी सबी पुरुषोंकों मान्य करने योग्य हैं

और गिनती भी करने योग्य है जिसका कारण शास्त्रोंके प्रमाण सहित दिखाते हैं श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रकी चूर्णि श्रीमोहन-लालजी महाराजके सुरतका ज्ञानभंडारमें आई थी जिसके प्रथम उद्देशेके पृष्ठ २१ में तत्पाठ—

इयाणिं चूलेति दारं॥ णाम ठवणा गाहा पिरकेव गाहा॥ कंठा॥ णाम ठवणाउभयाउ दव्वचूला दुविहा आगमतो णो आगमतोय आगमउ जाणए अणुवउते णो आगमतो जाणय भवसरीरं जाणयभवसरीरवइरित्ता तिधा य दव्वचूला गाहा पुव्वद्धं॥ कंठं॥ पढमो यसद्दो वधारणे वितितउ समुचये पुव्वद्धे जहा संखंमि॥उदाहरणा॥ सचित्तचूड़ा कुक्कुटचूला या अंगपेसी चेव केवला लोकप्रतिता सीमाचूडा मोरसिहा तस्स मंसपेसीए रोमाणि भवति अचित्ता चूला मणीकुंतगा या आदिसद्दाउ सीहकण पासाद थूभअग्गाणि॥ दव्वचूलागता॥ इदाणिं खेत्तचूला सा तिविहा॥ अह तिरिय उड्ढ। गाहा॥अह इति अधोलोकः तिरिय इति तिरियलोकः उड्ढ॥ इति ऊर्द्ध लोकः लोगस्स सद्दो पत्तेगं चूला इति सिंहा-होति। भवति। इमाइति प्रत्यक्षो तु शब्दो क्षेत्रावधारणे अहोलोगा दीण पच्छद्धेण जहा संखं उदाहरणा सीमंतग इति सीमंतगो णरगो रयणप्पभाय पुढवीउ पढमो सो अह लोगस्स चूला।मंदरोमेरु सो तिरियलोगस्सचूलातिक्रान्तत्वात् अहवा तिरिय लोगपति ठियस्स मेरोवरि चत्तालीसं जोयणा चूला सो तिरिय लोगचूला वसद्दो समुच्चये पाय पूरणे वा इसित्ति अप्पभावे पहति प्राग्भो त्याभार इति भारक्रांतस्स पुरिसस्स गायं पायणो इसिणयं भवति जाव एयं ठिताओ पुढवी

७

इनिपभाराणाग इति एतमभिहाणं तस्स गाथ मन्नद्र गिद्रि विनाणाउ उयरिं वारसेहि जोयणेहिं भवति तेस मा अनुलोए भवति । गता खेत्तचूला । इयाणिं काल भावचूलाउ दोविण्ण गाहाए भणाति । अहिमामउदकाले। गाहा । वारममाण वरिसाउ अहिउमामो अहिमासउ अहिवड्ढिय वरिसे भवति सोय अधिकत्यात् कालचूला भवति तु सद्दोर्थप्य दरिसणेण केवलं अधिको कालो कालचूला भवति अंतो विवड्ढमाणो कालो कालचूलाए भवति एवं जहाउसप्पिणीए अंते अंति दूस ममाए मा उस्सप्पिणीए अंते कालस्स चूला भवति। कालचूला गता । इयाणिं भावचूला । भवणं भावः पर्याय इत्यर्थः॥ तस्स चूला भावचूला सोय दुविहा आगमउय णो आगमउय आगमउजाणए उवउत्तेण णो आगमउय इमावेव तुउद्दो । खउवसम भावविसेसेण दट्ठव्वो इमाइति । पकप्प भणरा चूला एग सद्दोवधारणे चूलेगठिता चूलात्तिवा विभूसणंति वा सीहरंति वा एंते एगठो॥ चूलेति दारंगयं॥ इति श्रीनिशीथसूत्रके पहिले उद्देशे की चूर्णिके पृष्ठ २२ तक

और भी १४४४ ग्रन्थकार सुप्रसिद्ध महान् विद्वान् श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीदशवैकालिकसूत्रके प्रथम चूलिकाकी वृहत्वृत्तिका पाठ सुनिये श्रीदशवैकालिकमूलसूत्र, अववूरि, भावार्थ,दीपिका और वृहत्वृत्ति सहित मुम्बईसें छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके पृष्ठ ६४० और ६४१का चूला विषयका नीचे पाठ जानो—यथा—

[illegible] आरभ्यते अनयोश्चायमभिसम्बन्धः । इहा ने भिक्षुगुणयुक्त एव भिक्षुरुक्तः सचैवं भूतोऽपि कर्मपरतन्त्रत्वात् [illegible] यतयत्वारतीदेरत

एतत् स्थिरीकरणं कर्तव्यमिति तदर्थाधिकारवच्चूडाद्वयमभि-
धीयते तत्र चूडाशब्दार्थमेवाभिधातुकाम आह॥ दव्वे खेत्ते काले,
भावम्मिअ चूलिआए निक्खेवो॥ तं पुण उत्तरतंतं, सुअ गहि-
अत्थं तु संगहणी ॥ २६ ॥ व्याख्या ॥ नाम स्थापनेतु क्षुण्णत्वा-
दनादृत्याह द्रव्ये क्षेत्रे काले भावे च द्रव्यादिविषयश्चूडाया
निक्षेपो न्यास इति। तत्पुनश्चूडाद्वयमुत्तरतन्त्रमुत्तरसूत्रम्
दशवैकालिकस्याचारपञ्चचूडावत् एतच्चोत्तरतन्त्रं श्रुतगृही-
तार्थमेव दशवैकालिकाख्य श्रुतेन गृहीतोऽर्थोऽस्येति विग्रहः
यद्येवमनर्थकमिदम्। नेत्याह सङ्ग्रहणी तदुक्तानुक्तार्थ-
संक्षेप इति गाथार्थं द्रव्यचूडादिव्याचिख्यासयाह॥ दव्वे
सच्चित्ताई, कुक्कुड चूडामणी मऊराई॥ खेत्तंमि लोगनिक्कुड
मंदरचूडा अ कूडाई ॥ २७ ॥ व्याख्या ॥ द्रव्य इति द्रव्यचूडा
आगम नोआगम ज्ञशरीरेतरादिव्यतिरिक्ता त्रिविधा स
चित्ताद्या। सचित्ता अचित्ता मिश्राच। यथा संख्यमाह—
कुक्कुट चूडा सचित्ता मणिचूडा अचित्ता मयूरशिखामिश्रा।
क्षेत्र इति क्षेत्रचूडा लोकनिष्कुटा उपरिवर्तिनः मन्दरचूडा
च पाण्डुकम्बला। चूडाश्चाध तदन्यपर्वतानां क्षेत्रप्राधा-
न्यात् आदिशब्दादधोलोकस्य सीमंतक. तिर्य्यग् लोकस्य
मन्दर ऊर्द्धलोकस्येषत्प्राग्भार इति गाथार्थ.॥ अइरित्त
अहिगमासा, अहिगा संवच्छरा अकालंमि॥ भावे खओवसम-
निए, दुवाउ चूडाणुणे अव्वा ॥ २८ ॥ व्याख्या॥ अतिरिक्ता
उचितकालात् समधिका अधिकमासका प्रतीताः अधिकाः
संवत्सराश्च षष्ट्यब्दाद्यपेक्षया काल इति कालचूडा भाव इति
भावचूडा क्षायोपशमिके भावे स्वयमेव द्विप्रकारा चूडा
मन्तव्या विशेषा क्षायोपशमिकत्वात्कृतस्येति गाथार्थः
तत्रापि प्रथमा रतिवाक्यचूडा इत्यादि।

इरिपभाराणाम इति एतमभिहाणं तस्स साय सव्व सिद्धि ६ विमाणाउ उवरिं वारसेहि जोयणेहिं भवति तेग मा वट्टलीए भवति । गता खेत्तचूला । इयाणिं काल भावचूलाउ दोविएग गाहाए भणति । अहिमासउकाले । गाहा । बारसमास वरिसाउं अहिउमासो अहिमासउ अहिवड्ढिय वरिसे भवति सोय अधिकत्वात् काउचूला भवति तु सद्दोर्थप्प दरिसणेड केवलं अधिको कालो कालचूला भवति अंतो विवड्ढमाणो कालो कालचूलाए भवति एवं जहाउसप्पिणीए अंते अंति दूस समाए मा उसप्पिणीए अंते कालस्सचूला भवति। कालचूला गता । इयाणिं भावचूला । भवणं भावः पर्याय इत्यर्थः॥ तस्स चूला भावचूला सोय दुविहा आगमउय णो आगमउय आगमउजाणए उवउत्तेण णो आगमउय इमावेव तुउद्दो । खउवसम भावविसेसेण दट्ठव्वो इमाइति । पकप्प भयग चूला एग सद्दोवधारणे चूलेगठिता चूलात्तिया विभूसणंति वा सीहरंति या एते एगठो॥ चूलेति दारंगयं॥ इति श्रीनिशीथसूत्रके पहिले उद्देशे की चूर्णिके पृष्ठ २२ तक

और भी १४४४ ग्रन्थकार सुप्रसिद्ध महान् विद्वान् श्री-हरिभद्रसूरिजी कृत श्रीदशवैकालिकसूत्रके प्रथम चूलिकाकी वृहत्वृत्तिका पाठ सुनिये श्रीदशवैकालिकमूलसूत्र, अवचूरि, भावार्थ, दीपिका और वृहत्वृत्ति सहित मुम्बईमें छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके पृष्ठ ६४० और ६४१का चूला विषयका नीचे मुजब पाठ जानो—यथा—

अधुनोधतवृद्दे आरभ्यते अनयोश्चायमभिसम्बन्धः । यहा नन्तराध्ययने भिक्षुगुणयुक्त एव भिक्षुरुक्तः सचैवं भूतोऽपि कदाचित् कर्मपरतन्त्रत्वात् कर्मणश्च बलवत्त्वात्सीदेत्त

क्षमाश्रमणजी महाराजके पट्टधरशिष्य श्रीशीलांगाचार्य्यजी महाराज भी महाप्रभाविक गीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है। इस लिये उपरके पाठ सर्व जैनश्वेतांबर आत्मार्थी पुरुषोंको प्रमाण करनें योग्य हैं उपरके पाठमें नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव सें, छ (६) प्रकारकी चूला कही हैं जिसमें नाम, स्थापना, तो प्रसिद्ध हैं और द्रव्य चूलादि की व्याख्या खुलासा कियी हैं कि,—द्रव्यचूला दो प्रकारकी प्रथम आगमरूप शास्त्रोंमें कही हुई और दूसरी नो आगम सो मति, अवधि, मनपर्यव, तथा केवल ज्ञानमें जानी हुई द्रव्य चूला सो भव्य शरीर अर्थात् ज्ञानीजी महाराज अपने ज्ञानसें पहलेसें ही देखके जानलेवें कि यह मनुष्य आगामी काले साधु आदि धर्मी पुरुष होने वाला हैं ऐसा जो मनुष्य का शरीर जिसको द्रव्य चूला कहते हैं, कारण कि, इस संसारमें अनन्तीवार शरीर पाया परन्तु उत्तम पदवी पाने योग्य शरीर पाना बहुत मुश्किल हैं तथापि अब पाया जिससें धर्मप्राप्तिका योग्य होवे एसें शरीर को ज्ञानी महाराजनें भव्यशरीर कहा हैं सो उस शरीरको अनन्ते सब शरीरोंसें उत्तम कहो तथा श्रेष्ट कहो अथवा चूलारुप कहो सबोका तात्पर्य्य एकार्थेका हैं—और भी प्रसिद्ध द्रव्य चूला तीनप्रकारकी कही है जिसमें प्रथम कुक्कुट (मुरगा) के मस्तक उपर शिखररुप मांसपेसी सहित होनेसें उसीकों सचित्तचूला कही जाती हैं तथा दूसरी मोर (मयूर) के मस्तक उपर शिखररुप मांसपेसी और रोम सहित होनेसें उसीको मिश्र चूला कही जाती हैं और तीसरी मणि तथा कुम्भ और मुकुटादिकके उपर शिखररुप होवे उसीकों अचित्त

और भी श्रीजिनभद्र गणिक्षमाश्रमणजी महाराज युग-
प्रधान महाप्रभाविक प्रसिद्ध हैं जिन्होंके शिष्य श्रीशीलाङ्का-
चार्य्यजी भी महाविद्वान् श्रीआचाराङ्गादि ११ अङ्गरूप
सूत्रोंकी टीका करनेवाले प्रसिद्ध हैं जिसमें श्रीआचाराङ्गजी
तथा श्रीसूयगडाङ्गजी सूत्रकी टीका तो सुप्रसिद्धिसे वर्त रही
हैं और बाकी श्रीस्थानाङ्गजी आदि नवसूत्रोंकी टीका
विच्छेद होगई थी जिसमें श्रीअभयदेवसूरिजीने दूसरी बार
बनाई है सो प्रसिद्ध है श्रीशीलाङ्काचार्य्यजी विक्रम संवत्
६५७ के लगभग हुये हैं सो श्रीआचाराङ्गजी सूत्रकी व्याख्या
रूप टीका करते हूए श्रुतस्कन्धकी व्याख्याके आदिमें ही
मङ्गलका विस्तार किया है परन्तु यहाँ थोड़ासा लिखता
हुं श्रीमकसूदाबाद निवासी धनपतिसिंह बहादुरकी तरफ
से श्रीआचाराङ्गजी मूलसूत्र, भावार्थ, दीपिका और वृहद्
वृत्ति सहित छपके प्रसिद्ध हुआ है जिसके दूसरा श्रुतस्कन्धके
पत्र ४थे में मङ्गलविषयका थोड़ासा पाठ नीचे मुजब जानो
यथा—

मङ्गलस्य निक्षेपः नामादिः षड्विधः नामस्थापने सुगमे
द्रव्यमङ्गलं व्यतिरिक्तं भणितम् कुङ्कुमम् अविधवा [illegible]
मङ्गलनिमित्तम्, क्षेत्रमङ्गलं [illegible] कालमङ्गलं
[illegible] भावमङ्गलं क्षायोपशमिक-
भावनिष्पन्नत्वात् तथा (इसके पहले तीसरे पृष्ठमें) कालाय-
[illegible] शब्दः परिमाणवाचक इत्यादि—
देखो [illegible] श्रीजिनदत्तसूरिजी
[illegible] प्रसिद्ध है तथा श्रीहरिभद्र सूरिजी भी
[illegible] प्रसिद्ध हैं और श्रीजिनभद्रगणि

क्षमाश्रमणजी महाराजके पट्टधरशिष्य श्रीशीलांगाचार्य्यजी महाराज भी महाप्रभाविक गीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है। इस लिये उपरके पाठ सर्व जिनश्वेतांबर आम्नायी पुरुषोंको प्रमाण करने योग्य हैं ऊपरके पाठमें नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव सें, छ (६) प्रकारकी चूला कही हैं जिसमें नाम, स्थापना, तो प्रसिद्ध हैं और द्रव्य चूलादि की व्याख्या खुलासा कियी हैं कि,—द्रव्यचूला दो प्रकारकी प्रथम आगमरूप शास्त्रोंमें कही हुइ और दूसरी नो आगम सो मति, अवधि, मनपर्यव, तथा केवल ज्ञानमें जानी हुइ द्रव्य चूला सो भव्य शरीर अर्थात् ज्ञानीजी महाराज अपने ज्ञानसें पहलेसें ही देखके जानलेवें कि यह मनुष्य आगामी काले साधु आदि धर्मी पुरुष होने वाला हैं एसा जो मनुष्य का शरीर जिसको द्रव्य चूला कहते हैं, कारण कि, इस संसारमें अनन्तीवार शरीर पाया परन्तु उत्तम पदवी पाने योग्य शरीर पाना बहुत मुश्किल हैं तथापि भव पाया जिसमें धर्मप्राप्तिका योग्य होवे एसें शरीर को ज्ञानी महाराजने भव्यशरीर कहा हैं सो उस शरीरको अपनी सब शरीरोंमें उत्तम कहो तथा श्रेष्ट कहो अथवा चूलारूप कहो सबोंका तात्पर्य्य एकार्थका हैं—और भी प्रसिद्ध द्रव्य चूला तीनप्रकारकी कही है जिसमें प्रथम कुक्कुट (मुरगा) के मस्तक उपर शिखररूप मांसपेसी सहित होनेसें उसीको सचित्तचूला कही जाती हैं तथा दूसरी मोर (मयूर) के मस्तक उपर शिखररूप मांसपेसी और रोम सहित होनेसें उसीको मिश्रचूला कही जाती हैं और तीसरी मणि तथा कुंभ और मुकुटादिकके उपर शिखररूप होवे उसीको अचित्त

पूज्या कही जाती हैं इन्होंकों चूलाकी ओपमा देनेका यही कारण है कि सब अवअवयोंसें विशेष सोभाकारी सुन्दर उत्तम होनेसें शिखरजी अर्थात् चूलाकी ओपमा शास्त्रकारोंने दिवी हैं, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरकों गिनतीमें करके प्रमाण करनें योग्य हैं, द्रव्यनिक्षेपावत् अर्थात् रावण तथा श्रेणिकादि सभी द्रव्य निक्षेपेमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पावेंगे तब भाव निक्षेपेमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें हैं सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जावेगा । द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य हैं ।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही हैं जिसमें प्रथम अधोलोककी क्षेत्रचूला पृथ्वीके [illegible] नरकावासा अधो- [illegible] को [illegible] है जिसीकों अधोलोक चूला कही जाती है तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोककी सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत है जिसीकों तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि [illegible] प्रमाण ऊंचा १००० योजनका है परन्तु मेरुपर्वत भी एक लक्ष योजनका होनेसें तिर्यग्लोककों भी [illegible] ([illegible]) करके ऊंचा चला गया इस लिये [illegible] विमान होनेसें [illegible] [illegible] है तथा [illegible] ४० योजनकी चूलीका [illegible] गिनी जाती है [illegible] [illegible] [illegible]

तीमें नहीं छुटसकता हैं और तीसरी ऊर्द्ध (ऊंचा) लोकमें
थे सिद्धि विमानसें बारह योजन पर ईषत्प्राग्भारा
पृथ्वी जो सिद्धशिला ४५००००० लक्ष योजन प्रमाणे लंबी
: चौड़ी हैं तथा बीचमें आठ योजन की जाड़ी हैं जिसके
(श्रीअनन्त सि भगवान् विराजमान हैं एसी जो
। शिला सो ऊर्द्धलोकके शिरारूप होनेसें चूलामें गिनी
ी हैं यह क्षेत्रचूला भी प्रमाण करके गिनतीमें करनें
य हैं।

और कालचूला उसीको कहते हैं कि जो बारह चन्द्र
सोंसें चन्द्रसंवत्सर एकवर्ष होता हैं जिसका उचितकाल
उसमें भी एक अधिक मासकी वृद्धि होकर बारह
सोंके उपर पड़ता हैं सो लोकोंमें प्रसिद्ध भी हैं और
नादि कालसें अधिकमासका एसाही स्वभाव है सो प्रमाण
रनें योग्य हैं और अधिकमास ज्यादा पड़नेसें संवत्सरका
म भी अभिवर्द्धित होजाता हैं बारहमासोंका कालके
उपररूप अधिकमास ज्यादा होनेसें उसको कालचूला कही
ाती है तथा जैन ज्योतिषके शास्त्रोंसें साठ (६०) वर्षोंकी
पेक्षासें एक वर्षकी भी वृद्धि होती थी जिसकों भी काल-
ूला कहते हैं और उत्सर्पिणिके अन्तमें भी जो काल वर्त्ते
तिभी कालचूलामें गिना जाता है तथा कालचूलारूप जो
अधिकमास है उसीको प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर करना
चाहिये क्योंकि अधिकमासको कालचूलाकी जो ओपमा है
सो निषेधकवाची नहीं है किन्तु विशेष शोभाकारी उत्तम
होनेसें अवश्य ही गिनती करनेके योग्य है। तथापि
वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले जो महाशय अधिकमास को

सो विभूषण कहो, शोभारूप कहो, शिखररूप कहो, विशेष सुन्दरता मुगटरूप कहो अथवा चूलारूप कहो, सब मतलबका तात्पर्य्य एकार्थका हैं इसलिये गिनती करने योग्य है और जैसें द्रव्य, भाव, नाम, स्थापनासें चार निक्षेपे कहे हैं सो मान्य करने योग्य है तथापि द्रव्य, स्थापनादि का निषेध करने वालोंकों (श्रीखरतरगच्छवाले तथा श्रीतप-गच्छादि वाले सर्व धर्म्मबन्धु) मिथ्यात्वी कहते हैं तैसे ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावसे जो चूला कही है सो अनादि-कालसे प्रवर्त्तना सरू हैं श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंने प्रमाण कियी है सो आत्मार्थियोंकों प्रमाण करके मान्य करने योग्य है तथापि क्षेत्रकालादि चूलायोंकों गिनतीमें मान्य नही करते उलटा निषेध करते हैं और जो मान्य करते हैं जिन्होंको दूषण लगाते हैं ऐसे श्रीतीर्थङ्करादि महाराजों के विरुद्ध वर्तने वाले विद्वान् नामधारक वर्त्तमानिक महा-शयोंको आत्मार्थी पुरुष क्या कहेंगे जिसका निष्पक्षपाती श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके पाठक वर्ग स्वयं विचार लेवेंगे—

और अधिक मासको [illegible] *कहनेसे भी गिनतीमें*
निषेध कदापि नही हो [illegible]
प्रमाणोंमें [illegible]
अवश्यमेव [illegible] प्रमाण [illegible]
सिद्धान्त [illegible]
गिनती [illegible]

अवसरमें अधिक मासका विचार न्यारा नही करेंगे, इस वास्ते अधिक मासकों कालचूला कहते है]।

उपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि—प्रथमतो जैन सिद्धान्त समाचारीकारनें निशीथ सूत्रके नामसें चूलाका पाठ लिखा है सो सूत्रमें बिलकुल नही है किन्तु निशीथ सूत्रकी चूर्णिमें जिनदास महत्तराचार्य्यजीने चूलासम्बन्धी व्याख्या कियी है और दशवैकालिक सूत्रकी वृत्तिके पाठका नाम लिखा सोभी नही है किन्तु दशवैकालिक सूत्रकी प्रथम चूलिका की वृहत् वृत्तिमें पाठ हैं और उपरमें जो चूला चातुर्विध्यं इत्यादि पाठ लिखा है सो न तो चूर्णिकारका है और न वृत्तिकारका है क्योंकि चूर्णिकारनें और वृत्तिकारनें द्रव्यचूला, आगम नो आगमसे भव्यशरीर और सचित्त, अचित्त, मिश्र, तथा क्षेत्रचूला भी लिखिला और मेरुपर्वत अथवा मेरुचूलिका इत्यादि कालचूला भाव चूलाकी विस्तारसे व्याख्या कियी हैं सो हम उपरमें सम्पूर्ण पाठ लिख आये हैं। जिसकी और जैनसिद्धान्त समाचारी कारका लिखा पाठको वांचकवर्ग आपसमें मिलायेंगे तो सर्व मालुम हो सकेगा कि जैनसिद्धान्त समाचारीकारने जो पाठ लिखा है सोनिके [illegible] ही है क्योंकि हमने उपरमें सम्पूर्ण पाठ [illegible]

[illegible]

कि सिद्धान्त रचनाकारों करके (यथा निशीथे दशवैकालिक चूर्णौ च—इन शब्दोंसे जैसे निशीथ सूत्र विषे और दशवैकालिक चूर्णिविषे है वैसे दिखाते हैं) पुनः तिसके थोरे अंशोंको शास्त्रके साथ लिख दिखाये परन्तु शास्त्रकारोंका अभिप्राय सार नही लिखा पुनः करना आत्मार्थी उत्तम पुरुषको योग्य नहीं है और पाठका भावार्थ लिखे बाद पूर्वापर सम्बन्धके बाहर लिखा है जिन्में भी शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप बिलकुल सर्वथा अनुचित लिख दिया है क्योंकि (पूर्वापरके पदार्थोंके साथ सम्बन्ध का विचार करना होवे सो उन पदार्थोंमें चूला न्यारी नही गिनी जाती है) इस वास्ते करके चूलाकी गिनती भिन्न नही करनी कहते हैं सो भी मिथ्या है, क्योंकि शास्त्रकारों में चूला की गिनती भिन्न करके मूलके साथ मिलाई है सोही दिखाते है कि-देखो जैसे श्रीमन्त्राधिराज महामङ्गलकारी श्रीपरमेष्टि मन्त्रमें मूल पांचपदके ३५ अक्षर है तथा चार चूलिका के ३३ अक्षर हैं सो मूलके साथ मिलाने में नवपदोंमें चूलिकाओं सहित ६८ अक्षरका श्रीनवकार परमेष्टि मन्त्र कहा जाता है और श्रीदशवैकालिकजी मूलसूत्रके दश अध्ययन है तथा दो चूलिका है जिनको भी शास्त्रकारोंने अध्ययन रूप ही मान्य किवी है और निर्युक्ति, चूर्णि, अवचूरि, बृहद्-वृत्ति, लघुवृत्ति, शब्दार्थवृत्ति वगैरह सबी व्याख्याकारोंने जैसें दश अध्ययनोंका अनुक्रमे सम्बन्ध मिलायके व्याख्या किवी है तैसें ही दो चूलिकारूप अध्ययनकी भी अनुक्रमजिका सम्बन्ध मिलायके व्याख्या किवी है और व्याख्यायोंके श्लोकोंकी संख्या भी चूलिकाके साथ शामिल करनेमें आती

है एसे ही श्रीआचारांगजीकी चूलिका, श्रीव्यवहार सूत्रजी की चूलिका, श्रीमहानिशीथसूत्रकी चूलिका वगैरह सबी चूलिकायोंकी गिनती शास्त्रोंके साथ श्लोकोंकी संख्यामें आती है तथा व्याख्यानावसरमें भी चूलिका साथ सूत्र बांचनेमें आता है। परन्तु चूलिकाकी गिनती नही करनी एसे तो किसी भी जैन शास्त्रमें नही लिखा हैं इस लिये जो जो चूलावाले पदार्थ है उसीके प्रमाणका विचार और गिनतीका व्यवहारमें चूलाका प्रमाण सहित गिना जाता हैं और शेष चूलाके विषयमें जैनसिद्धान्त समाचारीकारनें लिखा है कि (जैसे मेरुका लक्षयोजनका प्रमाण कहेंगें तब चूलिकाका प्रमाण भिन्न नही गिनेंगे) इन अक्षरोंको लिखके मेरुपर्वतके उपर जो चालीस योजनके प्रमाणवाली चूलिका है। जिसके प्रमाणकी गिनती मेरुसे भिन्न नही कहते हैं सोभी अनुचित है क्योंकि शास्त्रोंमें मेरुके लक्ष-योजनका प्रमाण तथा चूलिकाका चालीस योजनका प्रमाण चूलाका पृथक् भिन्न कहा है सोही दिखाते हैं कि—शास्त्र जैन सिद्धान्त समाचारीकारके ही परम पूज्य श्रीरत्नशेखर [illegible] लघुक्षेत्र समास नामा ग्रन्थ बनाया हैं सो गुजराती [illegible] सहित [illegible] श्रावक भीमसिंहमाणक की [illegible] प्रकरण रत्नाकरका चौथाभागमें छपके प्रसिद्ध है जिसके पृष्ठ [illegible] में मेरुकी [illegible]

[illegible]

निदवांत उपरे, चालीसयुक्ता केट, चालीस योजननी उंची,
अने, बार केट, वलूल तथा, मूलमां बारजवविपुला केट,
पूर्ने शिरे चार योजन पहोली अने उपर. चारयोजन
पहोली, तथा, वैडूर्यमये केट, वैडूर्यनामे जे नीलारत्न तेनी,
पर केट, प्रधान, चूला केट, चूलिका छे तेनी चूलिका
देहली छे, गिरिराजप प्रधान मेरुपर्वत केट, मोटेलीमा
वचन नरना चैत्यवट एटले जिन भवन तेणे करि महा-
शोभित छे इति गाथार्थ ॥ १११ ॥ उपरकी लेखनोपर
सूरिजी इस गाथाके पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे कि, प्रगट
इसमें सतयोजनका मेरुके उपरकी चूलिकाके चालीस योजन
का प्रमाण भिन्न लिखा है तथापि जैनसिद्धान्त समाचारीकार
भिन्न नहीं गिनना कहते हैं सो कैसे अंगीकार तथा और भी
पूर्णियें जो चूलिकाके प्रमाणको भिन्न नहीं गिनोंगे तो फिर
चूलिकाके उपर एक चैत्य है जिसमें १२० शाश्वती श्रीजिने-
श्वर भगवानकी प्रतिमाजी है उन्होंकी गिनती कैसे करोगे
क्योंकि मेरुमें तो १६ चैत्य कहे है जिसमें १९२० प्रतिमाजी
है। तथा एक चूलिकाके चैत्यकी १२० प्रतिमाजीकी गिनती
शास्त्रकारोंने भिन्न किवी है सो, जगतमें प्रसिद्ध है। इस लिये
चूलिकाकी गिनती अवश्यमेव करनी योग्य है तथापि जो
मेरुके चूलिकाकी गिनती भिन्न नहीं करते हैं जिन्होंको
एक चैत्यकी १२० शाश्वती जिन प्रतिमाजीकी गिनतीका
निषेधके दूषणकी प्राप्ति होनेका प्रत्यक्ष दिखता है।

और भी आगे कालचूलाके विषयमें जैन सिद्धान्तसमा-
चारीके कर्ताने ऐसे लिखा है कि (जैसे अङ्गुलोंके विचारमें
और वर्षके विचार करनेके अवसरमें अधिक मासका विचार

श्रीआत्मारामजी ठहरे, आप कोई कार्य्य करना अथवा आप आज्ञा देकर कोई कार्य्य कराना सो भी बरोबर है जिससे मैंने श्रीआत्मारामजीका नाम लिखा है इसी न्यायसे श्रीधर्म्मविजयजीका भी नाम जानो—कदाचित् कोई ऐसा कहेगा कि गुरु महाराजकी आज्ञाविनाही प्रसिद्ध कर दियी होगी तो इसपर मेरा इतनाही कहना है कि गुरु महाराजकी आज्ञा विना जो कोई भी कार्य्य शिष्य करे तो उसको गुरु आज्ञा विराधक अविनित तथा अनन्तसंसारी शास्त्रकारोंने कहा हैं ऐसेको हितशिक्षारूप प्रायश्चित्त दिया जाता हैं तथापि अविनित पनेसें नही माने तो अपने गच्छसे अलग करनेमें आता है सो बात प्रसिद्ध है इसलिये जो श्रीआत्मारामजीकी आज्ञासे जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तक तथा श्रीधर्म्मविजयजीकी आज्ञासे पर्युषणा विचारकी पुस्तक प्रसिद्ध हुई होवे तब तो उस दोनो पुस्तकमें शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उत्सूत्रभाषणरूप अनुचित बाते लिखी है जिसके मुख्य लाभार्थी दोनो गुरुजन है इसी अभिप्रायसे मैंने भी दोनो गुरुजनके नाम लिखे हैं—

और अब उपरोक्त महाशयोंके लिखे लेखोंकी समीक्षा करते हैं जिसमें प्रथम इस जगह श्रीविनयविजयजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी सुबोधिका (सुखबोधिका) वृत्तिविशेष करके श्रीतपगच्छमें प्रसिद्ध हैं तथा वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके साधु आदि प्रायः सब कोई शुद्ध श्रद्धापूर्वक सरल जानके उसीको हर वर्षे गांव गांवके विषे श्रीपर्युषणापर्वमें वांचते हैं जिसमें अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये लिखा हैं जिसको यहाँ लिखकर पीछे उसीमें जो अनुचित है

श्रीआत्मारामजी ठहरे, आप कोई कार्य्य करना अथवा आप आज्ञा देकर कोई कार्य्य कराना सो भी बरोबर है जिससे मैंने श्रीआत्मारामजीका नाम लिखा है इसी न्यायसे श्रीधर्म्मविजयजीका भी नाम जानो—कदाचित् कोई ऐसा कहेगा कि गुरु महाराजकी आज्ञाविनाही प्रसिद्ध कर दियी होगी तो इसपर मेरा इतनाही कहना है कि गुरु महाराजकी आज्ञा विना जो कोई भी कार्य्य शिष्य करे तो उसको गुरु आज्ञा विराधक अविनित तथा अनन्त संसारी शास्त्रकारोंने कहा है ऐसेको हितशिक्षारूप प्रायश्चित्त दिया जाता है तथापि अविनित पनेसें नही मानें तो अपनी गच्छसें अलग करनेमें आता है सो बात प्रसिद्ध है इसलिये जो श्रीआत्मारामजीकी आज्ञासे जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तक तथा श्रीधर्म्मविजयजीकी आज्ञासे पर्युषणा विचारकी पुस्तक प्रसिद्ध हुई होवे तब तो उन दोनों पुस्तकोंमें शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उत्सूत्रभाषणरूप अनुचित बातें लिखी है जिसके मुख्य आचार्य्य दोनों गुरुजन है इसी अभिप्रायसे मैंने भी दोनों गुरुजनके नाम लिखे हैं—

और अब उपरोक्त महाशयोंके लिखे लिखोंकी समीक्षा करते हैं जिसमें प्रथम तप गच्छके श्रीविनयविजयजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी [illegible] लिखा [illegible] करके श्री[illegible] प्रसिद्ध [illegible] लिख [illegible] साधु [illegible] कोई [illegible] सभीको [illegible] बने हैं

[illegible]

जिसकी समीक्षा करके दिखावुंगा जिससे आत्मार्थी प्राणि-योंको सत्यासत्यकी स्वयंमालुम हो सकेगा सौसुखबोधिका वृत्ति मेरे पास हैं जिसके पृष्ठ १४६ की दूसरी पुठीकी आदि से लेकर पृष्ठ १४७ की दूसरी पुठीकी आदि तकका नीचे मुजब पाठ जानो यथा—

अन्तरायियि अर्वागपि कल्पते परं न कल्पते तां रात्रिं भाद्रशुक्लपञ्चमी वखायणा विसएत्ति अतिक्रमयितुं तत्र परि-सामस्त्येन सयणं वसनं पर्युषणा सा द्वेधा गृहस्थज्ञाता गृहस्थै रज्ञाताच तत्र गृहस्थै रज्ञाता यस्यां वर्षायोग्य पीठफल-कादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते साचाषाढ़पूर्णिमायां योग्यक्षेत्राभावे तु पञ्च पञ्चदिन वृद्ध्या दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपद सितपञ्चम्या एवं गृहि-ज्ञाता तु द्वेधा सांवत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र सांवत्सरिक कृत्यानि॥संवत्सरप्रतिक्रान्ति१ लुञ्चनं२ चाष्टमं तपः ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजा च ४ संघस्य क्षामणं मिथः ५ ॥ १ ॥ एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रसितपञ्चम्यामेव कालिकाचार्यादेशा-च्चतुर्थ्यामपि केवलगृहिज्ञाता तु सा यत् अभिवर्द्धिते वर्षे चतुर्मासकदिनादारभ्य विंशत्यादिनैः वयमत्र स्थितास्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति। तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ़ो वर्द्धते नान्येमासा-स्तट्टिप्पनकंतु अधुना सम्यग् न ज्ञायते ततः पञ्चाशतैव दिनैः पर्युषणायुक्तेति वृद्धाः अत्र कश्चिदाह ननु श्रावणवृद्धौ श्रावणसित चतुर्थ्यामेव पर्युषणायुक्ता नतु भाद्रसितचतुर्थ्यां दिनानामशीत्यापत्तेः। सामाणं सवीसइराए मासेवइक्कंते इति वचनबाधा स्यादिति चेन्मैवं अहो देवानां प्रिय एवमाश्विन-

श्रीआत्मारामजी ठहरे, आप कोई कार्य्य करना अथवा आप आज्ञा देकर कोई कार्य्य कराना सोभी बरोबर है जिससे मैंने श्रीआत्मारामजीका नाम लिखा है इसी न्यायसे श्रीधर्म्मविजयजीका भी नाम जानो—कदाचित् कोई ऐसा कहेगा कि गुरु महाराजकी आज्ञाविनाही प्रसिद्ध कर दिवी होगी तो इसपर मेरा इतनाही कहना है कि गुरु महाराजकी आज्ञा विना जो कोई भी कार्य्य शिष्य करे तो उसको गुरु आज्ञा विराधक अविनित तथा अनन्तसंसारी शास्त्रकारोने कहा हैं ऐसेको हितशिक्षारूप प्रायश्चित्त दिया जाता है तथापि अविनित पनेसें नही माने तो अपने गच्छसे अलग करनेमें आता है सो बात प्रसिद्ध है इसलिये जो श्रीआत्मारामजीकी आज्ञासे जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तक तथा श्रीधर्म्मविजयजीकी आज्ञासे पर्युषणा विचारकी पुस्तक प्रसिद्ध हुई होवे तब तो उन दोनो पुस्तकमें शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उत्सूत्रभाषणरूप अनुचित बातें लिखी है जिसके मुख्य लाभार्थी दोनो गुरुजन है इसी अभिप्रायसे मैंने भी दोनो गुरुजनके नाम लिखे हैं—

और अब उपरोक्त महाशयोंके लिखे लेखोंकी समीक्षा करते हैं जिसमें प्रथम इस जगह श्रीविनयविजयजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी सुबोधिका (सुखबोधिका) वृत्तिविशेष करके श्रीतपगच्छमें प्रसिद्ध हैं तथा वर्तमानिक श्रीतपगच्छके साधु आदि प्रायः सब कोई गुरु श्रद्धापूर्वक सरल जानके उसीको हर वर्षे गांव गांवके विषे श्रीपर्युषणापर्व्वमें बांचते हैं जिसमें अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये लिखा है जिसको यहाँ लिखकर पीछे उसीमें जो अनुचित है

जिसकी समीक्षा करके दिखावुंगा जिससे आत्मार्थी प्राणि-योंको सत्यासत्यकी स्वयंमालुम हो सकेगा श्रीसुखबोधिका वृत्ति मेरे पास है जिसके पृष्ठ १८६ की दूसरी पुठीकी आदि से लेकर पृष्ठ १८७ की दूसरी पुठीकी आदि तकका नीचे मुजब पाठ जानो यथा—

अन्तराऽपियसे अर्वागपि कल्पते परं न कल्पते तां रात्रिं भाद्रशुक्लपञ्चमी रात्रिं अतिक्रमयितुं तत्र परि-णामकल्पेन अपस्य श्रमणं पर्युषणा सा द्वेधा गृहस्थज्ञाता गृहस्थै-रज्ञाताश्च तत्र गृहस्थै रज्ञाता यस्यां वर्षायोग्य पीठफल-कादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते साचाषाढ़पूर्णिमायां योग्यक्षेत्राभावे तु पञ्च पञ्चदिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपद सितपञ्चम्यां एवं गृहि-ज्ञाता तु द्वेधा सांवत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र सांवत्सरिक कृत्यानि॥संवत्सरप्रतिक्रान्ति१ लुञ्चनं२ चाष्टमं तपः ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजा च ४ संघस्य क्षामणं मिथः ५ ॥ १ ॥ एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रसितपञ्चम्यामेव कालिकाचार्यादेशा-च्चतुर्थ्यामपि केवलगृहिज्ञाता तु सा यत् अभिवर्द्धिते वर्षे चतुर्मासकदिनादारभ्य विंशत्यादिने. वयमत्र स्थितास्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति। तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यत स्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढो वर्द्धते नान्येमासा-स्तट्टिप्पनकंतु अधुना सम्यग् न ज्ञायते ततः पञ्चाशतैव दिनैः पर्युषणायुक्तेति वृद्धाः अथ कश्चिदाह ननु श्रावणवृद्धौ श्रावणसित चतुर्थ्यामेव पर्युषणायुक्ता नतु भाद्रसितचतुर्थ्यां दिनानामशीत्यापत्तेः। श्रमणं भगवंमहावीरए मासेवइक्कंते इति वचनबाधा स्यादिति चेन्मैवं अहो देवानां प्रिय एवमाश्विन-

यृद्धौ चतुर्मासककस्य माश्विनसितचतुर्दश्यां कर्तव्यं स्यात् कार्तिकसितचतुर्दश्यां करणे तु दिनानां शतापत्त्या ॥ समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिराइंदिएहिं॥ इति समवायांगवचनबाधा स्यात् । न च वाच्यं चतुर्मासकानां ही आषाढादिमासप्रतिबद्धानि तस्मात्कार्तिकचतुर्मासिकं कार्तिकसितचतुर्दश्यामेव युक्तं दिनगणनायां त्वधिकमासः कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां सप्ततिरेवेति कुतः समवायांगवचनबाधा इति यतो यथा चतुर्मासकानि आषाढादिमास प्रतिबद्धानि तथा पर्युषणापि भाद्रपदमास प्रतिबद्धा तत्रैव कर्त्तव्या दिनगणनायां त्वधिकमासः कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशदेव कुतोऽशीतिवार्तापि न च भाद्रपदप्रतिबद्धं तु पर्युषणा अयुक्तं बहुष्वागमेषु तथा प्रतिपादनात् ॥ तथाहि ॥ "अन्नया पज्जोसवणादिवसे आगए अज्जकालगेण सालवाहणो भणिओ, भद्दवयजुण्ह पंचमीए पज्जोसवणा" ॥ इत्यादि॥ पर्युषणाकल्पचूर्णौ तथा "तत्थ य सालवाहणो राया, सो अ सावगो, सो अ कालगज्जं इंतं सोऊण निग्गओ, अभिमूहो समणसंघो अ, महाविभूईए पविट्ठो कालगज्जो, पविट्ठेहिं अ भणिअं, भद्दवयसुद्धपंचमीए पज्जोसविज्जइ, समणसंघेण पडिवण्णं, ताहे रण्णा भणिअं, तद्दिवसं मम लोगाणुवत्तीए इंदो अणुजाणेयव्वो होहिति साहू चेइए अणुपज्जुवासिस्सं, तो छट्ठीए पज्जोसवणा किज्जइ, आयरिएहिं भणिअं, न वट्टति अतिक्कमितुं, ताहे रण्णा भणिअं,ता अणागए चउत्थीए पज्जोसविज्जति, आयरिएहिं भणिअं, एवं भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोसविअं एवं जुगप्प- हिं कारणे चउत्थी पवत्तिआ, सा चेवाणुमतासव्वसाहू-

त्मित्यादि न चोतिसोक्तपूर्वो दृष्टान्तोऽत्र एवं यत्र पुनरपि
पर्युषणानिरूपणम् तत्र भाद्रपदविशेषितमेव ननु श्रावणमे
भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां पर्युषितव्यं इति पाठवत् अभिवर्द्धित
वर्षे श्रावणशुक्लपञ्चम्यां पर्युषितव्यमिति पाठ उपलभ्यते
ततः कार्त्तिकमासप्रतिबद्ध चतुर्मासिक कृत्य करणे यथा
कार्त्तिकमासः प्रमाणं तथा भाद्रमासप्रतिबद्ध पर्युषणाकरणेऽपि
भाद्रपदमासः प्रमाणमिति त्यजकदाग्रहम् ।

चौतिसपविकृतदर्शी इस सुवर्णके पाठका संक्षिप्त भावार्थः—
समानत विधर्मेति इत्यादि शब्दसे आषाढ़पूर्णिमासे पचासमें
दिन भाद्रपद शुक्ल पञ्चमी जिनके अन्तरमें कारण योगे पर्यु-
षणा करना कल्पे परन्तु पञ्चमीको उल्लङ्घन करना नहीं कल्पे
वर्षाकालमें सर्वथा एकस्थानमें निवास करना सो पर्युषणा-
जिसमें योग्यक्षेत्रके अभावसे पांच पांच दिनकी वृद्धि करते
दशपर्वतिथिमें यावत् पचासमें दिन भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको
परन्तु चौमासकालमें जो चतुर्थी को गृहस्थी लोगोंको
साधुके वर्षाकालका निवास अर्थात् पर्युषणाकी मालुम होती
थी सो चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासे परन्तु मास वृद्धि होनेसें
अभिवर्द्धितनाम संवत्सरमें वीशदिने गृहस्थीलोगोंको साधुके
निवास (पर्युषणा) की मालुम होती थी सो जैन टिप्पनाके
अनुसारे युगयुगके मध्यमें पौषकी तथा अन्तमें आषाढ़की
वृद्धि होती थी इसके सिवाय और मासोंके वृद्धिका अभाव था
तब चन्द्रमें पचास दिनका तथा अभिवर्द्धितमें वीशदिनका
नियम था, परन्तु अब वर्त्तमानकाले जैन टिप्पना नहीं वर्त्तता
है तथा लौकिक टिप्पनामें हरेकमासोंकी वृद्धि होती है इस
लिये—पंचाशतैवदिनैः पर्युषणायुक्तेति वृथा.—अर्थात् इस

कालमें मास वृद्धि हो अथवा न हो परन्तु पचा
षणा करना योग्य है ऐसे वृद्धाचार्य्य कहते हैं यहाँ
हूँ कि इस न्यायानुसार वर्तमान कालमें जब
होते हैं तब तो पचास दिनकी गिनतीसे दूजा
चौथके दिन पर्युषणा करना योग्य है परन्तु
होते भी भाद्रव सुदी चौथके दिन पर्युषणा करना
है क्योंकि ८० दिन होजावेंगे, और श्रीकल्पसूत्र
सवीसइराए मासे वीइक्कते-अर्थात् आषाढ़ चौमा
मास और वीशदिन उपर, कुल पचाशदिन जाने
कहा है तथापि ८० दिने करनेसें सूत्रका इस वाक्य
आती हैं इस लिये ८० दिने पर्युषणा करना योग्य
ऐसा प्रश्नरूप वाक्य सुनके इसका उत्तर रूप वाक्य
विजयजी अपनी विद्वत्ताके जोरसे कहते हैं कि अ
प्रिय-अहो इति आश्चर्य्ये हेसूरे-अधिकमासकी गि
दो श्रावण होनेसें दूजा श्रावणमें ५० दिने पर्यु
कहता है तो दो आश्विन (आसोज) मास होने
की गिनती से दूजा आश्विन मासमें तेरेको चतुम
करना पड़ेगा तथापि कार्तिक मासमें चतुर्मा
करेगा तो १०० दिन हो जायेंगे, क्योंकि समणे भ
षीरे वासाणं सवीसइराए मासेवइक्कंते सत्तरिएर
इति। श्रीसमवायांगजीमें पीछाड़ीके ७० दिन रह
इसवास्ते दूजा आसोजमें चौमासिक कृत्य कर
तथापि कार्तिकमें करेगा तो १०० दिन होजावेंगे
समवायाङ्गजी सूत्रके व . . । आवेगी इस लि
गिनती करनेसें .

है। ऐसा नहीं कहना क्योंकि चतुर्मासिक कृत्य आषाढ़ादि-
मासोंमें करनेका नियम है तिस कारणसें दो आश्विनमास
होवे तोभी कार्त्तिक चौमासी कार्त्तिक शुदी चतुर्द्दशीके
दिन करना योग्य है जिसमें अधिकमास कालचूला होनेसें
दिनों की गिनतीमें नही आता है इसलिये दो आश्विन
होवे तो भी कार्तिकमें १०० दिने चौमासी किया ऐसा नही
समझना किन्तु ७० दिने ही किया गया ऐसा कहनेसे श्रीसम-
वायाङ्गजी सूत्रके वचनमें बाधा नहीं आती हैं इस कारणसें
जैसें चतुर्मासिक आषाढ़ादि मासोंमें करनेका नियम हैं तैसे
ही पर्युषणा भी भाद्रपद मासमे करनेका नियम हैं जिससे
उसी (भाद्रवे) में करना चाहिये जिसमें भी अधिकमास
आवे तो दिनोंकी गिनतीमें नहीं लेनेसे दो श्रावण होते भी
भाद्रवेमें पर्युषणा करनेसे ५० दिने ही किया ऐसा गिना
जाता है इस लिये ८० दिनोंकी वार्त्ता भी नहीं समझना
तथा पर्युषणा भाद्रवेमें करनेका नियम है सो ही बहुत
आगमोंमें कहा है तैसा ही श्रीविनयविजयजीने यहाँ
श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णिका तथा श्रीनिशीथ चूर्णिका पाठ लिख
दिखाया जिसमें भी श्रीकालकाचार्य्यजी महाराज आषाढ़
चतुर्मासीके पीछे कारणयोगे विहार करके सालिवाहनराजा
की प्रतिष्ठानपुर नगरीमें आने लगे तब राजा और श्रमण
सङ्घ आचार्य्यजी महाराजके सामने आये, और महा
महोत्सवपूर्वक नगरीमें प्रवेश कराया और पर्युषणा पर्व
नजिक आये थे जब आचार्य्यजी महाराजके कहनेसे भाद्रव
शुदी पञ्चमीके दिन पर्युषणा करनेके लिये सर्व सङ्घने मञ्जूर
किया तब राजाने कहा कि महाराज उसी (पञ्चमी) के

दिन मेरे नगरीके लोगोंकी सम्मतीसे इन्द्रध्वजका महोत्सव होता है जिससे एक दिनमें दो कार्य्यके महोत्सव बननेमें तकलीफ होगा इस लिये पर्युषणा छट्ठकी करो तब आचार्य्यजी महाराजने कहा कि छट्ठकी पर्युषणा करना नही कल्पे तब फिर राजाने कहा कि चौथकी करो तब आचार्य जीने कहा यह बन सकता है, युगप्रधान महाराजकी इस बातको सर्व संघने भी प्रमाण किवी है इत्यादि श्रीनिशीथ चूर्णिके दशवे उद्देशेमें इसी प्रकारसे पर्युषणाकी व्याख्या है सो भाद्रव मासमें करने की हैं जैसे ही मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सर (वर्ष)में श्रावण शुदी पञ्चमीकी पर्युषणा करनी ऐसा पाठ कोई भी आगममें नही मिलता है तिस कारणसे कार्तिकमास बद्ध (आश्री) चतुर्मासिक कृत्य करनेमें जैसे अधिक मास प्रमाण नही है तैसे ही भाद्रव मास प्रतिबद्ध पर्युषणा करने में भी अधिकमास प्रमाण नही है इति अधिकमासकी गिनती करनेका कदाग्रहको छोड़ो—

उपरका लेख अधिकमासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये श्रीविनयविजयजीकृत श्रीसुखबोधिकावृत्तिके उपरोक्तपाठसे हुवा है इसी ही तरहके मतलबका लेख श्रीधर्म्मसागरजीने श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें तथा श्रीजयविजयजीने श्रीकल्प दीपिका वृत्तिमें अपने स्वहस्ये लिखा है सो यहाँ गौरवता ग्रन्थ बढ़ जानेके भयसे नही लिखते है जिसकी इच्छा होवे सो किरणावलीके तथा दीपिकाके नवमा व्याख्यानाधिकारे , लेना इन तीनों महाशयोंके लेख प्रायः एक सदृश (तुल्य) है जिसमें भी विशेष प्रसिद्ध सुखबोधिका होनेसे मैंने उपर लिखा है सोही भावार्थः तथा पाठ तीनो महा-

शयोंके जान लेना—अब तीनो महाशयोंके लेखकी शास्त्रानु सार और युक्तिपूर्वक समीक्षा करता हुं—इन तीनो महाशयों का मुख्य तात्पर्य सिर्फ इतना ही है कि अधिकमासको गिनतीमें नही लेना इस बातको पुष्ट करनेके लिये अनेक तरहके विकल्प लिखे हैं जिसको और अथमें समीक्षा करता हुं उसीको मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही पुरुष निष्पक्षपातसे पढ़के सत्यासत्यका स्वयं विचारके गच्छका पक्षपातके दृष्टि रागका फंदको न रखते असत्यको छोड़ना और सत्यको ग्रहण करना येही सज्जन पुरुषोंकी मुख्य प्रतिज्ञाका काम है अब मेरी समीक्षा को सुनिये—श्रीधर्म्मसागरजी तथा श्रीजय विजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनों श्रीतपगच्छके विद्वान् महाशयोंकी प्रथमतो अधिक मासको कालचूला जानके गिनतीमें निषेध करना ही सर्वथा अनुचित है क्यों कि श्रीअनन्ततीर्थङ्करगणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने तथा श्रीतपगच्छके पूर्वज और प्रभाविकाचार्योंने अधिक मासको दिनोंमें, पक्षोंमें, मासोंमें, वर्षोंमें, गिनती खुलासा पूर्वक किवी है तथा कालचूलाकी उत्तम ओपमा भी शास्त्रकारोंने गिनती करने योग्य दिवी है और कालचूलाकी ओपमा देनेवाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर भी अधिक मासको निश्चयके साथ गिनते हैं जिसका और श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंने अधिक मासको गिनतीमें लिया है जिसके अनेक शास्त्रोंके प्रमाणों सहित विस्तार पूर्वक उपरमें लिख आया हुं तिन शास्त्रोंके पाठोंमें जैनश्वेताम्बर सामान्य पुरुष आ-त्मार्थी होगा और शास्त्रोंके विरुद्ध परूपनासे संसारवृद्धिका भय रखनेवाला सम्यक्त्वी नामधारी होगा सो भी कदापि

मासोंकी गिनती तथा मासोंके नाम	संवत्सरोंके तथा मासोंके प्रमाणसें	एक युगकेदिनों का प्रमाण
६७ नक्षत्र मासके	पाँच नक्षत्र संवत्सर और उपर सात नक्षत्र मास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६२ चन्द्र मासके	पाँच संवत्सर जिसमें बारह बारह मासोंके तीन चन्द्र संवत्सर और तेरह तेरह मासोंके दो अभिवर्द्धित संवत्सर एसे पाँच संवत्सर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६१ ऋतु मासके	पाँच ऋतु संवत्सर और उपर एक ऋतुमास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६० सूर्य्य मासके	पाँच सूर्य्य संवत्सर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
५७ अभिवर्द्धित मास तथा उपर ७ दिन और एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करनेसे	चार अभिवर्द्धित संवत्सरके उपर नव (९) अभिवर्द्धित मास और ७ दिनके उपर एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जितना काल जानेसे	एक युगके १८३० दिन

उपरोक्त कोष्टकों में पाँच प्रकारके मासोंका प्रमाणसे पाँच प्रकारके संवत्सरोंका प्रमाण, और एक युगके १८३० दिन का प्रमाण श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने कहा है जिसके अनुसार श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजीने भी श्रीवृहत्-कल्पवृत्तिमें लिखा है सो पाठ भी उपर लिख आया हु जैन शास्त्रोंमें सूर्य्य मासकी गिनतीकी अपेक्षासे एकयुगके ६०सूर्य्य मासोंके पाँच सूर्य्य संवत्सरोंमें एक युगके १८३० दिन होते हैं जिसमें सूर्य्यमासकी अपेक्षा लेकर गिनती करनेसे मासवृद्धिका ही अभाव है परन्तु एकयुगके१८३० दिनकी गिनती बरोबर सामिल होनेके लिये खास ऋतुमासोंकी अपेक्षासे पाँच ऋतु संवत्सरोंमें सिर्फ एकही ऋतुमास बढ़ता है और चन्द्रमासों की अपेक्षासे पाँच चन्द्रसंवत्सरोंमें दो चन्द्रमास बढ़ते हैं तथा नक्षत्रमासोंकी गिनतीकी अपेक्षासे पाँच नक्षत्रसंवत्सरोंमें सात नक्षत्रमास बढ़ते है और अभिवर्द्धित मासोंकी गिनतीकी अपेक्षासे तो चार अभिवर्द्धित संवत्सर उपर ९ अभिवर्द्धित मास और सात (७) दिन तथा एक अहो रात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जितना काल जानसे (नक्षत्रमास, चन्द्रमास, ऋतुमास, सूर्य्यमास, और अभिवर्द्धित, मास इन सबोंके हिसाबके प्रमाण से) एक युगके १८३० दिन होजाते है सो उपरके कोष्टोंमें खुलासा है उपरका प्रमाण श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि पूर्वाचार्यों का तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके पूर्वज पुरुषोंका कहा हुवा होनेसे इन महाराजोंकी आज्ञातनासे डरनेवाला प्राणी १८३०दिनोंकी गिनतीमेंसे एक दिन तथा घड़ी अथवा पल मात्र भी गिनतीमें निषेध नही कर सकता है तथापि

श्रीतपगच्छके अर्वाचीन तथा वर्तमानिक त्यागी, वैरागी संयमी, उत्कृष्टक्रिया करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक शुद्ध परूपक मुद्राधारी सम्यकत्वी विद्वान् नाम धराते भी महान् उत्तम श्रीतीर्थंकर गणधर और पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य तथा खास श्रीतपगच्छकेही पूर्वजपूज्य पुरुषोंकी आशातनाका भय न रखते चन्द्रमासोंकी अपेक्षासे जो अधिक मास होता है जिसकी गिनती निषेध करके उत्तम पुरुषोंके कहे हुवे पाँच प्रकारके मासोंका तथा संवत्सरोंका प्रमाणको भङ्ग करके एकयुगके दिनोंकी गिनतीमें भी भङ्ग डालते है जिन्होंकी विद्वत्ताको में कैसी ओपमा लिखुं इसका विचार करता था जिसमें श्रीआत्मारामजीकाही बनाया अज्ञानतिमिर भास्कर ग्रन्थका लेख मुझे उसी वख्तपाद आया सो लिख दिखाता हुं अज्ञानतिमिर भास्कर ग्रन्थके पृष्ठ २९४ के अन्तसे पृष्ठ २९६ के आदि तक का लेख नीचे मुजब जानो---

संविग्न गीतार्थ मोक्षाभिलाषी तिस तिसकाल सम्बन्धी बहुत आगमोंके जानकार और विधिमार्गके रसीये बहुमान देनेवाले संविग्न होनेसे पूर्वसूरि विख्यात मुनियोंके नायक जो होगये हैं तिनोंमें निषेध नही करा है ; जो आचरित आचरण सर्वधर्मी लोक जिस व्यवहारको मानते हैं तिसकों विशिष्ट श्रुत अवधि ज्ञानादि रहित कौन निषेध करे ? पूर्व पूर्वतर उत्तमाचार्य्योंकी आशातनासे डरनेवाला अपितु कोई नही करे बहुल कर्मोंको वर्जके ते पूर्वोक्तगीतार्थों ऐसे विचारते हैं आज्वल्यमान अग्निमें प्रवेश करनेवालेसें भी अधिक साहस यह है उत्सूत्र प्ररूपणा, सूत्र निरपेक्ष देशना, कटुक विपाक, दारुण, खोटे फलकी देनेवाली, ऐसे जानते हुए भी

देते हैं, मरीचिवत्, मरीचि एक दुर्भाषित वचनसे दुःख
समुद्रकों प्राप्त हुआ ; एक कोटा कोटी सागर प्रमाण सं
में भ्रमण करता हुआ जो उत्सूत्र आचरण करे सो
चीकणे कर्मका बन्ध करते हैं। संसारकी वृद्धि और सं
मृषा करते हैं तथा जो जीव उन्मार्गका उपदेश करें,
सन्मार्गका नाश करे सो गूढ़ हृदयवाला कपटी होवे,
चारी होवे शल्य संयुक्त होवे सो जीव तिर्यंच गतिका आ
बन्ध करता है। उन्मार्गका उपदेश देनेसें भगवन्तके क
करे चारित्रका नाश करता है, ऐसे सम्यग् दर्शनसें भ्रष्ट
देशना भी योग्य नही है, इत्यादि आगम वचन सुनके
स्व अपने आग्रहरूप ग्रहकरी ग्रस्त चित्तवाला जो उत्
कहता है क्योंकि जिसका उरला परला कांठा नही है
संसार समुद्रमें महादुःख अंगीकार करमें हैं।

प्रश्न—क्या शास्त्रकों जानके भी कोई अन्यथा प्ररूप
करता है।

उत्तर—करता है कोई दिखाते हैं देखनेमें आते हैं—
दुषमकालमें वक्रजड़ बहुत साहसिक जीव भवरूप भया
संसार विशालसे न डरने वाले निजमतिकल्पित कुयुक्ति
करके विधिमार्गकों निषेध करने में प्रवर्त्तते है कितनी
क्रियाओंको आगममें नही कथन करी है तिसको करने
और जो आगमने निषेध नही करी है चिरंतन जनोंसे आच
रण करी है तिसको अविधि कह करके निषेध करते हैं औ
कहते हैं—यह क्रिया धर्मीजनोंको करने योग्य नही है।
तरहमें श्री आत्मारामजीके लेखमें श्री पूर्वाचार्यों
आचरित (प्रमाण) करी हुई बातको निषेध करनेवाला

मायत् मम्यग् दर्शनसे भ्रष्टकों देखना भी योग्य नही इत्यादि कहा तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विच रें कि श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने चंद्रमासक अपेक्षासे जो अधिकमासकी वृद्धि होती है जिसको गिनती प्रमाण किया है, तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय तथ वर्तमानिक विद्वान् नाम धराते भी निषेध करते जिन्होंका त्याग, वैराग्य, संयम और जिनाज्ञाके शुद्ध श्रद्धाक आराधकपना कैसे बनेगा और शुद्ध परूपनाके बदले प्रत्य अनेक शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध, उत्सूत्र भाषणका क्या फ प्राप्त करेंगे सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना—

और श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविज जी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् हो करके भी गच्छ कदा ग्रहका पक्षपातसे श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके विरु परूपनाके फल विपाकका बिल्कुल भय न करते सर्वथा प्रका से अधिक मासकी गिनती निषेध कर दिवी तथा औरभ अपने लिखे वाक्यका भी क्या अर्थ भूल गये सो अधि मासकी गिनती निषेध करने अटके नहीं क्योंकि इन तीनो महाशयोंके लिखे वाक्यसे भी अधिक मास गिनतीमें सि होता है सोही दिखाते हैं (अभिवर्द्धित वर्षे चतुर्मासिक दिनादारभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्र स्थिता. स्म) यह वाक्य तीनो महाशयोंने लिखा है इस वाक्यमें अभिवर्द्धित वर्ष (संव त्सर) लिखा है सो अभिवर्द्धित वर्ष मास वृद्धि होनेसे तेरह चन्द्रमासोंकी गिनतीसे होता है इसमें अधिक मासकी गिनती खुलासा पूर्वक प्रमाण होती है और अधिकमासकी गिनतीके बिना अभिवर्द्धित नाम संवत्सर नही बनता ।

क्योंकि अधिक मासकी गिनती नही करनेसे बारह चन्द्रमासोंसे चन्द्र संवत्सर होता है परन्तु अभिवर्द्धित नाम नही बनेगा जब अधिक मासको गिनती होगा तब ही तेरह चन्द्रमासोंसे अभिवर्द्धित नाम संवत्सर बनेगा जिसका विस्तार उपर लिख आये हैं इस लिये अधिक मासकी गिनती तीनो महाशयोंके वाक्यसे सिद्ध प्रत्यक्ष पने होती है और फिरभी इन तीनो महाशयोंने (जैन टिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते च आषाढ़ो एव वर्द्धते नान्येमासाः तच्चाधुना सम्यग् न ज्ञायते ततः पञ्चाशतैव दिनैः पर्युषणा सङ्गतेति वृद्धाः) यह भी अक्षर लिखे हैं सो इन अक्षरोंसे भी सूर्य्यवत् प्रकाशकी तरह प्रगट दिखाव होता है कि जैन टिप्पनामें पौष और आषाढ़की वृद्धि होती थी सो टिप्पना इस कालमें नही हैं इस लिये पचास दिने पर्युषणा करना योग्य है यह श्रीतपगच्छके पूर्वज पूर्वाचार्य्योंका कहना है सो बातभी सत्य है क्योंकि इस तीनो महाशयोंके परमपूज्य श्रीतपगच्छके प्रभाविक श्रीकुलमण्डन सूरिजीने भी लिखी है जिसका पाठ इसी पुस्तकके ७७में (९) पृष्ठमें छप गया हैं—

अधिक मासकी गिनती अनेक जैन शास्त्रोंसे तथा इनके वाक्यसे भी सिद्ध होती है और पचास दिने पर्युषणा करना अपने पूर्वजोंकी आज्ञासे तीनो महाशय लिखते हैं जिसको पाठकवर्ग विचार करे तो शीघ्रही प्रगटपने मालुम हो सकता है कि वर्त्तमानमें दो श्रावण होनेसे दूसरा श्रावणमें अथवा दो भाद्रव होनेसे भी प्रथम भाद्रवमें पचास दिनोंकी गिनतीसे ही पर्युषणा करना चाहिये यह न्याय सर्व सिद्ध है

इन तीनो महाशयोंने प्रथम अभिवर्द्धित वर्षे इत्यादि वाक्य
लिखे जिससे अधिक मासकी गिनती सिद्ध हुई और (पञ्चा-
शतैव दिनैः पर्युषणा युक्तेति वृद्धाः) यह वाक्य लिखके इस
कालमें पचास दिने पर्युषणा करना ऐसे सिद्ध किया जिसमें
जैन टिप्पनाके अभावसे भी पचास दिनका तो निश्चय रक्खा
इस लिये वर्त्तमान कालमें पर्युषणा सर्वथा भाद्रव पदमें ही
करनेका नियम नही रहा क्योंकि श्रावण मासकी वृद्धि होने
से दूसरा श्रावणमें और दो भाद्रव होनेसे प्रथम भाद्रवमें
पचास दिनकी गिनती पूरी होती है यह मतलब तीनो
महाशयोंके लिखे हुये वाक्योंसेभी सिद्ध होता है तथापि उपर
का मतलबको ये तीनो महाशय जानते भी गच्छके पक्षपात
के जोरसे अपनी विद्वत्ताको लघुता कारक और अप्रमाण
रूप विसंवादी (पूर्वापर विरोधि) वाक्य अपने हाथसे
लिखते बिल्कुल विचार न किया और आषाढ़ चौमासीसे
दो श्रावण होनेके कारणसे भाद्रव सुदी तक ८० दिन प्रत्यक्ष
होते हैं जिसको भी निषेध करनेके लिये (पर्युषणापि भाद्र-
पदमास प्रति बद्धा तत्रैव कर्त्तव्या दिनगणनायांत्वधिक
मासः कालचूलेत्य विवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशतैव कुतोऽशीति
वार्त्तापि) इस अक्षरोंको तीनो महाशयोंने लिखे है जिस
में मास वृद्धि होनेसे भी भाद्रपदमें पर्युषणा करना और दो
श्रावण होवे तोभी भाद्रवेमें पर्युषणा करनेसे ८० दिन होते हैं
ऐसी वार्त्तापि नही करना क्योंकि अधिक मास कालचूला
होनेसे दिनोंकी गिनतीमें नही आता है इस लिये ५० दिने
पर्युषणा किया समझना ऐसे मतलबके वाक्य लिखना तीनो
महाशयोंके पूर्वापर विरोधी तथा पूर्वाचार्योंकी आज्ञा

खण्डनरूप सर्वथा जैन शास्त्रोंसे और युक्तिसे भी प्रतिकुल हैं क्योंकि प्रथमतो अधिक मासको गिनतीमें लेनेसेही अभिवर्द्धित नाम संवत्सर बनता हैं सो अभिवर्द्धित संवत्सर तीनो महाशयोंने उपरमें लिखा हैं जो अभिवर्द्धित संवत्सर का नाम श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंकी आज्ञानुसार कायम तीनो महाशय रखेंगें तो अधिकमास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसे मतलबका लिखना तीनो महाशयोंका सर्वथा मिथ्या हो जायगा—

और अधिकमास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसे मतलबको कायम रखेंगे तो जो अधिकमास की गिनतीसे अभिवर्द्धित नाम संवत्सर होता है सो नही बनेगा यह दोनो बात पूर्वापर विरोधी होनेसे नही बनेगे इस लिये अबजो ये तीनो महाशय अधिकमासको दिनोंकी गिनतीमें नही लेवेंगें तब तो श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि तथा श्रीतपगच्छके नायक पूर्वाचार्योंने अधिक मासको दिनो की गिनतीमें लिया है जिन महाराजोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणरूप तीनो महाशयोंका वचन होगया सो आत्मार्थियोंको सर्वथा त्यागने योग्य हैं इस लिये तीनो महाशयोंको जिनाज्ञा विरुद्ध प्ररूपणाका भय होता तो अधिकमासकी गिनती निषेध किया जिसका मिथ्या दुष्कृत्यादिसे अपनी आत्मा को उत्सूत्र भाषणके कृत्योंसे बचानी थी सो तो वर्तमान कालमें रहे नहीं है परलोक गयेको अनेक वर्ष होगये हैं परन्तु वर्तमान कालमें श्रीतपगच्छके अनेक साधुजी विद्वान् नाम धराते हैं और उन्होंही तीनो महाशयोंके लिखे वाक्यको सत्य मानते हैं तथा हर वर्ष इसीको पर्युषणामें बांचते है

जिसमें प्राय: करके गांव गांवमें श्रीतपगच्छके सब साधुजी अधिकमासकी गिनती निषेध जैन शास्त्रोंके विरुद्ध करते हैं जिनसे श्रीतीर्थंकरगणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य तथा श्रीतपगच्छके पूर्वज पुरुषोंकी आज्ञाभङ्गका कारण होता है सो आत्मार्थी पुरुषोंको करना उचित नहीं है इसलिये जो श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक मुनिमहाराजोंको जिनाज्ञा विरुद्ध प्ररूपणाका भय होवे तो अधिकमासकी गिनती निषेध करनेका छोड़ देना ही उचित है और आजतक निषेध किया जिसका मिथ्या दुष्कृत देकर अपनी आत्माको उत्सूत्र भाषणके पापकृत्यसे बचानी चाहिये, तथापि विद्वत्ताके अभिमानसे और गच्छके कदाग्रहका पक्षपातके जोरसे ऊपर की बातको अङ्गीकार नहीं करते हुए अधिकमासकी गिनती निषेध करते रहेंगे तो आत्मार्थीपना नहीं रहेगा तथा अधिकमासकी गिनती निषेध जैन शास्त्रोंके विरुद्ध होनेसे कोई आत्मार्थी प्रमाण नहीं कर सकता है इस लिये जैन शास्त्रानुसार श्रीतीर्थंकरगणधरादि महाराजोंकी तथा अपने पूर्वाचार्योंकी आज्ञा मुजब अधिकमासकी गिनती सर्वथा प्रकारसे अवश्यमेव प्रमाण करनी सोही सम्यक्त्व धारी पुरुषोंका काम है जैनटिप्पनानुसार पौष तथा आषाढ़मासकी वृद्धि होती थी जब भी गिनतीमें लेते थे इस कारणसे तेरह चन्द्रमासोंसे संवत्सरका नाम अभिवर्द्धित होता है सो 'वर्त्तमान कालमें भी अनेक जैन शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है तथा श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी, वगैरह तीनो महाशय भी अभिवर्द्धित संवत्सर लिखते हैं जिससे अधिकमासकी गिनती आजाती है इस मतलबका

विचार न करते उलटा विरुद्धार्थ में तीनो महाशयोंने अपने स्वयं विसंवादी (पूर्वापरविरोधि) वाक्यरूप अधिक मास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसा लिख दिया, और विसंवादी वाक्यका विचार भी न किया। विसंवादी पुरुषका दुनियामें भी कोई भरोसा नही करता है तथा राजदरबारमें भी विसंवादी पुरुष झूठा अप्रमाणिक होता है और जैनशास्त्रोंमें तो श्रावककों भी धर्म व्यवहारमें विसंवादी वचन बोलनेका निषेध किया है सोही दिखाते हैं श्रीआत्मारामजीने अज्ञानतिमिरभास्कर ग्रन्थके पृष्ठ २५६में श्रावककों यथार्थ कहना अविसंवादी वचन धर्म्म व्यवहारमें॥ तथा श्रीधर्म्मसंग्रह वृत्तिके ग्रन्थमें भी यही बात लिखी है और श्रीधर्म्मरत्नप्रकरण वृत्तिमें भी यही बात लिखी है सोही दिखाते हैं। श्रीधर्म्मरत्नप्रकरण वृत्ति गुजरातीभाषा सहित श्रीपालीताणामें श्रीविद्याप्रसारकवर्ग है जिसकी तरफसे छपके प्रसिद्ध हुयी है जिसके दूसरे भागमें पृष्ठ २१४ विषे यथा—

ऋजुप्रगुणं व्यवहरणमृजुव्यवहारो भावश्रावकलक्षणं चतुर्द्धा चतुःप्रकारो भवति तद्यथा–यथार्थभणनमविसंवादि वचनं धर्मव्यवहारे।

अर्थ–ऋजु एटले सरल चालवुं ते ऋजुव्यवहार ते चार प्रकारनो छे तेमके एकतो यथार्थ भणन एटले अविसंवादी बोलवुं ते धर्मसंबाधनमां।

देखिये अब नवरमें श्रावककों भी धर्म्म व्यवहारमें विसंवादीरूप मिथ्याभाषण बोलनेका जैन शास्त्रोंमें नही कहा है। तो फिर विद्वान् साधुओं होकर विसंवादी वाक्य

अपने बनाये ग्रन्थमें लिखना क्या उचित है। क
यहां और इन्हीं को श्रीधर्मरत्नप्रकरणके दूसरे भागमें
२४६ को आदिसे पृष्ठ २४७ की आदि तकका लेखमें विसंवा
आदि वाक्य बोलने वालेको भी कष्टकी प्राप्ति होती
को दिखाते हैं यथा—

अन्यथा भणनमयथार्थजल्पनमादिशब्दाद्वंचक क्रिया
दोषोपेक्षामद्भावमैत्री परिणतमेंषु सत्सु श्रावकस्येति
भावः—अबोधिर्धर्माप्राप्तेर्बीजं मूलकारणं परस्य मिथ्या दृष्टे-
र्नियमेन निश्चयेन भवतीति शेषः।

तथाहि—श्रावकमेतेषु वर्तमानमालोक्य वक्तारः समभ-
वन्ति॥ धिगस्तु जैनं शासनं, यत्र श्रावकस्य शिष्टजन-
निन्दितेऽलीकभाषणादौ कुकर्मणि निवृत्तिर्नोपदिश्यते॥
इति निन्दाकरणादमी प्राणिनो जन्मकोटिष्वपि बोधिं न
प्राप्नुवन्तीत्यबोधि बीजमिदमुच्यते ततश्चाबोधिबीजाद्भव-
परिवृद्धिर्भवति तन्निन्दाकारिणस्तन्निमित्तभूतस्य श्रावकस्यापि
यदवादि—शासनस्योपघातेयो-नाभोगेनापि वर्तते सत-
न्मिथ्यात्वहेतुत्वादन्येषां प्राणिनामिति॥१॥ बध्नात्यपि
तदेवालं परं संसारकारणं विपाकदारुणं घोरं सर्वानर्थ
विवर्द्धन (मिति)॥२॥

टीकानो अर्थः—अन्यथा भणन एटले अयथार्थ भाषण
आदि शब्द थी वंचक क्रिया दोषोनी उपेक्षा तथा कपट
भी लेवी अे दोषो होय तो श्रावक बीजा मिथ्या दृष्टि
वने मह्लीपणे अबोधिनुं बीजपद पडेले एटले के तेथी
ना धर्मपामी शक्ता नथी। कारणके अे दोषोमां वर्तता
कने जोइ तेओ बेयुबोलेके "जिन शासनने धिक्कार

थाओ" के त्यां श्रावकोने आवां शिष्टजनने निन्दनीय मृष
भाषण वगेरा कुकर्म थी अटकाववानो उपदेश करवाम
नथी आवतो अेवो रीते निन्दा करवाथी ते प्राणिओ क्रोड़
जन्मो लगी पण बोधिने पामी शकता नथी तेथी
अबोधिबीज कहवाये छे अने ते अबोधिबीजथी तेथी निन्द
करनारनो संसारवधे छे एटलुंज नहीं पण तेना निमित्त
भूत श्रावकनो संसार वधे छे, जे माटे कहेलुं छे के–जे पुरु
अजाणतां पण शासननी लघुता करावे ते बीजा प्राणिओने
तेवी रीते मिथ्यात्वनो हेतु थई तेना जेटलाज, संसार
कारण कर्म बांधवा समर्थ थई पड़े छे के जे कर्मविपाक दारुण
घोर अने सर्व अनर्थनुं वधारनार थइ पड़ेछे ॥ १–२ ॥

उपरमें अन्यथा अयथार्थ भाषण अर्थात् विसंवादी
वाक्यरूप मिथ्याभाषणादि करने वाला श्रावक निश्चय करके
मिथ्या दृष्टि जीवोंको विशेष मिथ्यात बढ़ानेवाला होता है
और उससे दूसरे जीव धर्म प्राप्त नहीं कर सकते हैं किन्तु
ऐसे श्रावकको देखके जैन शासनकी निन्दा करने वालोंको
संसारकी वृद्धि होती है । और विसंवादीरूप मिथ्याभाषण
करनेवाला श्रावक भी निन्दा करानेका कारणरूप होनेसे
अनन्त संसारी होता है तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन
पुरुषोंको विचार करना चाहिये कि श्रीधर्मसागरजी श्रीजय-
विजयजी श्रीविनयविजयजी ये तीनो महाशय इतने विद्वान्
होते भी अनेक जैनशास्त्रोंके विरुद्ध और अपने स्वहस्ते
अभिवर्द्धित संवत्सर उपरमें लिखा है जिसका भी भङ्ग कारक
अधिकमास की गिनती निषेधरूप विसंवादी मिथ्या
वाक्य भी अपने स्वहस्ते लिखते अनन्त संसार वृद्धिका भी

पाद नहीं करते है सो अब ऐसे विद्वानोंको आत्मार्थी कैसे कहे जावें और अधिक मासको गिनती निषेधरूप विसंवादी लिखा वाक्य इस विद्वानोंका आत्मार्थी पुरुष कैसे ग्रहण करेंगे अपितु कदापि नही तथापि जो अधिक मासकी गिनती निषेध श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा विरुद्ध होने पर वर्त्तमानिक महाशयो जम करते हैं जिन्होंको सम्यक्त्वरूप रत्न कैसे प्राप्त होगा इस बातको पाठकवर्ग स्वयं विचार सकते हैं --

और जैनशास्त्रानुसार अधिकमासके दिनोंकी गिनती करनाही युक्त है इस लिये अधिकमास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसा मतलब तीनों महाशयोंका शास्त्रोंके विरुद्ध है सो उपरोक्त लेखसे प्रत्यक्ष दिखता है इन शास्त्रोंके न्यायानुसार वर्त्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेसे ८० दिन प्रत्यक्ष होते हैं सो बात जगत् भी मान्य करता हैं तथापि ये तीनो महाशय और वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके महाशय सो मञ्जूर नही करते हैं तो इस जगह एक युक्ति भी दिखलाने के लिये श्रीतपगच्छके विद्वान् महाशयोंसे मेरा इतना ही पूछना है कि आषाढ चतुर्मासीसे किसी पुरुष वा स्त्रीने उपवास करना शरू किया तथा उसी वर्षमें दो श्रावण हुवे तो उस पुरुष वा स्त्रीको पचास (५०) उपवास कब पूरे होवेंगे और अस्सी (८०) उपवास कब पूरे होवेंगे इसका उत्तरमें श्रीतपगच्छके सर्व विद्वान् महाशयोंको अवश्यमेव निश्चय कहना ही पड़ेगा कि -- दो श्रावण होनेसे पचास उपवास दूसरा श्रावण शुदी में और ८० उपवास दो श्रावण होनेके कारणसे भाद्रपदमें पूरे होवेंगे

इस युक्तिसे अधिक मासकी गिनती निश्चय के साथ श्रीतप-गच्छके विद्वान् महाशयोंके कहने से भी सिद्ध होगई तथा अनेक शास्त्रानुसार ५० दिने दूजा श्रावण शुदीमें श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेवाले जिनाज्ञा के आराधक सिद्ध हो गये और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करने वाले, शास्त्रोंकी मर्य्यादाके विरुद्ध होनेमें कोई शंसय भी करेगा अपितु नही, तथापि इन तीनो महाशयोंने(दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक ८० दिनकी वार्त्ता भी नही समझना) ऐसे मतलबको लिखा है सो कैसे सत्य बनेगा तथापि. वर्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमहाशय विद्वान् होते भी उपरकी इस मिथ्या बातको सत्य मानके वारंवार कहते हैं जिन्होंको मृषावादका त्यागरूप दूजामहाव्रत कैसे रहेगा सो भी विचारने की बात है, इस उपरोक्त न्यायानु-सार भी अधिक मासकी गिनती निषेध कदापि नही हो सकती हैं तथापि तीनो महाशय करते हैं सो सर्वथा महा मिथ्या है इसलिये दो श्रावण होनेसें भाद्रव शुदी तक ८०दिन अवश्यमेव निश्चय होते हैं जिससे गिनती निषेध करना ही नही बनता है और मासवृद्धि होनेसे भी पर्युषणा भाद्रपद मास प्रति बद्ध है ऐसा लिखना भी तीनो महाशयोंका सर्वथा जैनशास्त्रोंसे प्रतिकुल है क्योंकि प्राचीनकालमें भी मासवृद्धि होती थी तब भी वीश दिने श्रावण शुक्लपञ्चमी के दिन पर्यु-षणा करनेमें आते थे जैसे चन्द्र संवत्सरमें पचास दिनके उपरान्त सर्वथा विहार करना नही कल्पे तैसे ही अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिनके उपरान्त सर्वथा विहार करना नही कल्पे और वीश दिन तक अज्ञात पर्युषणा परन्तु वीशमें

एगाइ कयपभूमीए वट्ठ वासंच गाइं असीएवं आकृत, ताहे आसाढ़पुन्निमाए चेव पज्जोसविज्जति, एवं पंचाहं परिहाणि मधिकृत्योच्यते, इय सत्तरी गाया, इय सदसंते आसाढ़माए मासियासो सवीसति राते मासे गते पज्जोसर्वेति, तेसिं सत्तरी दिवसा जहन्नतो जेट्ठोग्गहो भवति, कहं पुन सत्तरी, चउण्हं मासाणं सवीसं दिवस सतं भवति, ततो सवीसति रातो मासो, पन्नास दिवसा सो सेसो सेसा सत्तरी, दिवसा जे भद्दवय बहुलस्स दसमीए पज्जोसर्वेति, तेसिं असीति दिवसा जेट्ठोग्गहो, जे सावण पुन्निमाए पज्जोसर्वेति तेसिं णउतिदिवसा जेट्ठोग्गहो, जे सावण बहुल दसमी ठिता तेसिं दसुत्तरं दिवससतं जेट्ठोग्गहो, एवमादीहिं पगारेहिं वरिसारत्तं एग रोत्ते अच्छिता कत्तिय चाउमासिए णिग्गंतव्वं, अह वासं ण उवरमति, तो मग्गसिरे मासे जं दिवसं पक्क मट्टियं जात तद्दिवसं चेव निग्गंतव्वं, उक्कोसेण तिन्नि दसराया न निग्गच्छे जत्ता मग्गसिर पुन्निमाएत्ति भणियं होइ मग्गसिर पुन्निमाए परेण, जइवि प्लवंतेहिं तहवि णिग्गंतव्वं, अय न निग्गच्छंति तो चउलहुगा, एवं पंचमासिउं जेट्ठोग्गहो जाओ, काउण गाहा ॥ आसाढ़मासकप्पं काउं तत्थ अन्नं वासा वासे पाउग्गं जत्थ आसाढमासकप्पो कओ तत्थेव पज्जोसविते आसाढ पुन्निमाए वा सालंबणाणं मग्गसिरं पिसव्वं, वासा णतो विरमति तेण वा निग्गता असीवादीणिवा वाहिपवं सालंबणाणं छमासि तो जेट्ठोग्गहो ॥ इत्यादि ॥

और श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रकी चूर्णिके दशमे उद्देशेके पृष्ठ ३२१ से पृष्ठ ३२४ तक का पर्युषणा सम्बन्धीका पाठ नीचे मुजब जानो, यथा—

यिप्परिणामेति पुते रिमितो गद्दाणुमाया पुते भेगं गच्छन्ति तेण पहेयं णति रणो णागच्छति पताणि या अणुमितो मसियं भयति, तम्हा विमज्जाहं ताहे यिमज्जिमा अणे भणंति, रणा ठयाएण यिमज्जिता कहं मद्धं मिणगारकिल रणा अणामगा करावितां, ताहे णिग्गता एवमाइमाण कारणाण अणुक्कमेण णिग्गता विहरंता पतिट्ठाणं णयरं, तेण पयिठा पतिट्ठाण समणसंघस्स अज्जकालगेहिंसदिट्ठं, णायाहं भागच्छामि ताय तुम्भेहिं णो पज्जोमयियद्धं, तत्थ सालयाहणोराया सो मायगो सोयकालगज्जंएतं सोडणणिग्गतो अभिमुहो समणसंघोय महया विभूतीए पयिठो, कालगज्जो पयिठेहिं भणियं भद्दयय सुद्ध पञ्चमीए पज्जोसयिज्जति, समणसंघेण पड़िवन्नं, ताहे रणा भणियं तद्दियमं मम लोगाणु-वत्तीए-इन्दो अणुजायद्धो होहेत्ति, साहूचेतितेणपज्जवासे स्सती तो छट्ठीए पज्जोसवणा किज्जउ, आयरिएहिं भणियं, ण वहति, अतिकामेउ ताहे रणा भणियं, तो अणागए, चउ-त्थीए पज्जोसविज्जति, आयरिएहिं भणियं एवं भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोसयियं, एवं जुगप्पहाणेहिं चउत्थी कारणे पवत्तिता, साचेवाणुमत्ता सद्ध साधूणं, रणा अंते पुरियाउ भणिता तुम्भे अमावसाए उयावासंकाउं पड़िवयाए सद्ध खज्ज भोज्ज विहीहिं साधू उत्तरपारणए पड़िलाभेत्ता पारे ज्जाहा, पज्जोसवणाए अट्ठमतिकाउ पडीवयाए उत्तर-पारणयं भवति तंच सद्धभोगेण यिकयंततोपमिति मरहठ-यिसपसयण पूद्धउसियणोपयज्जे ॥ इयाणिं पंचगपरिहाणि-मधिकृत्य कालावग्राहोच्यते ॥ इय सत्तरी गाहा ॥ इय इति उयप्रश्रंने जे आसाढ़चाउम्मासिया तो सयीसति राते

लिए दिखाया जिसमें भाद्रपदका ही नाममात्र लिखा परन्तु मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपद है किंवा मासवृद्धि होते भी भाद्रपद है जिसका कुछ भी लिखा नही और चूर्णिकार महाराजने समयादिसे कालका प्रमाण दिखाया है जिसमें अधिक मास भी गिनतीमें सर्वथा आता है तथापि तीनो महाशयोंने निषेध करदिया और मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदकी व्याख्या चूर्णिकारने कियी थी जिसको भी मासवृद्धि होते लिख दिया इस तरहका तीनो महाशयोंको विरुद्धार्थका अधूरा थोड़ासा पाठको विचारो और निष्पक्षपातसे सत्यासत्यका निर्णय करो जिसमें असत्यको छोड़ो और सत्यको ग्रहण करो जिससे आत्म कल्याणका रस्ता पावो यही सज्जन पुरुषोंको मेरा कहना है ।

और बुद्धिजन सर्व सज्जन पुरुष प्रायः जानते भी होवेंगे कि–जैन शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें एक मात्रा, बिंदु तथा अक्षर या पद की उलटी जो परूपना करे तथा उत्थापन करे और उलटा वर्ते वह प्राणी मिथ्यादृष्टि संसारगामी कहा जाता है, जमालीवत् अनेक दृष्टान्त जैनमें प्रसिद्ध है तथापि इन तीनों महाशयोंने तो संसार वृद्धिका किञ्चित् भी भय न किया और चूर्णिकार महाराजने अधिक मासकी गिनती विस्तार पूर्वक प्रमाण कियी थी जिसको निषेध कर दियी और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने प्रसिद्ध पर्युषणा कही थी जिसके सब पाठको उत्थापन करके सावन् ८० दिने पर्युषणा चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थमें स्थापन करके भोले जीवोंको कदाग्रहमें गेरे हैं, हा, हा, अति खेद ॥—

और इसके अगाड़ी फिर भी तीनों महाशयोंने प्राचीन आचार्योंके वाक्य भावरूप अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध लिखके अपनी बात जमाई है कि (एवं च कुत्रापि पर्युषणा निरूपणे न च भाद्रपदसितपंचमीमनु क्वाप्यागमे भाद्रपदशुद्ध पंचम्याए पज्जोसविज्जइति पाठवत् अभिवर्द्धितवर्षे श्रावण शुद्धपंचम्याए पज्जोसविज्जइति पाठ उपलभ्यते) इन अक्षरोंको तीनों महाशयोंने लिखके इनका मतलब ऐसे दिखाते हैं कि कल्पसूत्र मूल वृत्तियोंमें तथा श्रीनिशीथचूर्णिमें भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कही है इसी प्रकारसे जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणाकी व्याख्या है तहां भाद्रपदके नामसे है परन्तु कोई भी शास्त्रमें भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनी ऐसा पाठकी तरह श्रावणवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनी ऐसा पाठ नहीं दिखता है, इस तरहके तीनों महाशयोंके लेख पर मेरा इतनाही कहना है कि इन तीनों महाशयोंने (अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावणशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रोंमें पाठ नहीं दिखता है) इस मतलबको लिखा है सो सर्वथा मिथ्या है क्योंकि जिन जिन शास्त्रोंमें चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने, ज्ञात, याने-गृहस्थी लोगोंको जानी हुई पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है उसी शास्त्रोंमें अभिवर्द्धित संवत्सरमें बीस दिने ज्ञात पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है सो यह बात अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रगटपने लिखी है तथापि इन तीनों महाशयोंने भोले जीवोंको मिथ्या भ्रममें गेरनेके लिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रमें पाठ नहीं दिखता है ऐसा लिख दिया है सो अब ऐसे मिथ्या भ्रमको दूर करनेके लिये इस जगह शास्त्रोंके प्रमाण

भी दिखाते हैं कि-श्रीनिशीथसूत्रके लघुभाष्यमें १ तथा बृहद्भाष्यमें ३, और चूर्णिमें ३, श्रीदशाश्रुतस्कन्ध चूर्णिमें ४, और वृत्तिमें ५, श्रीबृहत्कल्पसूत्रके लघुभाष्यमें ६, बृहद्भाष्यमें ७, तथा चूर्णिमें ८, और वृत्तिमें ९, श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिमें १०, श्रीकल्पसूत्रकी निर्युक्तिमें ११ तथा निर्युक्तिकी वृत्तिमें १२ और श्रीकल्पसूत्रकी चार वृत्तिओंमें १६, श्रीगच्छाचारपयन्नाकी वृत्तिमें १७, श्रीविधिप्रपासमाचारीमें १८, श्रीसमाचारीशतकमें १९, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक लिखा है कि-अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ़ चौमासीसे लेकरके २० दिने, याने-श्रावण सुदी पञ्चमीको पर्युषणा करनेमें आती थी। सो इसीही विषय सम्बन्धी इसी ग्रन्थकी आदिमेंही श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओंके पाठ भावार्थ सहित तथा श्रीबृहत्कल्पवृत्तिका पाठ पृष्ठ २३।२४ में, श्रीपर्युषणाकल्पचूर्णिका पाठ पृष्ठ ९२ में तथा श्रीनिशीथचूर्णिका पाठ पृष्ठ ९५।९६ में छप गया है और आगे भी कितनेही शास्त्रोंके पाठ छपेंगे जिन्को और अब इसीही बातका विशेष खुलासा करता हूं जिसको विवेक बुद्धिसे पक्षपात रहित होकर पढ़ेगे तो प्रत्यक्ष निर्णय हो जावेगा कि अभिवर्द्धितमें बीशदिने पर्युषणा होती थी इसके विषयमें उपरोक्त अनेक शास्त्रोंके पाठोंके साथ श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी कृत श्रीबृहत्कल्पवृत्तिका पाठ भी पृष्ठ २३ तथा २४ में विस्तार पूर्वक छपगया है तथापि इस जगह थोड़ासा फिर भी लिख दिखाता हूं तथाच तत्पाठ यथा—

इत्थमभिगृहीतं किंयन्तं कालंवक्तव्यं,मुच्यते। यद्यभिवर्द्धितो भी संवत्सरस्तनो विंशतिरात्रिंदिवानि अथ चंद्रोसौ ततः सविंशतिरात्रं मासं यावदनभिगृहीतं वक्तव्यं। किमुक्तं

जाती हैं ऐसी गृहस्थी लोगोंके जानी हुई पर्युपणा यावत् कार्तिक पूर्णिमा तक याने जो अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको जानी हुई पर्युपणा करे सो कार्तिक पूर्णिमा तक १०० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे और चन्द्रमें पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको जानी हुई पर्युपणा करे सो कार्तिक पूर्णिमा तक ७० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे।

उपरोक्त श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत पाठके भावार्थः मुजबही अनेक जैन शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक व्याख्या हैं सो उपरमें श्रीनिशीथचूर्णि श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णि श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यों वगैरहके पाठ भी छपगये हैं और कितनेही शास्त्रोंके पाठ इस ग्रन्थमें विस्तारके भयसे नही छपाये हैं सो अबी मेरे पास मौजूद है जिसमें भी उपर मुजबही चतुर्मासीमें पर्युपणा संबन्धी अज्ञात और ज्ञातकी खुलासा पूर्वक व्याख्या हैं।

उपरके पाठमें श्रावण तथा भाद्रव मासका नाम नही हैं परन्तु वीश तथा पचास दिनका नाम लिखा है जिससे वीश दिनकी गिनती आषाढ़पूर्णिमासे श्रावण शुक्लपञ्चमीको और पचास दिनकी गिनती भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको पूरी होती हैं इस लिये भावार्थमें श्रावण तथा भाद्रपदका नाम तिथि सहित लिखा जाता है—

उपरोक्त पाठमें आषाढ़ चौमासीसे कार्तिक चौमासी तककी व्याख्या दिनोंकी गिनती सहित खुलासा पूर्वक पर्युपणा सम्बन्धी करी है परन्तु आषाढ़ चौमासीसे इतने दिन गये बाद पर्युपणामें वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि अमुक दिने करे ऐसा नही लिखा हैं. परन्तु
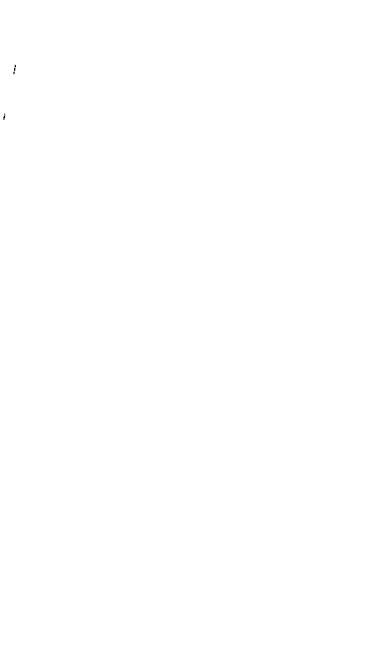
मात्रही ठहरा कर फिर वार्षिक कृत्य अभिवर्द्धित संवत्सरमें भी दशपञ्चके पचासदिने ठहराते होवेंगे तो भी तीनों महाशयोंको जैन शास्त्रोंका अति गम्भिरार्थका तात्पर्य्य समझमें नही आया मालुम होता है क्योंकि जिस जिस शास्त्रमें दशपञ्चके पचासदिने अवश्य पर्युषणा करनी कही है सो निकेवल चंद्रसंवत्सरमें ही करनी कही है नतु अभिवर्द्धित संवत्सरमें क्योंकि दशपञ्चक तकका विहार चंद्रसंवत्सरमेंही होता है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें तो निकेवल चारपञ्चकमें वीशदिने निश्चय प्रसिद्ध पर्युषणा किवी जाती थी सो उपरमें भी विस्तार पूर्वक लिख आया हुं—जिससे चारपञ्चकके उपर सर्वथा प्रकारसे विहार करनाही नही कल्पे तथापि अभिवर्द्धितमें वीश-दिनके उपरान्त विहार करे तो छकायके जीवोंको विराधना करने वाला और आत्मघाति आज्ञा विराधक कहा जाता है सो श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है इसलिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें दशपञ्चक कदापि नही बनते हैं जहां जहां दशपञ्चके पचासदिने पर्युषणा करनेकी व्याख्या लिखी है सो सब चंद्रसंवत्सरमें करनेकी समझनी—

और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने गृहस्थी लोगोंको साधु कह देवें कि हम यहां वर्षाकालमें ठहरे हैं इस वाक्यको देखके तीनों महाशय वीशदिनकी पर्युषणाको कहने मात्रही ठहराते होवेंगे तब तो इस तीनों महाशयोंकी गुरुगम रहित तथा विवेक बिनाकी अपूर्व विद्वत्ताको देखकर मेरे को बड़ा आश्चर्य आता है क्योंकि जैसे अभिवर्द्धित संवत्सर में वीश दिने गृहस्थी लोगोंको साधु कह देवें कि हम यहां

सहित होती थी सो निश्चय निःसन्देहकी ज्ञात है और पर्युषणा अज्ञात तथा ज्ञात दो प्रकारकी सबी शास्त्रकारोंने कही है इसलिये इन तीनों महाशयोंने ज्ञात पर्युषणाका भी दो भेद लिखके बीशदिनकी कहने मात्र ठहराई तथा पचासदिनकी वार्षिक कृत्योंसे ठहराई सो सर्वथा शास्त्र विरुद्ध हैं क्योंकि जैसी ज्ञात पर्युषणा चंद्रसंवत्सरमें पचास दिने होती थी तैसीही अभिवर्द्धित संवत्सरमे बीशदिने होती थी सो ज्ञात पर्युषणाका एकही भेद सर्व शास्त्रकारोंने लिखा है परन्तु ज्ञात पर्युषणाका दो भेद कोई भी प्राचीन शास्त्रोंमें नही है इसलिये तीनों महाशयोंका ज्ञात पर्युषणा दो प्रकारकी लिखना प्रत्यक्ष शास्त्र विरुद्ध हैं—

और आषाढ़पूर्णिमाको योग्यक्षेत्राभावादि कारणे श्रावण कृष्णपञ्चमी, दशमी वगैरह पाँच पाँचदिने जो पर्युषणा कही है सो गृहस्थी लोगोंकी न जानी हुई और अनिश्चय होती हैं इसलिये अज्ञात और अनिश्चय पर्युषणामें वार्षिक कृत्य नहीं बनते हैं किन्तु बीशे तथा पचाशे ज्ञात और निश्चय पर्युषणामें वार्षिक कृत्य बनते हैं।

और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रके अष्टमाध्ययन (पर्युषणाकल्प) की चूर्णिका और श्रीनिशीथसूत्रके दशवें उद्देशेकी चूर्णिका पाठमें श्रीकालकाचार्यजीने कारणयोगे चतुर्थीकी पर्युषणा करी है सो भी चन्द्रसंवत्सरमें करी थी परन्तु अभिवर्द्धितमें नहीं क्योंकि खास चूर्णिकार महाराजने अभिवर्द्धितमें बीशे तथा चन्द्रमें पचाशे ज्ञात निश्चय पर्युषणा करनी कही है जिसका सब पाठ उपरोक्त बतलाया है इसलिये मासवृद्धि होने भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापते है सो मिथ्यावादी है क्योंकि

पर्युषणा करनेसे कात्तिक चौमासी तक पीछाड़ीके १००दिन रहते हैं तो भी कोई दूषण नहीं कहा है परन्तु मासवृद्धि की गिनती निषेध करनेसे श्रीअनन्ततीर्थङ्करगणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घनरूप महान् मिथ्यात्वके दूषणकी अवश्यही प्राप्ति होती है तथापि इन तीनों महाशयोंने तपरके दूषणका जरा भी विचार न किया और श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्थापनका भी बिलकुल विचार न करते सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें पाठ लिखके भोले जीवोंको सत्य बात परसे श्रद्धा उतारके जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वरूप झगड़ेकी डोर हाथमें देकर कदाग्रहमें गेरदिये हैं और अधिकमासको गिनतीमें लेने वालेको उलटा मिथ्या दूषण दिखाते हैं और अधिक मासकी गिनती नहीं करते भी आप निर्दूषण बनके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठसे सत्यवादी तथा आज्ञा के आराधक बनते हैं जिसका पाठ इसी पुस्तकमें पृष्ठ १९। ३० में और भावार्थः पृष्ठ ३२। ३३ में छपगया है इसलिये इस जगह पुनः पाठ न लिखते थोड़ासा मतलब लिखके पीछे इसमें जो जो शास्त्रविरुद्ध है सो दिखावेंगे—तीनों महाशयोंका खास अभिप्रायः यह है कि अधिक मासको गिनती में करनेवालोंको दो आश्विन मास होनेसे दूसरा आश्विनमें चौमासी कृत्य करना पड़ेगा और दूसरा आश्विनमें चौमासी कृत्य न करते कार्त्तिकमें करेंगे तो पर्युषणाके पीछाड़ी १०० दिन हो जावेंगे तो श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके वचनको बाधा आवेगा क्योंकि—समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइ-राइ मासे विइक्कंते सत्तरिएहिंराइंदिएहिं इत्यादि श्रीसम-

उत्सूत्र भाषणरूप वृथा क्यों परिश्रम करके भोले जीवोंको
भ्रमजालमें गेरते संसारवृद्धिका भय कुछ भी नही रखता है
इसलिये अब लाचार होकर भव्यजीवोंको शुद्धश्रद्धा होनेके
कारणरूप उपकारके लिये और तीनों महाशयोंका सूत्र-
कारके विरुद्ध उत्सूत्रभाषणके कदाग्रहको दूर करनेके वास्ते
सूत्रकार और वृत्तिकार महाराजके अभिप्राय को इस जगह
लेख दिखता हुं—

श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायाङ्गजीमूलसूत्र तथा
श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरिजी कृत वृत्ति और
गुजराती भाषा सहित छपके प्रसिद्ध हुआ है जिसके पृष्ठ १२१
में तथाच तत्पाठः—

समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते
सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासंपज्जोसवेइ ॥

अथ सप्ततिस्थानके किमपि लिख्यते समणेत्यादि—
वर्षाणां चातुर्मासप्रमाणस्य वर्षाकालस्य सविंशतिदिवसाधिके
मासे अतिक्रान्ते पञ्चाशतिदिनेष्वतीतेष्वित्यर्थः सप्तत्याञ्च
रात्रिदिनेषु शेषेषु भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थं, वर्षास्वावासो
वर्षावासः वर्षावस्थानं पज्जोसवेइत्ति परिवसति सर्वथा करोति
पञ्चाशति प्राक्तनेषु दिवसेषु तथाविध वसत्यभावादिकारणे
स्थानान्तरमप्याश्रयति भाद्रपद शुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूला-
दावपि निवसतीति हृदयमिति ॥

भावार्थ.—श्रमण भगवान् श्रीमहावीरस्वामिजीने वर्षा-
काल के चारमास कहे है जिसके १२० दिन होते हैं जिसमें
से एकमास अधिक बीसदिन याने ५० दिन जानेसे और
७० दिन पीछाड़ी बाकी रहनेसे भाद्रपद शुक्लपञ्चमीके

मसिंगसिरात्रं मासं पंचाशतं दिनामीति अत्र चैते दोषाः एकाद्यधिरात्रगया,आयइगं विगमरागुकंटेसु ॥ पुरुषगअसि-हणफको, झग्रायगतेप उद्यगरए ॥ १ ॥ अरगुत्रेसु पहेसु, पुढयी उइगंपहोश्दुविहंतु ॥ उम्रपपावणअगणि, इहरापण ओहरिपकुंपुत्ति ॥ २ ॥ तत स्त्र प्रावृषि किमत आह एकस्माद् ग्रामा दयधिभूता दुत्तरग्रामाणा समतिक्रमो ग्रा-मानुग्रामं तेन ग्रामपरम्परयेत्यर्थः अथवा एक ग्रामाद्मपु-पश्चाद्ग्रामाभ्यां ग्रामोऽनुग्रामो गामोय अणुगामोय गामा-णुगामं तत्र दूइज्जित्त एत्ति द्रोतुं विहर्तुमित्युत्सर्गो पवादमाह पंचेत्यादि तथैव मयर सिह भरपयेत ग्रामा-चयालये निवकाश्रयेत् कश्चित् उदकौघेया आगच्छति ततो सप्रेदिति उक्तंच आयाहे दुभिक्खे, भएदओघंसियामहं-तंसि ॥ परिभवणं तालणया, जया परोयाकरेज्जासित्ति ॥१॥ तथा वर्षासु वर्षाकाले वर्षावृष्टिः वर्षावर्षायवर्षासु वा आवा-सोऽवस्थानं वर्षावास स्तं स च जघन्यत आकार्त्तिक्या दिन सप्ततिप्रमाणो मध्यमवृत्त्या च चतुर्मासप्रमाण उत्कृष्टतः षण्मास-मान स्तदुक्तं इयसत्तरीजहन्ना, असिईनउईवितुत्तरसयंच ॥ जइवासेमग्गसिर, दसरायातिन्निउक्कोसा ॥१॥ [मासमित्यर्थः] काउणमासकप्प, तथेवठियाणतीत मग्गसिरे ॥ सालंबणाण-छम्मा, सिओउ जिठ्ठोग्गहोहोइत्ति ॥ २ ॥ पज्जोसवियाणति परीति सामस्त्येनो षितानां पर्युषणाकल्पेन नियमवद्धस्तु मारब्धानामित्यर्थः पर्युषणा कल्पश्च न्यूनोदरताकरणं विकृति-नवकपरित्यागः पीठफलकादि संस्तारकादान मुच्चारादि मात्रकसंग्रहणं लोचकरणं शैक्षाप्रव्राजनं प्राग्गृहीतानां भस्म-डगलकादीना परित्यजन मितरेषां ग्रहणं द्विगुणवर्षोपग्रहो-

एवरत्पवाग मभिमद्योपकरणग्रहणं न मोगागोत्मारपर
ननगयंम मित्यादि ।

देखिये उपरोक्त पाठमें श्रीवृत्तिकार महाराजनें था
मासके वर्षाकालमें अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीस दिन और
चन्द्र संवत्सरमें पचास दिन के उपरान्त विहार करने वालोंको
ए कार्तक कोटोंकी विराधना करने वाला कहा अर्थात् वीसे
और पचासे अवश्यही पर्युषणा करनी कही सो चारमास
कार्तिक तक याने अभिवर्द्धितमें वीस दिने पर्युषणा
करनेसे पीछाडी १०० दिन और चन्द्रमें पचास दिने पर्युषणा
करनेसे पीछाडी ७० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे ॥ इत्यादि ॥

अब श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधन करने
वाले मोक्षाभिलाषि निर्पक्षपाती सज्जन पुरुषों को इस
जगह विचार करना चाहिये कि श्रीगणधर महाराजनें
श्रीसमवायांगजी सूत्रमें और श्रीअभयदेवसूरिजी महा-
राजनें वृत्तिमें मास वृद्धिके अभावमें चन्द्रसंवत्सरमें जैन
ज्योतिषके पंचाङ्गकी रीतिमुजब वर्तने के अभिप्रायसे चार
मासके वर्षाकालमें प्रथम पचास दिन जानेसे और पीछाडी
७० दिन रहने से पर्युषणा करनी कही है तथा विशेष खुलासा
करते वृत्तिकार महाराजनें योग्यक्षेत्रके अभावसे इस नीचे भी
पचास दिने अवश्यही पर्युषणा करनी कही और अभिवर्द्धित
संवत्सरमें वृत्तिकार महाराजनें और पूर्वधरादि महाराजोंनें
वीस दिने अवश्यही पर्युषणा करनी कही है जिससे पी-
छाडी एकसो दिन रहते हैं;—तथापि ये तीनों महाशय
अपनी कल्पनामें वृत्तिकार और पूर्वधरादि महाराजों का
अभिवर्द्धितमें वीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाडी एकसो

दिन रहते हैं) इस अभिप्राय के व्यवहारको जड़मूलसे ही उड़ा करके अभिवर्द्धितमें भी पचास दिने पर्युषणा और पीछाड़ी ७० दिन रखनेका शास्त्रकारों के विरुद्धार्थमें वृथा आग्रहसे हठ करते हैं क्योंकि श्रीगणधर महाराजने श्रीसमवायांगजी मूलसूत्रमें और श्रीअभयदेवसूरिजीने वृत्तिमें प्रथम पचास दिन जानेसे और पीछाड़ी ७० दिन रहनेसे जो पर्युषणा करनी कही है सो चन्द्रसंवत्सरमें नतु अभिवर्द्धितमें तथापि तीनों महाशय श्रीसमवायांगजीका पाठको अभिवर्द्धितमें स्थापन करते हैं सो निःकेवल श्रीगणधर महाराजके और वृत्तिकार महाराजके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषण करते हैं इसलिये मास वृद्धि होते भी पीछाड़ी ७० दिन रखनेका पाठको दिखाकर संशय रूप भ्रमजालमें भोले जीवोंको गेरना सर्वथा शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें है इसलिये मास वृद्धि होते भी बीस दिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणा के पीछाड़ी एकसो दिन प्राचीन कालमें भी रहते थे उसमें कोई दूषण नहीं—और अब जैन पंचाङ्गके अभावसे वर्तमानिक लौकिक पंचाङ्गमें श्रावणादि हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसे शास्त्रानुसार तथा पूर्वाचार्योंकी आज्ञा मुजब पचास दिने दूजा श्रावण शुदीमें पर्युषणा श्रीखरतरगच्छादि वालोंके करनेमें आती है जिन्होंको पर्युषणाके पीछाड़ी कार्त्तिक तक एकसो दिन स्वाभावसेही रहते हैं सो शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है क्योंकि दो श्रावणादि होनेसे पाँच मासके १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा होता है जिसमें पचास दिने पर्युषणा होवे तब पीछाड़ीके एकसो दिन नियमित रीतिसे रहते हैं यह बात जगत्प्रसिद्ध है इसमें कोई भी दूषण नहीं है इसलिये

अधिक मासको गिनती करने वाले श्रीखरतरगच्छादि वाले पर्युषणाके पीछाड़ी एकसो दिन होते हैं परन्तु कोई शास्त्र वचनको बाधाका कारण नहीं है और श्रीसमवायांगजी पीछाड़ी ७० दिन रहने का कहा है सो मास वृद्धिके अभाव है इसका खुलासा उपरोक्त देखो इसलिये मास वृद्धि होनेसे १०० दिन होवे तो भी श्रीसमवायांगजी सूत्रके वचनको कोई भी बाधाका कारण नहीं है। तथापि तीनों महाशय श्रीसमवायांगजी सूत्रके नामसे पीछाड़ीके ७० दिन रखनेका हठ करते हैं। और श्रीखरतरगच्छादि वालोंके उपर आक्षेपरूप पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रखने के लिये दो आश्विनमास होनेसे दूसरा आश्विनमें चौमासी कृत्य करनेका दिखाते हैं। और कार्तिक में करनेसे १०० दिन होते हैं जिससे श्रीसमवायांगजी सूत्रका पाठके बाधक ठहराते हैं सो मिथ्या है क्योंकि श्रीखरतरगच्छवाले श्रीसमवायांगजी सूत्रका पाठके बाधक कदापि नहीं ठहरते हैं किन्तु तीनों महाशय और तीनों महाशयोंके पक्षधारी एक ही श्रीसमवायांगजी सूत्रके पाठके उत्थापक बनते हैं सो ही दिखाता हुं। तीनो महाशय (समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राइमासे वीइक्कंते इत्यादि) पाठको तो त्याग करके मंजूर करते हैं। इस पाठमें पचास दिन कहे हैं, वर्तमानिक कालानुसार पचास दिने पर्युषणा इस पाठसे करनी मासोंमें तो श्रावणमासकी वृद्धि होते दूसरा श्रावण शुदीमें पचासदिने पर्युषणा तीनों महाशयोंको और इन्हों के पक्षधारिओंको मंजूर करनी चाहिये। सो नहीं करते हैं और दो श्रावण होते भी ८० दिने पर्युषणा करते

लिये श्रीसमवायांगजी सूत्रका इसी ही पाठको म
ाले तथा उत्थापक तीनों महाशय और इन्होंके
ी प्रत्यक्ष बनते हैं । तथापि निर्दूषण बनने के लिये
ः मासकी गिनती निषेध करके, ८० दिनके बदले ५०
ानकर निर्दूषण बनते हैं । और पर्युषणाके पीछाड़ी
श्विनमास होनेसे कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं
ः इसको निषेध करने के लिये अधिकमासकी गिनत
करके १०० दिनके बदले ७० दिन मानकर अपनी मनो
से निर्दूषण बनते हैं और श्रीसमवायांगजी सूत्र
आराधक बनते हैं । परन्तु शास्त्रार्थको आत्मार्थी पुरुष
पातसे देखके विचार करते हैं तबतो दोनों अधिक
गिनतीमें निषेध करनेका तीनों महाशयोंका और
पक्षधारिओंका महान् अनर्थ देखके बड़े आश्चर्य म-
दको प्राप्त होते हैं क्योंकि तीनो महाशय और इन्होंके
ी अधिकमासकी गिनती निषेध करके श्रीसमवायांगजी
पाठके आराधक बनते हैं परन्तु खास इसी ही श्रीसम-
जी मूलसूत्रमें अनेक जगह खुलासा पूर्वक अधिकमासको
किया है जिसमें का ६१ और ६२ वा श्रीसमवायांगका
ी वृत्ति भाषा सहित इसी ही पुस्तकमें ३९ । ४० । ४१
ं छप गया है जिसमें पांच संवत्सरोंका एक युगमें
अधिकमास को दिनोंमें पक्षोंमें मासोंमें वर्षोंमें खुलासा
गिनके प्रमाण दिखाया है इस लिये अधिकमासकी
का निषेध कदापि नहीं हो सकता है तथापि

‌ मानते हैं और मासवृद्धि दो श्रावणादि होते
८० दिने पर्युषणा करणी और वर्तमानिक
१५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा होते भी
वाली ७० दिन रखनेका आग्रहसे हठकरना,
हे पीछाड़ी मास वृद्धि होनेसे १०० दिन मानने
न ठहराना। और अधिक मासकी गिनती
भी आप निषेध करना। ऐसा जो जो
र्तमानकालमें मानते है मट्टारणते है तथा
है—सो निःकेवल अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें
करते दृष्टिरागी भोलेजीवों को जिनाज्ञा
हकी भ्रमजालमें गेरके अपनी आत्माको
रते है इसलिये अधिकमासके निषेध करने
निषेध नही करसकते है,—और अधिक-
ध करनेकी ऐसी बाललीला मिथ्यात्व रूप मत
पोल लीयही, क्या, अनन्तगुणी अविसंवादी
ज अतिउत्तमोत्तम श्रीतीर्थंकर केवलज्ञानी
थित शास्त्रोंमें कदापि चल सकती है अपितु
रसें नही, नही, नही, क्योंकि अधिकमास को
णधर पूर्वधरादि महाराज खुलासा पूर्वक
प्रमाण करते हैं। इसलिये तीनों महाशय
पक्षधारी वर्तमानिक महाशयोंकी अधिक
व करनेकी सर्व कल्पना संसार वृद्धि कारक
हेतु हैं इसलिये वर्तमानिक श्रीतपगच्छादि वाले
ोक्षाभिलाषि निष्पक्षपाती सज्जन पुरुषोंसे मेरा
! कि—हे धर्म बन्धवों तुमको संसार वृद्धिका

भय होवे और श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधन करने की इच्छा होवे तो अधिक मासकी गिनतीको प्रमाण करो और दो श्रावण हो तो दूजा श्रावणमें तथा दो भाद्रपद हो तो प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनी मंजूर करो करावो श्रद्धो परूपो और मास वृद्धि होनेसे पर्युषणाके पीछाड़ी १०० दिन स्वभाविक होते है जिसको मान्य करो इस तरहका जब प्रमाण करोगे तब ही जिनाज्ञाके आराधक सिद्ध पण बनोगे। नहीं तो कदापि नहीं, आगे, इच्छा तुम्हारी—इतने परभी श्रीसमवायांगजी सूत्रका पर्युषणा के पहिले ५० और पीछाड़ी ७० दिनका पाठको दिखाकर मास वृद्धि होते भी दोनुं बात रखने के लिये जितनी जितनी कल्पना जोजो महाशय करते रहेंगे सोसो सूत्रकारके विरुद्धार्थमें वृथा परिश्रम करके उत्सूत्र भाषक बनेंगे—क्योंकि ५० और ७० दिन चारमासके १२० दिनका वर्षाकाल संबंधी पाठ है इसलिये दो श्रावणादि होनेसे पाँचमासके १५० दिनका वर्षाकालमें श्रीसमवायांगजीका पाठको लिखना सो प्रत्यक्ष सूत्रकारके वृत्तिकार के और न्याय युक्तिसे भी सर्वथा विरुद्धार्थमें हैं इसका विशेष खुलासा उपरोक्त देखो।

और एक युगके पांच संवत्सरोमें दोनुं अधिकमासकों नाम श्रीसमवायाङ्गजी मूलसूत्रमें तथा वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रमाण किये है जिसके विषयमें २२ शास्त्रोंके प्रमाण तो इसी ही पुस्तक के एष्ट ३१ तथा २८ और २९ मे छपगये है और भी सूत्र, वृत्ति, प्रकरण, वगैरह अनेक शास्त्रोंके प्रमाण अधिक मासको गिनतीमें करने के लिये इसको मिले है सो आगे लिखने में आवेंगे, अधिक

अवश्यही गिना जाता है इस लिये धर्मकार्यों में और गिनती का प्रमाणमें अधिक मासका शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक प्रमाण करना ही उचित होनेसे आत्मार्थियों को अवश्य ही प्रमाण करना चाहिये। अधिक मास को प्रमाण करना इसमें कोई भी तरहका झटयाद् नहीं है किन्तु अधिक मास की गिनती निषेध करना सो निःकेवल शास्त्रकारों के विरुद्धार्थमें हैं.—तथापि इन तीनों महाशयोंने बड़े जोरसे अधिक मासकी गिनती निषेध किवी तब उपरोक्त समीक्षा मुझेभी अधिक मासकी गिनती करने के सम्बन्ध की करनी पड़ी और आगे फिर भी इन तीनों महाशयोंने अपनी चातुराई अधिक मास को निषेध करने के लिये प्रगट किवी है जिसमें के एक तीसरे महाशय श्री विनयविजयजी कृत श्रीसुखबोधिका वृत्तिका पाठ इसही पुस्तक के पृष्ठ ६९।१२।१३ मे छपा था जिससेका पीछाड़ीका शेष पाठ रहा था जिसको यहाँ लिखके पीछे इसीकी समीक्षा भी करके दिखाता हु श्रीसुखबोधिकावृत्ति के पृष्ठ १४७ की दूसरी पुठी की आदि से पृष्ठ १४८ के प्रथम पुठी की मध्य तक का पाठ नीचे मुजब जानो यथाः—

किं काकेन भक्षितः किं वा तस्मिन्मासे पापं न लगति उत बुभुक्षा न लगति इत्याद्यु पहस न्मास्वकीयं ग्रहिलत्वं प्रकटयत स्त्वमपि अधिकमासे सति त्रयोदशसु मासेषु जातेष्वपि साम्वत्सरिक क्षामणे, बारसण्हं मासाणमित्यादिकं वदन्नाऽधिकमासंमंगीकरोषि एवं चतुर्मास क्षामणे ऽधिक-मास सद्भावेपि, चउण्हंमासाणमित्यादि पक्षिक क्षामणके-ऽधिक तिथि संभवेपि, पन्नरसण्हं दिवसाणमिति च ब्रूषे-

गिमग्गए पज्जोसविंति एगत्तग्गाणो मेसताल पज्जो॰।
विनाणं अवग्रात्तत्ति, श्रीनिशीथचूर्णिदशमोद्देशक वचना-
त्पाद पूर्णिगायामेव लोचादि कृत्यविशिष्टा पर्युषणा
संख्या स्यात् इत्यलं प्रसंगेन—

उपरोक्तपाठ जैसा मैंने देखा वैसा ही यहाँ छपा दिया
और जैसे श्रीविनयविजयजीने उपरोक्त पाठ लिखा है
सा ही अभिप्रायः का श्रीधर्मसागरजीने श्रीकल्पकिरणा-
ली वृत्तिमें और श्रीजयविजयजीनें श्रीकल्पदीपिका वृत्ति
अपनी अपनी विद्वत्ताकी चातुराई से अनेक तरहके
टपटांग, पूर्वापर विरोधी विसंवादी और उत्सूत्र भाषण
प शास्त्र कारोंके विरुद्धार्थ में अपनी मनकल्पना में
रखके गच्छकदाग्रही दृष्टि रागी श्रावकोंके दिलमें जिनाज्ञा
रुद्ध मिथ्यात्वका भ्रमगेरा हैं। जिनका सबपाठ यहाँ लिखने
ग्रन्थ बढ़जावे,और वाचकवर्गको विस्तारके कारणसे विशेष
तलगे इसें नही लिखा और तीनों महाशयोंका अभिप्राय
रके पाठ मुजब ही खास एक समान है, इसलिये तीनों
हाशयोंके पाठको न लिखते एकही श्रीसुखबोधिका वृत्तिका
ठ उपरमें लिखा है उसीकी समीक्षा करता हुं सो तीनों
हाशयोंके अभिप्रायका लेखकी समझ लेना—अब समीक्षा-
ते तीनों महाशय अधिकमासकी गिनती निषेध
के फिर उसीकों ही पुष्टी करने के लिये प्रश्नोत्तर रूपमें
खते है कि—अधिकमासको गिनती में नही करते होतो
हं काकेनः भक्षितः;—इत्यादि) क्या अधिकमासको काकने
ण करलिया किं वा तिस अधिक मासमें पाप नहीं
ता हैं और उस अधिकमासमें क्षुधा भी नही लगती है

जो अधिकमासको गिनतीमें नहीं लेते हो अर्थात् जो अधिक मास में पाप लगता होवे और क्षुधा भी लगती होवे तो अधिकमासको गिनतीमें भी प्रमाण करके मंजूर करना चाहिये इत्यादि मतलबसे उपहास करता प्रश्नकार वादीको उत्तरमें फिर श्रीविनयविजयजी अपनी विद्वत्ता के जोरसे प्रतिवादी बनके उसके प्रश्नका उत्तर देते ऐसे लिखते है कि– भावत्कीयं पाण्डित्यं प्रकटयन् त्वमपि अधिक मासे सति त्रयोदशसु मासेषु जातेष्वपि–इत्यादि अर्थात् अधिकमासको क्या कालने भक्षण करलिया तथा क्या तिस अधिकमासमें पाप नहीं लगता है और क्षुधा भी नहीं लगती है जो गिनतीमे नहीं लेते हो इत्यादि उपहास करता हुआ तेरा पागलपना प्रगट मत कर क्योंकि—त्वमपि अर्थात् हमारी तरह जिस संवत्सरमें अधिकमास होता है उसी संवत्सरमें तेरहमास होते भी सांवत्सरिक क्षामणे 'बारसण्हंमासाणं' इत्यादि बोलके अधिकमासको गिनती में अङ्गीकार तूं भी नहीं करता है और वैसे ही चौमासी क्षामणेमें भी अधिकमास होनेसे पांच मासका सद्भाव होते भी 'चउण्हंमासाणंइत्यादि बोलके अधिकमासको गिनती नहीं करता हैं ;—

अब हम उपरके मतलब की समीक्षा करते हैं कि हे पाठकवर्ग ! भव्यजीवों तुम इन तीनों विद्वान् महाशयों की विद्वत्ताका नमुना तो देखो–प्रथम किस रीतिसे प्रश्न उठाते हैं और फिर उसीका उत्तरमें क्या लिखते हैं प्रश्नके समाधानका गन्ध भी उत्तरमें नहीं लाते और और बातें लिख दिखाते हैं क्योंकि उपरोक्त प्रश्नमें अधिक मासको गिनतीमें नहीं लेते हो तो क्या कालने

ग्रहण करलिया इत्यादि प्रश्न उठाकर इसका संबंध छोड़के—तुंभी सांवत्सरिक क्षामणामें तेरहमास होते भी बारहमासके क्षामणे करता है इत्यादि लिख कर क्षामणाका, संबंध लिख दिखाया और प्रश्न कारके ऊपर ही गेरके अपनी विद्वत्ता दिखाई परन्तु सम्पूर्ण प्रश्नके संबंधका समाधान उत्तरमें शास्त्रोंके प्रमाणसे तो दूर रहा परन्तु युक्ति पूर्वक भी कुछ नहीं कर शके तथा अलौकिक अपूर्व विद्वत्ता प्रश्नके उत्तर देनेमें तीनों विद्वानोंने खर्च किवी हैं सो पाठक वर्ग बुद्धि जन पुरुष स्वयं विचार लेना, और तुंभी अधिकमास होनेसे तेरह मासके क्षामणा न करते बारह मासका करके अधिक मासको अङ्गीकार नही करता हैं इत्यादि तीनों महाशयोंने लिखा हैं सो मिथ्या हैं क्योंकि अधिक मासकी गिनती करने वाले मुख्य श्रीखरतर गच्छवाले जब अधिक-मास होता है तब अभिवर्द्धित संवत्सराश्रय सांवत्सरिक क्षामणे में तेरह मास तथा छवीश पक्षादि और अभिवर्द्धित चौमासेमें भी पांचमास तथा दशपक्षादि खुलासा कहकर सांवत्सरिक और चौमासी क्षामणेमें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करते हैं इसलिये अधिक मासको क्षामणामें अङ्गीकार नही करता हैं ऐसा तीनो महाशयों का लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या हो गया और इस जगह किसीको यह संशय उत्पन्न होगा कि तेरह मास छवीश पक्षादि किस शास्त्रमें लिखे है तो इस बातका मालूम महाशय श्रीधर्मविजयजी के नामसे पर्युषणा विचार नामकी छोटीसी पुस्तक की आगे में समीक्षा करूंगा वहां विशेष खुलासा शास्त्रोंके प्रमाणसे लिखा जायगा सो पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेगा ।

और पाठकवर्ग तथा विशेष करके श्रीतपगच्छके मुनि महाशय और श्रावकादि महाशयों को मेरा इस जगह इतना ही कहना है कि आप लोग निष्पक्षपातसे विवेक बुद्धि हृदय में लाकर तीनों महाशयोंके लेखको टुक नजरसे थोड़ासा भी तो विचार करके देखो इस जगह क्षामणा के सम्बन्धमें दूसरों को कहनेके लिये तीनों महाशयोंने 'अधिकमासैसति त्रयोदशसु मासेषु जातेष्वपि, इत्यादि । तथा 'एवं चतुर्मासक-क्षामणेऽधिकमास सद्भावेऽपि,—यह वाक्य लिखके अधिकमास को गिनतीमें लेकर तेरह मास अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें और चौमासामें भी अधिक मासका सद्भाव मान्यकर अभिवर्द्धित चौमासा पाँचमास का दिखाया । इस जगह उपरोक्त इस वाक्यसे अधिकमासको तीनों महाशयोंने प्रमाण करके मंजूर करलिया—और पहिले पर्युषणाके सम्बन्धमें अधिक श्रावणकी और अधिक आश्विनकी गिनती निषेध कर दिवी, जब क्षामणा के सम्बन्धमें अधिक मासकी गिनतीमें खुलासा मञ्जूर करलिया तो फिर विसम्वादी वाक्यरूप संसार वृद्धिकारक अधिक मासकी गिनतीका निषेध वृथा क्यों किया इसका विशेष विचार पाठकवर्ग स्वयं करलेना,—और अब श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक महाशयोंको मेरा इतनाही कहना है कि आप-लोग तीनों महाशयोंके वचनोंको प्रमाण करते हो तो इन्होंके लिखे शब्दानुसार अधिक मासकी गिनती मंजूर करोगे किम्वा विसंवादी पूर्वापर विरोधी वाक्यरूप निषेधको मंजूर करोगे जो गिनती मंजूरकरोगे तबतो वर्त्तमानिक लौकिक पञ्चाङ्गमें दो श्रावण या दो भाद्रपद अथवा दो आश्विनादि मासोंकी वृद्धि होनेसे अधिक मासका गिनतीमें

निषेध करनाही नही बनेगा, और जो निषेधको मंजूर करोगे तब तो अनेक सूत्र, वृत्ति भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंके न माननेवाले उत्थापक बनोंगे इसलिये जैसा तुम्हारी आत्माको हितकारी होवे वैसा पक्षपात छोड़कर ग्रहण करना सोही सम्यक्त्वधारी सज्जन पुरुषोंको उचित है मेरा तो धर्मबन्धुओंकी प्रीति से हितशिक्षारूप लिखना उचित था सो लिख दिखाया मान्य करना किंवा न करना सो तो आपलोगों की खुसी की बात है ;—

और आगे भी सुनो, तीनों महाशयोंने पाक्षिक क्षामणे अधिक तिथि होते भी "पन्नरसण्हंदिवसाणं", ऐसा कहके अधिक तिथि को नहीं गिनता है यह वाक्य लिखा है इससे मालुम होता है कि तिथिओंकी हाणी वृद्धि की और पाक्षिक क्षामणा संबंधी जैन शास्त्रकारोंका रहस्यके तात्पर्य्यको तीनों महाशयोंके समझमें नही आया दिखता है नही तो यह वाक्य कदापि नही लिखते इसका विशेष खुलासा श्रीधर्मविजयजीके नामसे पर्युषणा विचार नामकी छोटीसी पुस्तक की मैं समीक्षा आगे करूंगा वहां अच्छी तरह में तिथियों की हाणी वृद्धि संबंधी और पाक्षिक क्षामणा सम्बधी निर्णय लिखनेमें आवेगा—और मयकल्पि विहारका लिखा सो मासवृद्धिके अभावसे मतु पौषादिमास वृद्धि होते भी क्योंकि मासवृद्धि पौष तथा आषाढ़की प्राचीन कालमें होती थी अब और वर्त्तमानमें भी वर्षाऋतुके सिवाय मास वृद्धिमें अधिक मासकी गिनती करके नवकल्पी विहार होता है यह बात शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इस का भी विशेष निर्णय यहां ही आगे में आवेगा—और

की दिखाता हुं,—सम्वत् १९६६ का जोधपुरी चंडु पञ्चांगमें आषाढ़ शुक्ल ५ के दिन सूर्य उत्तरायनसे दक्षिणायन में हुवा था जिसमें मास वृद्धिसे दो श्रावण मास हुये तब अधिक मासके दिनोंकी गिनती सहित चन्द्रमासकी अपेक्षासे तिथियोंकी हाणी वृद्धि हो करके भी १८३ वें दिन मार्गशीर्ष शुक्ल ९ के दिन फिर भी सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में हुया है सो पाठकवर्गके सामनेकी ही बात हैं, इसी तरहसे लौकिक पञ्चाग में हरेक अधिक मासोंकी गिनतीसे सूर्यचारकी गिनती समझ लेना और सम्वत् १९६९में दाम दो आषढ़ मास होवेगें तबभी सूर्यचारकी गतिको देखके पाठकवर्ग प्रत्यक्ष निर्णय करलेना—और मेरेपास विक्रम सम्वत् १९०१ से लेकर सम्वत् १९९९वें तकके अधिक मासोंका प्रमाण मौजूद है परन्तु ग्रन्थगौरवके कारणसे नहीं लिखता हुं, इसलिये तीनों महाशय अधिक मास में सूर्यचार नहीं होता है ऐसा ठहराते है सो जैनशास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वक और लौकिक पञ्चाङ्गकी रीतिसे भी प्रत्यक्ष मिथ्या हैं तथापि तीनों महाशयोंने भोले जीवोंकों अपने पक्ष में लानेके लिये (आसाढ़मासे दुप्पया) इस वाक्यको लिखके सूत्रकार गणधर महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध हो करके और फिरसी अधूरा लिख दिया क्योंकि गणधर महाराज श्रीसुधर्म्मस्वामिजीनें श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रके छवीश (२६) वें अध्ययन में साधुसमाचारी सम्बन्धी पौरस्याधिकारे-असाढ़ मासे दुप्पया, पौषमासे चउप्पया ॥ चित्तासोएसु मासेसु, तिप्पया हवइपोरसी ११ इत्यादि १२।१३।१४।१५।१६ गाथाओं से सुखासे पूर्वक स्वाभावि मास वृद्धिके अभावसे स्वाभाविक

द्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें ही पर्युषणा करनी
ाज्ञानुसार शास्त्रानुसार है नतु दूसरेमें, इतनेपर भी
ावादीजन शास्त्रोंके विरुद्ध होकरके भी दूसरे भाद्रपदमें
ुषणा करेंगे तो उन्होंके इच्छाकी बात ही न्यारी है;—

और तीनों महाशय दो चतुर्दशी होनेसे प्रथम चतुर्दशी
ा छोड़कर दूसरी चतुर्दशीमें पाक्षिक कृत्य करनेका कहते
सोभी शास्त्रविरुद्ध है इसका विशेष खुलासा तिथिनिर्णयका
धिकारमें आगे विस्तार पूर्वक शास्त्रोंके प्रमाण सहित
रनेमें आवेगा,—

और अधिक मासमें देवपूजा, मुनिदान, पापकृत्योंकी
ालोचनारूप प्रतिक्रमणादि कार्य दिन दिन प्रति करनेका
हकर अधिक मासके तीस ३० दिनोंमें धर्मकर्मके कार्य
रनेका तीनों महाशय कहते है परन्तु अधिक मासको
िनती में लेनेका निषेध करते हैं, इसपर मेरेकों तो क्या
रन्तु हरेक बुद्धिजन पुरुषोंकों तीनों महाशयोंकी अपूर्व
ालबुद्धिकी चातुराईको देखकर बड़ाही आश्चर्य को उत्पन्न
िये विना नही रहेगा क्योंकि जैसे कोई पुरुष एक रुपैये को
प्रमाण मानता है परन्तु १६ आने, तथा ३२ आधाने और
४ पाव आने, आदिको मान्य करता हैं और एक रुपैये
ो मानने वालोंका निषेध करता है, तैसेही इन तीनों
हाशयोंका लेखभी हुवा अर्थात् अधिक मासके ३० दिनोंमें
र्मकर्म तो मान्य किये, परन्तु अधिक मासको मान्य नहीं
किया और मान्य करनेवालोंका निषेध [illegible] क्या अपूर्व
विद्वत्ता प्रगट तीनों महाशयोंने किवी [illegible] पुरुषने
ाब १६ आने तथा ३२ [illegible] . को

प्राप्त करलिये तब एक रुपैया तो स्वयं प्राप्त होगया, तथापि निषेध करना, सो ये प्रत्यक्ष पुरुषका काम है तैसेही तीनों महाशयोंने भी जब देवपूजा, मुनिदानावश्यक (प्रतिक्रमण) वगैरह धर्मकर्म ३० दिनोंमें प्राप्त लिये तब तो ३० दिनका एक अधिक मास तो स्वयं प्राप्त होगया, तथापि फिर अधिक मासको गिनती करनेमें निषेध करना सो हठवादसे मिथ्यात्व हायका हेतु अज्ञानता पर और तीनों महाशयोंकी विद्वत्ताकी न्यूनताका कारण है ,—

तथा और भी सुनिये जब इस जगह तीनों महाशय ३० दिनोंमें धर्मकर्म प्राप्त करते है जिससे अधिक मास भी गिनती में सिद्ध होता है फिर पर्युषणाके संबंधमें दो श्रावण के कारणसें भाद्रपद तक प्रत्यक्ष ८० दिन होते है जिसको निषेध करके ८० दिनके ५० दिन बनाते है और अधिक मासको निषेध करते है सो कैसे बनेगा अपितु कदापि नहीं, इस लिये जो ८० दिनके ५० दिन मान्य करेंगे तब तो अधिक मासके ३० दिनोंमें देवपूजा मुनिदानावश्यकादि कुछ भी धर्मकर्म करनाही नहीं बनेगा और अधिक मासके ३० दिनोंमें धर्मकर्म करना तीनों महाशय मंजूर करेंगे तो अधिक मासके ३० दिनका धर्मकर्म गिनतीमें आजायेगा तब तो दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते है जिसका निषेध करनाही नहीं बनेगा और ८० दिने पर्युषणा करनी सो भी शास्त्रोंके प्रमाण विना होनेसे जिनाज्ञा विरुद्ध तीनों महाशयोंके वचनसे भी सिद्ध होगई—इस बातको पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विशेष स्वयं विचार लेना ,—

और आगे फिरभी तीनों महाशयोंने अभिवर्द्धित

संवत्सरमें वीश दिने पर्युषणा होतीथी उसीको गृहस्थी लोगोंके करने मात्रही ठहरानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णिका दशवा उद्देशाके पर्युषणा विषयका आगे पीछेका संबंधको छोड़कर चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थ में सिर्फ दो पद, लिखके वृथा परिश्रम करके बड़ी भूल किवी हैं क्योंकि जो आषाढ़पूर्णिमाको पर्युषणा कही हैं सो गृहस्थी लोगके न जानी हुई, अप्रसिद्ध तथा अनिश्चयसे होती हैं उसमें लोचादिकृत्य करनेका कोई नियम नही हैं परन्तु वीशे, और पचासे, गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई प्रसिद्ध निश्चय पर्युषणा होती है उसीमें लोचादिकृत्योंका नियम है इस लिये वीश दिनकी भी पर्युषणा वार्षिक कृत्योंसे होती थी इसका विशेष विस्तार उपरमें पहिले अनेक जगह छपगया है और श्रीनिशीथचूर्णिके १० वे उद्देशेका पर्युषणा संबंधी संपूर्ण पाठ भी उपरमे पृष्ठ ९५ से ९९ तक और भावार्थ १०० से १०४ तक छपगया है और आगे पृष्ठ १०६ से यावत् ११७ तक उसी बातके लिये अनेक शास्त्रोंके प्रमाणसे और युक्तिपूर्वक विस्तारसे छपगया है सो पढ़नेसे सर्व निर्णय होजायेगा और आगे लौकिकमें दीवाली, अक्षय-तृतीयादि पर्व वगैरह तथा अन्यभी सर्व शुभकार्य्य अधिक मासको नपुंशक कहके ज्योतिषशास्त्रमें वर्जन किये हैं और अधिक मास में वनस्पति प्रफुल्लित नही होती हैं, इत्यादि बाते जो जो तीनों महाशयोंने लिखी हैं सो निःकेवल शास्त्रकारोंके अभिप्रायःकों जाने बिना विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप भोले जीवोंको अपने फन्दमें फसानेके लिये लिखके मिथ्यात्वके कारणसें वृथा परिश्रम

करके समय खोया है और आपका तथा आपके लेखको सत्य माननेवालोंका संसार वृद्धिका कारणभी शुरू किया है सो इन सब बातोंका यथार्थ शास्त्रोंके प्रमाणसें शास्त्रकार महाराजके अभिप्रायः समेत तथा न्यायपूर्वक युक्ति सहित अच्छी तरहसें खुलासाके साथ आगे चौथे महाशय श्रीन्यायांभोनिधिजी और सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नाममें लिखनेमें आवेगा,—

परन्तु इस जगह निष्पक्षपाती सत्यग्राही श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषोंसें थोड़ीसी वार्त्ता दिखाकर पीछे तीनों महाशयोंकी समीक्षाको पूर्ण करूंगा सो वार्त्ता अब सुनो ;—

तीनों महाशयोंने श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठकी [अंतरा वियसे कप्पइ नोसे कप्पइ तं रयणिं उवायणा वित्तए्ति] इस पदकी व्याख्या [अर्वागपि कल्पे परं न कल्पेतां रात्रिं (रजनीं) भाद्रपदशुक्लपञ्चमी दयावणा विशएलि अतिक्रमीतु इत्यादि] व्याख्या खुलासा पूर्वक किवी हैं जिसमें। प्रथम। आषाढ़-चौमासीसें पचास दिनके अंदरमें कारणयोगे पर्युषणा करना कल्पे परन्तु पचासवें दिनकी भाद्रपदशुक्लपञ्चमीकी रात्रिको उल्लङ्घन करना नही कल्पे। तथा दूसरी। पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते दशवें पञ्चकमें पचास दिने पर्युषणा जैन पञ्चाङ्गानुसार मासवृद्धिके अभावसें लिखी। और तीसरी। जैन पञ्चाङ्गानुसार एक युगमें पौष और आषाढ़ दो मासकी वृद्धि होनेसें बीशदिने पर्युषणा लिखी। और चौथी। अभी वर्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसें लौकिक-पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होती है इसलिये आषाढ़

१८

चौमासीसें पचास दिने पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्यों
आज्ञा है। इस तरहसें तीनों महाशयोंने चार प्रकार
खुलासा लिखा है इस पर बुद्धिजन पुरुष तत्त्वग्राही हो
विचार करो कि प्राचीनकालमें पाँच पाँच दिनकी वृ
करते दशवें पञ्चकमें पचास दिने मासवृद्धिके अभावसें जै
पञ्चाङ्गानुसार भाद्रपदशुक्लपञ्चमी परन्तु श्रीकालकाचार्य्यजीसे
चतुर्थीको पर्युषणा होती है परन्तु अब लौकिकपञ्चाङ्ग
हरेक मासकी वृद्धि होनेसें श्रावणभाद्रपदादि मास भी बढ़
लगे इसलिये मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी पचास दिने
पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी आज्ञा हुई तब मासवृद्धि हो
भी भाद्रपदमेंही पर्युषणा करनेका निश्चय नही रहा किन्तु दो
श्रावण होनेसें दूजा श्रावणमें और दो भाद्रपद होनेसें प्रथम
भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनेका नियम इस वर्त्तमानिक
कालमें रहा जिससें दो श्रावण तथा दो भाद्रपद और दो
आश्विन मास होनेसें पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिनका भी
नियम नही रहा अर्थात् मासवृद्धि होनेसें पर्युषणाके पीछाड़ी
१०० दिन श्रीतपगच्छकेही पूर्वजोंकी आज्ञानुसार रहते हैं
यह तात्पर्य तीनों महाशयोंके लिखे वाक्य परसें सूर्य्यकी
तरह प्रकाश कारक निकलता हैं सो न्यायकीही बात है
इस बातको अपने पूर्वजोंकी आशातनासें डरनेवाला
कोई भी प्राणी निषेध नही कर सकता है तथापि इन
तीनों महाशयोंने अपनी विद्वत्ताकी बात जमानेके लिये
खास अपनेही पूर्वजोंका उपरोक्त वाक्यको जड़ मूलसेंही
उठाकर अपने पूर्वजोंकी आज्ञा लोपते हुये दो श्रावण
होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका और मासवृद्धि

होने भी पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रखनेका झगड़ा ठहाया—

और श्रीतीर्थंकर गणधरादि पूर्वधर पूर्वाचार्य और प्राचीन सब गच्छोंके पूर्वाचार्य जिनमें श्रीतपगच्छकेही पूर्वज पूर्वाचार्यादि महाराजोंने अधिक मासको प्रमाण किया था सो इन तीनो महाशयोंने उपरोक्त महाराजोंकी आशातनाका भय न रखते हुए अधिकमासको निषेध कर दिया और श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने जैसे सुमेरु पर्वतके ऊपर चालीशयोजनके शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोंके शिखरोंको और देव मन्दिरादिकके शिखरोंको लेखचूलाकी उत्तम ओपमा कही है तैसेही चंद्रसंवत्सरके बारह मासोंके ऊपर शिखररूप तेरह या अधिकमासको भी कालचूलाकी उत्तम ओपमा देकर गिनतीमें लिया था जिसको इन तीनों महाशयोंने धर्मकार्योंकी गिनतीमें निषेध करने के लिये अधिकमास को नपुंशकादि हलकी ओपमा देकर श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी विशेष बड़ी भारी आशातना किवी है और अपनी बात जमाने के लिये श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्र की चूर्णि तथा श्रीनिशीथचूर्णि और श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रके पाठ लिखके दृष्टि रागियोंको दिखाये थे सोभी शास्त्रकार महाराज के विरुद्धार्थ में तथा उन्ही तीनों शास्त्रोंमें अधिकमास को अच्छी तरहसें प्रमाण कियाथा तथापि इन तीनों महाशयोंने उन्ही तीनों शास्त्रोंके पाठोंको जड़ मूलसें ही उत्थापन करके अधिक-मासको निषेध कर दिया और मासवृद्धिके अभावमें पचास दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही थी सब पर्युषणाके पीछाड़ी ७०

दिन भी स्वभाविक रहते थे तथापि इन तीनों महाशयोंने उत्सूत्र भाषणरूप मासवृद्धि होनेसें वर्तमानिक दो श्रावण होते भी भाद्रपद में पर्युषणा और पीछाड़ी के ७० दिन शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध हो करके स्थापन किये और तीनों महाशय खास आप भी स्वयं एक जगह अधिकमास को कालचूला की उत्तम ओपमासें लिखते हैं दूसरी जगह नपुं-सकको तुच्छ ओपमासें लिखते हैं आगे और भी एक जगह अधिकमासके ३० दिनोंका धर्मकर्मको गिनती में लेते हैं दूसरी जगह ३० दिनोंको ही सर्वथा निषेध करते हैं इसी तरहसें कितनी ही जगहपूर्वापरविरोधी (विसम्वादी) अटपटांगरूप वाक्य लिखके गच्छपक्षी जनोंको शास्त्रानुसार की सत्य बात परसें श्रद्धा छोड़ा कर शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें मिथ्यात्वरूप कदाग्रहमें गेर दिये तथा आगे अनेक जीवोंको गेरनेका कार्य कर गये हैं इसलिये खास तीनों महाशयोंको और इन्होंके शास्त्र विरुद्ध लेखको सत्य मान्यकर इसी तरह में अधिक मासकी निषेधरूप मिथ्यात्वके बीज बोवणको सींचते रहेंगे जिससें भोले जीव भी इसीमें फसते रहेंगे इन्होंको आत्मोद्धार कैसे सुधारा होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने तथा और भी थोड़ासा सुन लिजिये श्रीभग-वतीजी सूत्रमें १ और तत् वृत्तिमें २ श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रमें ३ और तीनकी ८ व्याख्यायोंमें ९ श्रीदशवैकालिक सूत्रमें १० और तीनकी चार व्याख्यायोंमें १४ श्रीधर्मरत्न-प्रकरणवृत्तिमें १५ श्रीमहदृशक सूत्र वृत्तिमें १६ श्रीआतु-[illegible]चूर्णिमें १७ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें [illegible] [illegible] सबवार पूर्वाचार्योंने तरह [illegible] महा

र्यांकी आशातना करने वाला और उन्हीं महाराजोंका
वाक्यको न मानता हुआ उत्थापन करने वाला प्राणीको
दारुण दुर्लभबोधि मिथ्यात्वी अनन्त संसारी कहा है तैसे
ही न्यायांभोनिधिजी श्रीआत्मारामजीने भी अज्ञान
तिमिरभास्कर ग्रन्थके पृष्ठ १२०में लिखा है—उक्त दारुण ह्रासो
हि, सावद्यमाचरणो हि। अकरन्तो गुरुवचनं, अनन्त
संसारिओ भणिओ ॥ १ ॥ तथा और भी पृष्ठ ८५ का लेख
इसी ही पुस्तकके पृष्ठ ७८ और ८८, में छपगया है इससे
भी पाठकवर्ग विचार करो कि श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्व-
धरादि पूर्वाचार्योंको और अपने ही गच्छके पूर्वाचार्योंकी
इन तीनों महाशयोंने अधिकमासको निषेध करने के लिये
कितनी बड़ी आशातना करके कितने शास्त्रोंके पाठोंको
उत्थापन किये है तो फिर इन तीनों महाशयोंमें अनन्त
संसारका हेतु रूप मिथ्यात्वके सिवाय सम्यक्त्वका लेश
मात्र भी कैसे सम्भव होगा क्योंकि श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्व-
धरादि पूर्वाचार्योंकी आशातना करने वाला तथा आज्ञा
न मानने वाला और उलटा उन्हीं महात्माओंके वचनोंका
उत्थापन करने वालाको जैन शास्त्रोंके जानकार बुद्धिजन
पुरुष सम्यक्त्वी नहीं समझ सकते हैं इसलिये अब पाठक
वर्ग पक्षपातका दृष्टिरागको छोड़कर और श्रीजिनेश्वर भग-
वान् की आज्ञानुसार सत्य बातके ग्रहण करनेकी इच्छा
रखकर ऊपरकी बातोंको अच्छी तरहसे पढ़के सत्यासत्यका
निर्णय करके असत्यको छोड़ो और सत्यको ग्रहण करो
यही श्रीसज्जिनापि भवभिरु पुरुषोंसे मेरा कहना है—

और प्रथम श्रीधर्मसागरजीने श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिमें

तथा दूसरे श्रीजयविजयजीने श्रीकल्पदीपिका वृत्तिमें और तीसरे श्रीविनयविजयजीने श्रीसुखबोधिकावृत्ति में इन तीनों महाशयोंने श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप अपने हठवादके कदाग्रहको जमानेके लिये जो जो बाते लिखी है उन बातोंको श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक मुनिजनादि गांम गांममें हर वर्ष पर्युषणामें भोले जीवोंको सुनाते हैं जिससे आत्मसाधनका धर्मके बदले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वकी भ्रमर्में गिरके श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घन करके बड़ी आशातना करते हुए दुर्लभ बोधिका साधन करनेके कारणमें पड़ते हैं इस विषयके सम्बन्धी प्रथम श्रीधर्मसागरजीने बड़ी धूर्ताई करके श्रीतपगच्छमें पर्युषणा संबन्धी अधिकमासको निषेध करनेके लिये श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें प्रथमही मिथ्यात्वकी निव लगाई है इस बातका खुलासा [आठों ही महाशयोंके उत्सूत्र भाषणके लेखोंकी समीक्षा हुवे बाद] अन्तमें विस्तारपूर्वक लिखुगा और इन तीनों महाशयोंने इस तरहमें मायावृत्तिका लेख लिखा है कि जिसमें भोले जीव तो फसे उसमें कोई आश्चर्य नही है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् होते भी फस गये और इन्होंकी तरह श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा-भङ्गका कारणरूप और पूर्वापर विरोधि अधिक मासका निषेध आपभी आगेवान होकर कराया है इसलिये अब इन्होंके लेखकी भी समीक्षा आगे करता हुं—

॥ इति तीनों महाशयों के नामकी संक्षिप्त समीक्षा ॥

अब आगे चौथे महाशय न्यायांभोनिधिजी श्रीआत्मारामजीनें, जैनसिद्धांतसमाचारी, नामा पुस्तक में पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखाया है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हुं ;— जिसमें प्रथम श्रीखरतरगच्छके श्रावक रायबहादुर मायसिंहजी मेघराजजी कोठारी श्रीमुर्शिदाबाद अजीमगञ्ज निवासीकी तरफसें, शुद्धसमाचारी, नामा पुस्तक छपके प्रसिद्ध हुई थी, जिसमें श्रीतीर्थंकर गणधर,चौदहपूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके अनेक शास्त्रोंके पाठों करके सहित और युक्ति पूर्वक देश कालानुसार श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञा मुजब अनेक सत्य बातों को प्रगट किवी थी, जिसको पढ़ने सें श्रीन्यायांभोनिधिजी तथा उन्होंके सम्प्रदायवाले मुनिजन और उन्होंके दृष्टिरागी श्रावकजन समुदाय सत्यबातको ग्रहण तो न कर सके परन्तु अंतर मिथ्यात्व और द्वेषबुद्धिके कारणसें उसका खण्डन करनेके लिये अनेक शास्त्रोंके आगे पीछे के पाठोंको छोड़कर शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थ में उलटा संबंध लाकर अधूरे अधूरे पाठ लिखके शुद्धसमाचारी कारकी सत्य बातोंका खण्डन किया और अपनी मिथ्या बातोंको उत्सूत्र भाषणरूप स्थापन किवी जिसके सब बातोंकी समालोचनारूप समीक्षा करके उसमें शास्त्रोंके सम्पूर्ण सम्बन्धके सब पाठ तथा शास्त्रकार महाराजके अभिप्रायः सहित और युक्ति पूर्वक भव्य जीवोंके उपगारके लिये इस जगह लिखके न्यायांभोनिधिजीके न्यायान्यायका विचारको प्रगट करना चाहुं तो अनुमान ६०० अथवा ७०० पृष्ठका बड़ा भारी एक ग्रन्थ बन जावे परन्तु इस जगह विस्तारके कारणसें और हमारे विहारका समय नजिक आनेके सबबसें सब न

लिखते थोड़ासा नमुनारूप पर्युषणाके सम्बन्धी लेखकी समीक्षा करके लिख दिखाता हुं—जिसमें पहिले जो कि-शुद्ध समाचारी पुस्तकके बनाने वालेनें पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखा है उसीको इस जगह लिखके फिर उसीका खण्डन जैनसिद्धान्तसमाचारी में न्यायांभोनिधिजीने कराया है उसीको लिख दिखाकर उसपर मेरी समीक्षा को लिखुङ्गा सो आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको दृष्टिरागका पक्षको न रखते न्याय दृष्टिसें पढ़कर सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित हैं ;—अब शुद्धसमाचारी कारके पर्युषणा सम्बन्धी लेखका पृष्ठ १५४ पंक्ति १२ वी से पृष्ठ १६० की पंक्ति ७ वी तकका (भाषाका सुधारा सहित) उतारा नीचे मुजब जानो ;—

शिष्य प्रश्नः करता है कि अपनें गच्छमें जो श्रावणमास बढ़े तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रपद बढ़े तो प्रथम भाद्रव शुदीमें, आषाढ़ चौमासीसें, ५० में दिनही पर्युषणा करना, परन्तु ८० अशीमें दिन नहीं करना ऐसा कोई सिद्धान्तोंमें प्रमाण हैं ।

उत्तर—श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजनें अपनी ११ मी समाचारीके विषे कहा है (तथाहि) सावणे भद्दवए वा, अहिग मासे चाउम्मासीओ ॥ पणासइमेदिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे इति ॥ भावार्थः श्रावण और भाद्रपद मास, अधिक हो तो आषाढ़ चौमासीको चतुर्दशीसें पचाश दिने पर्युषणा करना परन्तु अशीमें दिन न करना ।

प्रश्नः—जो अधिकमास होनेसें अशीमे दिन पर्युषणा सांवत्सरिक पर्व करते हैं तिनका पक्षको किसीने कोई ग्रन्थमें दूषित भी किया है या नहीं ।

महावीरे वासाणं सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते वासावासं पज्जोसवेइ ।

भावार्थः—आषाढ़ चौमासीसें बीश दिन अधिक, एक मास अर्थात् ५० दिन जानेसें, श्रीमहावीर स्वामी पर्युषणा करे । इसी तरहसें बृहत् कल्पचूर्णिके विषे, दशपञ्चके पर्युषणा करना कहा है । यथा—आसाढ चउमासे पडिक्कन्ते, पंचेहिं पंचेहिं दिवसेहिं गएहिं, जत्थ २ वासजोग्गं खेत्तं पडिपुन्नं । तत्थ २ पज्जोसवेयव्वं । जाव सवीसइ राइमासो इत्यादि ।

भावार्थः—आषाढ़ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद पांच पांच दिन व्यतीत करते जहां जहां वर्षावास योग्य स्थान प्राप्त होय । वहां वहां पर्युषणा करें, यावत् दशपञ्चक एक मास और बीश दिन तक पर्युषणा करें । और दशमा पंचकमें अर्थात् पचासमें दिन तो योग्यक्षेत्र नहीं मिले तो वृक्षके नीचे भी रहकर पर्युषणा करें, इसी तरह श्रीसमवायाङ्गजी सूत्र तथा वृत्तिके विषे ७०वें समवायाङ्गमें कहा है । तथाहि । समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते सत्तरिएहिं राइदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ ।

भावार्थः—श्रमण भगवन् श्रीमहावीर स्वामीजी वर्षाकालके एकमास और बीश दिन गए बाद पर्युषणा करें । इसलिये पचास दिने करके ही पर्युषणा करना अवश्य है और पीछाड़ी ७० दिन कहे सो मास वृद्धिके अभावसें न कि मासवृद्धि होते भी । और ऐसा भी न कहना कि मासवृद्धि होनेसें अधिक मास गिनतीमें न आता है क्योंकि बृहत् कल्पभाष्य तथा चूर्णिके विषे, अधिक

शास्त्रों जिनकी प्रमाण किये हैं। और ऐसा भी न कहना कि ज्योतिषादिक शास्त्रोंमें प्रतिष्ठादिक शुभकार्य्य निषेध किया है सो पर्युषणा पर्व कैसे हुवे सो तो सार चन्द्रादिक ज्योतिष शास्त्रोंमें, लग्न, दीक्षा, स्थापना, प्रतिष्ठादिकार्य्य निश्चेही कार्य्योंमें निषेध किये हैं सार चन्द्र द्वितीय प्रकरणे यथा ॥ रविक्षेत्र गतेजीवे, जीवक्षेत्र गते रवौ। दिक्षां स्थापनांचापि, प्रतिष्ठा च न कारयेत् ॥१॥ इसवास्ते अधिक मासमें पर्युषणा करनेका निषेध किसी जगह भी देखनेमें नहीं आता है। इसी कारण से पूर्वोक्त प्रमाणोंसे श्रावण मासकी वृद्धि होनेसे दूसरे श्रावण शुदी ४ को और भाद्रव मासकी वृद्धि होनेमें पहिले भाद्रव शुदी ४ चौथको पर्युषणापर्व ५० पचास दिने करना सिद्ध होता है परन्तु अशीमें दिने नहीं। एतावत अति गम्भीरार्थका है मैंने तो पूर्वगीतार्थ प्रतिपादित सिद्धान्तानुसारे करके और युक्ति करके लिखा है इस उपरान्त विशेष तत्त्व केवली महाराज जानें, जो ज्ञानी भाव देखा है, सो सच्चा है और सर्व असत्य है। मेरे इसमें कोई तरहका हठवाद नहीं, इति श्रावण और भाद्रपद बढ़ते पचास दिने पर्युषणा करणाधिकारः ॥—

अब पाठकवर्ग उपरका लेख शुद्धसमाचारी प्रकाशनामा ग्रन्थका पढ़के विचार करोकी लेखकपुरुषने कैसी सरलरीतिसें लिखा है और अन्तमें किसी गच्छवालेकों दूषित न ठहराते, (विशेष तत्त्व केवली महाराज जानें जो ज्ञानी भाव देखा है सो सच्चा है और सर्व असत्य है मेरे इसमें कोई तरहका हठवाद नहीं है) ऐसा लिखनेमें लेखक पुरुष पं० प्र० यतिजी

श्रीरायचन्द्रजी न्याययुक्त निष्पक्षपाती भवभिरू थे सो तो पाठकवर्ग भी विशेष विचार शकते हैं और उपरके लेखमें श्रीसङ्घपट्टक वृहत् वृत्तिका जो श्लोक लिखा हैं सो श्रीतपगच्छवालोंके लिये वृत्तिकार महाराजनें नहीं लिखा था, तथापि श्रीतपगच्छवालोंके लिये उपरोक्त श्लोक समझते है उन्होंके समझ में फेर है क्योंकि श्रीसङ्घपट्टक की वृहद्वृत्ति सम्वत् १२५० के लगभग बनी थी उसी वख्त तपगच्छही नहीं हुवा था क्योंकि श्रीचैत्रवालगच्छके श्रीजगच्चन्द्रसूरिजी महाराजसें सम्वत् १२८५ वर्षे तपगच्छ हुवा है और श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य जितने हुवे है सो सबीही अधिक मासको गिनतीमें मान्य करनेवाले तथा ५० दिने पर्युषणा करनेवाले थे इसलिये उपरका श्लोक श्रीतपगच्छवालोंके लिये नहीं हैं किन्तु उस समयमें कदाग्रहीशिथिलाचारी उत्सूत्रभाषक चैत्यवाशी बहुत थे वे लोग शास्त्रोंके प्रमाण विनाभी ८० दिने पर्युषणा करते थे और भी श्रीचन्द्रपन्नति श्रीसूर्यपन्नति श्री जम्बूद्वीपपन्नति श्रीसमवायाङ्गजी वगैरह अनेक सूत्रवृत्ति चूर्ण्यादि शास्त्रानुसार और अन्यमतके भी ज्योतिष मुजब वे चैत्यवाशीजन प्रायःकरके ज्योतिषशास्त्रोंके विशेष जानकार थे, इसलिये अधिक मासकी उत्पत्तिका कारण कार्यादिकको जानते हुये अधिक मासको अङ्गीकार करनेवाले थे तथापि मिथ्यात्वरूप अज्ञानदशाके हठवादसें लौकिकपञ्चाङ्ग में दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा चैत्यवाशी लोग करते थे जिसमें ८० दिन होते थे उन्होंके लिये उपरका श्लोक लिखा गया है नतु कि श्रीतपगच्छवालोंके लिये ।

अब उपरोक्त शुद्ध समाचारीप्रकाशका लेखपर जो न्यायां-

भोनिधिजीमें जैनसिद्धान्त समाचारीमें जुनीका खण्डन कराया है उनीको लिखके दिखाकर उनीके न्यायमार्गमें ऐसी समीक्षा न्यायांभोनिधिजीके नामसे करता हुं जिसका कारण पृष्ठ ६६।६७।६८ में इसी ही पुस्तक में छपा है इसलिये न्यायांभोनिधिजीके नामसे ही समीक्षा करना मुझे उचित है सो करता हुं—जैनसिद्धांत समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ८७ की पंक्ति २२ वीसें पृष्ठ ८८ की पंक्ति१८ वी तक का लेख नीचे मुजब जानो—शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५४ पंक्ति १४ में लिखा है कि [श्रावण मास बढ़े तो दूसरे श्रावणसुदी में और भाद्रव मास बढ़े तो प्रथम भाद्रव सुदीमें अषाढ चौमासी से ५० में दिन ही पर्युषणा करनी परन्तु ८० अशीमें दिन नहीं करनी, ऐसा लिखके पृष्ठ १५५में अपनेही गच्छके श्रीजिनपति सूरिजी की रचित समाचारीका प्रमाण दिया है आगे इसी पृष्ठके पंक्ति११ में लिखा है कि जिसका पक्षको कोई ने कोई ग्रन्थमें दूषित भी किया है या नहीं, इसके उत्तरमें श्रीजिनवल्लभ सूरिजीके षट्कल्याणकी बड़ी टीकाकी साक्षी दिवी हैं—(इस तरहका लेख शुद्ध समाचारी प्रकाशकी पुस्तक सम्बन्धी लिखके न्यायाम्भोनिधिजी अब ऊपरके लेखका लिखते हैं) उत्तर—हे मित्र ! इस लेखसें आपकी सिद्धि कभी न होगी क्योंकि तुमने अपने गच्छका मनन दिखाके अपनेही गच्छका प्रमाण पाठ दिखाया हैं यह तो ऐसा हुआ कि किसी लड़केने कहा कि मेरी माता सति है साक्षी कौन कि मेरा भाई इस वास्ते यह आपका लेख प्रमाणिक नहीं हो सकता है ।]

अब हम उपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि हे सज्जन पुरुषों जैसे शुद्ध समाचारी कारनें अपना कार्य्यसिद्ध करनेके

लिये अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्यजी श्रीजिनपति सूरिजी कृत ग्रन्थका पाठ दिखाया है उसको श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अप्रमाण ठहराते हैं इस न्यायानुसार तो श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें अपना कार्यसिद्ध करनेके लिये अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंके पाठ दिये हैं वह सर्व पाठ अप्रमाण ठहरनेसे श्रीन्यायाम्भोनिधिजीको अपने पूर्वाचार्य्योंका पाठ लिख दिखाना भी सर्व वृथा होगया तो फिर जैनसिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ३१ वा में श्रीधर्मघोष सूरिजी कृत श्रीमद्धाचार भाष्यवृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३३ में श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३३। ४६। ५२। ५८। ६३, में श्रीरत्नशेखरसूरिजीकृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमणसूत्र वृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३५ में श्रीजयचन्द्रसूरिजी कृत श्रीप्रतिक्रमण-गर्भहेतु नामा ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ४१ में श्रीविजयसेन सूरिजीका प्रश्नोत्तर ग्रन्थका पाठ, और पृष्ठ ५१। ६१ में श्री कुलमण्डन सूरिजी कृत विचारामृतसंग्रहका पाठ, इत्यादि अनेक जगह ठाम ठाम अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंका प्रमाण श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें लिखके वृथा क्यों अन्याय किया होगा सो पाठकवर्ग भी विचार लेना ॥

अब दूसरा सुनो—श्रीन्यायाम्भोनिधिजी जैनसिद्धान्त समा-चारीकी पुस्तकके पृष्ठ १२ में श्रीखरतरगच्छके श्रीउपाध्यायजी श्रीसमयसुन्दरजी गणिजी कृत श्रीगणधरसार्द्धशतक प्रश्नोत्तर ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ३१। ३६ में श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेव सूरिजीकृत श्रीपञ्चाशकजी वृत्तिका और समाचारी ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ७२। ८१ में श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनदत्त सूरिजीका पाठ, पृष्ठ ७२ में श्रीखास श्रीजिनपति सूरिजीके शिष्य श्री

सुमतिगणिजीका पाठ, पृष्ठ ८१ में श्रीउपाध्यायजी श्रीजय सागरजीका पाठ, पृष्ठ ८२। ८६। ९१में श्रीजिनप्रभ सूरिजीका पाठ, और पृष्ठ ८४ में श्रीजिनवल्लभ सूरिजीका पाठ इसी तरहसें शुद्ध समाचारी कारके पूर्वाचार्य्य श्रीखरतरगच्छके प्रभाविक पुरुषोंका पाठ श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अपना कार्य्य सिद्ध करनेके लिये तो खास मान्य करके दिखाते हैं और शुद्ध समाचारी कारनें अपना कार्य्यसिद्ध करनेके लिये अपनेही पूर्वजोंका (शास्त्रानुसार युक्ति सहित न्यायपूर्वक सत्य) पाठ लिख दिखाये उसीको श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अप्रमाणिक ठहराते हैं यह तो प्रत्यक्ष बड़े अन्यायका रस्ता श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें ग्रहण किया है सो विशेष पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना।

अब तीसरा और भी सुनो श्रीआत्मारामजीनें खास (चतुर्थ स्तुतिनिर्णय.) नामा ग्रन्थ तीन स्तुति वालोंका खरडन करनेके लिये बनाया है सो छपा हुवा प्रसिद्ध है उसीके पृष्ठ ८३।८४।८५ में श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरीजी कृत श्रीविधिप्रपाग्रन्थका पाठ और उसीकी भाषा पृष्ठ ८५।८६ ८७।८८ के आदि तक लिखके पुनः पृष्ठ ८८ के मध्यमें लिखते हैं कि—(इस विधिमें पडिक्कमणेकी आदिमें चारथुइसे चैत्यवंदना करनी कही है और श्रुत देवता अरु क्षेत्र देवता का कायोत्सर्ग अरु इन दोनोंकी थुइ करनी कही है—इस लेखको सम्यक्त्वधारी मानते हैं और मानलेवे फेर मानेंगे भी परन्तु मिथ्या दृष्टि तो कभी नही मानेगा इस वास्ते सम्यक् दृष्टि जीवको तीन थुइका कदाग्रह अवश्य छोड़ देना योग्य है) इस तरहसें श्रीआत्मारामजी श्रीखरतरगच्छके

श्रीजिनप्रभ सूरिजीके लेखको न मानने वालेको मिथ्या दृष्टि ठहराते हैं तो इस जगह पाठकवर्ग विचार करो कि श्रीजिनप्रभसूरिजीके ही खास परमपूज्य और पूर्वाचार्य्य श्रीजिनपति सूरिजीके सत्य लेखको न मानने वाले तो स्वयं मिथ्या दृष्टि सिद्ध होगये फिर श्रीआत्मारामजी न्यायांभोनिधिजी न्यायके समुद्र हो करके अपने स्वइच्छे जिन्होंके सन्तानिये श्रीजिनप्रभसूरिजीके लेखको न मानने वालोंको मिथ्या दृष्टि लिखते हैं और श्रीजिनप्रभसूरिजीके ही पूर्वाचार्य्यजी श्रीजिनपति सूरिजीके सत्य लेखको अप्रमाण मान्यके खास आपही मिथ्या दृष्टि बनते हैं । हा अतिखेद ! इस बातको पाठकवर्ग निष्पक्षपातसें सत्य बातके ग्राही होकर अच्छी तरहसें विचार लेना ;—

अब चौथा और भी सुनो श्रीआत्मारामजी इन्ही चतुर्थस्तुतिनिर्णयः पुस्तकके पृष्ठ १०१ । १०२ । १०३ में श्री बृहत्खरतरगच्छके श्रीजिनपतिसूरिजी कृत समाचारीका पाठ लिखके उसीको श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत पाठकी तरह प्रमाणिक मानते हैं और श्रीजिनपतिसूरिजी कृत पाठकी श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत पाठके साथ मिलामण देते हैं जिसमें श्रीजिनपतिसूरिजीका पाठको भी न मानने वालोंको मिथ्या दृष्टि सिद्ध करते हैं । और फिर आपही श्रीजिनपतिसूरिजीकृत सत्य पाठको जैनसिद्धान्त समाचारीमें अप्रमाण ठहराकर नहीं मानते हैं जिससें (उपरोक्त न्यायानुसार करके) मिथ्या दृष्टि बननेका कुछ भी भय न करते जिनने अन्यायके रस्ते चलते हैं सो भी आत्मार्थी सज्जन पुरुष विचार लेना ;—

अब पाठकगण और भी मुझ लिखित श्रीआत्मारामजीने तत्त्वनिर्णय प्रासादग्रन्थ बनाया है जो छपा हुआ प्रसिद्ध है उसके पृष्ठ १७५ में लिखा है कि-

[अब पक्षपात न होनेमें हेतु कहते हैं—

पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु ।
युक्तिमद्वचनं यस्य, तस्य कार्यः परिग्रहः ॥ ३८ ॥

व्याख्या-मेरा कुछ श्रीमहावीरजीके विषे पक्षपात नही कि जो कुछ महावीरजीने कहा है सोई मैंने मानना है अन्यका कहा नहीं ; और कपिलादि मतावलंबियोंमें द्वेष नहीं है कि कपिलादिकोंका नहीं मानना किन्तु जिसका वचन शास्त्र युक्तिमत् अर्थात् युक्तिसें विरुद्ध नहीं है जिसका वचन ग्रहण करनेका मेरा निश्चय है ॥ ३८ ॥]

और इनहीं तत्त्वनिर्णय प्रासादकी उपोद्घात श्रीवल्लभविजयजीने बनाई है जिसके पृष्ठ ३१ वे में लिखा है कि पक्षपात करना यह बुद्धिका फल नहीं है परन्तु तत्त्वका विचार करना यह बुद्धिका फल है "बुद्धेः फलं तत्त्वविचारणे न पक्षपात्" और तत्त्व विचार करके भी पक्षपातको छोड़के जो यथार्थ तत्त्वका भान होवे उसको अङ्गीकार करना चाहिये किन्तु पक्षपात करके असत्यकाही आग्रह नही करना चाहिये यतः—आगमेन च युक्त्या च, योऽर्थः समभिगम्यते । परीक्ष्य हेमवद्ग्राह्यः, पक्षपाताग्रहेण किम्—

भावार्थः आगम (शास्त्र) और युक्तिके द्वारा जो अर्थ प्राप्त होवे उसको सोनेके समान परीक्षा करके ग्रहण करना चाहिये पक्षपातके आग्रह (हठ)से क्या है)—

अब पाठकगणं श्रीआत्मारामजीके और श्रीवल्लभ-

विजयजीके उपरोक्त लेखमें पक्षपात रहित विचारो कि-जिस पुरुषका वचन शास्त्र और युक्ति सहित होवे उसको सोनेके समान ज्ञानके सज्जन पुरुषोंको ग्रहण करना ही उचित है, और शास्त्र तथा युक्ति रहित वचनको हटवादसें ग्रहण करना सो निर्बुद्धि पुरुषोंका लक्षण है ऐसा दोनोंका कहना है तो इस पर मेरेको बड़ेही खेदके साथ लिखना पड़ता है कि श्रीआत्मारामजी न्यायांभोनिधि नाम धारण करते न्याय और युक्तिके समुद्र होते भी श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञामुजब शास्त्रानुसार युक्ति करके सहित और सत्यवचन शुद्ध समाचारी कारनें श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजका लिखा था सो ग्रहण करने योग्य था तथापि उनको गच्छके पक्षपातसें वृथा क्यों निषेध किया होगा क्योंकि श्रीजिनपतिसूरिजीका (श्रावण और भाद्रव मास अधिक होवे तो भी पचासदिने पर्युषणा करना परन्तु ८० में दिन नही करना इतने पर भी ८० दिने पर्युषणा करते है सो शास्त्र-विरुद्ध है) यह वाक्य श्रीशुद्धसमाचारी ग्रन्थका और श्रीसंघ-पट्टक बृहद्वृत्तिका लिखा है सो शास्त्रानुसार सत्य है इसी ही बातका खुलासा इन्ही पुस्तकमें अनेक जगह ठामठाम शास्त्रोंके प्रमाण सहित युक्तिपूर्वक विस्तारसें छप गया है इसलिये उपरकी बातका निषेध करनाही नही बनता है शुद्ध समाचारीकारनें श्रीजिनपतिसूरिजी महाराज कृत ग्रन्थानु-सार ५० दिने पर्युषणा ठहराई और ८० दिन करने वालोंको जिनाज्ञाके बाधक कहे है इसको श्रीआत्मारामजीनें अप्रमाण ठहराया तब इसका तात्पर्य्य यह निकला कि ५० दिने पर्यु-षणा करनेवालोंकों दूषित ठहराये और ८० दिने पर्युषणा

करनेवालोंको निह्नवपण ठहराये (हा अति खेदः) इससें विशेष अन्याय दूसरा श्रीन्यायाम्भोनिधिजीका कौनसा होगा, कि-सूत्र, वृत्ति, भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रों में श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छकेही पूर्वाचार्य्य सभी उत्तम पुरुष ठामठाम कहते हैं कि पर्युषणा पचास दिने करना कल्पे परन्तु पचासमें दिनकी रात्रिको भी उल्लङ्घन करके एकावनमें दिनको करना न कल्पे इसलिये योग्यक्षेत्र न मिले तो जङ्गलमें वृक्षनीचे भी पर्युषणा करलेना इतने पर भी कोई पचास दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन करके एकावनमें दिन पर्युषणा करे तो श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाका लोपी होवें यह बात तो प्रायः जैनमें प्रसिद्ध भी है सो भी मासवृद्धिके अभावकी जैनपञ्चाङ्ग की रीतिसें वर्त्तनेकी थी परन्तु अब लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करनी सोभी जिनाज्ञा मुजब है इसीही कारणसें श्रीजिन-पतिसूरिजीनें मासवृद्धि हो तोभी पचास दिने पर्युषणा कर लेनेका लिखा है सो सत्य है। और एकावन दिने भी पर्युषणा करने वाला जिनाज्ञाका लोपी होता है तो फिर ८० दिने पर्युषणा करने वाले क्या जिनाज्ञाके आराधक बन सकते हैं सो तो कदापि नही अर्थात् ८० दिने पर्युषणा करने वाले सर्वथा निश्चय करके श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजों की आज्ञाके लोपी है इसलिये ८०दिने पर्युषणा करने वालों को श्रीजिनपतिसूरिजीनें जिनाज्ञाके विराधक ठहराए सो भी सत्य है इसलिये श्रीजिनपतिसूरीजी महाराजका दोनु वाक्य निषेध नही हो सकते हैं इतने परभी

विजयजीके उपरोक्त लेखमें पक्षपात रहित विचारो कि-
जिस पुरुषका वचन शास्त्र और युक्ति सहित होवे उसके
सोनेके समान जानके सज्जन पुरुषोंको ग्रहण करना ही उचित
है, और शास्त्र तथा युक्ति रहित वचनको हठवादसें ग्रहण
करना सो निर्बुद्धि पुरुषोंका लक्षण है ऐसा दोनोंका कहना है
तो इस पर मेरेको बड़ेही खेदके साथ लिखना पड़ता है
कि श्रीआत्मारामजी न्यायांभोनिधि नाम धारण करते
न्याय और बुद्धिके समुद्र होते भी श्रीजिनेश्वर भगवान्
की आज्ञानुसार शास्त्रानुसार युक्ति करके सहित और
सत्यवचन शुद्ध समाचारी कारनें श्रीजिनपतिसूरिजी महा-
राजका लिखा था सो ग्रहण करने योग्य था तथापि उनको
गच्छके पक्षपातसें वृथा क्यों निषेध किया होगा क्योंकि
श्रीजिनपतिसूरिजीका (श्रावण और भाद्रव मास अधिक होवे
तो भी पचासदिने पर्युषणा करना परन्तु ८० में दिन नहीं
करना इतने पर भी ८० दिने पर्युषणा करते है सो शास्त्र-
विरुद्ध है) यह वाक्य श्रीशुद्धसमाचारी ग्रन्थका और श्रीसंघ-
पट्टक बृहद्वृत्तिका लिखा है सो शास्त्रानुसार सत्य है इसी
ही बातका खुलासा इन्ही पुस्तकमें अनेक जगह ठामठाम
शास्त्रोंके प्रमाण सहित युक्तिपूर्वक विस्तारसें छप गया है
इसलिये उपरकी बातका निषेध करनाही नही बनता है शुद्ध
समाचारीकारनें श्रीजिनपतिसूरिजी महाराज कृत ग्रन्थानु-
सार ५० दिने पर्युषणा ठहराई और ८० दिन करने वालोंको
जिनाज्ञाके बाधक कहे है इसको श्रीआत्मारामजीनें अप्रमाण
ठहराया तब इसका तात्पर्य्य यह निकला कि ५० दिने पर्यु-
षणा करनेवालोंकों दूषित ठहराये और ८० दिने पर्युषणा

करनेवालोंकों निह्नव ठहराये (हा अति खेदः) इसमें विशेष अन्याय दूसरा श्रीन्यायाम्भोनिधिजीका कौनसा होगा, कि- सूत्र, वृत्ति, भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रों में श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य और श्रीखर- तरगच्छके तथा श्रीतपगच्छकेही पूर्वाचार्य्य सबी उत्तम पुरुष ठामठाम कहते हैं कि पर्युषणा पचास दिने करना कल्पे परन्तु पचासमें दिनकी रात्रिको भी उल्लङ्घन करके एकावनमें दिनकी करना न कल्पे इसलिये योग्यक्षेत्र न मिलेतो जङ्गलमें वृक्षनीचे भी पर्युषणा करलेना इतने पर भी कोई पचास दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन करके एकावनमें दिन पर्युषणा करे सो श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाका लोपी होवें यह बात तो प्रायः जैनमें प्रसिद्ध भी है सो भी मासवृद्धिके अभावकी जैनपञ्चाङ्ग की रीतिसें वर्त्तनेकी थी परन्तु अब लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करनी सोभी जिनाज्ञा मुजब है इसीही कारणसें श्रीजिन- पतिसूरिजीनें मासवृद्धि हो तोभी पचास दिने पर्युषणा कर लेनेका लिखा है सो सत्य है। और एकावन दिने भी पर्युषणा करने वाला जिनाज्ञाका लोपी होता है तो फिर ८० दिने पर्युषणा करने वाले क्या जिनाज्ञाके आराधक बन सकते हैं सो तो कदापि नही अर्थात् ८० दिने पर्युषणा करने वाले सर्वथा निश्चय करके श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजों की आज्ञाके लोपी है इसलिये ८०दिने पर्युषणा करने वालों को श्रीजिनपतिसूरिजीनें जिनाज्ञाके विराधक ठहराए सो भी सत्य है इसलिये श्रीजिनपतिसूरीजी महाराजका दोनु वाक्य निषेध नही हो सकते हैं इतने परभी

विजयजीके उपरोक्त लेखमें पक्षपात रहित विचारी किसि पुरुषका वचन शास्त्र और युक्ति सहित होवे उसको सोनेके समान जानके सज्जन पुरुषोंको ग्रहण करना ही उचित है, और शास्त्र तथा युक्ति रहित वचनको हठवादसें ग्रहण करना सो निर्बुद्धि पुरुषोंका लक्षण है ऐसा दोनोंका कहना है सो इस पर मेरेको बड़ेही खेदके साथ लिखना पड़ता है कि श्रीआत्मारामजी न्यायांभोनिधि नाम धारण करते न्याय और बुद्धिके समुद्र होते भी श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञामुजब शास्त्रानुसार युक्ति करके सहित और सत्यवचन शुद्ध समाचारी कारनें श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजका लिखा था सो ग्रहण करने योग्य था तथापि उनको गच्छके पक्षपातसें वृथा क्यों निषेध किया होगा क्योंकि श्रीजिनपतिसूरिजीका (श्रावण और भाद्रव मास अधिक होवे तो भी पचासदिने पर्युषणा करना परन्तु ८० में दिन नही करना इतने पर भी ८० दिने पर्युषणा करते है सो शास्त्रविरुद्ध है) यह वाक्य श्रीशुद्धसमाचारी ग्रन्थका और श्रीसंघपट्टक वृहद्वृत्तिका लिखा है सो शास्त्रानुसार सत्य है इसी ही बातका खुलासा इन्ही पुस्तकमें अनेक जगह ठामठाम शास्त्रोंके प्रमाण सहित युक्तिपूर्वक विस्तारसें छप गया है इसलिये उपरकी बातका निषेध करनाही नही बनता है शुद्ध समाचारीकारनें श्रीजिनपतिसूरिजी महाराज कृत ग्रन्थानुसार ५० दिने पर्युषणा ठहराई और ८० दिन करने वालोंको जिनाज्ञाके बाधक कहे है इसको श्रीआत्मारामजीनें अप्रमाण ठहराया तब इसका तात्पर्य्य यह निकला कि ५० दिने पर्युषणा करनेवालोंको दूषित ठहराये और ८० दिने पर्युषणा

करनेवालोंकों निंदूंषण ठहराये (हा अति खेदः) इससें विशेष अन्याय दूसरा श्रीन्यायांभोनिधिजीका कौनसा होगा, कि—सूत्र, वृत्ति, भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रों में श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छकेही पूर्वाचार्य्य सभी उत्तम पुरुष ठामठाम कहते हैं कि पर्युषणा पचास दिने करना कल्पे परन्तु पचासमें दिनकी रात्रिको भी उल्लङ्घन करके एकावनमें दिनकी करना न कल्पे इसलिये योग्यक्षेत्र न मिलेतो जङ्गलमें वृक्षनीचे भी पर्युषणा करलेना इतने पर भी कोई पचास दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन करके एकावनमें दिन पर्युषणा करे सो श्रीजिनेश्वर भगवानुकी आज्ञाका लोपी होवें यह बात तो प्रायः जैनमें प्रसिद्ध भी है सो भी मासवृद्धिके अभावकी जैनपञ्चाङ्ग की रीतिसें वर्त्तनेकी थी परन्तु अब लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब मासवृद्धि हो अथवा न हो तो ५० ही पचास दिने पर्युषणा करनी सोभी जिनाज्ञा मुजब है इसीही कारणसें श्रीजिनपतिसूरिजीनें मासवृद्धि हो तोभी पचास दिने पर्युषणा कर लेनेका लिखा है सो सत्य है। और एकावन दिने भी पर्युषणा करने वाला जिनाज्ञाका लोपी होता है तो फिर ८० दिने पर्युषणा करने वाले क्या जिनाज्ञाके आराधक बन सकते हैं सो तो कदापि नही अर्थात् ८० दिने पर्युषणा करने वाले सर्वथा निश्चय करके श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजों की आज्ञाके लोपी है इसलिये ८०दिने पर्युषणा करने वालों को श्रीजिनपतिसूरिजीनें जिनाज्ञाके विराधक ठहराए सो भी सत्य है इसलिये श्रीजिनपतिसूरीजी महाराजका दोनुं वाक्य निषेध नही हो सकते हैं इतने परभी

ौकिक टिप्पणाके अनुसारे हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसें
ा और भाद्रवकी भी वृद्धि होती है ॥ तिससें उनोंकी
होनेसें भी दशपञ्चक व्यवस्थाके विषे, आषाढ़ चौमासी
चाश दिनेही पर्युषणा करना सिद्ध होता है" ॥ आगे
की सिद्धिके वास्ते कल्प सूत्रका और विशेष कल्प भाष्य
का पाठ दिखाया है, कि-"जाव सवीसइ राइमासो"
दि (इतना लेख शुद्धसमाचारी प्रकाशकी पुस्तक सम्बन्धी
ा लिखके इसका न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं उत्तर)
मित्र ! मासवृद्धिका जो जैन टिप्पणादिकका विशेष
या है, यह तो अज्ञजनोंको केवल भरमानेके वास्ते है
क यद्यपि जैन टिप्पणाके अनुसार श्रावण और भाद्रव
ी वृद्धिका अभाव है तो भी पौष और आषाढ़मास
ा वृद्धि होती थी, अब हम आपको पूछते है कि-जैन
णाके अनुसारे जब पौष अथवा आषाढ़मासकी वृद्धि हुई
ंवछरीको अब्भुट्ठिओ सूत्रके पाठमें क्या 'तेराणं मासाणं
ापखाणं' वैसा पाठ कहोगे ? क्योंकि तिस वर्षमें तेरह
ो अवश्य होजायगें। और जैनसिद्धान्तो में तो किसी
ानमें वैसा नहीं लिखा है कि अधिक मास होवे तब
ास और छवीस पख्ख संवछरीको कहना । तो अब
ा प्रयास क्या काम आया परन्तु यह तो निःशङ्कित
ा होता है कि-जैनटिप्पणाके अनुसारसें भी अधिक
ो कालचूलामें ही गिनना पड़ेगा । पूर्वपक्ष-कालचूला
ोती है ? उत्तर हे परीक्षक! आगे दिखावेंगे और
. व्यवस्था लिखते हो । सो तो कल्पव्यवच्छेद हुवा
ौकिक टिप्पणाके

अनुसारसें हरेक वर्षमें आषाढ़ शुदि चतुर्दशीसें लेके भाद्रव शुदि ४ और तुमारे कहनेसें दूसरे श्रावण शुदि ४ तक ५० दिन पूर्ण करने चाहोगें तो भी नही हो सकेगें। क्योंकि तिथियां वध घट होती है सो किसी वर्षमें ४९ दिन आजायगें और किसी वर्षमें ४८ दिन भी आजायगे तब क्या आपकों जिन आज्ञा भङ्गका दूषण नही होगा ?]

अब उपरके न्यायांभोनिधिजीके लेखकी समीक्षा करके आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंसें दिखता हुं, कि–हे भव्यजीवों न्यायांभोनिधिजीके उपरका लेखकोंमें देखता हुं सो मेरेको यहाही खेदके साथ बहुत आश्चर्य उत्पन्न होता है क्योंकि श्रीन्यायाम्भोनिधिजीने तो शुद्धसमाचारी कारके वचनको खण्डन करना विचारके उपरका लेख लिखा था परन्तु शुद्ध समाचारी कारके सत्यवचन होनेसें खण्डन न हो सके, परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी के लिखे वाक्यसें अवश्यही श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंको और अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी अवज्ञा (आशातना) का कारण होनेसें न्यायाम्भोनिधिजी को लिखना सर्वथा उचित नही था क्योंकि देखो शुद्धसमाचारी की पुस्तक के पृष्ठ १५६ के अन्तमें और पृष्ठ १५७ के आदिमें ऐसा लिखा था कि (श्रावण और भाद्रपदमास की जैन सिद्धान्त की अपेक्षायें वृद्धिका ही अभाव है केवल पौष और आषाढ़मासकी ही वृद्धि होती थी और इस समयमें तो लौकिक टीप्पणाके अनुसार हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसें श्रावण और भाद्रपद की वृद्धि होती है) इस शुद्ध समाचारी का लेखको खण्डन करने के लिये न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं कि—(हे मित्र मासवृद्धिका

जो जैन टिप्पणादिकका विशेष दिखाया है यह तो अज्ञ जनकों केवल भ्रमाने के वास्ते है) अब हे पाठकवर्ग सज्जन पुरुषों उपरके न्यायाम्भोनिधिजी के वाक्यको पढ़के अच्छी तरहसें विचार करो कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर केवली भगवान् और पूर्वधरादि महान् धुरन्धर प्रभाविक पूर्वाचार्य तथा खास न्यायाम्भोनिधिजीके ही पूज्य पूर्वाचार्य सबी महाराज जैनसिद्धान्त (शास्त्रों) की अपेक्षायें जैनपञ्चाङ्गमें युगके मध्यमें पौष और अन्तमें आषाढ़ मासकी मर्य्यादा पूर्व वृद्धि होती है ऐसा कहते हैं सो अनेक शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है जिसमें अनुमान पचास शास्त्रोंके पाठों की तो मुझे भी मालुम है कि जैन शास्त्रोंमें पौष और आषाढ़ की वृद्धि श्रीतीर्थङ्करादिकोनें कही है इसी ही अनुसार शुद्धसमाचारी कारनें भी पौष और आषाढ़ की जैन सिद्धान्तों की अपेक्षायें वृद्धि लिखी हैं जिसको न्यायाम्भोनिधिजी अज्ञ जनोंको भ्रमानेका ठहराते है सो यह तो ऐसा न्याय हुवा कि—

जैसे श्रीअनन्ततीर्थङ्करादि महाराज अनादिकालसें हुवा उपदेश करते आये है कि । हे भव्यजीवों तुम्हारी आत्माको शुभ चाहो तो द्रव्य भावसें जीवदया पालो इस वाक्यानुसार वर्त्तमानमें भी उपगारी पुरुष उपदेश करते है जिस उपदेशको कोई भी जैनाभास द्वेषबुद्धिवाला अज्ञजनोंको केवल भ्रमानेका ठहरावें तो उस पुरुषनें श्रीअनन्त तीर्थ- ङ्करादि महाराजोंकी आशातना करके अनन्त संसार वृद्धिका कारण किया यह बात सर्वसज्जन पुरुष जैनशास्त्रोंके जान- कार मंजूर करते है तैसे ही श्रीअनन्त तीर्थङ्करादि महा- राज अनादि काल हुवा . . . . अपेक्षायें पौष

और आगे लिखा है कि (यद्यपि जैन टिप्पणाके अनुसार श्रावण और भाद्रव मासकी वृद्धिका अभाव है तो भी पौष और आषाढ़मास की तो वृद्धि होती थी अब हम आपको पूछते है कि जैन टिप्पणाके अनुसारे जब पौष अथवा आषाढ़मासकी वृद्धि हुई तब संवच्छरीको अभ्भुठिओ सूत्रके पाठमें तेराणं मासाणं छवीसं पखाणं ऐसा पाठ कहोगें क्योंकि तिस वर्षमें तेरह मास तो अवश्य हो जायगें और जैन सिद्धान्तोंमें तो किसी भी स्थानमें ऐसा नही लिखा है कि अधिक मास होवे तब तेरह मास और छवीश पख संवच्छरीको कहना तो अब आपका प्रमाण क्या काम आया) इस लेखको देखता हुं तो न्यायाम्भोनिधिजीके बुद्धिकी चातुराईका वर्णन में नही कर सकता हुं क्योंकि जब शुद्ध समाचारी कारमें जैन सिद्धान्तोंकी अपेक्षायें पौष और आषाढ़मासकी वृद्धि लिखी जिसको तो न्यायांभोनिधिजी (अज्ञ जनोंको केवल भ्रमानेका) ठहराते हैं और फिर आप भी शुद्ध समाचारीके मुजब उसी तरहसे पौष और आषाढ़मासकी वृद्धि इस जगह मंजूर करते हैं यह न्यायांभोनिधिजीके अपूर्व विद्वत्ताका नमुना है क्योंकि दुसरेकी बातका खण्डन करना और उसी बातको आप मंजूर भी करलेना ऐसा अन्याय करना आत्मार्थियोंको उचित नहीं हैं और चामुण्डाके सम्बन्धमें लिखा है सो भी जैनशास्त्रोंके तात्पर्यको समझे बिना प्रत्यक्ष मिथ्या लिखके भोले जीवोंको संशयमें गेरे हैं क्योंकि जब जिस संवत्सरमें अवश्य करके तेरह मास और छवीश पक्ष होवेंगे तथा धर्मकर्म और संसारिक व्यवहार कार्य्य तेरह मासके

किये जाते हैं जिससें पुण्य और पाप तेरह मासके लगते हैं तो फिर बारह मासकी आलोचना करके एक मासके पुण्यकार्य्योंकी अनुमोदना और पापकार्य्योंकी आलोचना नही करना यह तो प्रत्यक्ष अन्याय अल्पबुद्धिवाला भी कोई मंजूर नही कर सकता है और जिन्होंके ज्ञानमें एक समय मात्र भी धर्म अथवा कर्म बंधके सिवाय वृथा नही जाता है ऐसे श्रीसर्वज्ञ भगवान्के शास्त्रोंमें एक मासके धर्म और कर्मका न गिनना यह तो कभी नही हो सकता है इस लिये अधिक मास होनेसें अवश्य करके तेरह मास और छवीश पक्षादिकी आलोचना साम्वत्सरिमें करनी जैन शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक है इसका विशेष विस्तार सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी आगे समीक्षा होगा उसमें शास्त्रोंके प्रमाण सहित अच्छीतरहसें करनेमें आवेगा सो पढ़के विशेष निर्णय कर लेना और आगे लिखा है कि–अधिकमास होनेसें तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे किसी भी स्थानमें नही लिखा हैं यह वाक्य भी मिथ्या है क्योंकि अनेक जगह अधिकमास होनेसें तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे लिखे हैं जिसका भी वहांही आगे निर्णय होगा ॥—

और (आपका प्रयास क्या काम आया) इस लेखपर तो मेरेकों इतना ही कहना उचित है कि शुद्धसमाचारी कारनें तो सिर्फ अधिकमासको गिनतीमें सिद्ध करके पचास दिने पर्युषणा दिखानेका प्रयास किया था सो शास्त्रानुसार न्याययुक्ति सहित होनेसें उन्हका प्रयास सफल है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी हो करके अन्यायमें और शास्त्रोंके

विरुद्ध हो करके अधिकमासकी गिनती निषेध करनेका प्रयास करते है सो बड़ी ही शर्मकी बात है और काल-चूलासम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें आगे लिखा हैं उसकी समीक्षा में भी आगे करूंगा—

और (दशपञ्चक व्यवस्था लिखते हो सो तो कल्पव्यवच्छेद हुवा है यह सर्वजन प्रसिद्ध है) इन अक्षरों कोभी में देखता हुं तो न्यायांभोनिधिजीका अन्याय देखकर मूझे बड़ाही आफसोस आता है क्योंकि शुद्ध समाचारी कारनें जिस अभिप्रायसें लिखा था उसीको समझे बिना अन्याय मार्गसें खण्डन करना न्यायांभोनिधिजीको उचित नही हैं क्योंकि शुद्धसमाचारी कारनें तो इस कालमें पचास दिनेही पर्युषणा करनी चाहिये इस बातकी पुष्टिके लिये शुद्ध समाचारीके पृष्ठ १५७ । १५८ में श्रीकल्पसूत्रजीका मूलपाठ, श्रीवृहत्कल्पचूर्णिका पाठ, और श्रीसमवायाङ्गजीका पाठ, लिखके पचास दिनेही पर्युषणा दिखाई थी परन्तु दशपञ्चक लिखके कुछ पाँच पाँच दिने प्राचीन कालकी रीतिसे पर्युषणा नही लिखी थी तथापि न्यायांभोनिधिजी शुद्ध समाचारी कारके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें दशपञ्चकका कल्पविच्छेदकी बात लिखके पचास दिनकी पर्युषणाको निषेध करना चाहते हैं सो कदापि नही हो सकेगा और आगे फिर भी लिखा है कि–(लौकिक टिप्पणाके अनुसारसें हरेक वर्षमें आषाढ़ शुदी चतुर्दशीसें लेके भाद्रवा शुदी ४ और तुम्हारे कहने से दूसरे श्रावण शुदी ४ तक ५० दिन पूर्ण करने चाहोगें तो भी नही हो सकेगें क्योंकि तिथियां वध घट होती है तो किसी वर्षमें ४९ दिन आजायगें और किसी वर्षमें

४८ दिन भी आजायगें तब क्या आपको जिनाज्ञा भङ्गका दूषण नही होगा) इस उपरके लेखसें तो न्यायांभो निधिजीनें श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी आशातना करके और सबी उत्तम पुरुषोंको दूषित ठहरानेका कार्य्य करके नय गर्भित व्यवहारकी और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठको उत्थापन करके बड़ाही अनर्थ कर दिया है क्योंकि जैसे सूत्र, चूर्णि, भाष्य, वृत्ति, प्रकरण, चरित्रादि अनेक शास्त्रोंमें एक नही किन्तु सैकड़ों बाते व्यवहार नयकी अपेक्षासें श्रीतीर्थङ्करादि महाराज कहते हैं तैसेही शुद्ध समाचारी कारने भी व्यवहार नयसें पचास दिने पर्युषणा कही है और श्रीकल्प सूत्रजीके मूल पाठका (अन्तरा वियसे कप्पइ) इस वाक्यसें पचास दिनके अन्दरमें पर्युषणा होवे तो कोई दूषण भी नही कहा है तथापि न्यायांभोनिधिजी न्यायके समुद्र होते भी व्यवहार नयगर्भित श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाका और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठका उत्थापनके भयका जरा भी विचार न करते विद्वत्ताके अभिमानसें और पक्षपातके जोर सें ४८।४९ दिन होनेका दिखाकर मिथ्या दूषण लगाते हैं सो कदापि नही बनता है,—याने सर्वथा उत्सूत्र भाषणरूप है

और भी दूसरा सुनिये-जो तिथियोंके हानी वृद्धिकी गिनतीसें कोई वर्षमें भाद्रपद शुक्ल चौथ तक ४८ दिन होनेका लिखकर न्यायाम्भोनिधिजी शुद्धसमाचारी कारको दूषित ठहराते हैं इसमें मालुम होता है कि तिथियोंके हानी वृद्धिकी गिनतीमें भाद्रपद शुक्ल छठ (६) के दिन पूरे पचास दिन मान्य करके न्यायाम्भोनिधिजी पर्युषणा करते होवेंगे

तब तो अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध है और आप चौथकाही पर्युषणा करते होवेंगे तब तो शुद्धसमाचारी कारको दूषण लगाना वृथा है इसको भी पाठकवर्ग विचार लो ;—

और पर्युषणाके पीछाड़ी जो ७० दिन न्यायाम्भोनिधि जी रखना कहते हैं सो किस हिसाबसें गिनती करके रखते हैं इसका विवेक बुद्धिसें हृदयमें विचार किया होता तो शुद्ध समाचारी कारको दूषण लगानेका लिखनाही भूल जाते क्योंकि तिथियोंकी हानी वृद्धिसें किसी वर्षमें ६९ और किसी वर्षमें ६८ दिन भी होजाते हैं सो पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष न्याय दृष्टिसें विचार कर लेना ;—

और भी आगे जैन सिद्धान्तसमाचारी पुस्तकके पृष्ठ ८९ की पंक्ति २० वीं सें पृष्ठ ९० की पंक्ति१७ वीं तक ऐसे लिखा है कि [पूर्वपक्ष, आप तो मुखसेंही बाता बनाई जाते हो परन्तु कोई सिद्धान्तके पाठसें भी उत्तर है वा नहीं-उत्तर-हे समीक्षक दृढ़तर उत्तर देते हैं देखो कि श्रावणमास बढ़ने से दूसरे श्रावणमें और भाद्रव बढ़नेसें प्रथम भाद्रव मासमें पर्युषणा करना यह तुमने ८० (अशी) दिनकी प्राप्तिके भयसें अङ्गीकार किया परन्तु श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ऐसा पाठ है, यथा—सवीसइ राइमासे वइक्कंते सत्तरिराइदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइत्ति, भावार्थः—जैसे आषाढ़ चौमासेके प्रतिक्रमण किये बाद एकमास और बीस दिनमें पर्युषणा करें तैसे पर्युषणाके बाद ७० सत्तर दिन क्षेत्रमें ठहरे—हे परीक्षक-अब इस पाठके विचारणेसें तुमको मास की वृद्धि हुये कार्त्तिक सम्बन्धी कृत्य आश्विनमासमें करना पड़ेगा और कार्त्तिक मासमें करोंगे तो १०० रात दिनकी

पीछाड़ी १०० दिन शास्त्रानुसार रहते हैं इसलिये मासवृद्धि होते भी पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रहने का और १०० होनेसें दूषण लगाने का न्यायाम्भोनिधिजीका लिखना सर्वथा वृथा है इसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंकी समीक्षामें सूत्रकार वृत्तिकार महाराजके अभिप्राय सहित संपूर्ण पाठसमेत युक्तिपूर्वक विस्तारसें पृष्ठ ११८में पृष्ठ १२९ तक छपगया है और आगे भी कितनीही जगह छप चुका है सो पढ़नेसें अच्छी तरहसें निर्णय होजावेगा तथापि उपरोक्त लेखमें न्यायाम्भोनिधिजीनें उटपटाङ्ग लिखा है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हुं—[श्रावणमास बढ़ने सें दूसरे श्रावणमें और भाद्रव बढ़नेसें प्रथम भाद्रव मासमें पर्युषणा करना यह तुमने अशीदिनका प्राप्तिके भयसें अङ्गीकार किया] इस लेखको लिखके आगे श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका (सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते) इस पाठसें पचासदिने पर्युषणा दिखाई ॥ इन अक्षरोंसें तो जैसे शुद्ध समाचारी कारनें ५० दिने पर्युषणा ठहराई थी तैसेही न्यायाम्भोनिधिजीनें भी ठहराई इसमें तो शुद्ध समाचारी कारका लेखको विशेष पुष्टिमिली और न्यायांभोनिधिजीको अपना स्वयं लेख भी बाधक होगया तो फिर दो श्रावण होनेसें भी भाद्रपदमें और दो भाद्रपद होनेसें दूसरे भाद्रपदमें न्यायांभोनिधिजी पर्युषणा करते हैं तब तो प्रत्यक्ष ८० दिन होते हैं और श्रीसमवायाङ्गजी आदि अनेक शास्त्रोंमें ५० दिने पर्युषणा करनी कही है और अधिकमास भी अनेक शास्त्रोंमें प्रमाण किया है तैसे ही खास न्यायांभोनिधिजी भी क्षामणा के सम्बन्धमें अधिकमास होनेसें [तिसवर्षमें तेरांमास तो

आषाढ़ चौमासीसें प्रथम पचासदिन जानेसें और पिछाड़ी ७० दिन रहनेसें एवं चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी श्रीसमवायाङ्गजी का पाठ है सो तो अल्पबुद्धि-वाला भी समझ सकता है तो फिर न्यायांभोनिधिजी न्यायके और बुद्धिके समुद्र इतने विद्वान् होते भी दो श्रावणादि होनेसें पांचमास के १५० दिन का वर्षाकाल में पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखने का आग्रह करते कुछ भी विचार नही किया बड़ीही शरमकी बातहै और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करके पिछाड़ी के ७० दिन रखनेका न्यायांभोनिधिजी चाहते होवे तोभी अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध है क्योंकि व्यवहारिक गिनतीसें पचास दिने अवश्य ही निश्चय करके पर्युषणा करनी कही है, और दिनोंकी गिनती में अधिकमास छुट नही सकता है इस लिये ८० दिने पर्युषणा करके पिछाड़ी ७० दिन रखेंगे तो भी शास्त्रविरुद्ध है और अधिक मासको गिनती में छोड़ कर पर्युषणा के पिछाड़ी ७० दिन रखेंगे तो भी अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध है क्योंकि अधिक मासको अनेक शास्त्रोंमें और खास श्रीसमवायांगजी सूत्र में प्रमाण किया है इस लिये अधिकमास को गिनतीमें निषेध करना भी न्यायांभोनिधिजीका नही बन सकता है और पांचमासके सम्बन्धी पाठको पांचमासके सम्बन्धमें न्यायांभोनिधीजी को सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें लिखना भी उचित नही है इस लिये श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ पर अपनी कल्पनासें न्यायांभोनिधिजी अथवा उन्होंके परिवारवाले और उन्होंके पक्षधारी वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके महाशय

रानेके लिये उपरका लेख लिखाया परन्तु खास शुद्धसमाचारीकारने ही श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका इस ही पाठको अपनी शुद्धसमाचारीकी पुस्तकमें लिखा है। और इन्ही श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिकारक (शुद्धसमाचारी कारके परमपूज्य श्रीखरतरगच्छ नायक) श्रीनवांगी वृत्तिकार श्रीअभयदेव सूरीजी प्रसिद्ध है जिन्होंने इन्ही पाठकी वृत्ति में चारमासके एकसो वीश (१२०) दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी अच्छी तरहका खुलासाके साथ व्याख्या किवी है। सो प्रसिद्ध है और मैंनें भी मूलपाठ तथा वृत्ति और भावार्थ सहित इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १२० । १२१ में छपा दिया है इस लिये चारमास सम्बन्धी पाठको पांच मासके अधिकारमें लिखना भी न्यायाम्भोनिधिजी को अन्याय कारक है और दो श्रावण होनेसें पांचमासके वर्षाकालके १५० दिन होते हैं यह तो जगत प्रसिद्ध है जिसकों अल्पबुद्धि वाले भी समझ सक्ते है जिसमें जैन शास्त्रोंकी आज्ञानुसार वर्तमान काले पचास दिने पर्युषणा करनेसें पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन तो स्वाभाविक रहते ही है यह बात भी शास्त्रानुसार तथा प्रसिद्ध है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी होकरके अन्याय के रस्तेमें वर्तके पांचमासके वर्षाकालमें पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन स्वभाविक रहते हैं जिसको शास्त्र विरुद्ध कहकर चारमास सम्बन्धी पाठ लिखके दूषित ठहराते है। यह तो प्रत्यक्ष उत्सूत्र भाषणरूप वृथा है और वर्तमानमें दो श्रावणादि होनेसें पचास दिने पर्युषणा और पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन रहनेका श्रीतपगच्छके ही पूर्वाचार्य्योंने कहा है जिसका खुलासा इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १४६ में छप गया है

तथा उन्होंके परिवारवालोंके ऊपर शोचनीय न्याययुक्त अच्छी तरहसें पड़ता है सोही दिखाता हुं कि-देखो न्यायांभोनिधिजी तथा इन्होंके परिवारवाले और इन्होंके पक्षधारी वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके सर्वी महाशय-विशेष करके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठको पर्युषणा सम्बन्धी सब कोई लिखते हैं सुनते कहते हैं और उन्ही पर पूर्ण श्रद्धा रखके बड़ाही आग्रह करते हैं उस पाठमें वर्षाकालके पचास दिन जानेसें और पिछाड़ी ७० दिन रहनेसें पर्यु-षणा करणा कहा है यह पाठ भावार्थः सहित आगे बहुत जगह छप गया है इस पर बुद्धिजन सज्जन पुरुष विचार करों कि-वर्त्तमानमें दो श्रावण होनेसें भाद्रपदमें पर्युषणा करने वालोंको ८० दिन होते हैं जिससे पूर्वभागका एक अङ्ग सर्वथा गुमा हो जाता है और दो आश्विन मास होनेसें कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं जिससें उत्तर भागका एक अङ्ग भी सर्वथा गुमा हो जाता है इस तरहसें न्यायांभो निधिजी आदि जो श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठसें दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक ५० दिने पर्युषणा और दो आश्विन होते भी कार्त्तिक तक पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखना चाहनेवाले महाशयोंको श्रावण और आश्विन मास बढ़नेसें दोनों अङ्ग श्रीजिनाज्ञारूपी वस्त्र करके रहित प्रत्यक्ष बनते हैं यह तो ऐसा हुवा कि-दोनों छोईंरे जोगटा मुद्रा और आदेश—किं वा—कोई एक संसारिक गृहस्थाश्रम छोड़के साधु हुवा परन्तु साधुकी क्रिया न करसका और पीछा गृहस्थ भी न हो सका उसीको उभय भ्रष्ट याने न साधु और न गृहस्थ ऐसे को 'यतो

भ्रष्टा ततो भ्रष्टा' कहनेमें आता है। अथवा। कोई एकस्त्री थी जिसने दाहीने हाथमें विधवाका चिह्न लम्बी काँचली और वाम हाथमें सधवाका चिह्न चुड़ा धारण किया था उसीनेही थोड़ी देर बाद फिर उससे विपरीत, याने, वाम हाथमें विधवाका चिह्न लम्बी काँचली और दाहीने हाथमें सधवाका चिह्न चुड़ा धारण किर लिया ऐसी पागल स्त्री न तो विधवाकी और न सधवाकी गिनतीमें आसकती है तैसेही दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक पचास दिनका और दो आश्विन होते भी कार्त्तिक तक ७० दिन का' आग्रह करने वालोंको श्रावण और आश्विन यहनेमें एक तरफ भी श्रीजिनाज्ञाके आराधक नही हो सकते हैं क्योंकि दोनों अङ्ग खुले रहते हैं इसलिये उपरोक्त दृष्टान्तका न्याय उपरके महाशयोंको बरोबर घटता है इसलिये अब उपरकी बातको न्यायांभोनिधिजीके परिवारवालोंको और उन्होंके पक्षधारियोंको अवश्य करके विचारनी चाहिये और पक्षपातको छोड़के सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित है।

और शुद्धसमाचारीकार दो श्रावणादि होनेसें ५० दिने पर्युषणा करके पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन अनेक शास्त्रानुसार न्याययुक्ति सहित मान्य करता है इस लिये एक अंग खुल्लेका दृष्टान्त न्यायाम्भोनिधिजी कों लिखके आज्ञाभङ्गरूप दूषण शुद्धसमाचारीकार को दिखाना सर्वथा करके उत्सूत्र भाषणरूप वृथा है।

और आगे लिखा है कि—(पूर्वपक्ष इस दूषणरूप यन्त्र में तो आपको भी यन्त्रित होना पड़ेगा उत्तर—हे समीक्षक ? यह आज्ञाभङ्गरूप दूषणका लेशभी हमको न

समझना क्योंकि हम अधिक मासको कालचूला मानते है)
इन अक्षरोंको लिखके न्यायाम्भोनिधिजी दो श्रावण होनेसें
भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसमें अधिक मासको
गिनती में छोड़कर ८० दिनके ५० दिन और दो आश्विन
मास होनेसे पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन
होते है जिसको भी ७० दिन अपनी कल्पनासें मान्य करके
निर्दूषण बनना चाहते है सो कदापि नही हो सकता है
क्योंकि अधिक मासको कालचूला की उत्तम ओपमा गिनती
करने योग्य शास्त्रकारोनें दिवी है जिसका बिशेष निर्णय
तीनों महाशयोंके नामकी समीक्षामें अच्छी तरहसें छपगया
है और आगे फिर भी कालचूला सम्बन्धी श्रीनिशीथ
चूर्णिका अधूरा पाठ और श्रीदशवैकालिक सूत्रके प्रथम
चूलिकाकी वृहद्वृत्तिका अधूरा पाठ लिखके भावार्थ लिखे
बाद फिर भी अपनी कल्पनासें पूर्वपक्ष उठा कर उसीका
उत्तरमें भी पृष्ठ ९१ की पंक्ति १३ तक उत्सूत्र भाषणरूप
लिखा है जिसका उतारा इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ५९ और
६० को आदि तक छपाके उसीकी समीक्षा पृष्ठ ६० सें
६५ तक इन्ही पुस्तकमें अच्छी तरहसें खुलासा पूर्वक
छपगई है और श्रीनिशीथचूर्णिके प्रथमोद्देशेका काल-
चूलासम्बन्धी सम्पूर्ण पाठ और श्रीदशवैकालिकको प्रथम
चूलिकाके वृहद्वृत्तिका सम्पूर्ण पाठ भावार्थके साथ
खुलासा पूर्वक इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ४९ सें पृष्ठ ५८ तक
विस्तारसें छपगया है और तीनों महाशयोंके नामकी
समीक्षा में भी इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ७१ से ७८ तक और आगे
भी कितनी ही जगह छप गया है उसीको पढ़नेसें पाठक

वर्गकों अवश्यही निर्णय हो जायेगा कि अधिक मासको कालचूला की उत्तम ओपमा अवश्य ही गिनती करनें योग्य शास्त्रकारोंने दिवी है इस लिये अधिकमासको निश्चय करके गिनती करना हो सम्यक्त्वधारियोंको उचित है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी अधिक मासको गिनती निषेध करते हैं सो कदापि नही हो सकती है इतने पर भी आगे फिर भी पृष्ठ ८१ के पङ्क्ति १४ वीं से पंक्ति १८ वी तक लिखते है कि (इस अधिकमासकों कालचूलामें तुमको भी अवश्य ही मानना पड़ेगा और नही मानोंगे तो किसी तरहसें भी आज्ञा भङ्ग रूप दूषणको गठड़ीका भार दूर नही होगा क्योंकि पर्युषणाके बाद ७० (सत्तर) दिन रहने का कहा है काल-चूला न मानोंगे तो १०० दिन हो जायगें) इन अक्षरोंको लिखके शुद्धसमाचारी कारको पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन होनेसें दूषण लगाते हैं सो न्यायाम्भोनिधिजीका सर्वथा मिथ्या है क्योंकि मासवृद्धि होते पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन होनेमें कोई दूषण नही है इसका विस्तार उपरमें तथा तीनों महाशयों के नामकी समीक्षामें और भी कितनी ही जगह छप गया है उसीको पढ़के पाठकवर्ग सत्यासत्यका निर्णय कर लेना ;—

और शुद्धसमाचारीकार तथा श्रीखरतरगच्छवाले अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा मासके विशेष करके गिनतीमें बरोबर लेते हैं और न्यायांभोनिधिजी अधिक मासको कालचूला कह करके भी शास्त्रकारोंका तात्पर्य्य समझे विना श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंके तथा श्री-निशीथचूर्णिकार और श्रीदशवैकालिकके चूलिकाकी बृहद्-

वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधिकमासकी गिनती निषेध करते पर भवका भय कुछ भी नही किया यह बड़ाही अफसोस है ।

और आगे जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तकके पृष्ठ ९१ की पंक्ति १९ वीं से पृष्ठ ९२ वें की प्रथम पंक्ति तक ऐसे लिखा है कि (पर्युषणा पर्व केवल भाद्रव मासके साथ प्रतिबन्धवाला है क्योंकि जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणापर्व का निरूपण किया है तिसमें भाद्रवमासका विशेषणके साथ ही कथन किया है परन्तु अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये है देखो, सन्देहविषौषधी ग्रन्थमें भी भाद्रव मास ही के विशेषण करके कहा है परन्तु ऐसा नही कहा कि अधिक मास होवे तो श्रावणमासमें करना ऐसा पर्युषणा पर्वके साथ विशेषण नही दिया है) इसपरसे उसकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं कि हे सज्जन पुरुषो न्यायाम्भोनिधिजीके उपर का लेखको मैं, देखता हुं तो मेरेको न्यायाम्भोनिधिजी में मिथ्या भाषणका त्यागरूप दूजा महाव्रतही नही दिखता है क्योंकि उपरके लेखमें तीन जगह प्रत्यक्ष मिथ्या भोले जीवोंको भ्रमाने के लिये सासूत्र भाषणरूप लिखा है सोही दिखाता हुं कि प्रथमतो (पर्युषणापर्व केवल भाद्रव मासके साथ प्रतिबन्धवाला है क्योंकि जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणा पर्वका निरूपण किया है तिसमें भाद्रवमासका विशेषणके साथही कथन किया है) यह अक्षर लिखके मासवृद्धि होते भी भाद्रपद मासप्रतिबन्ध पर्युषणा न्यायाम्भोनिधिजी ठहराते है सो मिथ्या है क्योंकि

भाष्य, चूर्णि, वृत्यादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धि होनेसें श्रावणमासमें पर्युषणा करना लिखा है इसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंकी समीक्षामें शास्त्रोंके प्रमाण सहित न्याययुक्तिके साथ अच्छी तरहसें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १०३ से पृष्ठ ११३ तक छप गया है उसीकों पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेगा और दूसरा (अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कहगये है) यह लिखा है सोभी प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि श्रीखरतरगच्छके अनेक पूर्वाचार्य्योंने अनेक ग्रन्थोंमें दो श्रावण होनेसें दूसरा श्रावणमें पर्युषणा करनी कही है सोही देखो श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसङ्घपट्टक वृहद्वृत्तिमें १। तथा श्रीसमाचारी ग्रन्थमें। २। श्रीजिनप्रभ सूरिजी कृत श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिमें। ३। तथा श्रीविधिप्रपा ग्रन्थमें। ४। श्रीउपाध्यायजी श्रीसमयसुन्दरजीकृत श्रीकल्पकल्पलता वृत्तिमें। ५। तथा श्रीसमाचारी शतकमें। ६। और श्रीलक्ष्मी-वल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पद्रुमकलिका वृत्तिमें। ७। और श्रीतप गच्छ तथा श्रीखरतरगच्छसम्बन्धी (तपा खरतर प्रश्नोत्तर)नाम ग्रन्थ है उसीमें। ८। और श्रीपर्युषणा सम्बन्धी चर्चापत्रमें। ९। इत्यादि अनेक जगह खुलासापूर्वक दूसरे श्रावणमें पर्यु-षणा करनेका श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्योंने कहा है तैसें ही श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने भी अनेक ग्रन्थोंमें दूसरे श्रावणमें ही पर्युषणा करना कहा है और खास न्याया-म्भोनिधिजी भी शुद्धसमाचारी पुस्तक सम्बन्धी अपनी जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तकके पृष्ट ८७ की पंक्ति २२ वी से पृष्ठ ८८ प्रथम पंक्तितक लिखते हैं कि (श्रावण मास वढ़े

तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रव बढ़े तो प्रथम भाद्रव शुदीमें आषाढ़ चौमासेसें ५० में दिनही पर्युषणा करना परन्तु ८० अशीमें दिन नही करना ऐसा लिखके पृष्ठ १५५ में अपनेही गच्छके श्रीजिनपति सूरिजी रचित समाचारीका प्रमाण दिया है) इस अक्षरोंको न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं और उपरोक्त श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्योंके ग्रन्थोंका दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने सम्बन्धी पाठोंको भी जानते हैं तथापि (अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये हैं) इतना प्रत्यक्ष मिथ्या लिखके अपना महाव्रत भङ्गके सिवाय और क्या लाभ उठाया होगा सो पाठकवर्ग विचार लेना—

और तीसरा (देखो सन्देहविषौषधी ग्रन्थमें भी भाद्रव मासहीके विशेषण करके कहा है परन्तु ऐसा नही कहा है कि अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा पर्युषणापर्वके साथ विशेषण नही दिया है) यह लिखा है सो भी मायावृत्तिसें प्रत्यक्ष मिथ्या लिखा है क्योंकि श्री जिनप्रभसूरिजीने श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिमें खुलासा पूर्वक दो श्रावण होनेसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनी कही है जिसका पाठ भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेके लिये इस जगह लिख दिखाता हुं श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिके पत्र ३३ और ३४ का सपाठ तत्पाठ. —

[illegible] पर्युषणा समाचारी जिनप्रभसूरी पर्युषणा [illegible] [illegible] श्रीमहावीरस्य [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] । आषाढ़चतुर्मासकादारभ्य [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

इति। पर्युषणाकल्पार्थात् सेकेवट्टे णमित्यादि। प्रश्नवाक्यं लक्षणं इत्यादि। निर्वचनवाक्यं। प्रायेणागारिणां। गृहस्थानामागाराणि गृहाणि। कडियाइ कटयुक्तानि उक्कंपियाइं धवलितानि। छन्नाइं तृणादिभिः लित्ताइं छगणादिभिः क्वचित् गुत्ताइंति पाठस्तत्र गुप्तानि वृत्तिकरद्वारपिधानादिभिः घट्ठाइं विषमभूमिभञ्जनात्। मट्ठाइं श्लक्ष्णीकृतानि क्वचित् संमट्ठाइंत्ति पाठस्तत्र समंतात् मृष्टानि मसृणीकृतानि संपधूमियाइं सौगन्ध्यापादनार्थं धूपनैर्वासितानि। खातोदगाइं कृतप्रणालीरूपजलमार्गाणि खायनिद्धमणाइं निर्द्धमणं खाल गृहात् सलिलं येन निर्गच्छति अप्पणो अट्ठाए आत्मार्थं स्वार्थं गृहस्थैः कृतानि परिकर्म्मितानि करोति कायइ करोतीत्यादाविव परिकर्म्मार्थत्वात् परिभुक्तानि तैः स्वय परिभुज्यमानत्वात् अतएव परिणामितानि भवन्ति। ततः सविंशतिरात्रे मासे गते श्रमी अधिकरणदोषा न भवन्ति। यदि पुनः प्रथममेव साधवः स्थिता स्म। इति ब्रूयुः तदा ते गृहस्था मुनीनां स्थित्या सुभिक्ष संभाव्य तप्तायोगोलकल्पाः दन्तालक्षेत्रकं कुर्युः तथा चाधिकरणदोषाः अतस्तत्परिहाराय पञ्चशतादिभिः स्थिता स्म इति वाच्यं चूर्णिकारस्तु कडियाइं पासेहिंतो कंपियाणि उवरि इत्याह। स्थविरा स्थविरकल्पिकाः अज्जत्ताएत्ति अद्यकालीनाः आर्य्यतया प्रव्रज्यया स्थविरत्वेन इत्येके अन्तरावियसे इत्यादि अंतरापि च अर्वागपि कल्पते, पर्युषितुं न कल्पते तां रजनीं भाद्रपदशुक्लपञ्चमीं उवायणावित्तएत्ति अतिक्रमितुं। वासावासे इत्यादिको भाग। इह हि पर्युषणाद्विधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात्। तत्र गृहिणामज्ञाता यस्यां वर्षायोग्यपीठफलकादी

यत्रैव कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते साषाढ़पौर्णमास्यां पञ्चपञ्चदिनवृद्ध्या यावद्भाद्रपदशितपञ्चम्याधिकादशसु पर्वतिथिषु क्रियते। गृहिज्ञाता तु यस्यां सांवत्सरिकातिचारालोचनं लुञ्चनं पर्युषणाकल्पसूत्रकर्षणं चैत्यपरिपाटी अष्टमं साम्वत्सरिकप्रतिक्रमणं च क्रियते यया व्रतपर्य्याय वर्षाणि गण्यन्ते सा नभस्य शुक्लपञ्चम्यां कालिकसूर्य्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटं कार्य्या। यत्पुनरभिवर्द्धित वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते। तत्सिद्धान्तटिप्पणानामनुसारेण तत्र हि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ़ एव वर्द्धते नान्येमासा स्तानि चाधुना सम्यक् न ज्ञायन्ते ततो दिनपञ्चाशतैव पर्युषणासङ्गतेति वृद्धाः ततश्च कालावग्रहश्चात्र जघन्यतो नभस्य शितपञ्चम्या आरभ्य कार्त्तिकचतुर्मासांतः सप्ततिदिनमानः उत्कर्षतो वर्षायोग्य क्षेत्रान्तराभावादाषाढ़मासकल्पेन सह वृष्टिसद्भावात् मार्गशीर्षेणापि सह षण्मासा इति।

देखिये ऊपरके पाठमें एकमास और वीश दिने पर्युषणा श्रीतीर्थंकर गणधर स्थविराचार्य्यादि करते थे तैसेही वर्त्तमानमें भी एकमास वीश दिने यामे पचास दिने पर्युषणा करनेमें आती है और मासवृद्धि होनेसें वीश दिने पर्युषणा जैन टिप्पणानुसार दिखाई और वर्त्तमानमें जैन टिप्पणाके अभावमें पचास दिनेही पर्युषणा करनी कही इसमें दो श्रावण हो तो दूसरे श्रावणमें अथवा दो भाद्रपद हो तो प्रथम भाद्रपदमें पचास दिनेही पर्युषणा सम्यक्त्वधारियोंको करनी योग्य है, तैसेही श्रीखरतरगच्छवाले करते हैं परन्तु इत्यादियोंकी मानही नहीं है—

और इन्ही महाराज श्रीजिनप्रभसूरिजीने श्रीसन्देह-विषौषधी वृत्तिमें श्रीकल्पसूत्रजीके मूलपाठकी व्याख्या किये बाद इन्ही श्रीकल्पसूत्रकी निर्युक्ति जो कि सुप्रसिद्ध श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत है उनकी व्याख्या किवी है उसीमें काल ठवणाधिकारे समयादि कालसें आवलिका, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, सम्वत्सर, युगादिकी व्याख्या करके आगे अधिक मासको अच्छी तरहसें प्रमाण किया है और प्राचीनकालाश्रय जैसे चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने पर्युषणा तैसेंही अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिने पर्युषणा खुलासा पूर्वक कही है और श्रीनिशीथचूर्णिके दशवे उद्देशेमें जैसे पर्युषणा सम्बन्धी व्याख्या है तैसेही इन्ही महाराजने भी प्रायः उसीके सदृश अच्छी तरहसें व्याख्या किवी हैं

और इन्ही महाराज श्रीजिनप्रभ सूरिजीने श्रीविधिप्रपा नाम ग्रन्थ बनाया है उसीके पृष्ठ ५३ में जैसा पाठ है वैसाही नीचे मुजब जानो ;—

आषाढ चउम्मासियाओ नियमा पणासइमे दिणे पज्जोसवणा कायव्वं न इक्कपंचासइमे जयावि लोइय टिप्पणयाणुसारेण दो सावणा दो भद्दवया वा भवंति तयावि पणासइमे दिणे भउण कालचूलाविकाए असीइमे सवीसइराइमासे वइक्कते पज्जोसवणंतित्ति वयणाउ जंच अभिवड्ढियंमि वीसइसुत्तं तं जुगमज्झे दो पोसा जुगअंते दोत्री आसाढत्ति सिद्धंतटिप्पणयाणुरोहेणं चेव घडइ ति संपयं नयट्ट तित्ति णहुत्तमेव पज्जोसवणादिणत्ति ॥

अब सत्यग्राही सज्जनपुरुषोंसें मेरा इतनाही कहना है कि उपरमें श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरिजीने श्रीसन्देह-

विषौषधी वृत्तिमें और श्रीविधिप्रपामें खुलासाके
मासवृद्धिकी गिनतीसें वर्त्तमानमें पचास दिने पर्युषणा
है सो दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा
यह प्रसिद्ध बात है और न्यायाम्भोनिधिजी खास
श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिका और श्रीविधिप्रपा ग्रन्थ
उपरोक्त पर्युषणा सम्बन्धी पाठको अच्छी तरहसें जान
क्योंकि श्रीविधिप्रपा ग्रन्थका पाठ खास आपने चतुर्थ
निर्णयः पुस्तकके पृष्ठ ८३।८४।८५ में लिखा है।

और मैंने जो उपरमें श्रीविधिप्रपा ग्रन्थका पाठ
षणा सम्बन्धी लिखा हैं उसी पाठके पहली पंक्तिका
दोनु जगहसें काटकरके अधूरा ग्रन्थकार महाराज
विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप और श्रीखरतरगच्छके
दूसरे भोले श्रावकोंको भ्रममें गेरनेके लिये न्यायाम्भो
निधिजीनें जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ८
अन्तमें लिखा है (जिसका खुलासा आगे करनेमें आवेगा
इससें पर्युषणा सम्बन्धी उपरका पाठ न्यायाम्भोनिधि
जानते थे तथापि अपनी मिथ्या बात रखनेके लिये
(अधिकमास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा
तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये है) यह वाक्य और
सन्देहविषौषधी ग्रन्थमें भी (ऐसा नही कहा कि अधिक
मास होवे तो श्रावणमासमें पर्युषणा करना) यह वाक्य
न्यायाम्भोनिधिजी माया वृत्तिसें प्रत्यक्ष मिथ्या कैसे लिख
गये होंगे सो मेरेको बड़ाही अफसोस है ;—इस लिये मेरे
कों इस जगह लिखना पड़ता है कि श्रीजिनप्रभ सूरिजीनें
श्रीसन्देह विषौषधी वृत्तिमें तो कदाग्रही और सन्देहकारी

पुरुषोंका अच्छी तरहसें सन्देहका (पर्युषणा सम्बन्धी और कल्याणक सम्बन्धी भी) निवारण किया है जो स्थिरचित्तसें वाँचके सत्यग्राही होगा उसीका तो अवश्य करके मिथ्यात्व रूप सन्देह निकलके सम्यक्त्वरूप सत्यबातकी प्राप्ति हो जावेगा इसमें कोई शक नही—

और श्रीखरतरगच्छके तो क्या परन्तु श्रीतपगच्छके ही पूर्वाचार्य्योंनें मासवृद्धिके अभावसें भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कही है और दो श्रावण होनेसें पचासदिने दूजा श्रावणमें भी पर्युषणा करनी कही है इसका विस्तार उपरमें अनेक जगह छपगया है। इसलिये श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्य्यजी कृत ग्रन्थका मासवृद्धि सम्बन्धी पाठको छुपाकर मासवृद्धिके अभावका पाठ मासवृद्धि होते भी भोले जीवोंको दिखा कर सत्य बात परसें श्रद्धाभङ्ग करके अपनी कल्पित बातमें गेरनेका कार्य्य करना न्यायाम्भोनिधिजीकों उचित नही था;—

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें अपनी जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ८२ की दूसरी पंक्तिसें सोलवी पंक्तितक जो लिखा है सो नीचे मुजब जानो,—

[पृष्ठ १४८ पंक्ति ६ में नारचंद्र ज्योतिष ग्रन्थका प्रमाण दिया है सो तो हीरीके स्थानमें थोरीका विवाह कर दिया है। क्योंकि इसी द्वितीय प्रकरणमें ऐसा श्लोक है। यथा—हरिशयनेऽधिकमासे, गुरुशुक्रास्तेमलग्नमध्येय्यं ॥ लग्नेशांशाधिपयो,र्नीचास्तगमे च न शुभं स्यात् ॥ १ ॥

भावार्थः अधिक मासादिक जिसमे स्थान बताये उसमें शुभ कार्य्य नही होते है। तो अब बारामासिक पर्युषणा-

पर्व कैसे करनेकी सङ्गति होगी ? और रत्नकोषाख्य ज्योतिःशास्त्र विषे भी ऐसा कहा है । यथा—'यात्राविवाह-मण्डन, मन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि ॥ परिहर्त्तव्यानि बुधैः, सर्वाणि नपुंसके मासि ॥ १ ॥

भावार्थः यात्रामण्डन, विवाहमण्डन, और भी शुभकार्य्य है सो भी पण्डित पुरुषोंने सर्व नपुंसक मासि कहनेसें अधिक मासमें त्यागने चाहीये । अब देखीये । इस लेखसें भी अधिक मासमें अति उत्तम पर्युषणापर्व करनेकी सङ्गति नही होसकती है ।]

ऊपरके न्यायाम्भोनिधिजीका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गकों दिखाता हुं कि (पृष्ठ १५९ में नारचन्द्र ज्योतिष ग्रन्थका प्रमाण दिया है सो तो हीरीके स्थानमें मीरीका विवाह कर दिया है) इन अक्षरोंको लिखके जो शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५९ मे नारचन्द्र ज्योतिषका श्लोक है उसी को न्यायांभोनिधिजी निषेध करना चाहते हैं सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि उसी श्लोकका मतलब सत्य है देखो शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५९में नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका ऐसा श्लोक है यथा—रविक्षेत्रगते जीवे, जीव क्षेत्रगते रवौ । दीक्षां स्थापनां चापि, प्रतिष्ठा च न कारयेत् ॥ १ ॥ इस श्लोक लिखनेका तात्पर्य्य ऐसा है कि वादी शङ्का करता है कि अधिकमासमें शुभकार्य्य नही होते हैं तो फिर पर्युषणापर्व भी शुभकार्य्य अधिकमासमें कैसे होवे इस शङ्काका समाधान शुद्धसमाचारीकार पं० प्र० यतिजी श्रीरायचन्द्रजी ऐसे करते हैं कि अधिक मासके सिवाय भी 'रविक्षेत्रगते जीवे, याने सूर्य्यका क्षेत्रमें गुरुका आना होवे

अर्थात् सिंहराशि पर गुरुका आना होवे तब सिंहे गुरु सिंहस्थ तेरह मास तक कहा जाता है उसीमें और 'जीवस्तेत्र गते रवी, याने गुरुका क्षेत्रमें सूर्य्यका जाना होवे अर्थात् गुरुका क्षेत्रमें सूर्य्य धन और मीन राशिपर पौष और चैत्र मासमें आता है तब उसीको मलमास कहे जाते हैं उसीमें अर्थात् सिंहस्थका और मलमासका ऐसा योग बने तब गृहस्थको दीक्षा देना तथा साधुको सूरि वगैरह पदमें स्थापन करना और प्रतिष्ठा करनी ऐसे कार्य्य नही करना चाहिये क्योंकि ऐसे योगमें दीक्षादि कार्य्य करनेसें इच्छित फल-प्राप्त नही हो सकता है इसलिये उपरोक्तादि अनेक कारण-योगे मुहूर्त्तके निमित्त कारणसें जो जो कार्य्य करनेमें आते हैं सो निषेध किये हैं परन्तु आत्मसाधनका धर्मरूपी महान् कार्य्य तो बिना मुहूर्त्तका होनेसें किसी जगह कोई भी कारणयोगे निषेध करनेमें नही आया है और अधिक मासमें धर्मकार्य्य पर्युषणादि करनेका कोई शास्त्रमें निषेध भी नही किया है इसलिये अधिक मासादिमे धर्मकार्य्य अवश्यही करना चाहिये यह तात्पर्य्य शुद्धसमाचारी कारका जैनशास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक न्यायसम्मत होनेसें मान्य करने योग्य सत्य है इसलिये निषेध नही हो सकता है तथापि न्यायांभोनिधिजी अपनी कल्पित बातको स्थापनेके लिये शुद्धसमाचारीकारकी सत्य बातका निषेध करते हैं सोभी इस पंचमें कालके न्यायके समुद्रका नमुना है और शुद्धसमाचारीकार पं॰ प्र॰ यतिजी श्रीराय-चन्द्रजी थे, इसलिये (हीरीके स्थानमें बीरीका विवाह कर दिया है) यह अक्षर न्यायांभोनिधिजीको बिना विचार

किये ऐसे मिथ्या लिखना उचित नही था, इसका विशेष विचार पाठकवर्ग अपनी बुद्धिसें स्वयं कर लेना ;—

और (इसी द्वितीय प्रकरणमें ऐसा श्लोक है यथा— हरिशयनेऽधिकमासे, गुरुशुक्रास्ते न लग्नमन्वेष्यं ॥ लग्नेशांशाधिपयो,र्नीचास्तगमे च न शुभं स्यात् ॥१॥ भावार्थः अधिक मासादिक जितने स्थान बतायें उसमें शुभकार्य्य नही होते हैं तो अब बारा मासिक पर्युषणापर्व कैसे करनेकी सङ्गति होगी) इस उपरके लेखसें न्यायांभोनिधिजीनें अधिक मासमें पर्युषणा करनेका निषेध किया इस पर मेरेकों प्रथमतो इतनाही लिखना पड़ता है कि उपरके श्लोकका अधूरा भावार्थ लिखके न्यायाम्भोनिधिजीनें भोले जीवोंकों भ्रममें गेरे हैं इसलिये इस जगह उपरके श्लोकका पुरा भावार्थ लिखनेकी जरूरत हुई सो लिखकें दिखाता हुं— हरिशयने, याने, जो श्रीकृष्णजीका शयन (सोना) लौकिक में आषाढ़शुक्ल एकादशी (११) के दिनसें कार्त्तिकशुक्ल एकादशीके दिन तक चार मासका (परन्तु मासवृद्धि दो श्रावणादि होनेसें पांच मासका) कहा जाता हैं उसीमें १, और वैशाखादि अधिक मासमें २, गुरुका अस्तमें ३, शुक्रका अस्तमें ४, और ज्योतिष शास्त्र मुजब लग्नके नवांशोंका अधिपति नीचा हो ५, अथवा अस्त हो ६, इतने योगोंमें पण्डित पुरुषको लग्न नही देखना चाहिये क्योंकि उपरके योगोंमें लग्न देखे तो शुभ फल नही हो सकता है इसलिये ज्योतिषशास्त्रोंमें उपरके योगोंमें लग्न देखनेकी मनाई कियी है इस तरहसें उपरोक्त श्लोकका भावार्थ होता है ॥ १ ॥

अब न्यायाम्भोनिधिजीनें सारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका

जो ऊपरमें श्लोक लिखके पर्युषणा पर्वका निषेध किया है उन सम्बन्धी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं, जिसमें प्रथमतो शुद्धसमाचारीकारने इसीही मारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका जो श्लोक लिखाथा उसीको भावार्थ सहित मैं ऊपरमें लिख आया हुं–जिसमें खुलासे लिखा है कि तेरहमास तक सिंहस्थमें और पौष तथा चैत्र ऐसे मलमासमें मुहूर्त्तके निमित्तिक शुभकार्य्य नही होते हैं परन्तु विना मुहूर्त्त का धर्म कार्य्य करनेमें हरजा नही क्योंकि तेरहमासका सिंहस्थमें पर्युषणादि धर्मकार्य्य तो अवश्य ही करने में आते है और पौषमासमें श्रीपार्श्वनाथस्वामिजीका जन्म और दीक्षा कल्याणकके धर्मकार्य्य और चैत्रमासमें श्रीआदिजिनेश्वर भगवानूका जन्म और दीक्षा कल्याणकके धर्मकार्य्य करनेमें आते हैं और चैत्रमासमें ओलियांकी भी तपश्चर्या वगैरह करनेमें आती है और खास अधिकमासमें भी पाक्षिकादि धर्मकार्य्य करनेमें आता है इस लिये मुहूर्त्तके निमित्तिक कार्य्य अधिकमासमें नही हो सकते है परन्तु धर्मकार्य्य तो विना मुहूर्त्तका होनेसें अवश्यही करनेमें आता है यह तात्पर्य्य शुद्ध समाचारी कारका सत्यथा तथापि न्यायाम्भोनिधिजीनें (पृष्ठ १५९ पंक्ति ६ में मारचन्द्र ज्योतिष ग्रन्थका प्रमाण दिया है सो तो हीरीके स्थानमें धीरीका विवाह कर दिया है) ऐसा उपहासका वाक्य लिखके उपरोक्त सत्यवातका निषेध करदिया और फिर उसी स्थानका 'हरिशयने, इत्यादि श्लोक लिखके हरिशयने श्रीकृष्णजीका शयन (सोना) जो चौमासामें और अधिक मासमें शुभकार्य्य का न होना दिखाकर पर्यु-

षणा पर्वका भी नही होनेका उत्सूत्र भाषणरूप दिखाते कुछ भी विचार न किया क्योंकि चौमासेमें मुहूर्त्त निमित्तिक शुभकार्य्य नही होते है परन्तु विना मुहूर्त्तका श्रीपर्युषणा पर्वतो खासकरके श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने वर्षा ऋतुमें करनेका कहा है जिसका किञ्चिन्मात्र भी न्यायाम्भोनिधिजी विचार न करते श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें और विद्वान् पुरुषोंके आगे अपने नामकी हासी करानेका कारणरूप हरिशयन का चौमासमें और अधिक मासमें शुभकार्य्यका न होनेका दिखाकर पर्युषणापर्व न होनेका भोले जीवोंको दिखाया। हा अतीव खेदः इस उपरकी बातको पाठकवर्गको तथा न्यायाम्भोनिधिजीके परिवारवालोंकों और उन्होंके पक्षधारियोंकों (सत्यग्राही हो कर) दीर्घदृष्टिसें विचारनी चाहिये;—

दूसरा औरभी सुनो—जो न्यायांभोनिधिजीके तथा उन्होंके परिवारवालोंके दिलमें ऐसाही होगा कि मुहूर्त्तके निमित्तका शुभकार्य्य न होवे वहां विना मुहूर्त्तका धर्मकार्य्य भी नही होना चाहिये तब तो उन्होंके आत्माका सुधारा धर्मकार्य्योंके विना होनाही मुश्किल होगा क्योंकि ज्योतिषशास्त्रोंके आरम्भसिद्धि ग्रन्थमें १, तथा लघु वृत्तिमें २, और बृहद्वृत्तिमें ३, जन्मपत्री पद्धतिमें ४, नारचन्द्र प्रकरणमें ५, तथा तट्टिप्पणमें ६, लग्नशुद्धिग्रन्थमें ७, तत् वृत्तिमें ८, मुहूर्त्तचिन्तामणिमें ९, वृहत् मुहूर्त्तसिन्धुमें १० दूसरी मुहूर्त्तचिन्तामणिमें ११, तथा पीयूषधारा वृत्तिमें १२, मुहूर्त्तमार्त्तण्डमें १३, विवाह वृन्दावनमें १४, प्रथम और दूसरा विवाहपडल ग्रन्थमें १५-१६, चार प्रकरणका नारचन्द्र

मैं १७, रत्नकोषमें १८, लग्नचन्द्रिकामें १९,
२०, और ज्योतिर्विदाभरण वृत्तिमें २१,
ज्योतिष शास्त्रोंमें कितनेही मास १, कितनी
कितनेही वार ३, कितनीही तिथियां ४, कित
कितनेही नक्षत्र ६, और जन्मका नक्षत्र ७, जन्
अधिक मास ९, क्षयमास १०. अधिक तिथि ११
१२, व्यतीपात १३, और कृष्णपक्षकी तेरस चौदश
इन क्षीण तिथियोंमें १४, पापग्रहयुक्त चन्द्रमें १५,
युक्त लग्नमें १६, गुरुका अस्तमें १७, शुक्रका अस्तमें
शुक्रकी बाल और वृद्धावस्थामें १९, ग्रहणके सात
२०, लग्नका स्वामी नीचामें २१, और अस्तमें २२,
योगिनीमें २३, चन्द्रदग्ध तिथिमें २४, सन्मुख राहुमें २५,
में २६, मलमासमें २७, हरिशयनका चौमासामें २८,
२९, और तिथि, वार, नक्षत्र, लग्न, दिशा वगैरह
अशुभ योगोंमें ३०, इत्यादि अनेक निमित्त कारण
मुहूर्त्त निमित्तिक शुभकार्य्य वर्ज्जन किये हैं इस लिये
श्रीमानिधिजी तथा उन्होंके परिवारवाले जो ज्योतिषशास्त्र
अशुभ योगोंसे शुभकार्य्योंका वर्ज्जन देखके धर्मकार्य्यों
भी वर्ज्जन करेंगे तब तो उन्होंको धर्मकार्य्य कब करनेका
वख्त मिलेगा अथवा शुभयोग विना धर्मकार्य्य न करते
किसीका आयुष्यपूर्ण हो जावे तो उसको आत्माका सुधारा
कब होगा सो पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार लेना—और
मेरा इसपर आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको इतनाही कहना
है कि न्यायांभोनिधिजी उपरोक्त ज्योतिष शास्त्रोंके
शुभाशुभयोगोंको न देखते सिंहस्थमें तथा हरिशयनका

दान, पुण्य, परोपगार, सात क्षेत्रमें द्रव्यखर्चना, जीव दया, देवपूजा, गुरुवन्दनादि देवगुरुभक्ति, साधर्मिक-वात्सल्य, विनय, वैयावच्च, आत्मसाधनरूप स्वाध्याय, ध्यानादि, श्रावकके और धर्मोपदेशका व्याख्यानादि साधुके उचित जो जो शुभकार्य्य है उन्ही शुभकार्य्योंकों अधिक मासको नपुंसक कहके त्याग देनेका चारों महाशयोंने उपदेश किया होगा। भक्तजनोंको त्यागनेका नियम भी दिलाया होगा, आपने भी त्यागे होवेंगे और अधिक मासको नपुंसक कहके शुभकार्य्य चारों महाशय त्यागनेका ठहराते है इससें अशुभ कार्य्योंका ग्रहण होता है इसलिये उपरोक्त कार्य्योंसें विरुद्ध याने अधिक मासको नपुंसक नामके सर्व शुभकार्य्य त्यागते हुए—निन्दा, ईर्षा, झगड़ादि अशुभकार्य्य करनेका चारों महाशयोंने उपदेश किया होगा। वृद्धि रागियोंसें करानेका नियम भी दिलाया होगा और अपने भी ऐसे ही किया होगा। तब तो (अधिक मासमें सर्वशुभकार्य्य त्यागनेका) ज्योतिष-शास्त्रका नाममें चारों महाशयोंका लिखके ठहराना उचित ठीक होसके परन्तु जो अधिक मासमें निन्दा ईर्षादि अशुभकार्य्य त्यागके देवगुरुभक्ति वगैरह शुभकार्य्य चारों महाशयोंने करनेका उपदेश दिया होगा भक्तजनोंसे करानेका नियम भी दिलाया होगा और अपने भी उपरके अशुभ कार्य्योंका त्यागकरके शुभकार्य्योंको किये होवेंगे तबतो अधिक मासमें ज्योतिष शास्त्रका नाम लेकरके सर्व शुभकार्य्य त्यागनेका ठहराना चारों महाशयोंका भोले जीवोंको भ्रममें गेरके मिथ्यात्व बढ़ानेके सिवाय

और क्या होगा सो बुद्धिजन सज्जनपुरुष स्वयं विचार लेना।

अब पांचमा और भी सुनो कि श्री न्यायाम्भोनिधिजी अधिक मासको नपुंसक कहके यात्रा मदहनका शुभकार्य त्यागनेका ठहराते है परन्तु जैनके और वैष्णवके अनेक तीर्थ स्थान है उसीमें अमुक अधिकमासमें अमुक तीर्थयात्रा बन्ध हुई कोई देशी परदेशी यात्री यात्रा करने को न आया ऐसा देखनेमें तो दूर रहा किन्तु पाठकवर्गके सुननेमें भी नही आया होगा तो फिर न्यायाम्भोनिधिजीने ऐसे लिखा होगा सो पाठक वर्ग विचार लेना।

और छठा यह है कि न्यायाम्भोनिधिजी किसी भी अधिक मासमें कोई भी श्रीशत्रुंजय वगैरह तीर्थस्थानमें ठहरे होवे उस अधिक मासमें तीर्थयात्रा खास आपने किवी होगी तो फिर अधिक मासमें यात्राका निषेध भोले जीवोंको वृथा क्यों दिखाया होगा सो निष्पक्षपाती सज्जन पुरुष स्वयं विचार लो ;—

और सातमी वारकी समीक्षामें कदाग्रहियोंका मिथ्यात्व रुप भ्रमको दूर करनेके लिये मेरेको लिखना पड़ता है कि न्यायाम्भोनिधिजी इतने विद्वान् न्यायके समुद्र होते भी गच्छका मिथ्या हठवादसे संसार व्यवहारमें विवाहादि बड़े ही आरम्भके कराने वाले और अधोगतिका रत्नाकर लौकिक कार्यों न होनेका दृष्टान्त दिखाकर महान् उत्तमोत्तम निरारम्भी ऊर्द्धगतिका रत्नाकर लोकोत्तर कार्यांका निषेध करती वख्त न्यायाम्भोनिधिजीके विद्वत्ताकी चातुराई किस जगह चली गईथी सो प्रत्यक्ष भवकूप और परमुख भावनारूप लिखने

श्रावण मास हुये है तब भी दोनु श्रावण मासमें वर्षा भी खूब (गहरी) हुई है तथा वनस्पति को भी नवीन पैदा होते वृद्धि होते और हानी होते पाठकवर्गने भी प्रत्यक्ष देखा है और देश परदेशके सब बगीचोंमें भी दोनु मासोंमें फलों करके तथा फूलों करके वृक्ष प्रफुल्लित पाठकवर्गके देखनेमें आये होंगे और हरेक शहरोंमें वनमालि लोग अधिक मासमें शाक, भाजी, फल, फूल, बेचते हुये सब पाठकवर्गके देखनेमें आते हैं यह बात तो हरेक अधिक मासमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है परन्तु कोई भी अधिक मासमें कोई भी देशमें कोई भी शहरमें शाक, भाजी, फल, फूलादि नवीन पैदा नही होते हैं तथा शहरमें भी वनमालि लोग बेचनेको नही आये हैं ऐसा तो कोई भी पाठकवर्गके सुननेमें भी कभी नही आया होगा। यह दुनिया भरकी जगत् प्रसिद्ध बात है इस लिये अधिक मासको वनस्पति अवश्य ही अङ्गीकार करती है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने (अधिकमासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है) यह प्रत्यक्ष मिथ्या भोले जीवोंको अपना पक्षमें लानेके लिये लिख दिया—यह बड़ा ही अफसोस है।

और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजी (अधिक मासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है तो औरोंको अङ्गीकार न करना इसमें तो क्याही कहना) इस लेखको लिखके मनुष्यादिकोंको अधिक मास अङ्गीकार [illegible] करनेका ठहराते है इस पर तो मेरेको इतनाही कहना [illegible] न्यायाम्भोनिधिजीके कहनेसे तो सब दुनियाके [illegible] लोकों अधिक मासमें आना, जाना, सोना, बैठना,

छैना, देना, स्त्रियोंकों गर्भका होना और वृद्धि पामना, जन्मना, मरणा, और संसारिक व्यवहारमें व्यापारादि कृत्य करना, दुनीयामें रोगी, तथा निरोगी होना, और दान पुण्यादि भी करना, इत्यादि पाप और पुण्यके कार्य्य करना ही नही होता होगा तब तो मनुष्यादिकोंकों अधिक मास अङ्गीकार नही करनेका ठहराना न्यायाम्भोनिधिजीका बन सके परन्तु जो ऊपरके कहे, पाप, पुण्यके, कार्य्य दुनियाके लोग अधिक मासमें करते है इस लिये न्यायाम्भोनिधिजी का उपरका लिखना मत्यक्ष मिथ्या होनेसें पक्षपाती हठ-वादीके सिवाय आत्मार्थी बुद्धिजन कोई भी पुरुष मान्य नही कर सकते है इसको विशेष पाठकवर्ग विचारलेना ;—

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथा लिखी है सो भी निर्युक्तिकार श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामिजीके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप और इस गाथाका सम्बन्ध तथा तात्पर्य्य समझे विना भोले जीवोंकों संशयमें गेरे हैं इसका विशेष विस्तार यातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नाम की समीक्षामें अच्छी तरहसें किया जावेगा सो पढ़के सर्वनिर्णय करलेना—और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ लिखा है कि (हे अंब अधिक मासमें कणिचरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फूलना उचित नही है क्योंकि यह जाति विनाके आडम्बर दिखाते हैं) इस लेखसे अधिक मासमें कणियरको फूलना ठहराते अंबको नहीं फूलना ठहराकर कणियरको तुच्छ जातिकी और अंबको उत्तम जातिका ठहराते है सोभी इन्होंकी समझमें फेर है क्योंकि

कणियर तो सबीही मासोंमें फूलती है और आंबे भी सबीही मासोंमें फूलके फलते हैं सो कलकत्ता, मुंबई वगैरह शहरोंके अनेक पुरुष जानते हैं । और कणियर तो उत्तम जातिकी और अंब तुच्छ जातिका कारण अपेक्षासे ठहरता है इसका विशेष खुलासा सातवे महाशयकी समीक्षामें करने में आवेंगा और आगे फिर भी श्रीआवश्यक निर्युक्ति की गाथा पर न्यायाम्भोनिधिजीनें अपनी चातुराई को प्रगट कियीहै कि (अब देखीये हे मित्र यह अच्छी जातिकी वनस्पति भी अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होती है)

इस उपरके लेखकी समीक्षा पाठकवर्गको सुनाता हुं कि न्यायांभोनिधिजी अच्छी जातीकी वनस्पतिको अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होनेका ठहराते हैं इस न्यायानुसार तो न्यायांभोनिधिजी तथा इन्होंके परि-वारवाले भी जो अच्छी जातिकी वनस्पतिका अनुकरण करने होवेंगे तब तो अधिक मासको तुच्छही जानके सामा. पौषा, देव दर्शन, गुरु वन्दन, विनय, भक्ति, वगुरहकी वैयावच्च, धर्मोपदेशका व्याख्यान, व्रत, प्रत्याख्यान, देवसी, राई, पाक्षिक प्रतिक्रमणादि कार्य्य करके अपनी आत्माको [illegible] इसमें प्रफुल्लित किसवास्ते नही होते होवेंगे तब तो [illegible] वनस्पति [illegible] लिखना ठीक है और अगर कहे तो [illegible] होते होवेंगे तब तो वनस्पतिकी जानको लिखके भी [illegible] कारण है, और विद्वान् पुरुषोंके आगे [illegible] है सो बुद्धिजन पुरुष विचार लेना ;—

मिथ्या हो जावेगा इसलिये पूर्वापर विरोधी (विसम्वादी) वाक्य लिखनेका जो विपाक श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्तिमें कहा है (सो पाठ इसी ही पुस्तकके पृष्ठ ८६ । ८७ । ८८ में छप गया है) उसीके अधिकारी न्यायाम्भोनिधिजी हो गये सो पाठकवर्ग विचार लेना ;—

और अधिकमासकों तुच्छ न्यायाम्भोनिधिजी ठहराते हैं सो तो निःकेवल श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातनाका कारण करते है क्योंकि श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंने अधिकमासको उत्तम माना है (इसका अधिकार इसी ही पुस्तकमें अनेक जगह वारम्वार छपगया है और आगे भी छपेगा) इस लिये अधिकमासकों तुच्छ न्यायाम्भोनिधिजी को लिखना उचित नही था सो भी पाठकवर्ग विचार लो ;—

और आगे फिर भी जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ८३ की प्रथम पंक्तिसें १२ वी पंक्तितक ऐसे लिखा है कि (हे परीक्षक और भी युक्तियां आपको दिखाते है कि जगतके लोक भी बारामासमें जिस जिस मासके जो प्रतिबद्धकार्य्य होते है सो तिस तिस मासमें अधिक मासको छोड़के अवश्य ही करते है जैसे कि आसोज मास प्रतिबद्ध दीवालीपर्व अधिक मासको छोड़के आसोज मासमें ही करते है और आम्बलकी ओली व मासके अन्तमें करनेकी भी अधिक मासको छोड़के आसोज मासमें और चैत्रमासमें करते है ऐसे अनेक लौकिक कार्य्य भी अपने अपने मासमें ही करते है [illegible] पीछे कोई भी नहीं

सो है जिस [illegible] ऐसा परम पर्युषणा

पर्व और मासमें करना यह सिद्धान्तसे भी और लौकिक रीतिसे भी विरुद्ध है) यह न्यायाम्भोनिधिजी का उपरोक्त अपनी पुस्तकके पृष्ठ ८७ की पंक्ति १२ वी तकका लेख है ;—

इस उपरके लेखकी विशेष समीक्षा खुलासाके साथ लौकिक और लोकोत्तर दृष्टान्त सहित युक्ति पूर्वक पांचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीके नामसे और सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामसें करनेमें आवेगा तथापि संक्षिप्तसें इस जगह भी करके दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो अधिक मासको निषेध करने के लिये न्यायाम्भो-निधिजी तथा इन्होंके परिवारवाले और इन्होंके पक्षधारी एक दो छोड़के हजारों कुयुक्तियां करके बालदृष्टि रागियों को दिखाकर अपने दिलमें खुसी माने परन्तु जैन शास्त्रोंकी स्याद्वादशैलीके जानकार आत्मार्थी विद्वान् पुरुषोंके आगे एक भी कुयुक्ति नही चल सकती है किन्तु कुयुक्तियांके करने वाले उत्सूत्र भाषणका दूषणके अधिकारी तो अवश्यही होते हैं इस लिये उपरके लेखमें न्यायांभोनिधिजीने युक्तियां के नामसें वास्तविकमें कुयुक्तियां दिखा करके अधिक मासको गिनतीमें निषेध करना चाहा सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि दीवाली (दीपोत्सव) और ओलियां यह दोनुं कार्य्य जैन शास्त्रोंमें लोकोत्तर पर्वमे माने हैं सो प्रसिद्ध है, तथापि न्यायांभोनिधिजी ओलियांकों लौकिक पर्व लिखते कुछ भी मिथ्या भाषणका भय न किया मालुम होता है, और दीवाली शास्त्रकारोंने कार्त्तिक मास प्रतिबद्ध कही है ; सो जगत् प्रसिद्ध है और मारवाड़ पूर्व पञ्जाबादि देशोंके जैनी अच्छी तरहसें जानते हैं और खास न्यायांभोनिधिजी ;-

पञ्जाब देशके होते भी और अनेक शास्त्रोंमें कार्त्तिकमासका खुलासासे लिखा होते भी भोले जीवोंके आगे अपनी बात जमानेके लिये अपने देशकी और शास्त्रकी बातको छोड़कर अनेक शास्त्रोंका पाठ भी छोड़ते हुए, गुजराती भाषाका प्रमाण लेकरके आसोज मास प्रतिपदा दीवाली लिखते हैं सो भी विचारने योग्य बात है और अधिक मास होनेसें अवश्य करके सातमें मासे ओलियां करनेमें आती हैं तथापि न्यायांभोनिधिजीनें अधिक मास होते भी छ मासके अन्तर में लिखा हैं सो मिथ्या है और जैन शास्त्रोंमें तथा लौकिक में जो जो मास तिथि नियत पर्व है सो अधिक मास होने सें प्रथम मासका प्रथम पक्षमें और दूसरे मासका दूसरा पक्षमें करनेमें आते हैं इस बातका विशेष निर्णय शङ्का समाधान सहित उपरोक्त पांचमें और सातमें महाशयके नामकी समीक्षामें आगे देखके सत्यासत्यका पाठक वर्ग स्वयं विचार करलेगा ;—

और आगे फिर भी न्यायांभोनिधिजीनें लिखा है कि (हे मित्र भाद्रव मास प्रतिबद्ध ऐसा परम पर्युषणापर्व और मासमें करना यह सिद्धान्तसें भी और लौकिक रीतिसें भी विरुद्ध है) इस लेखसे न्यायांभोनिधिजी दो श्रावण होते भी भाद्रव मास प्रतिबद्ध पर्युषणा ठहरा करके दो श्रावण होनेसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको ... में और लौकिक रीतिसें भी विरुद्ध ठहराते हैं कि केवल आग्रही कुयुक्त श्रावण करते हैं क्योंकि दो होनेसें श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके अनेक ... ने दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करनेका अनेक

श्रीवल्लभविजयजीके नामकी समीक्षामें लिखनेमें आवेगा, इसलिये शुद्ध समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ १५१ का पाठ सम्बन्धी पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें अधिक मासकी गिनती निषेध करना सो तो प्रत्यक्ष न्यायाम्भोनिधिजीका शास्त्र विरुद्ध उत्सूत्र भाषण रूप है ;—

और दूसरा यह भी सुन लीजीये कि–श्रीनिशीथ चूर्णि कार श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजनें और श्रीदशवैकालिक सूत्रके प्रथम चूलिकाकी वृहद्वृत्तिकार सुप्रसिद्ध श्रीमान् हरिभद्र सूरिजी महाराजनें अधिकमासको कालचूलाकी उत्तम औपमा गिनती करने योग्य लिखी है तथापि इन महाराजके विरुद्धार्थमें न्यायाम्भोनिधिजी इतने विद्वान् होते भी अधिक मासको कालचूला मानते भी निषेध करते हैं सो बड़ी ही विचारने योग्य आश्चर्य्य की बात है ;—

और दो श्रावण होनेसें भाद्रपदतक ८० दिन होते हैं तथा दो आश्विन होनेसें कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं तथापि ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके ७० दिन न्यायाम्भोनिधिजीनें अपनी कल्पनासें कालचूलाके बहाने बनाये सो कदापि नहीं बन सकते हैं इसका विस्तार तीनों महाशयों की और खास न्यायाम्भोनिधिजीकी भी समीक्षा में अच्छी तरहसें उपरमें छप गया है सो पढ़के सर्वनिर्णय कर लेना:—और दो श्रावण मास होनेसें दूसरे श्रावण मास प्रतिबद्ध पर्युषणा पर्व है इसलिये दो श्रावण होते भी भाद्रव मासकी धाप्ति करना शास्त्र विरुद्ध है और अब न्यायाम्भोनिधिजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी समीक्षाके अन्तमें

श्रीजिनाज्ञाके आराधक सत्यग्राही सज्जन पुरुषोंसे मेरा यही कहना है कि जैसे पूर्वोक्त तीनों महाशयोंने अपने विद्वत्ताकी कल्पित बात जमानेके लिये पूर्वापर विरोधी तथा उटपटाङ्ग और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध और अनेक शास्त्रोंके पाठोंको उत्थापन करके अपना अनन्त संसार वृद्धिका भय नहीं किया तैसें ही चौथे महाशय न्यायाम्भोनिधिजीमें भी तीनों महाशयोंका अनुकरण करके पूर्वापर विरोधी तथा उटपटाङ्ग और श्रीतीर्थङ्कर-गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषण करनेमें कुछ भी भय नहीं किया परन्तु मैंने भी भव्यजीवोंके शुद्ध श्रद्धा होनेके उपगारकी बुद्धिसें शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य बातोंका देखाव करके कल्पित बातोंकी समीक्षाकर दिखाई है उसीको पढ़के सत्य बातका ग्रहण और असत्य बातका त्याग करके अपनी आत्माका कल्याण करने में उद्यम करेंगे और दृष्टिरागका पक्षपातकों न रखेंगे यही मेरा पाठक वर्गको कहना है ;—

और न्यायाम्भोनिधिजीके लेख पर अनेक पुरुष संपूर्ण रीतिसें पूरा भरोसा रखतेथे कि न्यायाम्भोनिधिजी जो लिखेंगे सो शास्त्रानुसार सत्यही लिखेंगे ऐसा मान्यकरके उन्होंमें पूज्यभाव बहोत पुरुषोंका है। और मेरा भी था परन्तु शास्त्रोंका तात्पर्य्य देखनेसें जो जो न्यायांभोनिधिजीनें महान् उत्सूत्र भाषणरूप अनर्थ किया सो सो सब प्रगट होगया जिसका नमुनारूप पर्युषणा सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें कितनी जगह प्रत्यक्ष मिथ्या और उत्सूत्र भाषण किया है सो तो उपरकी मेरी लिखी हुई समीक्षा पढ़नेसें

पाठकवर्गोंकों प्रत्यक्ष दिख जावेंगा तथा और भी न्यायां-भोनिधिजीनें जैनसिद्धान्तसमाचारी नामकी पुस्तकमें अनु-मान १५७ अथवा १६० शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अनेक जगह प्रत्यक्ष मिथ्या तथा अनेक जगह मायावृत्तिरूप और अनेक जगह शास्त्रोंके आगे पीछेके पाठ छोड़के अधूरे अधूरे तथा शास्त्र कारके अभिप्रायके विरुद्ध अनेक जगह अन्याय कारक और अनेक सत्यबातोंका निषेध करके अपनी कल्पित बातोंका उत्सूत्र भाषणरूप स्थापन इत्यादि महान् अनर्थ करके भोले दृष्टिरागी गच्छ कदाग्रही बालजीवोंकों श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाका मोक्षरूपी रत्नाकरसें गेरके संसाररूपी मिथ्यात्व का रत्नाकरमें डुबानेके लिये जैन सिद्धान्त समाचारी, पुस्तक का नाम रखके वास्तविकमें अनन्त संसारकी वृद्धिकारक मिथ्यात्वरूप पाखण्डकी समाचारी न्यायाम्भोनिधिजीनें प्रगट करके अपनी आत्माकों इस संसाररूपी समुद्रमें क्या क्या दुःखोंके भोग्य ठहराई होगी तथा अब इन्होंके परि-वार वाले और इन्होंके पक्षधारी भी उसी मुजब बनते है जिन्होंकों इस संसारमें क्या क्या दुःख प्राप्त होगा सो श्रीज्ञानीजी महाराज जानें ;—इस लिये श्रीमद्‌को और न्यायाम्भोनिधि जीके पक्षधारी तथा इन्होंके परिवार वालोंको उपर की पर्युषणा सम्बन्धी बातोंके लिये मेरा अभिप्राय इस पुस्तकके अन्तमें विनती पूर्वक जाहिर करनेमें आवेगा और पांचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजी तथा छट्ठे महाशय श्रीवल्लभविजयजी और सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षा में प्रसङ्गोपात थोड़ी थोड़ी बातोंका उपर की पर्युषणा सम्बन्धी दृष्टान्त भी करनेमें आवेगा ;—

इति चौथे महाशय न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी संक्षिप्त समीक्षा समाप्त ॥

अब आगे पांचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्ति-
विजयजीने मानवधर्मसंहिता नामा पुस्तकमें जो पर्युषणा
सम्बन्धी लेख अधिक मासको निषेध करनेके लिये लिखा
है उसकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं जिसमें
प्रथमतो मानवधर्मसंहिता पुस्तकके पृष्ठ ८८७ की पंक्ति १७
वीं से पृष्ठ ८८९ की पंक्ति२१॥ तक जैसा न्यायरत्नजीका लेख
है वैसाही नीचे मुजब जानो ;—

[दो श्रावण होतो भी भाद्रवेमें ही पर्युषणापर्व करना
चाहिये, अगर कहा जाय कि–आषाढ़सुदी १४ चतुर्दशीसें
५० रोज लेना कहा यह कैसे सबुत रहेगा ? जबाब–कल्प-
सूत्रकी टीकामें पाठ है कि–अधिकमास कालपुरुषकी चूलिका
यानी चोटी है, जैसे किसी पुरुषका शरीर उचाईसे नापा
जाय तो चोटीकी लंबाई नापी नही जाती, इसी तरह
कालपुरुषकी चोटी जो अधिकमास कहा सो गिनतीमें नही
लिया जाता, कल्पसूत्रकी टीकाका पाठ कालचूलेत्यविव-
क्षणादिनानां पञ्चाशदेव,–अगर लिया जाता हो तो पर्युषणा
पर्व–दूसरे वर्ष श्रावणमें और इस तरह अधिक महिनोंके
हिसाबसें हमेशां उक्त पर्व फिरते हुवे चले जायगें, जैसे
मुसलमानोंके ताजिये–हर अधिक माससें बदलते रहते हैं,
दूसरा यह भी दूषण आयगा कि–वर्षभरमें जो तीन चातु-
र्मासिक प्रतिक्रमण किये जाते हैं उनमें पञ्चमासिक प्रति-
क्रमणपाठ बोलना पड़ेगा, शीतकालमें और उष्णकालमें
तो अधिक महिना गिनतीमें नही लाना और चौमासेमें
गिनतीमें लाकर श्रावणमें पर्युषणा करना किस न्यायकी
बात हुई ? अगर कहा जाय कि–पचास दिनकी गिनती

लिइ जाती है तो पिछले ७० दिनकी जगह १०० दिन हो जायगें, उधर दोष आयगा, संवत्सरीके पीछे ७० दिन शेष रखना–यह बात समवायाङ्गसूत्रमें लिखी है–उसका पाठ–वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिराइंदिएहिं सेसेहिं, इसलिये यही प्रमाण वाक्य रहेगा कि–अधिकमास कालपुरुषकी चोटी होनेसें गिनतीमें नही लेना, अधिक महिनेको गिनतीमें लेनेसें तीसरा यह भी दोष आयगा कि–चौवीस तीर्थङ्करोंके कल्याणिक जो जिस जिस महिनेकी तिथिमें आते हैं गिनतीमें वे भी बढ़ जायगें, फिर क्या! तीर्थङ्करोंके कल्याणिक १२० से भी ज्यादे गिनना होगा? कभी नही, इस हेतुसें भी अधिकमास नही गिना जाता अधिक महिनेके कारणसें कभी दो भाद्रवे हो तो दूसरे भाद्रवेमें पर्युषणा करना चाहिये जैसें दो आषाढ़महिने होते हैं तब भी दूसरे आषाढ़में चातुर्मासिककृत्य किये जाते हैं वैसे पर्युषणा भी दूसरे भाद्रवेमें करना न्याययुक्त है।]

अब न्यायरत्नजीके उपरका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु जिसमें प्रथमतो (दो श्रावण हो तो भी भाद्रवेंमेंही पर्युषणापर्व करना चाहिये) यह लिखना न्यायरत्नजीका शास्त्रोंमें विरुद्ध है क्योंकि खास न्यायरत्नजी-केही परमपूज्य श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने दो श्रावण होने में दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करनेका कहा है जिसका अधिकार उपरमें अनेक जगह और खास करके चारों महाशयोंके नामकी समीक्षामें अच्छी तरहसें छपगया है इसलिये दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें अपने पूर्वजोंके विरुद्धार्थमें पर्युषणापर्व स्थापन करना न्यायरत्नजीको उचित नही है।

और दूसरा यह है कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महान् उत्तम पुरुषोंने सूत्र, चूर्णि, भाष्य, वृत्ति, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनी कही है परन्तु एकावन ५१ में दिने श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषोंको पर्युषणा करना नही कल्पे और एकावन दिने पर्युषणा करने वालोंको श्री जिनाज्ञाके लोपी कहे है सो प्रसिद्ध है तथापि न्यायरत्नजी इतने विद्वान् हो करके भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके वचनकों प्रमाण न करते हुए अनेक सूत्र, चूर्ण्यादि शास्त्रोंके पाठोंको उत्थापते हुए मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करनेका लिखते कुछ भी उत्सूत्र भाषणका भय नही करते हैं यह बड़ाही अफसोस है;–

और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेसे प्रत्यक्ष ८० दिन होते हैं तथा अधिकमास भी शास्त्रानुसार और न्याययुक्ति सहित अवश्य निश्चय करके गिनतीमें सर्वथा सिद्ध है सो उपरमें अनेक जगह छपगया है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करना भी उत्सूत्र भाषणरूप अन्याय कारक है तथापि न्यायरत्नजीने उत्सूत्र भाषणका विचार न करते अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये जो जो विकल्प करके शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें भोले जीवोंको मिथ्यात्वरूप भ्रमजालमें गेरनेके लिये लिखा है उसीकी समीक्षा करता हुं—जिसमें प्रथमतो दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसका अपनी कल्पनासें ५० दिन बनानेके लिये न्यायरत्नजी लिखते हैं कि–[कल्पसूत्रकी टीकामें पाठ है कि अधिकमास काल-

पुरुषकी चूलिका यानी चोटी है जैसे किसी पुरुषका शरीर उचाईमें नापा जाय तो चोटीकी लंबाई नापी नही जाती है इसी तरह कालपुरुषकी चोटी जो अधिकमास कहा सो गिनतीमें नही लिया जाता कल्पसूत्रकी टीकाका पाठ— कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशदेव]

इस उपरके लेखमें न्यायरत्नजीने अधिकमासको कालपुरुषकी चोटी लिखकर गिनतीमें नही लेनेका ठहराया है सो निःकेवल श्रीअनन्त तीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंने अधिक मासको दिनोंमें पक्षोंमें मासोंमें वर्षोंमें अनादिकाल हुवा निश्चय करके गिनतीमें लिया है आगे लेवेंगे और वर्त्तमान कालमें भी श्रीसीमंधर स्वामीजी आदि तीर्थंङ्कर गणधरादि महाराज महाविदेह क्षेत्रमें अधिक मासको गिनतीमें लेते हैं तैसेही इस पञ्चमें कालमें भरत क्षेत्रमें भी अनेक आत्मार्थी पुरुष अनेक शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक देशकालानुसार अधिक मासको अवश्यही गिनतीमें लेते हैं इस बातका अनेक जगह उपरमें अधिकार छपगया है और आगे भी छपेगा इसलिये अधिकमासको गिनतीमें नही लेनेका ठहराना न्यायरत्नजीका उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे प्रमाणिक नहीं हो सकता है।

और न्यायरत्नजी अधिक मासको कालपुरुषकी चूलिका कहकर चोटी अर्थात् पामकी तरह केशोंकी चोटीवत् लिखते हैं सो भी शास्त्रोंके विरुद्ध है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंने चूलिका याने शिखरकी ओपमा [illegible] करके योग्य दिखी है। जैसे। लक्ष योजनका सुमेरु

पर्वतके चालीश योजनका शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोंके शिखरों कों और देव मन्दिरोंके शिखरोंको शास्त्रकारोने शेखचूलाकी ओपमा दिवी है नतु केशोंकी चोटीवत् चामको, और श्रीपञ्चपरमेष्टि मन्त्रके शिखररूप चार पदोंको तथा श्रीआचाराङ्गजी सूत्रके शिखररूप दो अध्ययनकों और श्रीदशवैकालिकजी सूत्रके शिखर-रूप दो अध्ययनकों शास्त्रकारोनें भावचूलाकी ओपमा दिवी है जिसकी अवश्यही गिनती करनेमें आती हैं। तैसेही। चन्द्रसंवत्सररूप कालपुरुषके शिखररूप अधिक मासकों कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग शास्त्रकारोंनें दिवी है और अधिक मास होनेसें तेरह मासोंका अभिवर्द्धितसंवत्सर श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंनें कहा है सो अनेक शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है और खास करके अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा लिखने वाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज भी निश्चय करके गिनतीमें लेनेका लिखते हैं, और भी दूसरा सुनो कि—जैसे। श्रीतीर्थंकर महाराजोंके निज निज अंगुलियोंके प्रमाणसें मस्तक तक शरीरकी लंबाई १०८ अंगुलीकी होती है और मस्तक पर बारह अंगुलीकी उष्णिका (शिखा) कों शिखररूप चूलाकी ओपमा है जिसकों शामिल लेकर १२० अंगुलीका श्रीतीर्थंकर महाराजोंके शरीरके गिनतीका प्रमाण सबी शास्त्रकारोंने कहा है। तैसेही। संवत्सररूप कालपुरुष का निज स्वभाविक प्रमाण ३५४ दिन, ११ घटीका और ३६ पलका है तथा संवत्सररूप कालपुरुषका शिखररूप अधिक मासको कालचूलाकी ओपमा है जिसका प्रमाण २९ दिन

पुरुषकी चूलिका यानी चोटी है जैसे किसी पुरुषका शरी
उचाईमें नापा जाय तो चोटीकी लंबाई नापी नही जात
है इसी तरह कालपुरुषकी चोटी जो अधिकमास कहा सं
गिनतीमें नही लिया जाता कल्पसूत्रकी टीकाका पाठ—
कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशदेव]

इस उपरके लेखमें न्यायरत्नजीनें अधिकमासको काल
पुरुषकी चोटी लिखकर गिनतीमें नही लेनेका ठहराया है
सो निःकेवल श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरु
द्वार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गण
धरादि महाराजोंनें अधिक मासको दिनोंमें पक्षोंमें मासोंमें
वर्षोंमें अनादिकाल हुवा निश्चय करके गिनतीमें लिया है
आगे लेवेंगे और वर्त्तमान कालमें भी श्रीसीमंधर स्वामीजी
आदि तीर्थङ्कर गणधरादि महाराज महाविदेह क्षेत्रमें अधिक
मासको गिनतीमें लेते हैं तैसेही इस पञ्चमें कालमें भरत
क्षेत्रमें भी अनेक आत्मार्थी पुरुष अनेक शास्त्रानुसार युक्ति
पूर्वक देशकालानुसार अधिक मासको अवश्यही गिनतीमें
लेते हैं इस बातका अनेक जगह उपरमें अधिकार छपगया
है और आगे भी छपेगा इसलिये अधिकमासको गिनतीमें
नही लेनेका ठहराना न्यायरत्नजीका उत्सूत्र भाषणरूप
होनेसे प्रमाणिक नही हो सकता है।

और न्यायरत्नजी अधिक मासको कालपुरुषकी चूलिका
कहकर चोटी अर्थात् घासकी तरह केशोंकी चोटीवत् लिखते
हैं सो भी शास्त्रोंके विरुद्ध है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर
गणधरादि महाराजोंनें चूलिका याने शिखरकी ओपमा
[illegible]

चातुराईके साथ उत्सूत्र भाषणकी बातें प्रगट किवी है और ऐसेही गाडरीया प्रवाहवत् उसी बातोंको वर्त्तमानमें न्यायरत्नजी जैसे भी लिखते हैं परन्तु तथ्यार्थको जरा भी नही विचारते हैं क्योंकि श्रीविनयविजयजी वगैरह चारो महाशयोंने कालचूलाके नामसें अधिक मासकों गिनतीमें नही लेनेका शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें ठहराया है जिसकी समीक्षा अच्छी तरहसें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ९५ सें यावत् पृष्ठ २१६ तक उपरमें छप चुकी है सो पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जायेगा तथापि श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुखबोधिकाके अनुसार अपनी अपनी चातुराइसें विशेष कुयुक्तियांके विकल्प उठा करके भोले जीवोंको भ्रममें गेरनेके लिये न्यायरत्नजी वगैरहने वृथा परिश्रम किया है उन कुयुक्तियांका समाधान युक्तिपूर्वक लिखना यहां सक्त है जिसमें न्यायरत्नजीनें श्रीकल्पसूत्रकी टीकाका पाठ श्रीविनयविजयजी कृत दिखाया सो उत्सूत्र भाषणरूप होनेसें मैंने उसीकी समीक्षा तो पहिलेही कर दिखाई है इसलिये श्रीविनयविजयजीकृत उत्सूत्र भाषण रूप उपरके पाठको न्यायरत्नजीको लिखना भी उचित नही है और पक्षपातियोंके सिवाय आत्मार्थी पुरुषोंको मान्य करना भी उचित नही है याने सर्वथा त्यागने योग्य है सो उपरके लेखसें पाठकवर्ग भी अच्छी तरहसें विचार लेना ;—

और आगे फिर भी अधिक मासको गिनतीमें नही लेनेके लिये न्यायरत्नजीनें अपनी चातुराईको प्रगट करके लिख दिखाई है कि (अगर लिया जाता हो तो पर्युषणा पर्व दूसरे वर्ष भादवमें और इस तरह अधिक महिनोंके

हिमायमें हमेशां उक्त पर्व फिरते हुये चले आयगें जैसे मुस-
ल्मानोंके ताजिये हर अधिकमासमें बदलते रहते हैं)
न्यायरत्नजीका इस लेखपर मेरेको बड़ाही आश्चर्य सहित
खेद उत्पन्न होता है और न्यायरत्नजीकी बड़ीही अज्ञता
प्रगट दिखती है सोही दिखाता हुं-जिसमें प्रथम तो
आश्चर्य उत्पन्न होनेका तो यह कारण है कि स्याद्वाद,
अनेकांत, अविसंवादी, अनन्तगुणी, परमोत्तम ऐसे श्रीसर्वज्ञ
भगवान् श्रीजिनेन्द्र महाराजोंके कथन करे हुये अत्युत्तम
अहिंसा धर्मके वृद्धिकारक ऊर्द्ध गतिका रस्तारूप धर्म-
ध्यान, दानपुण्य परोपकारादि उत्तमोत्तम शुभकार्य्योंका
निधि शान्त चित्तको करने वाले और पापपङ्क (कर्मरूप
मेल) को नष्टकरने वाले श्रीपर्युषणा पर्वके साथ - उपरोक्त
गुणोसें प्रतिकुल मिथ्यात्वी और चितविटंबक पाखंडरूप
अधर्मकी वृद्धिकारक तथा छ (६) कायके जीवोंका विनाश
कारक नरकादि अधोगतिका रस्तारूप आर्त्तरौद्रादि युक्त
ताजियांका दृष्टान्त न्यायरत्नजीनें दिखाया इसलिये मेरेकों
आश्चर्य उत्पन्न हुवा कि जो न्यायरत्नजीके अन्तःकरणमें
सम्यक्त्व होता तो चिन्तामणिरत्नरूप श्रीपर्युषणापर्वके
साथ काचका टुकड़ारूप ताजियांका दृष्टान्त लिखके अपनी
कल्पित बातको जमानेके लिये अधिक मासका निषेध
कदापि नही दिखाते इस बातकों पाठकवर्ग भी विचार
लेना ;—

और बड़ा खेद उत्पन्न होनेका तो कारण यह है कि
श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और
खास न्यायरत्नजीके पूज्य अपने श्रीतपगच्छके ही पूर्वा-

चार्य्योंने अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको सर्वथा करके परि-पूर्ण रीतिसें विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ निश्चय करके अवश्यही गिनतीमें लिया है, जिसमें श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति १ तथा वृत्ति २ श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति ३ तथा वृत्ति ४ श्रीज्योतिषकरण्ड पयन्ना ५ तथा वृत्ति ६ श्रीप्रवचनसारोद्धार ७ तथा वृत्ति ८ श्रीसमवायाङ्गजीसूत्र ९ तथा वृत्ति १० श्रीजम्बुद्वीपप्रज्ञप्ति ११ तथा तीनकी दो (२) वृत्ति १३ इत्यादि अनेक शास्त्रोंके पाठ न्यायरत्नजीने देखे है जिसमें अधिक मासको गिनतीमें लिया है जिसमें भी श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नाकी वृत्ति तो न्यायरत्नजीने एकवार नही किन्तु अनेकवार देखी है उसी में तो विशेष करके समयादि कालकी व्याख्या किवी है कि असंख्याता समय जानेसें एक आवलिका, १, ६७, ७७, २१६, आवलिका जानेसें एकमुहूर्त होता है तीश मुहूर्त्तसें एक अहोरात्रि रुप दिवस होता है ऐसे पन्दरह दिवस जानेसें एकपक्ष होता है दो पक्षसें एकमास होता है दो माससें एक ऋतु होता है छ ऋतुयोंसें एक सम्वत्सर होता है इसी ही तरहसें नक्षत्र सम्वत्सरके, चन्द्रसम्वत्सरके, ऋतु सम्वत्सर के, सूर्य्यसम्वत्सरके, और अभिवर्द्धितसम्वत्सरके, मुहूर्त्तोंका जूदा जूदा हिसाब विस्तारपूर्वक दिखाकर पांच सम्वत्सरोंका एक युगके ५४९०० मुहूर्त्त दिखाये हैं जिसमें एक युगके पांच सवत्सरोमें दो अधिक मासके भी मुहूर्त्तोंकी गिनती साथमें लेनेसेंही ५४९०० मुहूर्त्तका हिसाब मिलता है अन्यथा नहीं इस तरहसें कालकी व्याख्या समय, आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मास, वर्ष, युग, पूर्वाङ्ग, पूर्व, पल्योपम, सागरो-पम और उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी कालसें अनन्तकालकी

व्याख्याकी गिनतीमें अधिक मासको प्रमाण किया है और अधिक मासकी उत्पत्तिका कारण कार्य्यादि गिखित पूर्वक श्रीमलयगिरिजी महाराजने श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नाकी वृत्तिमें विस्तार किया है इस ग्रन्थको न्यायरत्नजीने अनेक वार देखा है और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ महाराजोंने अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया है सो अनेक शास्त्रोंके पाठ प्रसिद्ध है और खास न्यायरत्नजीने मानवधर्म्मसंहिता पुस्तकके पृष्ठ २४ की पंक्ति २० वी सें २२॥ पंक्ति तक ऐसे लिखा है कि (उत्सूत्र भाषण समान कोई बड़ा पाप नही सब क्रियाधरी रहेगी उक्त पाप दुर्गतिको ले जायगा जमालिजीने गौतमगणधर जैसी क्रिया किइ लेकिन देख लो किस गतिको जाना पड़ा) और पृष्ठ ५८८ की पंक्ति १४–१५ में फिर भी लिखते हैं कि (सर्वज्ञ प्रणीत शास्त्रके पाठको उत्थापन करेगा उसका निर्वाण होना मुश्किल है) इस लेखपरसें सज्जन पुरुषोंकों विचार करना चाहिये कि–श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ महाराजोंने अधिकमास को गिनतीमें प्रमाण किया हुवा है सो अनेक शास्त्रोंके पाठ प्रसिद्ध है तथापि पक्षपातके जोरसें न्यायरत्नजीने अनन्ततीर्थङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ भगवानोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषण करनेके लिये सर्वज्ञ प्रणीत अनेक शास्त्रोंके पाठोंकों उत्थापन करके उत्सूत्र भाषणका बड़ा भारी पाप दुर्गतिको देनेवाला तथा संसारमें रुलानेवाला अपना लिखा हुवा उपरका लेखको भी सर्वथा भूल गये इसलिये मेरेकों बड़ा खेद उत्पन्न हुवा कि न्यायरत्नजी जानते हुए भी उत्सूत्र भाषणरूप

संसारकी खाड़में गिरे और अपनी आत्माका बचाव तो करना दूर रहा परन्तु भोले जीवोंको भी उसी रस्ते पहुं-चावे सो इसपरके लेखसे पाठकवर्ग विशेष विचार लेना ;—

और अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये न्यायरत्नजीने मुसल्मानोंके ताजिये हरेक अधिक मासके हिसाबसे फिरनेका दृष्टान्त दिखाके स्वमतकल्पित पर्युषणा पर्व भी अधिक मासके हिसाबसे फिरते रहनेका न्यायरत्न जीने लिखा सो बड़ी अज्ञता प्रगट किवी है जिसका कारण यह है कि श्रीमंत भगवानोंने मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी खास करके विशेष जीवदयादिकके ही कारणसे वर्षा ऋतुमें आषाढ चौमासीसे उपरके लिखे दिनोंके गिनतीकी मर्यादा [प्रमाण] से निश्चय करके श्रावण अथवा भाद्रपद मेंही—कारण, कार्य्य, ऋतु, मास, तिथिका नियमसेंही श्रीपर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है तथापि न्याय-रत्नजी अधिक मासके हिसाबसे पर्युषणापर्व फिरते हुए चले जानेका लिखकर जैन शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें आषाढ़, ज्येष्ठ, वैशाखादिमें पर्युषणा होनेका दिखाते हैं इसलिये न्याय-रत्नजीकी अज्ञतामें कुछ कम हो तो पाठकवर्ग तत्त्वार्थकी बुद्धिसे स्वयं विचार लेना ;—

तथा और भी न्यायरत्नजीके विद्वत्ताकी चातुराईका नमुना सुनिये—कि श्रीजैन शास्त्रोंमें पांच प्रकारके संवत्सरों से एक युगका प्रमाण कहा हैं जिसमें सूर्य्यकी गतिका हिसाबसे सूर्य्यसंवत्सरकी अपेक्षामें जैनमें मासवृद्धिका अभाव हैं परन्तु चन्द्रकी गतिका हिसाबसे चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासे एक युगकी पूर्त्तीकेही लिये खास दो अधिकमास

होते हैं जब अधिकमास जिस संवत्सरमें होता है तब उस संवत्सरमें तेरह मास होनेसे संवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित कहा जाता है—अधिक मासको गिनतीमें लिया जिससे संवत्सरका भी प्रमाण बढ़ गया और युगकी पूरतीका भी बरोबर हिसाब मिलगया—अधिक मास अनादिकाल हुए होता रहता है तथा मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंने श्रीपर्युषणापर्वका आराधन वर्षा ऋतुमेंही करना कहा है यह बात आत्मार्थी विवेकी विद्वानोंसे छुपी हुई नही है याने प्रसिद्ध है इसलिये श्रीपर्युषणापर्व अधिक मास हो तो भी वर्षा ऋतुके सिवाय और ऋतुयोंमें कदापि नही हो सकते हैं और मुसल्मान लोग तो सिर्फ एक चन्द्र दर्शनकी अपेक्षासे २९।३? दिनका महिना मान्यकरके बारह महिनोंके ३५४ दिनका एक वर्ष मानते है और अधिक मासका भिन्न व्यवहारको नही मानते हैं याने चन्द्रके हिसाबसे बारह बारह महिनोंका एक एक वर्ष मानते चले जाते हैं परन्तु अपने माने मास तारीख नियत ताजियें भी करते रहते हैं और जैन तथा दूसरे हिन्दू अधिक मासको मान्य करके तेरह मासोंका वर्ष मानते हैं तथा अपने माने मास, तिथि नियत पर्व भी करते है इसलिये जैन तथा दूसरे हिन्दूयोंके तो ऋतु, मास, तिथि नियत पर्व अधिक मास होतो भी फिरते हुए नही चले जाते है परन्तु मुसल्मान लोग अधिक मासको नही मानते हुए अनुक्रमे सीधा हिसाबसें ही वर्तते है इस लिये लौकिकमें अधिक मास होनेसे मुसल्मानोंके ताजिये अमुक ऋतुमें तथा अमुक लौकिक मासमें होते हैं यह

नियम नही रहता है याने हर अधिक मासके हिसाब
पश्चादानुपूर्वीसें अर्थात् आषाढ़, ज्यैष्ठ, वैशाख, चैत्र, फाल्गुन
माघ, पौषादि हरेक मासोंमें होते है इसलिये मुसल्मानोंके
ताजिये फिरनेका दृष्टान्त लिखके श्रीपर्युषणापर्व फिरनेका
दिखाना सो पूरी अज्ञताका कारण है—इसलिये श्रीमद्गच्छ
कथित श्रीपर्युषणापर्व फिरनेका और अधिक मासको
गिनतीमें निषेध करनेके संबन्धी मुसल्मानोंके ताजियोंका
दृष्टान्त उत्सूत्र भाषणरूप होनेसें न्यायरत्नजीको लिखना
उचित नही है इस बातको सज्जन पुरुष उपरके लेखसें
स्वयं विचार सकते है ;—

और आगे फिर भी न्यायरत्नजीनें अपनी कल्पनामें
लिखा है कि (दूसरा यह भी दूषण आयगा कि वर्षभरमें जो
तीन चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किये जाते है उनमें पञ्चमासिक
प्रतिक्रमणका पाठ बोलना पड़ेगा शीतकालमें और उष्ण-
कालमें तो अधिक महिना गिनतीमें नही लाना और
चौमासेमें गिनतीमें लाकर भाद्रपदमें पर्युषणा करना किस
न्याय की बात हुई) इस लेखसें न्यायरत्नजीनें जिनशास्त्रों
का तथा अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करने वालोंका
तात्पर्यको समझे बिना दूसरा दूषण लगाया सो मिथ्या-
भाषण करके बड़ी भूल करी है क्योंकि जिस चौमासेमें
अधिक मास होता है उसीको अभिवर्द्धित चौमासा कहा
जाता है संवत्सरवत् अर्थात् जिस संवत्सरमें अधिक मास
होता है उसीको अभिवर्द्धित संवत्सर कहते है इसी ही
न्यायानुसार अधिक मास होवे तब उस चौमासेमें पञ्चमास
का संवत्सरमें तेरह मासका पाठ सर्वत्र प्रतिक्रमणमें अवश्य

ही बोला जाता है इसका विशेष निर्णय सातमें महाश श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा ;—

और शीतकाल हो तथा उष्णकाल हो अथवा वर्षाकाल हो परन्तु लौकिक पञ्चाङ्गमें जो अधिकमास होगा उसी कालमें अवश्य ही गिनतीमें करके प्रमाण करना यह तो स्वयं सिद्ध न्यायपुक्ति की बात है जैसे वर्षाकालमें श्रावण भाद्रपदादि मास बढ़नेसें गिनतीमें लिये जाते हैं तैसे ही शीतकालमें तथा उष्णकालमें भी जो मास बढ़े सो ही गिनाजाता है इस लिये न्यायरत्नजीनें उपरका लेखमें शीतकालमें और उष्णकालमें अधिक मासको गिनतीमें नहीं लानेका लिखती वख्त विवेक बुद्धिसें विचार किया होता तो मिथ्या भाषणका दूषण नही लगता सो पाठकवर्ग विचार लेना,—

और इसके अगाड़ी फिर भी न्यायरत्नजीनें अपनी विद्वत्ताकी चातुराई को प्रगट करनेके लिये लिखा है कि [अगर कहा जाय कि पचाशदिनकी गिनती लिइजाती है तो पिछले ७० दिनकी जगह १०० दिन होजानेसे उपर दोष आयगा संवत्सरीके बाद ७० दिन शेष रखना यह बात समवायाङ्ग सूत्रमें लिखी है उसका पाठ—वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कन्ते सत्तरिराइंदिएहिं सेसेहिं,—इस लिये यही प्रमाणवाक्य रहेगा कि अधिक मास कालपुरुषकी चोटी होनेसे गिनतीमें नही लेना] इस लेखपर मेरेको बड़े अफसोसके साथ लिखना पड़ता है कि न्यायरत्नजीकी विद्वत्ताकी चातुराई किस जगहमें चली गई होगी सो अपने नामके विद्यासागरादि विशेषणोंको अनुचितरूप कार्यकरके नष्ट

रीतसें दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसके ५० दिन समालिये और दो आश्विन होनेसे कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसके ७० दिन अपनी कल्पनासें समा लिये परन्तु श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके कथित मूल सिद्धान्तोंके पाठोंका उत्थापनरूप मिथ्यात्वका कुछ भी भय नही किया क्योंकि श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने अनेक मूल सिद्धान्तोंमें समयादि सूक्ष्मकालकी गिनतीसें एकयुगके दोनूं ही अधिक मासको गिनतीमें लिये है इसका विस्तार उपरमें अनेक जगह छप गया हैं और षट्द्रव्यरूप वस्तुओंमें एककाल द्रव्यरूप वस्तु भी शाश्वती है जिसके अनन्ते कालचक्र व्यतीत होगये है और आगे भी अनन्ते कालचक्र व्यतीत होवेंगे जिसमें चन्द्र, सूर्य्यके, शाश्वते विमान होनेसें चन्द्रके गतिका हिसाबसें अनन्ते अधिक मास भी श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके शासनमें व्यतीत होगये और आगे भी होवेंगे इस लिये सम्यक्त्वधारी मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी प्राणी होगा सो तो कालद्रव्यकी गिनतीके दो अधिक मास तो क्या परन्तु एक समय मात्र भी गिनतीमें कदापि निषेध नही कर सकता है तथापि न्यायरत्नजी श्रीजैनश्वेताम्बर धर्मोपदेष्टा तथा विद्यासागरका विशेषण धारण करते भी श्रीसर्वज्ञ कथित सिद्धान्तोंमें कालद्रव्य रूप शाश्वती वस्तुका एक समयमात्र भी निषेध नही हो सके जिसके बदले एक दम दो मासकी गिनती निषेध करके श्रीजैनश्वेताम्बरमें उत्सूत्र भाषणरूप मिथ्यात्वके उपदेष्टा होनेका कुछ भी भय नही करते है, हा अतीव खेदः,—इस लेखका तात्पर्य्य यह है कि जैन शास्त्रानुसार

एक समय मात्र भी जो काल व्यतीत हो जावे उसकी अव
श्यही गिनतीं करनेमें आती है तो फिर दो अधिक मासके
गिनतीमें लेने इसमें तो क्याही कहना याने दो अधि
मासकी निश्चय करके अवश्यही गिनती करना सोही सम्य
क्त्व धारियोंकों उचित है इसलिये दो अधिक मासकी
गिनती निषेध करके ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके
७० दिन न्यायरत्नजीनें उत्सूत्र भाषणरूप अपनी कल्पनासे
बनाये सो कदापि नही बन सकते है इसलिये दो श्रावण
होनेसें अनेक शास्त्रानुसार पचास दिने दूसरे श्रावणमें
पर्युषणा करना और पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन भी
अनेक शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक रहते है जिसको मान्य करने
में कोई दूषण नही हैं तथापि न्यायरत्नजीनें दूषण लगाया
सो मिथ्या है इस उपरके लेखका विशेष विस्तार तीनों
महाशयोंके नामकी समीक्षामें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ११० में
पृष्ठ १२८ तक तथा चौथे महाशयके नामकी समीक्षामें
भी पृष्ठ १३४ सें पृष्ठ १८५ तक भी अच्छी तरहसें सूत्रकार श्री
गणधर महाराजके तथा वृत्तिकार महाराजके अभिप्राय
सहित युक्तिपूर्वक छप चुका है सो पढ़नेसें सर्व निर्णय हो
जावेगा ;—

तथा थोड़ासा और भी सुन लिजीयें कि, श्रीसम-
वायाङ्गजी सूत्रमें श्रीगणधर महाराजनें तथा वृत्तिकार
महाराजनें अनेक जगह खुलासापूर्वक अधिक मासको
गिनतीमें प्रमाण किया है तथापि न्यायरत्नजी हो करके
सूत्रकार महाराजके विरुद्वार्थमें अधिक मासकी गिनती
निषेध करके मूलसूत्रके पाठोंको तथा वृत्तिके पाठोंको

फिर यहा श्रीतीर्थंकरोंके कल्याणिक छः ते भी क्यों
होगा कभी नही इस हेतुसे भी अधिक मास नहीं
माना) इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दि
जिसमें प्रथमतो उपरके लेखमें न्यायरत्नजीनें अधिक
गिनतीमें लेने वालोंको तीसरा दूषण लगाया इस
मेरे कों इतनाही कहना उचित है कि न्यायरत्नजी
अनन्ततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आशातना
रूप मिथ्यात्व बढ़ाया है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थंकर
धरादि महाराज अधिक मासको गिनतीमें मान्य
सो अनेक सिद्धान्तोंमें प्रसिद्ध है और न्यायरत्नजी
मासको गिनतीमें मान्य करने वालोंको दूषण लग
जिससे श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी प्रत्यक्ष
तना होती है इसलिये जो न्यायरत्नजीको श्रीतीर्थंकर
धरादि महाराजोंकी आशातनामें अनन्त संसार वृद्धि
लगता हो तो अधिक मासको गिनतीमें लेने वा
दूषण लगाया जिसकी आलोयना लेकर अपनी आत्म
दुर्गतिसें बचाना चाहिये आगे न्यायरत्नजीकी तैसी
मेरा तो धर्मबन्धुकी प्रीतिसें लिखना उचित है सो
दिखाया है और अधिक मासको श्रीतीर्थंकर गणध
महाराजोंने गिनतीमें मान्य किया है जिसके अनु
कालानुसार युक्तिपूर्वक वर्तमानमें भी अधिक मा
आत्मार्थी पुरुष मान्य करते हैं जिन्होंको एक भी
नही लग सकता है परन्तु कल्पित दूषणोंको लगाने
को तो उत्सूत्र भाषणरूप अनेक दूषणोंके अधिकारी
पड़ता है सो आत्मार्थी विवेकी सज्जन पुरुष स्वयं
बुद्धिसे स्वयं विचार सकते हैं।

दो मासके कारणसें श्रीज्ञानीजी महाराजके कहने मुजब कल्याणक आराधन करनेमें आते थे और अधिक मासको गिनतीमें भी करनेमें आता था इसलिये अधिक मासकी गिनती करनेसें श्रीतीर्थङ्कर महाराजोंके कल्याणक गिनतीमें नही यह सकते है और इस पञ्चमें कालमें भरत क्षेत्रमें श्रीज्ञानीजी महाराजका अभाव होनेसें और लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेके कारणसें प्रथम मासका प्रथम कृष्णपक्ष और दूसरे मासका दूसरा शुक्लपक्षमें मास तिथि नियत कल्याणकादि धर्मकार्य्य तथा लौकिक और लोकोत्तर पर्व करनेमें आते है जिसका युक्तिपूर्वक दृष्टान्त सहित सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें लिखनेमें आवेगा सो पढ़नेसें विशेष निर्णय हो जावेगा इस लिये न्यायरत्नजी कल्याणक यह जानेके भयमें अधिक मासकी गिनती निषेध करते है सो जैन शास्त्रोंके विरुद्ध उत्सूत्र-भाषण करते है सो उपरके लेखसें पाठकवर्ग भी विशेष विचार सकते है ।

और इसके अगाड़ी फिर भी न्यायरत्नजीने लिखा है कि (अधिक महिनोंके कारणसें कभी दो भाद्रवे हो तो दूसरे भाद्रवेमें पर्युषणा करना चाहिये जैसे दो आषाढ़ महिने होते है तब भी दूसरे आषाढ़में चातुर्मासिक कृत्य किये जाते है वैसे पर्युषणा भी दूसरे भाद्रवेमें करना न्याययुक्त है)

उपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं कि हे सज्जन पुरुषों उपरके लेखमें न्यायरत्नजीने मासवृद्धि के कारणसें दो आषाढ़ और दो भाद्रपद लिखे जिससें अधिकमास गिनतीमें सिद्ध होगया फिर अधिक मासको

विचार करना चाहिये कि न्यायरत्नजी आप स्वयं दोनु श्रावण मासकी हकीकत जूदी जूदी लिखते है फिर गिनतीमें निषेध भी करते है यह तो ऐसे हुवा कि ममजननी वन्ध्या अथवा मम वदने जिह्वा नास्ति, इस तरहसें बाललीलावत न्यायरत्नजी विद्याके सागर हो करके भी कर दिया हाय अफसोस,—

अब इस जगह मेरेको लाचार होकर लिखना पड़ता है कि न्यायरत्नजीकी विद्वत्ताकी चातुराई किस देशके कोणेमें चली गई होगा सो पूर्वापरका विचार विवेक बुद्धिसें किये विना श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करके तेरह मासोंका अभिवर्द्धित संवत्सर अनेक सिद्धान्तोंमें कहा है जिसके उत्थापनका भय न करते उलटा अधिक मासको गिनती करने वालोंको मायावृत्तिसें मिथ्या दूषण लगादिये और फिर आपतो अधिक मासको प्रमाण करके लोगोंमें ज्योतिषशास्त्रके विद्वान् भी प्रसिद्ध होते है परंतु अधिक मासको गिनतीमें करनेवालोंको मिथ्या दूषण लगानेका और पूर्वापर विरोधी विसंवादी रूप मिथ्या वाक्यके फल विपाकका जरा भी भय नहीं करते है इसलिये जैन शास्त्रानुसार तो दूसरोंको मिथ्या दूषण लगानेके और विसंवादी भाषणके कर्मबन्धकी आलो- चनाके लिये विना अथवा प्रायश्चित्तसें भोगे विना छूटना बहुत मुश्किल है सो श्री जैन शास्त्रोंका तात्पर्य्यके जानकार विवेकी पुरुष स्वयं विचार सकते है और न्यायरत्नजीको भी सम्यक्त्व भावका भय होवे तो न्याय दृष्टिसें तत्त्वार्थीको भवाप हो ग्रहण करना चाहिये ;—

तथा और भी न्यायरत्नजीको थोड़ासा मेरा यही कहना है कि अधिकमासको आप कालपुरुषकी चोटी मान कर गिनतीमें नही लेनेका ठहराते हो तब तो दो आषाढ़, दो श्रावण दो भाद्रवेका लिखना आपका वृथा हो जायेगा और दो आषाढ़ादि मासोंको लिखते हो तथा उसी मुजब वर्तते हो तब तो कालपुरुषकी चोटी कहके अधिकमासको गिनतीमें निषेध करते हो सो आपका वृथा है और दो आषाढ़, दो श्रावण, दो भाद्रवे लिखना सब धर्म और कर्मका व्यवहार भी दोनु मासका करना फिर गिनतीमें नही लेना यह तो कभी नही हो सकता है इसलिये दोनु मासका धर्म और कर्मका व्यवहारको मान्य करके दोनु मासको गिनतीमें लेना सो ही न्यायपूर्वक युक्तिकी बात है तथापि निषेध करना धर्मशास्त्रोंके और दुनियाके व्यवहारसे भी विरुद्ध है इस लिये इसका मिथ्या दुष्कृत ही देना आपको उचित है नही तो पूर्वापर विरोधी विसंवादी वाक्यका जो विपाक श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्तिमें कहा है सो पाठ इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ८६ । ८७ । ८८ में छपगया है उसीके अधिकारी होना पड़ेगा सो आप विद्वान् हो तो विचार लेना ;—

और दो आषाढ़ होनेसे दूसरे आषाढ़में चौमासी कृत्य किये जाते है जिसका मतलब न्यायरत्नजीके समझमें नहीं आया है सो इसका निर्णय आगे महाशय श्रीधर्मविजयजी के नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा और दो भाद्रवें होनेसें दूसरे भाद्रवेंमें पर्युषणापर्व करना न्याय युक्त न्यायरत्नजी ठहराते है परन्तु शास्त्रसम्मत न्याय युक्त नही है क्योंकि

शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने अवश्यही पर्युष करना कहा है और दो भाद्वें होनेसे दूसरे भाद्वेमें प पणा करनेसें ८० दिन होते हैं जिससें दूसरे भाद्वेमें दिने पर्युषणा करना और ठहराना शास्त्रोंके और युक्ति विरुद्ध है इसलिये प्रथम भाद्वेमें ही ५० दिने पर्युषणा का शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक न्याय सम्मत है इसका विशे निर्णय तीनों महाशयोंके नामकी समीक्षामें इन्ही पुस्तक पृष्ठ १४० । १४१ । १४२ की आदि तक अच्छी तरहसें छ गया है उसीको पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेगा ।

और फिर भी न्यायरत्नजीने अपनी बनाई मानवध संहिता पुस्तकके पृष्ठ ८०० की पंक्ति ४ से १० तक तिथिय की हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें और पृष्ठ ८०१की पंक्ति २२ से पृष्ठ ८०२ पंक्ति १० तक पर्युषणामें तिथियांकी हानी तथ वृद्धिके सम्बन्धमें शास्त्रोंके प्रमाण विना अपनी मति कल्पनासें उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है जिसकी समीक्षा आ तिथि निर्णयका अधिकार सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा वहां अच्छी तरहसें न्याय रत्नजीकी कल्पनाका (और न्यायाम्भोनिधिजीने जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमें जो तिथियांकी हानी तथा वृद्धि सम्बन्धी उत्सूत्र भाषण किया है उसीका भी) निर्णय साथ साथमेंही करनेमें आवेगा सो पढ़नेसें तिथियांकी हानी तथा वृद्धि होनेसे धर्मकार्योंमें किसी रीतिसें वर्तना चाहिये जिसका अच्छी तरहसें निर्णय हो जावेगा ;—

इति पाँचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी संक्षिप्त समीक्षा समाप्त ॥

और सप्टेम्बर मासकी २१ वी तारीख सन् १९०८ आश्विन शुक्ल २ वीर संवत् २४३४ के रविवारका मुम्बईसे प्रसिद्ध होनेवाला जैन पत्रके २४ वें अङ्कके पृष्ठ ४ में गत वर्षे न्यायरत्नजीकी तरफसें लेख प्रसिद्ध हुवा हैं जिसमें खास करके श्रीखरतरगच्छ वालोंको श्रीमहावीर स्वामीजीके ६ कल्याणकके सम्बन्धमें पूछा हैं और आपने श्रीहरिभद्र सूरिजी महाराजके तथा श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजके विरुद्धार्थमें श्रीपञ्चाशक मूलसूत्रका तथा तद्वृत्तिका अधूरा पाठ लिखके श्रीमहावीर स्वामीजीके पांच कल्याणक स्थापन करके ६ कल्याणकका निषेध किया है सो उत्सूत्र भाषण करके अनेक सूत्र, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठोंका उत्थापन करके श्रीगणधर महाराजके, श्रीश्रुत केवली महाराजके, पूर्वधर महाराजोंके और बुद्धिनिधान पूर्वाचार्योंके वचनका अनादर करते पञ्चमकालके अपने हठवादकी विद्वत्ता न्यायरत्नजीनें अनन्त संसारकी बढ़ाने वाली प्रसिद्धकरी हैं जिसकी समीक्षा और आगस्ट मासकी २९ वीं तारीख सन् १९०९ दूसरे श्रावण सुदी १३ वीर संवत् २४३५ रविवारका जैन पत्रके २१ वें अङ्कके पृष्ठ १५ वा में भी न्यायरत्नजीकी तरफसें फिर भी लेख प्रसिद्ध हुवा हैं उसीमें 'खरतरगच्छ मीमांसा, नामकी किताब छपवा कर प्रसिद्ध करके [जैसे न्यायाम्भोनिधिजीनें जैन सिद्धान्तसमा-चारी, पुस्तकका नाम रखके वास्तविकमें उत्सूत्र भाषण का मिथ्यात्वरूप पाखण्डको प्रगट किया हैं (जिसका किञ्चिन्मात्र इन्हीं पुस्तकके पृष्ठ १५१ और पृष्ठ २१५ । २१६ में दिखाया हैं, उसीका अनुसारूप पर्युषणा सम्बन्धी समीक्षा भी

इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १५७ सें २१४ तक उपरमें छप चुकी हैं] तैसेही न्यायरत्नजीने भी प्राय उन्ही बातोंको अपनी चातुराईसें कुछ कुछ न्यूनाधिक करके] मिथ्यात्वका पोष्ट-पेषणरूप मानु अपनी और अपने गच्छवासी हठग्राही भक्तजनोंकी संसार वृद्धिका कारणरूप, शास्त्रानुसार सत्य बातोंका निषेध और शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें कल्पित बातोंका स्थापनकर पुस्तक प्रगटकरके अविसंवादी अत्युत्तम जैनमें विसंवादरूप मिथ्यात्वका झगड़ा फैलाना न्यायरत्नजी चाहते हैं, जिसकी और गत वर्षके लेखकी समालोचनारूप समीक्षा इस जगह लिखके न्यायरत्नजीके उत्सूत्र भाषणकी तथा कुतर्कोंकी चातुराईका दर्शाव प्रगट करना चाहुं तो जरूर करके २५० अथवा ३०० पृष्ठका यहां विस्तार बढ़ जावें जिससें आठों महाशयोंके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी अभी जो समीक्षा सरू हैं उसीमें अन्तर पड़ जावें और यह ग्रन्थ भी बहुत बड़ा हो जावें इसलिये अभी यहां न्याय रत्नजी सम्बन्धी विशेष न लिखते पर्युषणा सम्बन्धी विषय पूरा होये बाद अन्तमें थोड़ासा संक्षिप्तसें लिखनेमें आवेगा जिससे श्रीजिनाज्ञा इच्छक आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको सत्यासत्यका निर्णय स्वयं मालुम हो सकेगा ;—

और अब छठे महाशय श्रीवल्लभविजयजीकी तरफसें पर्युषणा सम्बन्धी जो लेख जैन पत्रमें प्रगट हुवा है उसीकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं—जिसमें प्रथमही आगष्ट मासकी ८ वी तारीख संवत् १९०९ गुजराती प्रथम श्रावण वदी ७ रविवारका मुम्बईसें प्रसिद्ध होने वाला जैनपत्रके १९ वें अङ्कके पृष्ठ १७ विषे गुजराती भाषामें

प्रश्नोत्तर छपे हैं जिसमें किसी मुम्बईवाले श्रावकने प्रश्न किया है कि (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमां करिये तो दोष लागेके केम) इस प्रश्नका श्रीपालणपुरसे श्रीवल्लभ-विजयजीने यह जवाब दिया कि (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमां नज थाय आज्ञाभङ्ग दोष लागे) इस लेखका मतलब ऐसे निकलता है कि गुजराती प्रथम श्रावण बदी हिन्दी दूसरे श्रावण बदीसे लेकर दूसरे श्रावण शुदीमें अर्थात् आषाढ़ चतुर्मासीसे पचास दिने पर्युषणा करने वालोंको जिनाज्ञा भङ्गके दूषित ठहराये तब श्रीलश्करसे श्रीबुद्धिसागरजीने श्रीपालणपुर श्रीवल्लभविजयजीको सुन्दर ओपमा सहित वन्दनापूर्वक विनय भक्तिसे एक पोष्टकार्ड लिख भेजा उसीमें लिखा था कि—आगष्ट मास की-८ वीं तारीखका जैन पत्रके १८ वें अङ्कमें (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमां नजथाय आज्ञाभङ्ग दोष लागे) यह अक्षर जिस सूत्र अथवा वृत्तिके आधारसे आपने छपवाये होवें उसी सूत्र अथवा वृत्तिके पाठ लिखकर भेजनेकी कृपा करना आपको मध्यस्थ और विद्वान् सुनते हैं इस लिये आपने शास्त्रके प्रमाण विना अपनी कल्पनासे झूठ नहीं छपवाया होगा तो जरूर शास्त्रपाठके अक्षर लिख कर भेजेंगें इत्यादि—इस तरहका पोष्टकार्डमें मतलब लिख र लश्करीमें भेजाया सो कार्ड श्रीवल्लभविजयजीको श्रीपा-लणपुरमें खास हाथोहाथ पहुंच गया परन्तु श्रीवल्लभविजय-जीने उस कार्डका कुछ भी पीछा जवाब लिखकर नहीं भेजा तब कितनेही दिन तक तो जवाब आनेकी राह देखी तथापि कुछ भी जवाब नही आया तब फिर भी

दूसरा पत्र श्रीवल्लभविजयजीको, उपर लिखे मतलबके लिये भेजनेमें आया तोभी श्रीवल्लभविजयजीनें कुछ भी जबाब नहीं दिया तब श्रीपालणपुरके प्रसिद्ध आदमी पीताम्बर भाई हाथी भाई महताके नामसें एक पत्र लिखा उसीमें भी विशेष समाचार पर्युषणा सम्बन्धी श्रीवल्लभविजयजीनें दूसरे श्रावणमें आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने पर्युषणा करने वालोंको आज्ञाभङ्गका दूषण लगाया जिसका खुलासे उत्तर पूछाया था और उसी पत्रमें ५० दिने पर्युषणा शास्त्रकारोंने करनेका कहा हैं उसी सम्बन्धी पाठ भी लिख भेजे थे यह पत्र श्रीवल्लभविजयजीको पीताम्बर भाईनें पहुंचाया और जबाब भी पूछा इतने पर भी श्रीवल्लभविजयजीनें अपनी बातका जबाब नही दिया और शास्त्रोंके पाठोंको प्रमाण भी नही किये परन्तु स्वपक्षपातका पण्डिताभिमानके जोरसें अन्याय कारक विशेष झगड़ा फैलानेका कारण करके माया वृत्तिसें आप निर्दूषण बन कर श्रीबुद्धिसागरजीकों दूषित ठहरानेके लिये अक्तोबर मासकी ३१ वी तारीख सन् १९०९ आसोज वदी ३ वीर संवत् २४३५ का अङ्क २९ वा के पृष्ठ ४-५ में अपनी चातुराईकों प्रगट करी हैं जिसको इस जगह लिख दिखाता हुं ;—

[खबरदार! होवो होशियार!! करो विचार! निकालो सार!!! लेखक—मुनि-वल्लभविजय-पालणपुर,

इसमें शक नहीं कि, अंग्रेज सरकारके राज्यमें, कला-कौशल्यकी अधिकता हो चुकी है, हो रही है और होती रहेगी! परंतु नाम बने वहां भट्ठी चमारादि अवश्य होते है! बहुत अच्छी अच्छी बातोंकी होशियारीके साथमें बुरी

खरतर गच्छीय मुनि नाम धारकने भी अपनी मनःकामना पूर्ण न होनेसे, रावणके समान ढुंढियांका सरणा लेकर युद्धारंभ करना चाहा है ।]

पाठकवर्गको छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके उपर का लेखकी समालोचनारूप समीक्षा करके दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो मेरेकों इतना ही कहना उचित है कि छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी साधु नाम धारक होकर खास आप झगड़ेका मूल खड़ा करके दूसरेको दूषित करना और अन्याय कारक माया वृत्तिका मिथ्या भाषणसे आप निर्दूषण बनना चाहते है सो सर्वथा अनुचित है क्योंकि प्रथम ही आपने (शास्त्रकारोंकी रीति मूजब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार आषाढ़ चौमासीसे पचास दिने श्रावणवृद्धिके कारणसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालोंको) आज्ञाभङ्ग का दूषण लगा के जैन पत्रमें छपवा कर प्रगट कराया तब श्रीखरतरसे श्रीबुद्धिसागरजीने आपकों सामनीमें शास्त्रका प्रमाण पूछा था जिन्होंकों शास्त्रका प्रमाण आप सामनीमें पीछा नहीं लिख सके और अन्यायकी रीतिसे उलटा रस्ता पकड़के सामनीकी वात्तोंको प्रसिद्धीमें लाकर वृथा निष्प्रयोजनकी अन्यान्य वात्तोंको और सङ्घी बगार सूर्पनखा वगैरह अनुचित शब्दोंको लिखके विशेष झगड़ेका मूल खड़ा करके भी आप निर्दूषण बनकर अपने अन्यायको न देखते हुए और शास्त्रके पाठकी सत्य न्याय रीतिसे पूछने वाले को दूषित ठहराते हुए अपने योग्यता वाचक शब्द प्रगट किये सो लौकिकमें कहते हैं कि—मैसी होवे कोई, तैसा

तथा अन्यायमें चलनेवाले और दूसरोंको मिथ्या दूष
लगानेवाले छठे महाशयजी वगैरह अनेक पक्षपाती पु
बुरी बुरी होशियारीकी बातोंका शरणा लेते हैं सो ब
ही अफसोसकी बात है ;—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि
(खबरदार होकर होशियारीके साथ विचारकर सार निक
लनेपर ख्याल रखना योग्य है ताकि, पीछेसे पश्चात्ता
करनेकी जरूर न रहे) इस अक्षरोंको लिखके छठे महा
शयजी दूसरेको होशियार होनेका बताते हैं परन्तु अपनी
आत्माको तरफ कुछ भी होशियारी न दिखाते हुए विना
विचारे काम करके इस भव तथा पर भव और भवो
भवमें पश्चात्ताप करनेका कुछ भी भय नहीं रखते हैं क्योंकि
श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महान् उत्तम पुरुषाचार्योंने
और खास छठे महाशयजीके ही पूर्वज पूज्यपुरुषोंने अनेक
सूत्र, वृत्ति, चूर्णि, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें भादव भी
मासोंमें एक मास और बीस दिने याने पचास दिने श्री
पर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है और इस वर्तमान
कालमें लौकिक पञ्चाङ्गमें श्रावणादि मासोंकी वृद्धि होनेसे
श्रावण भाद्रव दो श्रावणोंसे पचास दिन दूसरे श्रावणमें
पूरे होते हैं तब शास्त्रानुसार पचास दिनकी गिनतीसे
दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवाले श्रीजिनेश्वर भगवान्की
आज्ञाके आराधक ठहरे और जैन शास्त्रोंके प्रमाण तथा
युक्तियों और दृष्टिविरुद्ध [illegible] श्रीजिनाज्ञा
दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेको [illegible]
[illegible] हुए [illegible]

में आत्मार्थी पुरुषोंकी) चली आती है उसी मुजब मोक्षाभि-लाषी सज्जन वर्त्तते हैं जिन्होंको छठे महाशयजीनें अपनी तुच्छबुद्धिकी तुच्छ विद्वत्ताके अभिमानसे उत्सूत्र भाषणका भय न करते एकदम आज्ञाभङ्गका दूषण लगाके छापामें छपानेकी आशा करी और शास्त्रानुसार चलने वालोंको मिथ्या दूषण लगानेके कारणसे झगड़ा फैलानेके कारण का जरा भी विचार नही किया और जब श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंनें पचास दिने पर्युषणा करनेका कहा है उसीके अनुसारे आत्मार्थी सज्जन पुरुष दूसरे श्रावणमें पचास दिने पर्युषणा करते हैं जिन्होंको छठे महाशयजी आज्ञाभङ्गका दूषण लगाते हैं जिससे श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके वचनका अनादर होकर उन महाराजोंकी महान् आशातना होती है तथा अनेक सूत्र, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठोंके मुजब नही वर्त्तनेसें उत्थापन होता है और उन महाराजोंकी आशातना तथा अनेक शास्त्रोंके पाठोंका उत्थापन और उन महाराजोंकी आज्ञानुसार अनेक शास्त्रोंके प्रमाणयुक्त वर्त्तने वालोंको स्वपक्षपातके पंडिताभिमानसें मिथ्या दूषण लगाना सो निःकेवल उत्सूत्र-भाषणरूप है और उत्सूत्र भाषणके लिये ;—

श्रीभगवतीजी सूत्रमें १ तथा तद्वृत्तिमें २ श्रीउत्तरा-ध्ययनजी सूत्रमें ३ तथा तीनकी छ (६) व्याख्यायोंमें ९ श्रीदशवैकालिक सूत्रमें १० तथा तीनकी चार व्याख्यायोंमें १४ श्रीसूयगड़ाङ्गजी (सूत्रकृताङ्गजी) सूत्रकी निर्युक्तिमें १५ तथा तद्वृत्तिमें १६ श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें १७ तथा तद्वृत्तिमें १८ श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १९ श्रीआवश्यकजी सूत्रकी

ये पापकारिणो नराः पापं असत् परूपणं कुर्वन्तीत्यै
शीलाः पापकारिणो ये नराः भवन्ति ते नराः घोरे भीषणे
(भयङ्करे) नरके पतन्ति च पुनः धर्मं सत् परूपणरूप
चरित्रराध्यदिव्यं दिवः सम्यग्धीनौ उत्तमां गतिं गच्छन्ति
इत्यादि ॥ इस पाठमे उत्सूत्र परूपणा करने वालेकों भय-
ङ्कर नरक और सत्य परूपणा करने वालेकों देव लोगकी
गति कही है। और श्रीशान्तिसूरिजीकृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण
मूल तथा तद्वृत्ति श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत भाषा सहित श्री
पालीताणाके श्रीजैनधर्म विद्याप्रसारकवर्गकी तरफसे
छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके तीसरे भागके पृष्ठ ८२। ८३।
८४ का पाठ गुजराती भाषा सहित नीचे मुजब जानो ;–
यथा—अइ साहस मेयं जं, उस्सुत्त-परूवणा कडुविवागा ॥
जाणंतेहिवि दिज्जइ, निद्देसो सुत्तबज्झत्थे ॥१०१॥
मूलनो अर्थ—उत्सूत्रपरूपणा कडवां फल आपनारी छे
एवुं जाणतांछतां पण जेओ सूत्रबाह्य अर्थमां निश्चयभापी
देछे ते अति साहसछे ॥ १०१ ॥
टीका—ज्वलज्ज्वालानल प्रवेशकारिनर साहसादप्यधि-
कमतिसाहसमेतद्वर्तते यदुत्सूत्रपरूपणा सूत्रनिरपेक्ष देशना
कटुविपाका दारुणफला जानानैरवबुध्यमानैरपि दीयते वि-
तीर्यंते निर्देश्यो निश्चयः सूत्रबाह्ये जिनेन्द्रागमानुक्तेऽर्थे वस्तु
विचारे किमुक्तं भवति—
दुब्भासिएण इक्केण, मरीइदुक्खसागरं पत्तो।
भमिओ कोडाकोडि, सागरसिरिनामधिज्जाणं ॥१॥
उस्सुत्तमायरंतो-बंधइकम्मं सुचिक्कणं जीवो। संसारं च पव-
ड्ढ, मायामोसं च कुव्वइ ॥ २ ॥ तम्हा तदेवमोमग्ग-मास

अयमत्राशयः--सम्यक्त्वं ज्ञानचरणयोः कारणं यतएवमागमः--

नादंसणिस्सनाणं, नाणेण विणा नहुंति चरणगुणा ॥ अगुणस्स नत्थि मुक्खो, नत्थि अमुक्खस्स निव्वाणं ॥१॥ इति तच्च गुरुबहुमानिन एव भवत्यतो दुःकरकारकोऽपि तस्मिन्नवज्ञानविदध्यात् तदाज्ञाकारि च भूयाद्यत उक्तं--

छट्ठट्ठम दसमदुवालसेहिं, मासद्ध मास खमणेहिं ॥ अकरंतो गुरुवयणं, अणंत संसारिओ भणिओ ॥१॥इत्यादि

इहां आशय एछे के सम्यक्त्व ए ज्ञान अने चारित्रनुं कारणछे जे माटे आगममां आरीते कहेलुंछे--सम्यक्त्व वंतनेज ज्ञान होयछे अने ज्ञान विना चारित्रना गुण होता नथी अगुणीने मोक्ष नथी अने मोक्ष वगरनाने निर्वाण नथी, हवे ते सम्यक्त्व तो गुरुनो बहुमान करनारनेज होयछे एथी करीने दुःकरकारी थईने पण तेनी अवज्ञा नहीं करतां तेना आज्ञाकारी थवुं जे माटे कहेलुंछे के छठ, अठम, दशम, द्वादश तथा, अर्द्धमासखमण अने मासखमण करतो थको पण जो गुरुनो वचन नही माने तो अनंत संसारी थायछे।

और श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धविधिवृत्तिका गुजरातीभाषान्तर श्राः--भीमसीह माणेकचंद मारफतीयाने श्रीमुंबईमें छपवा कर प्रसिद्ध किया है जिसके पृष्ठ १६८ का लेख नीचे मुजब जानो ;--

आशातनाना विषयमां उत्सूत्र [सूत्रमां कहेला आशयथी विरुद्ध] भाषणकरवाथी अरिहंतनी के गुरुनी अवहेलना करवी ए मोटी आशातनाओ अनन्तसंसारनी हेतुछे तेमके उत्सूत्र प्ररूपणाथी सावद्याचार्य, मरीची,जमाली,कुल

थाळुओसाधु विगेरे पणाक जीवो अनन्त संसारी थयाछे कह्युं छे के—उस्सुत्तभासगाणं, बोहिनासो अणंतसंसारो। पाण च्चए वि धिरा उस्सुत्तं ता न भासंति ॥ १ ॥ तित्थयर पवयण सूअं, आयरिअं गणहरं महड्ढीअं। आसायंतो बहुसो, अणंत संसारिओ होई ॥ २ ॥ उत्सूत्रना भाषकने बोधिबीजनो नाश थायछे अने अनन्त संसारनी वृद्धिथायछे माटे प्राणजतां पण धीरपुरुषो उत्सूत्र वचन बोलता नथी तीर्थङ्कर, प्रवचन [जैनशासन] ज्ञान, आचार्य, गणधर, उपाध्याय, ज्ञानादिकनी महर्द्धिकसाधु, साधु ए ओनी आशातना करतां प्राणी घणुंकरी अनन्त संसारी थायछे।

और सुप्रसिद्ध युगप्रधान श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमणजी महाराजनें श्रीआवश्यकभाष्य [विशेषावश्यक] में कहा है यथा—जे जिनवयणु तिन्ने, वयणं भासन्ति जे उ मन्नति। सम्मदिट्ठीणं तं, दंसणपि संसार वुड्ढि करंति ॥ १ ॥

भावार्थ.—जो प्राणी श्रीजिनेश्वर भगवान् का वचनके विरुद्धवचन [उत्सूत्र] भाषण करता होवे और उसीको भी मानता होवे उस प्राणीका मुख देखना भी सम्यक्त्वधारि-योंको संसार वृद्धि करता है ॥ १ ॥

अब आत्मार्थी विवेकी सज्जन पुरुषोंको निष्पक्षपातकी दीर्घदृष्टिमें विचार करना चाहिये कि उत्सूत्र भाषण करने वाला तो संसारमें रुले परन्तु उत्सूत्र भाषकका मुख देखने वाले अर्थात् उस उत्सूत्र भाषक सम्यग्दृष्टिमें भद्र, दृष्टि-रागीको श्रद्धापूर्वक वन्दनादि करने वालोंको भी संसार की वृद्धिका कारण होता है तो फिर उस वर्तमान पञ्चम कालमें उत्सूत्र भाषकोंकी परम्पराचलानेके उन्हींके कहने

मुताबिक चलनेवाले गच्छपक्षी दृष्टिरागी बिचारे भोले जीवोंके कैसे कैसे हाल होवेंगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जानें—

ऊपरमें उत्सूत्र भाषक सम्बन्धी इतना लेख लिखनेका कारण यही है कि उत्सूत्रभाषक पुरुष श्रीतीर्थंकरों श्री तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी और अपने पूर्वजोंकी आशातना करने वाला और भोले जीवोंको भी उसी रस्ते पहुंचानेके कारणसें संसारकी वृद्धि करता है जिससें उन्होंकों पर भवमें तथा भवो भवमें नरकादि अनेक विडम्बना भोगनी पड़ती है इसलिये महान् पश्चातापका कारण बनता है और इस भवमें भी उत्सूत्र भाषकको अनेक उपद्रव भोगने पड़ते हैं, तैसे ही छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीने भी उत्सूत्र भाषण करके श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधक पुरुषोंको मिथ्या आज्ञा-भङ्गका दूषण लगाकर जैनधर्ममें प्रसिद्ध कराके झगड़ेका मूल खड़ा किया और बड़े जोरके साथ पुनः जैनधर्ममें फैलाया जिससें आत्मार्थी निष्पक्षपाती सज्जन-पुरुष तथा अपने [छठे महाशयजीके] पक्षधारी श्रीतप-गच्छके सज्जन पुरुष और खास छठे महाशयजीके मण्डलीके याने श्रीन्यायाम्भोनिधिजीके परिवार वाले भी कितने ही पुरुष छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीपर पूरा अभाव करते हैं कि ना हक वृथा जो संपसे कार्य्य होतेथे जिसमें विघ्नकारक झगड़ा खड़ा किया है इसलिये छठे महाशय-जीको इस भवमें भी पूरे पूरा पश्चाताप करनेका कारण होगया है तथा करते भी हैं।

और उत्सूत्र भाषण करके दूसरोंको मिथ्या दूषण लगा-

आत्मार्थी सज्जन पुरुष होते हैं वो तो अपनी भूलको मंजूर कर दूसरेकी हितशिक्षारूप सत्य बातको प्रमाण करके उपकार मानते हुए शुद्ध शान्तिसें संप करके वर्तते हैं और मिथ्यात्वी होते हैं वो सत्य बातकी हितशिक्षाको कहनेवाले पर क्रोधयुक्त हो कर अपनी भूलको न देखते हुए अन्यायसें झगड़े का मूल खड़ा करनेके लिये (हितशिक्षाको ग्रहण नहीं करते हुए) एककी दो सुनाकर रागद्वेषसें विसंवाद करते हैं तैसेही छठे महाशयजीने भी एककी दो सुनानेका दिखाया परन्तु शास्त्रार्थसें न्याय पूर्वक सत्य बातको ग्रहण करने की तो इच्छा भी न रख्खी, इस बातको दीर्घ दृष्टिसें सज्जन पुरुष अच्छी तरहसें विशेष विचार सकते हैं,--

और सरकारी कानून कायदेका छठे महाशयजीनें लिखा है इस पर भी मेरेको यही कहना पड़ता है कि प्रथम झगड़ा खड़ा करनेवाले और दूसरोंको मिथ्या दूषण लगानेवाले तथा मायावृत्तिकी धूर्त्ताचारीसें वक्रोक्तिकरके-पण्डितताभिमानसें अनुचित शब्द लिखनेवाले और सामग्री में स्वरूप रीतिसें पूजने वालेको मसिद्धीमें लाकर उसीको अयोग्य ओपमा लगाके अवहेलना करने वाले आप जैसोंको हितशिक्षा देनेके लिये तो जरूर करके सरकारी कानून तैयार हैं परन्तु आप साधुपदके भेषधारी हो इसलिये सज्जन पुरुष ऐसा करना उचित नहीं समझते हैं तथापि आप तो उसीके योग्य हो-महाशयजी याद रख्खो-सरकारके विरुद्ध चलनेसें इसीही भवमें यथादि शिक्षा मिलती है तैसेही श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके विरुद्ध चलने वाले उत्सूत्र भाषकको भी इस भवमें लौकिकमें तिर-

एकांतादि तथा परभवमें और भवो भवमें खूब गहरी वारं-वार नरकादिमें शिक्षा मिलती है इस वातका विचार सज्जन पुरुष जब करते हैं तब तो आपके गुरुजन स्वामीजी-निधिजी वगैरहको और आपके गच्छवासी हठग्राही जो जो पूर्वे उत्सूत्र भाषक हुए है तथा वर्त्तमानमें आप जैसे है और भी आगे होवेंगे उन्होंको क्या क्या शिक्षा मिलेगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने क्योंकि आप लोग उत्सूत्र भाषणकी अनेक वातें कर रहे हो जिसमेंसें थोडीसी वातें नमुना रूप इस जगह लिख दिखाता हूं ;—

१ प्रथम–अधिकमासको गिनतीमें निषेध करते हो सो उत्सूत्रभाषण है ।

२ दूसरा–अधिकमास होनेसे तेरह मासोंके पुण्यपापादि कार्य्य करके भी तेरह मासोंके पापकृत्योंकी आलोचना नही करते हो और दूसरे तेरह मासोंके पापकृत्योंकी आलो-चना करते है जिन्होंको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

३ तीसरा–श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करनेवा-लोंको मिथ्या दूषण लगाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

४ चौथा–श्रीजैन ज्योतिषाधिकारे सर्वत्र शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें अच्छी तरहसे खुलासेके साथ प्रमाण करा है तथापि आप लोग जैन शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण नही करा है ऐसा प्रत्यक्ष महा मिथ्या बोलते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

५ पांचमा–पर्युषणाधिकारे सर्वत्र जैन शास्त्रोंमें आषाढ

चौमासीसे दिनोंकी गिनती करके पचास दिनेही नियम करके पर्युषणा करनेका कहा है तथापि आप लोग दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसे ८० दिने पर्युषणाकरते हो और ८० दिनके ५० दिन छोड़के जीवोंको दिखाते हो सो भी माया सहित उत्सूत्र भाषण हैं।

६ छठा-मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कही है तथापि आप लोग मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा ठहराते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

७ सातमा-श्रीनिशीथ भाष्यमें १ तथा चूर्णिमें २ श्रीवृहत्कल्पभाष्यमें ३ तथा चूर्णिमें ४ और वृत्तिमें ५ श्रीसमवायाङ्गजीमें ६ तथा तद्वृत्तिमें ७ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धिके अभावसे चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें पचासदिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन स्वभाविक रहते हैं जिसको भी आप लोग वर्त्तमानमें दो श्रावणादि होनेसे पांच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें भी पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रहनेका ठहराते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

८ आठमा-अधिक मास होनेसे प्राचीन कालमें भी र्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन रहते थे तथा वर्त्तमानमें भी वणादि अधिक मास होनेसे पर्युषणाके पिछाड़ी १००दिन त्रानुसार युक्तिपूर्वक रहते हैं जिसको निषेध करते और १०० दिन मानने वालोंको दूषण लगाते हो सो भी त्र भाषण हैं।

नवमा-अधिक मासके ३० दिनोंका शुभाशुभकृत्य तथा ं और सर्व व्यवहारको गिनतीमें लेकर मान्य करते हो

इस न्यायानुसार दो आश्विनमास होनेसे पर्युषणाके पिछाड़ी कार्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसके ७० दिन अपनी कल्पनासे कहते हो सो भी प्रत्यक्ष अन्यायकारक उत्सूत्र भाषण है।

१० दशमा–जैन शास्त्रोंमें मास वृद्धिको बारह मासोंके ऊपर शिखररूप अधिक मासको कहा है और लौकिकमें भी पुरुषोत्तम अधिक मास कहा हैं इसलिये धर्म्मव्यवहारमें अधिक मास बारह मासोंसें विशेष उत्तम महान् पुरुषरूप है जिसको भी आप लोग नपुंसक निःसत्व तुच्छादि कहके भोले जीवोंके धर्म्मकार्य्योंमें हानी पहुंचानेका कारण करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं।

११ इग्यारमा–अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करनेयोग्य शास्त्रकारोंने दिनी हैं तथापि आप लोग कालचूला कहनेसे अधिक मास गिनतीमें नही आता है ऐसा कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

१२ बारहमा–अधिक मासमें प्रत्यक्ष वनस्पति फल-फुलादिसें प्रफुल्लित होती है तथापि आप लोग नही फूलनेका कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

१३ तेरहमा–अधिक मासके कारणसें श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने अभिवर्द्धितसंवत्सर तेरह मासोंका कहा है तथापि आप लोग अधिक मासको गिनतीमें निषेध करके श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा अभिवर्द्धित संवत्सरका प्रमाणको तथा अभिवर्द्धित संवत्सरकी संज्ञाको नष्ट कर देते हो इसलिये श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आशातना कारक

समस्त संसारको वृद्धिरूप यह भी महान् उत्सूत्र भाषण

१४ चौदहमा—श्रीजैनशास्त्रोंमें षट्द्रव्यरूप शाश्व-
-तवस्तुओंमेंसें कालद्रव्य रूपभी एक शाश्वती वस्तु है जिस
एक समयमात्र भी जो कालव्यतीत होजावें उसीका गिनती
में कदापि निषेध नही हो सकता है यह अनादि स्वयं
सिद्ध मर्यादा है तथापि आपलोग समय, आवलिका,
मुहूर्त, दिन, पक्षसें, दो पक्षका जो एकमास बनता हैं उसी
को गिनतीमें निषेध करके अनादि स्वयं सिद्ध मर्य्यादाको
अपनी कल्पनासें तोड़मोड़करके ३० मासें—एकमासका
गिनतीमें निषेध करनेके हिसाबसें, ३० वर्षे—एकवर्ष, ३०युगे-
एकयुग, इसी तरहसें, ३० कोड़ा कोड़ी सागरोपमें—एक
कोड़ाकोड़ी सागरोपमके कालको—उड़ा कर गिनतीमें
निषेध करनेका वृथा प्रयास करते हो सो भी यह महान्
उत्सूत्र भाषण है।

और १५ पंदरहमा—जैनपञ्चाङ्ग का अभी वर्त्तमानकालमें
विच्छेद है तथापि आपलोगोंको तरफसें मिथ्यात्वकी
वृद्धिकारक मनमानी अपनी कल्पनाका पञ्चाङ्गको जैन-
पञ्चाङ्ग ठहराकर प्रसिद्ध करवाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है

१६ सोलहमा—श्रीनिशीथसूत्रके भाष्यादि शास्त्रोंमें
सूर्य्योदयकी पर्व तिथिको न माननेवालेको मिथ्यात्वी कहा
है और लौकिक पञ्चाङ्गमें दो चतुर्दशी वगैरह तिथियां होती
है उसीमें पर्वरूप प्रथम चतुर्दशी सूर्य्योदयसें लेकर अहोरात्रि
तक यहां तक संपूर्ण चतुर्दशीका ही वर्त्ताव रहता है उसीमें
पर्व रूप त्रयोदशीके वर्त्तावका गन्ध भी नही है तथापि
आप लोग अपने पक्षपातके जोरसें और पण्डिताभिमानका -

फन्दसें जबरदस्ति सूर्य्योदयकी पर्वरूप प्रथम चतुर्दशीको पर्वरूप नही मानते हुए, अपर्वरूप त्रयोदशी बनाकरके संख्याते, असंख्याते, अनन्ते जीवोंकी हानी तथा अब्रह्मचर्य्यादि पञ्चाश्रव सेवनका और सब संसार व्यवहारके कार्य्योंसें आरम्भादि होनेका कारणसें अधोगतिके रस्ता की खर्चीरूप कार्य्योंमें आपलोग कटीबद्ध तैयार हो और अपने संयमरूप जीवितव्यके नष्ट होनेका और मिथ्यात्वी बननेका कुछ भी भय नही करतेहो इस लिये यह भी उत्सूत्र भाषण है।

१७ सतरहमा–भी इसीही तरहसें लौकिक पञ्चाङ्गमें दो दूज, दो पञ्चमी, दो अष्टमी, दो एकादशी, वगैरह सूर्य्योदयकी पर्वतिथियां होती है जिसको बदल कर, अपर्वकी–दो एकम, दो चतुर्थी, दो सप्तमी, दो दशमी वगैरह करके मानते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

१८ अठारहमा–भी इसीही तरहसे विशेष करके लौकिक पञ्चाङ्गमें संपूर्ण चतुर्दशी पर्वरूप तिथि होती है और दो पूर्णिमा तथा दो अमावस्या भी होती है जिसको तोड़मोड़ करके संपूर्ण चतुर्दशीकी, त्रयोदशी और दो पूर्णिमाकी तथा दो अमावस्याकी भी दो त्रयोदशी कोइ भी जैनशास्त्रोंके प्रमाण विना अपनी कपोल कल्पनासें बना लेते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं।

१९ एगुनवीशमा–लौकिक पञ्चाङ्गमें जब कोई कोई वख्त दो पूर्णिमा अथवा दो अमावस्या होती है उसीमें चन्द्र अथवा सूर्य्यका ग्रहण प्रथम पूर्णिमाको अथवा प्रथम अमावस्याको होता है जिसको सब दुनिया मानती है और

२३ तेवीसमा–लौकिक पञ्चाङ्गमें दो चतुर्दशी होनो उन्होंके मुजब आप लोगोंके पूर्वजोंने भी दो चतुर्दशी लिखी है जिसको आप लोग नही मानते हो और लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब युक्तिपूर्वक कालानुसार और पूर्वाचार्यों परम्पराये दो चतुर्दशी वगैरह पर्व तिथियोंको माननेवालोंके दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी अनुचित मालुम है।

२४ चौवीसमा–आपके पूर्वज कृत ग्रन्थमें तिथियां शुद्धाशुद्ध सम्बन्धी जो प्रमाण बताया है उसी मुजब आप लोग नही मानते हो और स्वच्छन्दचारीसे (अपनी मति की कल्पना करके) संपूर्ण प्रथम पर्वतिथिको अपर्व ठहरा करके दूसरी–दो अथवा तीन पल (एक मिनिट) मात्र की अल्पतर तिथिमें मानते हो और हमलोग–कालानुसार युक्ति पूर्वक तथा विशेष धर्मवृद्धिके लाभका कारण जानके प्रथम संपूर्ण ६० घड़ी की पर्वतिथिको मानते हैं तैसेही दूसरी पर्व तिथिको भी यथायोग्य मानते हैं जिन्होंको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी अनुचित मालुम है।

इस तरहकी अनेक बातें आत्मारामजीमें अनुचित मालूम होरही है जिनका तथा आपके गुरुजी श्री आत्मारामजी [illegible] श्री जैनसिद्धान्त समाचारी पुस्तकका भाग [illegible] अनुसार ५७ जगह अनुचित मालुम होता है जिनका भी [illegible] और [illegible] सब बातोंका निर्णय शास्त्रोंके प्रमाणसे और युक्ति पूर्वक [illegible] [illegible] [illegible] मालुम [illegible] —

और उत्सूत्र भाषणके फलविपाक सम्बन्धी ऊपरमें ही पृष्ठ २४९ से २५६ तक लिखनेमें आया है उसीका भय लगता हो, तथा श्रीजिनेश्वर भगवान् के वचन पर आपलोगोंकी कुछ भी श्रद्धा हो, और अपनेही श्रीतपगच्छके नायक श्रीदेवेन्द्र सूरिजी तथा श्रीरत्नशेखर सूरिजीके उत्सूत्र भाषक सम्बन्धी उपरोक्त वाक्योंको आपलोग सत्यमानतेहो, और श्रीदेवेन्द्र सूरीजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्ति आपलोगोंके समुदाय में विशेष करके व्याख्यानाधिकारे तथा पठन पाठनमें भी वारंवार आती है उन्हीके वाक्यार्थको आपके हृदयमें धारणा हो, तो ऊपरका लेखको परमहितशिक्षारूप समझके उत्सूत्र भाषण करते हो जिसको छोड़ो, तथा उत्सूत्र भाषण करा होवे उसीका मिथ्या दुष्कृत देवो, और गच्छके पक्षपात को तथा पण्डिताभिमानको छोड़के श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा मुजब शास्त्रोंके महत् प्रमाणानुसार आषाढ़ चौमासी से ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेका और अधिक मासको गिनतीमें प्रमाणादि अनेक सत्य बातोंको ग्रहण करो, और भक्तजनोंको कराओ जिससे आपकी और आपके भक्तजनोंकी आत्मसिद्धिका रस्तापावो—श्रीजिनाज्ञारूपी सम्यक्त्वरत्नके सिवाय मोक्ष साधनमें गच्छका पक्षपात तथा पण्डिताभिमान कुछ भी काम नही आता है इसलिये गच्छ पक्षको छोड़के श्रीजिनाज्ञा मुजब सत्यबातको ग्रहण करना सोही आत्मार्थी विवेकी विद्वान् सज्जन पुरुषोंकी परम उचित है ।

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (थोड़े समयकी बात हैं बुद्धिसागर नामा :खरतरगच्छीय

मुनिके नामका पत्र हमारे पास आया जिसमें पर्युषणाकी बाबत कुछ लिखाथा हमने मुनासिब नही समझा कि वृथा समय खोकर परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम किया जावे) इस लेखपर मेरेको बड़ाही आश्चर्य उत्पन्न होता है कि श्रीवल्लभविजयजीनें अपनी मायावृत्तिकी चातुराईको खूब प्रगट करी है क्योंकि प्रथम आपनेंही दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको आज्ञाभङ्गका दूषण लगाया था उसी सम्बन्धी आपको श्रीबुद्धिसागरजीनें शास्त्रका प्रमाण खानगीमें ही पत्र भेजके पूछा था जिसका जबाब पीछा खानगीमें ही लिख भेजनेमें तो छठे महाशयजी आपको बहुत समय वृथा खोनेका और परस्पर ईर्षाकी वृद्धि होनेका बड़ा ही भय लगा परन्तु लम्बा चौड़ा लेख जैनपत्रमें भङ्गी चमारादि शब्दोंसे तथा मिथ्यो-त्सकी अन्यान्य बातोंको और श्रीबुद्धिसागरजीको मूर्ख-मण्डलकी वृथा अनुचित ओपमा लगाके उन्होंकी खानगीकी पूछी हुई बातको (पीछा ही खानगीमें जबाब न देते हुए) प्रसिद्धमें लाकर अन्यायके रस्तेसें उन्होंकी अवहेलना करनेमें और श्रीखरतरगच्छवालोंके परमपूज्य प्रभावका-चार्यजी श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजका श्रीजिनाज्ञा मुजब अनेक शास्त्रोंके प्रमाणयुक्त सत्यवाक्यको पक्षपातके जोरमें अप्रमाण ठहरा कर श्रीखरतरगच्छवालोंके दिलमें पूरे पूरा रंज उत्पन्न करके-और दूसरे गुजराती भाषाके जिनमें भी—सर्व संघको, कान्फरन्सको, ग्रेजुएटोंको, वकी-लोंको, बैरिस्टरको, नास्तिकोपमा (नदियोंकी पेमी) वगै-रहको नामधाम नामधाम करके श्रीसंघमें आपसमें और

कोर्ट कचेरीमें बड़ेही भारी झगड़ेके कारण करनेका लेख लिखनेमें तथा प्रसिद्ध करानेमें तो छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी आपको खूब लम्बा चौड़ा समय भी मिल गया, और परस्पर आपसमें ईर्षाकी वृद्धि होनेका किञ्चित् भी भय न लगा परन्तु श्रीबुद्धिसागरजीके पत्रका जवाब खानगीमें लिखनेसें छठे महाशयजीको वृथा समय खोनेका तथा परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम करने का भय लगा, यह कैसी अलौकिक विद्वत्ताकी चातुराई (सज्जन पुरुषोंको आश्चर्य उत्पन्नकारक) छठे महाशयजी आपने गच्छ पक्षी दृष्टिरागी बालजीवोंको दिखाकर अपनी बातको जमाई सो आत्मार्थी विवेकी विद्वान् पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे।

और आगे फिर भी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (कितनेही समयसें गच्छ सम्बन्धी टंटा प्राय दबा हुआ है तपगच्छ खरतरगच्छ दोनोंही पक्ष प्रायः परस्पर संपसें मिले जुलेसें मालूम होते हैं) इस लेख पर भी मेरेको यही कहना उचित है कि गच्छ सम्बन्धी टंटा दबाकरके शान्त करनेका और संपसें वर्तनेका श्रीखरतरगच्छवालोंकी महान् सरलताका कारण है क्योंकि श्रीतपगच्छके तो आप जैसे अनेक महाशय संपके मूलमें अग्नी लगाके भी खरतरगच्छवालोंकी सत्य बातका निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषण करके अपनी मति कल्पनाकी मिथ्या बातका स्थापन करनेके लिये विशेष करके हर वर्षे गांम गांममें पर्युषणाके व्याख्यानाधिकारे श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा-नुसार अनेक शास्त्रोंके महत प्रमाण मुजब अधिक मासकी

गिनती अनादि स्वयं सिद्ध है जिसको खण्डन करके और श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महान् धुरन्धराचार्य्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छके भी पूर्वाचार्य्योंने श्रीवीर प्रभुके, छ कल्याणक अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक कहे हैं तथापि आप लोग श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी और अपने पूर्वजोंकी आशातनाका भय न करते उन्ही महाराजोंके विरुद्ध हो करके, छ कल्याणकका निषेध करते हो और श्रीखरतरगच्छवालोंके ऊपर मिथ्या कटाक्ष करते हुए अनेक बातोंका टंटा खड़ा करनेका कारण करनेवाले आप जैसे अनेक कटीबद्ध तैयार है और अपने संसार वृद्धिका भय नही रखते है इस बातको इसीही ग्रन्थको संपूर्ण पढ़नेवाले विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे और इसका विशेष विस्तार इसीही ग्रन्थके अन्तमें भी करनेमें आवेगा वहां श्रीखरतरगच्छवालोंकी कैसी सरलता है और श्रीतपगच्छवाले आप जैसोंकी कैसी वक्रता है जिसका भी अच्छी तरहसें निर्णय हो जावेंगा।

और आगे फिरभी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (उनमें–अर्थात्, तपगच्छके खरतरगच्छके आपसमें—फरक पड़नेसें कुछक दूये हुए जैनशासनके वैरियोंका जोर हो जानेका सम्भव है) इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना पड़ता है कि–छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी आप श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छके आपसमें विरोध बढ़ाकर संपको नष्ट करना नही चाहते हो और दोनुं गच्छको संपमें मिले जुलेमें रहनेकी जो आप अन्तर भावसें इच्छा रखते हो तबतो श्रीजिनाज्ञा मुजब अनेक महत शास्त्रोंके प्रमाण

पुन श्रीखरतरगच्छवालोंकी सत्य बातोंको प्रमाण करके अपनी कल्पित बातोंको छोड़ दो और श्रीखरतरगच्छवालों पर मिथ्या आक्षेप जो आपने उत्सूत्र भाषण करके करा है तथा श्रीबुद्धिसागरजी पर जो जो अन्यायसें अनुचित लेख लिखके जैनपत्रमें प्रसिद्ध करवाया है जिसकी क्षमा मांगकर उत्सूत्र भाषणका मिथ्या दुष्कृत दो और अपनी भूलको पिछोही जैन पत्रमें प्रगट करके शुद्धश्रद्धासें संप करके वर्तो तब दोनु गच्छके संप रखने सम्बन्धी आपका लिखना सत्य हो सकेगा परन्तु जब तक छठे महाशयजी आपके बिना विचारके करे हुए अनुचित कार्य्योंकी आप क्षमा नही मांगोगे और सत्य बातोंका ग्रहण भी नही करते हुए अपनी कल्पित बातोंके स्थापन करनेके लिये जो बातोंका प्रकरण चलता होवे उसीको छोड़के अन्यायके रस्तेसें अन्यान्य अनुचित बातोंको लिखके विशेष झगड़ा बढ़ाते रहोगे तब तो दोनु गच्छके संप रखने सम्बन्धी आपका लिखना प्रत्यक्ष मायाद्वत्तिका मिथ्या है और भोले जीवोंको दिखाने मात्रही है अथवा लिखने मात्रही है सो विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे और दोनु गच्छके आपसमें वादविवादके कारणसें हमे हुए जैनशासनके वैरियोंका जोर होनेसें मिथ्यात्व बढ़नेका छठे महाशयजी जो आपको भय लगता होवे तो आपनेही प्रथम जैनपत्रमें शास्त्रानुसार चलनेवालोंको मिथ्या दूषण लगाके उत्सूत्र भाषणसें झगड़ा खड़ा करा और पुनःपुनः (दीर्घकाल चलने रूप) जैन पत्रमें फैलाया है जिसको पिछोही अपने हाथमें मिथ्या दुष्कृतसें क्षमाके साथ अपनी भूलको जैन.

और न युद्धारम्भ करना चाहा है—तथापि श्रीवल्लभविजयजीनें मिथ्या लिखा यह बड़ाही अफसोस है परन्तु 'सतीको' भी—वेश्या अपने जैसी समझती है तद्वत् तैसेही छठे महाशयजीनें भी निर्दोषी श्रीबुद्धिसागरजीको दोषित ठहरानेके लिये अपने कृत्य मुजब सूर्पनखाके समानका तथा ढूंढियांका सरणा लेनेका और युद्धारम्भ करनेका मिथ्या आक्षेप करा मालूम होता है क्योंकि उपरके कृत्य छठे महाशयजीमेंही प्रत्यक्ष हैं सोही दिखाता हूं ;—

जैसे—सूर्पनखा दोनुं पक्षवालोंको दुःखदाई हुई तैसेही छठे महाशयजी (श्रीवल्लभविजयजी) भी दोनुं गच्छवालोंके आपसका संपको नष्ट करनेके लिये वाद विवादसें झगड़ेका मूल लगाके दोनुं गच्छवालोंको तथा अपने गुरुजनोंके नामको और अपने सम्प्रदायवालोंको भी दुःखदाई हुवे हैं इस लिये मेरेको भी इस ग्रन्थकी रचना करके आठों महाशयोंके उत्सूत्र भाषणके कुतर्कोंकी (शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक) समीक्षा करके मोक्षाभिलाषी सज्जनोंको सत्यासत्यका निर्णय दिखानेके लिये इतना परिश्रम करना पड़ा है सो इस ग्रन्थको पढ़नेवाले विवेकी मध्यस्थ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और छठे महाशयजी आप लोग अनेक बातोंमें ढूंढियोंका सरणा ले कर जगहांकाही अनुकरण करते हो जिसमेंसें थोड़ीसी बातें इस जगह दिखाता हूं ;—

१ प्रथम—श्रीजिनेश्वर भगवानकी प्रतिमाजीको मानने पूजनेका निषेध करनेके लिये ढूंढिये लोग अनेक प्रकारकी श्रीजिनमूर्त्तियोंकी निन्दा करते हुए अनेक कुतर्को करके भोले

पुकारते हो परन्तु अपनी मति कल्पनासे अनेक जगह शास्त्रोंके पाठोंका उलटा अर्थ करते हो और अनेक शास्त्रोंके पाठोंको तथा अर्थको भी लुपाते हो और शास्त्रोंके प्रमाण विना भी अनेक कल्पित बातों करके मिथ्यात्वमें फसते हो और भोले जीवोंको फसाते हो (इसका विशेष खुलासा आगे करनेमें आयेगा) इस लिये भी ढूंढियोंका सरणा आपही लेते हो।

४ चौथा–जैसे ढूंढिये लोगोंकी गांम गांममें वारम्वार श्रीजिन प्रतिमाजीकी और श्रीजैनाचार्य्योंकी निन्दा अवहेलना करनेकी आदत है जिससे अपने संसार वृद्धिका भय नही रखते हैं तैसेही आप लोगोंकी भी गांम गांममें श्रीपर्युषणापर्वका व्याख्यान वगैरहमें श्रीवीरप्रभुके छ (६) कल्याणककी और श्रीजिनेन्द्रभगवान् का तथा पूर्वाचार्य्योंका प्रमाण करा हुआ अधिक मासकी निन्दा अवहेलना करनेकी आदत है जिससे आप लोग भी उत्सूत्र भाषणका भय न करते हुए संसार वृद्धिसें कुछ भी डरते नही हो इस लिये भी ढूंढियोंका सरणा आपही लेते हो।

५ पाँचमा–जैसे ढूंढिये लोग चर्चा करो चर्चा करो ऐसा पुकारते हैं परन्तु चर्चाका समय आनेसें मुख छिपाते हैं और जो बातकी चर्चा करनेकी होवे जिसकी शास्त्रार्थसें न्यायपूर्वक चर्चा करनी छोड़कर अन्यायसें निष्प्रयोजनकी अन्य अन्य बातोंका झगड़ा खड़ा करके यावत् क्रोधका सरणा लेकर–रांड़ नपुती जैसी वृथा लड़ाई करके निन्दा ईर्षासे संसार वृद्धिका कारण करते है परन्तु शास्त्रोक्त चर्चा वार्त्ताकी रीतिमें एक भी बातके सत्यअसत्यका निर्णय करके

असत्यको छोड़कर सत्यको ग्रहण करनेकी इच्छाही नही रखते हैं तैसेही आप लोगोंके भी कृत्य है (इस बातका इस ग्रन्थके अन्तमें खुलासा करनेमें आवेगा) इस लिये ऊपरकी बातमें भी ढूंढियोंका सरणा आप लोगही लेते हो।

६ छट्ठा—जैसे कितनेही ढूंढिये लोग शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक श्रीजिनमूर्तिको मानने पूजने वगैरहकी सत्य बातोंको जानते हुए भी अपने मत कदा ग्रहकी झालमें फस करके इस लोककी मानता पुजनाके लिये अपने दृष्टि-रागी भक्तजनोंके आगे मिथ्यात्वके उदयमें सत्य बातोंका निषेध करके अपने अन्ध परम्पराकी उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित बातोंका स्थापन करके संसार वृद्धिका कार्य्य करते हैं तैसेही कितनीही बातोंमें आपके गुरुजी न्याया-म्भोनिधिजी (श्रीआत्मारामजी) नें भी किया है और आप लोग भी करते हो (जिसका खुलासा आगे करनेमें आता है) इस लिये भी ढूंढियोंका सरणा आप लोगही लेते हो।

७ सातमा—जैसे कितनेही ढूंढिये श्रीजैन तीर्थोंको छोड़के अन्य मतियोंके मिथ्यात्वी तीर्थोंमें जाते हैं तैसेही खास श्रीवल्लभविजयजीमें भी कराया अर्थात् घासीराम और जुगलराम इन दोनुं ढूंढक साधुयोने (श्रीजिनेश्वर भग-वान् तुल्य श्रीजिनमूर्त्तिकी तथा श्रीजैनशासनके प्रभाविक महान् उत्तम श्रीजैनाचार्य्योंकी) द्वेष बुद्धिसें वृथा निन्दा करनेका और शास्त्रोंके विरुद्ध होकरके उत्सूत्र भाषणका तथा अपनी मति कल्पना मुजब मिथ्या बातोंमें वर्त्तनेका मिथ्यात्वरूप ढूंढक मतका पाखण्डको संसार वृद्धिका कारण,

जानकर छोड़ दिया और शास्त्रानुसार सत्य बातोंको ग्रहण करनेकी इच्छासे श्रीवृद्धिविजयजीके पास जैन दीक्षा लेने को आये तब श्रीवृद्धिविजयजीने तथा उन्होंके दृष्टिरागी श्रावकोंने विचार किया कि--पामीराम और गुणठरायने ढूंढक मतके साधु भेषमें अनुचित कार्यों (अनुचित क्रियायों) में अपने शरीरको अपवित्र किया है इसलिये इन दोनुका शरीर प्रथम पवित्र कराके पीछे दीक्षा देनी चाहिये ऐसा विचार करके दोनुंको पवित्र करनेके लिये जैन तीर्थोंमें न भेजते हुए अन्य मतियोंके मिथ्यात्वी तीर्थ में काशी गङ्गाजी भेजकरके पवित्र कराये (इसका विशेष आगे लिखनेमें आवेगा) इसलिये भी ढूंढियोंका शरणा आपही लेते हो।

इत्यादि अनेक बातोंमें बडे महाशयजी आप लोगही ढूंढियोंका शरणा लेकर उन्होंकाही अनुकरण करते हो, तथापि आपने श्रीबुद्धिसागरजीको ढूंढियोंका शरण लेनेका लिखा है सो अनुचित लिखा है क्योंकि श्रीबुद्धिसागरजीने ढूंढियोंका शरणा लेनेका कोई भी काम नहीं करा है इसके पर भी आपके दिलमें यह होगा कि श्रीबुद्धिसागरजीने ढूंढियोंकी माफक यह दूसरी पर्युषणा इसलिये ढूंढियोंका शरणा लेनेका इसने लिखा है सो भी यह आपका लिखना सर्वथा अनुचित है क्योंकि ढूंढियोंने तथा तो प्रसिद्ध व्यवहार है कि कोई जानमें किसीके आदमीको एक पत्र भेजा जिसका जवाब नहीं आया तो दूसरे दिन वह दूसरा भी पत्र भेजते आता है दूसरा पत्रका भी जवाब नहीं आनेसे तीसरी

वेर उन्हों गांमका प्रतिष्ठित आदमी मारफत अथवा अपना कामदार गयेगी तथा ढूंढिया तो क्या परन्तु ब्राह्मण, वैष्णव, वगैरह हरेक जातिका हरेक धर्मवाला पुरुषकी मारफत उन्होंका निर्णय करनेमें आता है तैसेही श्रीबुद्धिसागरजीने भी किया अर्थात् दो पत्र आपको शास्त्रका प्रमाण पूछनेके लिये भेजे तथापि आपका कुछ भी जवाब नहीं आया तब तीसरी वेर प्रसिद्ध आदमी अथवा कामदारके मारफत, आपको भेजे हुए पूर्वोक्त पत्रोंका जवाब पुछाया उसमें शरणा लेनेका कदापि नहीं हो सकता है परन्तु आप लोग अनेक बातोंमें ढूंढियांका शरणा लेते हो सो ऊपरमेंही लिख आया हूं सो विचार लेना;—

और दोनुं गच्छवालोंके आपसमें वादविवाद तथा कोर्ट कचेरीमें झगडा टंटा रूप वृथा युद्ध करनेको तथा करानेको आपही तैयार हो सो तो आपके लेखसें प्रत्यक्ष दीखता है।

महाशयजी अब--किसकी मनः कामना पूर्ण न होनेमें किसीने ढूंढियांका शरणा लेकर युद्धारम्भ करना चाहा है और दुर्योधनकी तरह दोनुं पक्षको दुःखदाई भी कौन हुवा है सो ऊपरका लेखको तथा आगेका लेखको और इन्ही ग्रन्थको पढ़कर हृदयमें विवेक बुद्धि लाकर विचार कर लीजिये,—

और भी आगे छठे महाशयजी अपने और अपने गुरुजी न्यायाम्भोनिधिजीके उत्सूत्र भाषणके कृत्योंको तथा उन कृत्योंके फल विपाकोंको न देखते हुए श्रीबुद्धिसागरजी ने शास्त्रोंके पाठोंका प्रमाण सहित पत्र लिखकर पालणपुर

मिथ्यासी महता पीताम्बरदास हाथीभाईको भेजा था उस पत्रके शास्त्रोंके पाठोंको छोड़करके और मिथ्याही दो करके उस पत्रपर द्वेषबुद्धिसें छठे महाशयजीने वृथाही आक्षेप किया है और उसके साथ कितनीही निष्प्रयोजनकी बातें लिखी हैं उसीका जवाब आगे (छठे महाशयजीके दूसरे गुजराती भाषाके लेखका जवाब छपेगा) यहां लिखनेमें आवेंगा ;—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (बनारसमें प्रसिद्ध हुवा मुनि धर्म्मविजयजीके शिष्य मुनि विद्याविजयजीका, पर्युषणा विचार नामा लेख देख लेना) इसपर भी मेरेको प्रथम इतनाही कहना है कि तीसरे महाशयजी श्रीविनयविजयजीने श्रीसुखबोधिका वृत्तिमें पर्युषणा सम्बन्धी प्रथम अपने लिखे वाक्यार्थको छोड़ करके गच्छ कदाग्रहकी हठवादमें उत्सूत्र भाषणका भय न करके अनेक कुतर्कों करी है (जिनका निर्णय इसीही ग्रन्थके पृ॰ ८ से १५७ तक उपरमेंही छप चुका है) उन्ही कुतर्कोंको देखके नामसें महाशयजी श्रीधर्म्मविजयजी तथा उन्हके शिष्य विद्याविजयजी भी कदाग्रहकी परम्परासें बहुत उत्सूत्र भाषणरूपी कुतर्कोंका संग्रह करके, शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायके विरुद्ध होकरके अधूरे अधूरे पाठ लिखकरके भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये अपना मिथ्या प्रयास करा है (इसका जवाब आगे छपेगा) तथा उन्होंही गुजराती भाषामें छिन्न पत्रादिकोंसें आत्मा संसार बढ़ानेके लिये भारी [illegible] प्रकट करा है और पूर्वोक्त उत्सूत्र भाषणकी [illegible] छठे महाशयजी [illegible]

करके उसी तरहके उत्सूत्र भाषणके कलमाप्त करनेके लिये आप भी उसीमें फसे, हाय अफसोस–गच्छ कदाग्रहके वश होकरके अपना पक्ष जमानेके लिये सत्य असत्यका निर्णय किये बिना अपनी मतिकल्पनासे इतने विद्वान् कहलाते भी स्वच्छन्दाचारीमें लिखते कुछ भी विचार नहीं किया यह तो इस कलियुगकाही प्रभाव है,—

और दूसरा यह है कि न्याय अन्यायको न देखने वाले तथा दृष्टिरागके झूठे पक्षग्राही और कदाग्रहके कार्य्यमें आगेवान ऐसे श्रीकलकत्तानिवासी श्रीतपगच्छके लक्ष्मीचंदजी सीपाणीको पालणपुरसे श्रीवल्लभविजयजीकी तरफका पत्र आया था उसी पत्रमें ६-७ जगह मिथ्या बातें लिखी है उसी पत्रके अक्षर अक्षरका उतारा, मेरे (इस ग्रन्थकारके) पास है उसी उतारेकी नकलको यहाँ लिखकर उसीकी समीक्षा करनेका मेरा पूरा इरादा था परन्तु विस्तारके कारणसे सब न लिखते नमुनारूप एक बात लिख दिखाता हूं—

छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी लक्ष्मीचन्दजी सीपाणीको लिखते हैं कि [बनारससे पर्युषणा विचार नामा ट्रेकट निकला है उसीकाही भाषान्तर छापेवालेने छापा है इसमें हमारा कोई मतलब नहीं है ना हम इस ट्रेकको मन वचन काया करके अच्छी समझते हैं] इस जगह सज्जन पुरुषोंको विचार करना चाहिये कि सीपाणीजीके पत्रमें पर्युषणा विचारको तथा उसीका भाषान्तर छापेवालेनें छापेमें प्रसिद्ध करा है उसीको छठे महाशयजी मन, वचन, कायासें अच्छा नहीं समझते हैं

सो फिर उसी बातको पाने पर्युषणा विचारको दे लेनेका लिए करके उसीको छापामें पुष्ट किया, यह तो प्रत्यक्ष मायावृत्तिका कारण है इसलिये जो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य छठे महाशयजी सत्य मानेंगे तो छापेमें पर्युषणा विचारको पुष्ट करनेका जो वाक्य लिखा है सो वृथा हो जायेगा और छापेका वाक्य सत्य मानेंगे तो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य मिथ्या हो जायेगा और पूर्वापर विरोधी विसंवादी दोनु तरहके वाक्य कदापि सत्य नही हो सकते हैं इसलिये दोनुमेंसे एक सत्य और दूसरा मिथ्या मानना ही प्रसिद्ध न्यायकी बात है, जिससे सीपाणीजीके पत्रका वाक्यको सत्य मानोंगे तो छापेका लेख विसंवादीरूप मिथ्या होनेकी आलोचना छठे महाशयजी आपको लेनी पड़ेगी और छापेका वाक्यको सत्य मानोंगे तो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य विसंवादीरूप मिथ्या होनेकी आलोचना लेनी पड़ेगी और पर्युषणा विचारमें उत्सूत्र वाक्य लिखे हैं उसीके अनुमोदनके फलाधिकारी होना पड़ेगा सो विवेक बुद्धि हो तो अच्छी तरह विचार लेना ;—

और छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके तमरद्वारका इस लेखमें तथा मानवधर्म मासपत्रका दूसरा गुजराती भाषाका लेखमें और सीपाणिजीके पत्रका लेखमें इन तीनों लेखोंका वाक्यमें कितनीही जगह मायावृत्ति (कपट) का संग्रह है इनमें श्रीवल्लभविजयजीको कपट विशेष प्रिय मालूम होता है और जहाँ चन्द्रोदय की पुस्तकमें भी श्रीवल्लभविजयजीको 'दम्भप्रिय' लिखा है सोही बात अपने कृत्योंमें सत्य कर दिखाया है,—

और इसके आगे दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजीने अपने लेखके अन्तमें जो लिखा है उसीको यहां लिखके (पीछे उसीकी समीक्षा कर) दिखाता हूं ;—

[बुद्धिसागर मुनिजी ! याद रखना वो प्रमाण माना जावेगा, जो कि-तुम्हारे गच्छके आचार्योंमें पहिलेका होगा मगर तुम्हारेही गच्छके आचार्यका लेख प्रमाण न किया जायगा ! जैसा कि तुमने श्रीजिनपति सूरिजीकी समाचारीका पाठ लिखा है कि, दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें पर्युषणापर्व-सांवत्सरिक कृत्य करना ! क्योंकि, यही तो विवादास्पद है कि, श्रीजिनपतिसूरिजीने समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकम जारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजिब किया है हां यदि ऐसा खुलासा पाठ पञ्चाङ्गीमें आप कहीं भी दिखा देवें कि, दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें—सांवत्सरिक प्रतिक्रमण, केशलुञ्चन, अष्टमतपः, चैत्यपरिपाटी, और सर्वसंघके साथ क्षामणारूप पर्युषणा वार्षिक पर्व करना, तो हम माननेको तैयार है !]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि-हे सज्जन पुरुषों छठे महाशयजी दम्भप्रियजीके अन्तरमें कपट भरा हुवा होनेसें ऊपरका लेख भी कपटयुक्त लिखा है क्योंकि (बुद्धिसागर मुनिजी याद रखना वो प्रमाण माना जावेगा जो कि तुम्हारे गच्छके आचार्योंमें पहिले का होगा) यह अक्षर छठे महाशयजीके मायावृत्तिसें दृष्टिरागी भोले जीवोंको दिखाने मात्रही है मतु प्रमाण

करनेके लिये यदि ऊपरके अक्षर प्रमाण करनेके लिये होवे तो–अधिक मासकी गिनती, तथा पचास(५०) दिने पर्युषणा और श्रीवीरप्रभुके छ (६) कल्याणक, सामयिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही वगैरह अनेक बातें श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने और पूर्वधरादि श्रीजै-शासनके प्रभाविक पूर्वाचार्य्योंने पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रो प्रगटपने खुलासेके साथ कही है जिस पर छठे महाशयं की श्रद्धा नही जिससें प्रमाण नही करते हुए उलटा निषे करके उत्सूत्र भाषणसें संसार वृद्धिका भय नही रखते हैं।

यहीही आश्चर्यकी बात है कि श्रीतीर्थंकर गणधरा महाराजोंकी तथा पूर्वाचार्य्योंकी कथन करी हुई अने बातें प्रमाण न करते हुए उत्सूत्र भाषणरूप अपनी मति कल्प मानें चाहे वैसा वर्त्ताव करना और पूर्वाचार्य्यों का प्रमाण मंजूर करनेका दिखाकर आप भले बनना यह तो प्रत्यक्ष मायावृत्तिसें छठे महाशयजीने अपने दम्भप्रिये नामको सार्थक करके विशेष पुष्ट करनेके सिवाय और क्या लाभ उठाया होगा सो इन्हीं ग्रन्थको पढ़नेवाले सज्जन पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ;–

और आगे फिर भी दम्भप्रियेजीने लिखा है कि (तुम्हारेही गच्छके आचार्य्योंका लेख प्रमाण न किया जावेगा) यह लिखना छठे महाशयजी दम्भप्रियेजीको श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आशातना कारक पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंका उत्थापनरूप मिथ्यात्वको बढ़ाने वाला संसार वृद्धिका कारणभूत है क्योंकि–

१ प्रथमतो श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी कथ

परानुसार पट्टावलीके अनेक प्रमाणयुक्त श्रीखरतरगच्छके बुद्धि निधान प्रभाविकाचार्य्योंने अनेक शास्त्रोंकी रचना भव्य जीवोंके उपगारके लिये करी है जिसको न माननेवाले न्यायरत्नजी जैसे प्रत्यक्ष श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातना करनेवाले पट्टावलीके अनेक शास्त्रोंके उत्थापक अट्टारहित जैनाभास मिथ्यात्वी बनते हैं इस बातको विशेष सज्जन पुरुष अपनी बुद्धिसें स्वयं विचार लेवेंगे,—

२ दूसरा यह है कि--श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध करनेवाले श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजकृत श्रीअष्टकजी सूत्रकी वृत्ति तथा श्रीपञ्चलिङ्गी प्रकरण मूल और तद्वृत्ति श्रीखरतरगच्छ के श्रीजिनपति सूरीजी कृत और श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध बुद्धिनिधान महान् प्रभाविक श्रीमदभयदेवसूरिजी महाराजनें श्रीनवाङ्गी वृत्ति उपरान्त श्रीसवाइजी श्रीपञ्चाशक जी श्रीषोड़षकजी वगैरहकी अनेक वृत्ति और प्रकरणस्तोत्रादि बहुतही शास्त्रोंकी रचना करी है तथा और भी श्रीखरतरगच्छके अनेक आचार्य्योंने सैकड़ो शास्त्रोंकी रचना करी है जिन्हकोमानते हैं व्याख्यानमें वांचते हैं तथापि न्यायरत्नजी (तुम्हारे गच्छके आचार्यका लेख प्रमाण न किया जायँगा) ऐसा लिखते हैं सो कितनी मायावृत्तिसें अन्याय कारक है इसको भी निष्पक्षपाती सज्जन स्वयं विचार सकते हैं ;—

और श्रीजिनेश्वर सूरिजीसें निश्चय करके श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध हुवा है इसलिये श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्रीमदभयदेव सूरिजी भी श्रीखरतरगच्छमें हुवे हैं तथापि श्रीजिनवल्लभ सूरजीसें अथवा श्रीजिनदत्त सूरिजीसें १२०४ में खरतर हुवा

ऐसा कहते हैं सो मिथ्यावादी है इसका विशेष विस्तार शास्त्रोंके प्रमाण सहित इस ग्रन्थके अन्तमें करनेमें आवेगा,-

३ तीसरा यह है कि-खास दम्भप्रियेजीके गुरुजी श्री-न्यायाम्भोनिधिजीनें चतुर्थ स्तुतिनिर्णयः पुस्तकमें श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेव सूरिजी श्रीजिनवल्लभ सूरिजी श्री जिनपतिसूरिजी वगैरह आचार्य्योंकी समाचारियोंके पाठ लिखे हैं और श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यका वचनको नही माननेवालोंको पृष्ठ ८८ के मध्यमें मिथ्यात्वी ठहराये हैं (इसका खुलासा इन्ही ग्रन्थके पृष्ठ १५९। १६० में छपगया है) और दम्भप्रियेजी श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यजीका लेख प्रमाण नही करके अपने गुरुजीके लेखसें ही आप मिथ्यात्वी बनते हैं सो भी बड़ीही आश्चर्य्यकी बात है ;—

४ चौथा यह है कि-दम्भप्रियेजी श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यजीका लेख प्रमाण नही करते हैं इसको देखके और भी कितनेही अज्ञानी तथा गच्छ कदाग्रही अपने अपने गच्छके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण मान करके और सब गच्छवालोंके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण नही मानेंगे जिस में श्रीजिनवाणीरूपी पञ्चाङ्गीके सैकड़ो शास्त्रोंका उत्थापन होगा और अपनी अपनी मतिकल्पना करके चाहे जैसा वर्ताव करना शरू करेंगे तो श्रीजिनेश्वर भगवान्की अति उत्तम, अविसंवादी, श्रीजैनशासनकी अखण्डित मर्य्यादा भी नही रहेगी और कदाग्रही लोग अपने अपने पक्षका आग्रह में बन्धके मिथ्यात्व बढ़ाते हुवे संसार वृद्धि करेंगे जिनके दोषाधिकारी दम्भप्रियेजी वगैरह होवेंगे और आप दूसरे गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण नहीं करेंगे तो दूसरे गच्छवाले

मानके गच्छके आचार्य्योंका लेख प्रमाण नहीं करेंगे जिससे भी वृथा वाद विवादसें मिथ्यात्व बढ़ता रहेगा और सत्य असत्यका निर्णय भी नहीं हो सकेगा और इन्साप्रियजी अनेक गच्छोंके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण करते हैं परन्तु श्रीखरतरगच्छके आचार्य्योंका लेख प्रमाण नहीं करते हैं यह भी तो प्रत्यक्ष अन्यायकारक हठवादका लक्षण है इसलिये इन्साप्रियेजी वगैरह महाशयोंसें मेरा यही कहना है कि-

श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी परम्परा मुजब, पञ्चाङ्गीके प्रमाण पूर्वक कालानुसार, न्यायकी युक्ति करके सहित श्रीखरतरगच्छके आचार्य्योंका तो क्या परन्तु सब गच्छके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण करना सोही आत्मार्थी मोक्षाभिलाषी सज्जनोंको परम उचित है।

ऐसेही इस ग्रन्थकारने भी श्रीतपगच्छके श्रीधर्म्मसागर जी तथा श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनों महाशयोंके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक लिखित पाठोंको इसीही ग्रन्थके आदिका भागमें पृष्ठ ९। १०। ११ में लिखे हैं और उसीका भावार्थः भी पृष्ठ १२ सें १५ तक लिखके उसीका तात्पर्य्यको पृष्ठ १६ में प्रमाण किया है (और इन तीनों महाशयोंनें प्रथम अपने लिखे वाक्यार्थको छोड़के गच्छ कदाग्रहका मिथ्या पक्षको स्थापन करनेके लिये उत्सू[illegible] भाषणरूप अनेक बातें लिखी हैं जिसकी समीक्षा भी[illegible] शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ६८ सें १७० त[illegible] उपरमें छप गई है) और भी श्रीतपगच्छके अनेक आचार्[illegible] के लेख प्रमाण करनेमें आते हैं तैसे इस ग्रन्थकारनें श्रीत[illegible] गच्छके आचार्य्योंके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक लेखो[illegible]

प्रमाण किये हैं—तैसेही छठे महाशयजी आप भी श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी वाणीरूप पञ्चाङ्गीको श्रद्धापूर्वक प्रमाण करनेवाले आत्मार्थी मोक्षाभिलाषी होवोंगे तो श्रीखरतरगच्छके आचार्य्योंके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक लेखों को अवश्यही प्रमाण करके अपने मिथ्या हठवादको जलदी ही छोड़ देवोंगे तो ऊपर कहे सो दूषणोंका बचाव होनेसे बहुत लाभका कारण होगा आगे इच्छा आपकी ;—

और आगे फिर भी दम्भप्रियेजीने लिखा है कि (तुमने श्रीजिनपति सूरिजीकी समाचारीका पाठ लिखा है कि दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें पर्युषणापर्व—सांवत्सरिक कृत्य करना) यह लिखना भी छठे महाशयजी आपका कपटयुक्त है क्योंकि श्रीबुद्धिसागरजीनें पूर्वधरादि महाराजकृत तीन शास्त्रोंके पाठ लिखके भेजे थे जिसमेंके पूर्वधराचार्य्यजी महाराजके मूलसूत्रके तथा चूर्णिके दोनुं पाठोंको छुपाते हो सोही छठे महाशयजी आपका कपट है इसलिये में इस जगह प्रथम आपका कपटको खोलकरके पाठक वर्गको दिखाता हूं—

१ प्रथम श्रीचौदह पूर्वधर श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठ लिखा था उसी पाठमें आषाढ़ चौमासीसें एकमास और वीशदिने पर्युषणा करना कहा है श्रावण अथवा भाद्रपदका नियम नही कहा है परन्तु ५० दिनका नियम है सोही दिनोंकी गिनतीसें ५० दिने पर्युषणा करना चाहिये श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठ भावार्थ सहित इसीही ग्रन्थके आदिमें पृष्ठ ४।५।६में छप गया है सोही पाठ इस वर्त्तमान कालमें आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य है ;

२ दूसरा श्रीपूर्वधर पूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीवृहत्कल्प-चूर्णिका पाठ लिख भेजा था सोही श्रीवृहत्कल्पचूर्णिके तीसरे उद्देशाके पत्र २६४ से २६५ तकका पर्युषणा सम्बन्धी पाठको यहां लिख दिखाता हूं तथाच तत्पाठः—

इदाणि जंमि काले वासावासं ठाइतव्वं, जच्चिरं वा जाए वा विहीए तं भण्णति, आसाढ़ गाथा वाहिं ठिया वासा, वुड्ढावासेण जाव आसाढ़पुण्णिमाए चेव पज्जोसवेंति, असति खेत्तस्स वाहिं ठाइत्ता, वसभा खेत्तं अतिगन्तुं वासावास-जोग्गाणि, संथारग खेलमल्लगादीणि गिण्हन्ति, काइयउच्चा-रणा भूमिओ बंधन्ति, ताहे आसाढ़पुण्णिमाए अतिगन्तुं,पञ्चहिं दिवसेहिं पज्जोसवणा कप्पं कथित्ता, सावणबहुलपंचमीए पज्जोसवेंति पज्जोसवित्ता, उक्कोसेणं मग्गसिर-बहुलदसमीओ जाव, तत्थ अत्थितव्वं, किंकारणं चिक्खिल्लकालं वसति अतिचिक्खल्लो वासं वा पडति, तेण इच्चिरं इयरा कत्तियपुण्णिमाए चेव णिग्गन्तव्वं, एत्थतु गाथा अहिगरण पज्जोसवेइ इत्यर्थः॥ अणभिग्गहितं णाम, गिहत्था जति पुच्छन्ति, ठितत्थ वासावासं एवं, पुच्छितेहिं, भणियव्वं, ण ताव ठामो केचिरंकालं एवं, वीससितरायं वा मासं, कथं जति अधिमासतो पडितो तो वीससितरायं, गिहिणातं कज्जति, किंकारणं, एत्थ अधिमासओ चेव मासो गणि कज्जति, सो वीसाए समं, वीससतिराती भवति चेव, अध पडितो अधिमास तो वीससतिरातं मासं, गिहिणातं कज्जति, किं पुण एवं उच्यते । असिवादि गाथाद्धं, असि दीणि कारणाणि जाताणि, अथवा ण णिरातं वासं आ ताधे लोगो चिंतेज्जा अणावुठित्ति तेण धण्ण संगहे कर

असंपरं ताणं णिग्गमणं दो तेहियमणियं ठियामोत्ति, लोगो भणेज्जा पुत्तिक्षयंपि एते ण याणन्ति एवं मणोवघातो भवति, ठियामोतिय भणि ते लोगो जाणंते अवस्स वरिसइ ताधे लोगो धरछंदेण हलकुलि करेंति, तम्हा सवीसति राते मासे अभिग्रहीतं गृहीज्ञात स्यर्यः। एत्यउगाधा एत्येति, आसाढ चउम्मासिए पडि पञ्चेहिं पञ्चेहिं दिवसेहिं गतेहिं, तत्थ तत्थ आसा योग्गं सेत्तं पडिपुसं तत्थ तत्थ पज्जोसवे यव्वं, जाव सवी रातो मासो, उस्सग्गेण पुण आसाढ़सुद्धदसमि पच्चइ, सत्तरी गाधा, एवं सत्तरी भवति, सवीसति राते मासे प सवेत्ता, कत्तिय पुण्णिमाए पडिकमित्ता, बितिमदिवसे णि याणं, पञ्चसत्तरी भद्दवयअमावसाए पज्जोसवेत भद्दवयबहुलदसमीए असीति, भद्दवयबहुलपञ्चमीए पञ्चासी सावणपुण्णिमाए णउत्ति, सावणसुद्धदसमीए पञ्चणउत्ति, सा सुद्धपञ्चमीए सतं, सावण अमावसाए पंचुत्तरं सयं, सा बहुलदसमीए दसुत्तरं सतं, सावणबहुलपञ्चमीए पणरसु सतं, आसाढ़पुण्णिमाए वीसुत्तरं सतं, कारणे पुण छम्मासि जेठोत्ति उक्कोसो उग्गहो भवन्ति, कथं जति वा पच्चइ व्याख्या, कत्तिएण गाथा उवट्ठिए, आसाढ मासकप्पाए वासावासपाउग्ग सेत्तासती, तत्थेव वासो कातव्वो, पञ्च दिवसेहिं पज्जोसवणा कप्पं कथिता, चाउम्मासिए पज्जोसवेंति, तं पुण इमेण कारणेण मग्गसिरे अतिक्क जति वासति पच्चइं आलम्बणं मासं पडेति, चिक्क आसाढे वासा रत्तिया चत्तारि मग्गसिरोय एते छम्मासिय जेट्ठोग्गहो, पव्वाणेहिं पवत्तेहिंपि णिग्गतव्वं।

देखिये ऊपरके पाठमें पर्युषणाधिकारे चेव निश्चय करके अधिकमासको गिनतीमें कहा है और पूर्वधरादि पदविहारी महानुभावोंके लिये निवासरूप पर्युषणा (योग्यक्षेत्र तथा उपयोगी वस्तुओंका योग होनेसे) उत्सर्गसे आषाढ़पुर्णिमाकोही करनी कही परन्तु योग्यक्षेत्रादिके अभावसे अपवादसे पांच पांच दिनकी वृद्धि करते अभि-वर्द्धित संवत्सरमें वीश दिन (श्रावण शुक्लपञ्चमी) तक तथा चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिन (भाद्रपदशुक्लपञ्चमी) तक पर्यु-षणा करनी कही-आषाढ़पुर्णिमाको तथा पांच पांच दिन की वृद्धिकी पर्युषणाको अधिकरणदोषोंकी उत्पत्ति न होनेके कारण गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई अज्ञात पर्यु-षणा कही है इसका विशेष खुलासा इन्ही ग्रन्थमें अनेक जगह छपगया है और वीशदिने तथा पचास दिने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई ज्ञातपर्युषणा कही उसीमें वार्षिक कृत्य वगैरह करनेमें आतेथे इसकाभी खुलासा इन्ही ग्रन्थमें अनेक जगह छप गया है जिसमें भी विशेष विस्तार-पूर्वक पृष्ठ १०१ सें ११२ तक अच्छी तरहसें निर्णय करनेमें आया है । और मासवृद्धिके अभावसे पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक ७० दिन रहते हैं तैसेही मासवृद्धि होनेसें पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन रहते हैं इसका भी विस्तार अनेक जगह छपगया है जिसमें भी विशेष करके पृष्ठ १२१ से १२९ तक और १३४ सें १४१ तक अच्छी तरहसें निर्णयके साथ छपगया है और उत्कृष्टसें १८० दिन का कल्प कहा है ;—

और तीसरा, श्रीजिनपतिसूरिजी कृत, श्रीसमाचारी ग्रन्थकापाठलिखतेआपाको ही पाठ यहां दिखाताहूं यथा :—

- मासणे भद्दवएवा, अहिगमासे चाउमासीओ ॥ पसा
इमे दिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे, इति—

भावार्थः—श्रावण और भाद्रपद मास अधिक होतो भी आषाढ़ चौमासीसें पचासमें दिन पर्युषणा करना चाहिये परन्तु असीमें दिन नहीं करना । इस जगह सज्जन पुरुषोंको विचार करना चाहिये कि उपरोक्त तीनों शास्त्रोंके पाठ आगमानुसार तथा युक्ति पूर्वक होनेसें छठे महाशयजीको प्रमाण करने योग्य थे तथापि गच्छका पक्षपातके और पण्डिताभिमानके ज़ोरसें उपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंको प्रमाण न करते हुवे श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठको तथा श्रीवृहत्कल्प चूर्णिके पाठको छुपाकरके मायावृत्तिसें श्रीजिनपति सूरिजी की समाचारीके पाठ पर अपने विद्वत्ताकी चातुराई दिखाई है कि (यही तो विवादास्पद है कि श्रीजिनपति सूरिजीने समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकमजारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजिब किया है) छठे महाशयजीके इस लेख पर मेरेको बड़ाही आश्चर्य सहित खेदके साथ लिखना पड़ता है कि श्रीवल्लभविजयजीको अनुमान २२। २३ वर्ष दीक्षा लिये हुए है तथा कुछ व्याकरणादि भी पढ़े हुए सुनते हैं परन्तु इस जगह तो श्रीवल्लभविजयजीने अपनी ख़ूब अज्ञता प्रगट करी हैं क्योंकि श्रीनिशीथसूत्रके लघु भाष्यमें, १ तथा वृहद्भाष्यमें २ और चूर्णिमें ३ श्रीवृहत्कल्पसूत्रके लघु भाष्यमें ४ तथा वृहद्भाष्यमें ५ और चूर्णिमें ६ श्रीदशाश्रुत-स्कन्धसूत्रमें ७ तथा चूर्णिमें ८ श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ९ तथा तद्वृत्तिमें १० और श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिमें ११ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें कहा है कि पचास दिने अवश्यही पर्युषणा

करनी चाहिये। तथापि पर्युषणा करने योग्यस्थान नही मिले तो विजन (जङ्गल) में भी वृक्ष नीचे पचास में दिन जरूर पर्युषणा करनी परन्तु पचासमें दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन नही करना यह बात तो प्रसिद्ध है इसीके सम्बन्धमें इन्ही ग्रन्थके आदिमें श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी चूर्णिका पाठ पृष्ठ १८।१९ में और श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठ पृष्ठ २१ में २४ तक, और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी चूर्णिका पाठ पृष्ठ ८१ में ८४ तक, और श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिका पाठ पृष्ठ ८५ में ८८ तक, तथा तद्भावार्थ पृष्ठ १०० में १०४ तक छप गया है,—

उपरोक्त शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसे पांच पांच दिनोंकी वृद्धि करते (दशवें पञ्चकमें) पचासवें दिने प्रसिद्ध पर्युषणा मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें करनी कही है और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें पांच पांच दिनोंकी वृद्धि करते (चौथे पञ्चकमें) बीशवें दिने प्रसिद्ध पर्युषणा कही सो प्राचीनकालाश्रय पूर्वधरादि सपविहारी महाराजोंके लिये श्रीजैनज्योतिषके पञ्चाङ्ग मुजब वर्त्तनेके सम्बन्धमें कही परन्तु अभी इस वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्ग के अभावसे और पहले कालके वारणसे ऊपरका व्यवहार श्रीसङ्घकी आज्ञासे विच्छेद हुवा है सोही दिखाता हूं।

श्रीतीर्थोगालिय (तीर्थोद्गार) पयन्नामें कहा है-यथा ;-

बीसदिणेहिं कप्पो, पंचगहाणीय कप्पठवणाय,

नवसय तेणउएहिं, वुच्छिन्ना संघआणाए ॥ १ ॥

देखिये ऊपरकी गाथामें बीश दिनका कल्प, तथा पांच पांच दिनकी वृद्धि करके कल्पस्थापनाका करना सो विच्छेद होगया श्रीवीरप्रभुसे ९९३ वर्षे संघकी आज्ञासे तथा श्रीवृहत्कल्पवृत्ति, श्रीदशाश्रुतचूर्णि,

श्रीनिशीथचूर्णि,श्रीवृहत्कल्पचूर्णिके, पाठ खुलासापूर्वक छप गये हैं सोही पंचकपरिहानीका कल्प, और कल्प स्थापना याने–योग्य क्षेत्रके अभावसें पांच पांच दिनकी वृद्धिसें अज्ञातपर्युषणा स्थापन करे उसी रात्रिको वहां श्रीकल्पसूत्र के पठन करनेका कल्प, यह तीनों बातें वीर संम्वत् ९९३ (विक्रम संम्वत् ५२३) में श्रीसंघकी आज्ञासें विच्छेद हुवे। तब चन्द्रसंवत्सरमें और अभिवर्द्धितसंवत्सरमें भी आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने पर्युषणा करनेके कल्पकी मर्यादा रही तथा पचासवें दिनही श्रीकल्पसूत्रके पठन करनेके कल्पकी मर्यादा भी रही और उसी वर्षे श्रीमान् परम उपगारी श्रीदेवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणजी महाराजने श्रीजैन-शास्त्रोंको पुस्तका रूढमें किये उसी समय श्रीदशाश्रुत-स्कन्धसूत्रके आठमें अध्ययनको लिखती वखत, जिन चरित्र तथा स्थिरावली और साधुसमाचारीका संग्रह करके आठवा अध्ययनको संपूर्ण किया तब पांच पांच दिनकी वृद्धिसें अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें चार पक्षक वीश दिनका तथा चन्द्र-सम्वत्सरमें दशपच्चककका (कल्प) व्यवहारको न लिखा और चन्द्रसं० अभिवर्द्धितसं० इन दोनु सम्वत्सरोंमें ५० दिनका एकही नियम होनेसे पचास दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है यह श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रका आठवा अध्ययन सोश्रीकल्पसूत्रजीके नामसें जूदा भी प्रसिद्ध है उसी श्री-कल्पसूत्रका पर्युषणा सम्बन्धी पाठ शब्दार्थ सहित इसही ग्रन्थकी आदिमें पृष्ठ ४।५।६ तक छप चुका है सोही पाठार्थ मूजब ही तरह प्रकाश करता है कि इस वर्त्तमानकालमें आ-षाढ़ चौमासीसें पचास दिन वहां पूरे होवे मर्यादा पर्यु-

पणा करनी चाहिये इसीही श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठादिके अनुसार श्रीजिनपतिसूरीजीने समाचारीमें लिखाहै कि-अधिक मास हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करना परन्तु असी दिने नही करना चाहिये-इस लेखको देखके छठे महाशयजी लिखते हैं कि (यहीतो विवादास्पद है श्रीजिन पति सूरिजीने समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकम जारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजब किया है) इस पर मेरेको इतनाही कहना है कि श्रीकल्पसूत्रके पर्युषणा सम्बन्धी साधुसमाचारीका मूलपाठ इसी ग्रन्थके पृष्ठ ४।५में छपा है उसी मूलपाठके अनेक दफों मुजब श्रीजिनपति सूरिजीने समाचारीमें पूर्वोक्त हुकम जारी किया है सो श्रीजैन आगमानुसार है इसका निर्णय ऊपरमेंही कर दिखाया हैं इसलिये छठे महाशयजी आपको श्रीजिनपति सूरिजीके वाक्यमें जो शङ्कारूपी मिथ्यात्वका भ्रम पड़ा है सो उपरका लेखको पढ़के निकालदो और मिथ्या पक्षको छोड़कर सत्य बातको ग्रहण करके, निःसन्देहरूपी सम्यक्त्व रत्नको प्राप्तकरो क्योंकि आपके विवादास्पदका निर्णय ऊपरमेही होगया है। और पृष्ठ १५३ से १६५ तक भी पहिले छपगया है।

बड़ेही आश्चर्यकी बात है कि-श्रीवल्लभविजयजीको २२।२३ वर्ष दीक्षा लिये हुये और हर वर्षे गांम गांममें श्रीपर्युषणापर्वके व्याख्यानमें खुलासा पूर्वक व्याख्या सहित बंचाता हुवा श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठका तथा मूलपाठके व्याख्या का अर्थ भी उन्हको समझमें नही आया होगा इसलिये ५० दिने पर्युषणा करनेका श्रीजिनपति सूरिजीका लेख पर शङ्का करी इससे मालूम होता है कि पर्युषणा सम्बन्धी

श्रीकल्पसूत्रके पाठसें तथा तद्पाठकी व्याख्यासें आप भ्रष्ट होवेंगे, अथवा तो भोले जीवोंको गच्छ कदाग्रहका भ्रममें गेरनेके लिये जानते हुये भी तीसरे अभिनिवेश मिथ्यात्वके आधिन हो करके मायावृत्तिसें लिखा होगा सो विवेकी विद्वान् स्वयं विचार लेवेंगे :—

और आगे छठे महाशयजी दम्भप्रियजीनें फिरभी लिखा है कि (हाँ यदि ऐसा खुलासा पाठ पञ्चाङ्गीमें आप कहीं भी दिखा देवें कि दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावण में और दो भाद्रपद होवें तो पहिले भाद्रपदमें सांवत्सरिक प्रतिक्रमण, केश लुञ्चन, अष्टमतपः, चैत्यपरिपाटी, और सर्व सङ्घके साथ खामणारूप पर्युषणा वार्षिकपर्व करना तो हम माननेको तैयार है)

श्रीवल्लभविजयजीके इस लेखपर मेरेको प्रथमतो इतना ही कहना है कि ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालोंको आपने आज्ञा भंगका दूषण लगाया तब श्रीबुद्धिसागरजीनें आपको पत्र द्वारा पूछा कि कौनसे शास्त्रोंके पाठ मुजब ५० दिने पर्युषणा करनेवालोंको आपने आज्ञा भङ्गका दूषण लगाया है सो बताओ इस तरहसें शास्त्रका प्रमाण पूछा जिसीको आप शास्त्रका प्रमाणतो बता सके नहीं तब पहिलातो अभिमानके जोरकी मायावृत्तिसें लिखती बख्त अन्य अन्य बातें लिखके समाप्त करदीनी हैं शास्त्रका प्रमाण पूछने लगे सो वल्लभविजयजी यह आपका पूछना अन्यायकारक है क्योंकि प्रथम आपने ही आज्ञा भंगका दूषण लगाया है इसलिये प्रथम आपको ही शास्त्रका प्रमाण बतलाना न्यायपूर्वक उचित है नतु अन्यको। अब तक आप

योंमें, पूजता मानताके लिये पण्डिताभिमानके जोरसें उत्सूत्रभाषणसें संसार वृद्धिका भय न करते बालजीवोंको कदाग्रहमें गेरके मिथ्यात्वको बढानेवाले आप हो सोतो श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्यको जाननेवाले विवेकी सज्जन अवश्यही मानेंगें यह तो प्रसिद्धही न्यायकी बात है;—

तीसरा यह है कि दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा पर्व करने संबन्धी पञ्चाङ्गीका पाठ पूछके मानने को छठे महाशयजी आप तैयार हुए हो परन्तु अपनी तरफसें पंचांगीका पाठ बता सकते नहीं हो इसमें यह भी सिद्ध होगया कि इस वर्तमान कालमें दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसें पर्युषणापर्व कबकरना जिसकी आपको अबीतक शास्त्रोंके प्रमाण मुजब पूरे पूरी मालूम नहीं है तो फिर दूसरोंको आज्ञा भंगका दूषण लगाके निषेध करना यहतो प्रत्यक्ष आपका महामिथ्या उत्सूत्रभाषणरूप वृथा ही झगड़ेको बढानेवाला हुवा सो विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे ;—

चौथा औरभी सुनो यहतो प्रसिद्ध बात है कि आषाढ चौमासीसें ५० दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन वार्षिक कृत्यादिसें करना कहा है इस न्यायके अनुसार दूसरे श्रावण में अथवा प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पर्युषणा करना सोतो अल्प बुद्धिवाले भी समझ सक्ते है। तो फिर क्या छठे महाशयजीको इतनी भी बुद्धिनहींहै सो ५० दिने दूसरे श्रावण में अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करने संबंधी पञ्चाङ्गी का पाठ पूछते है। इसपर कोई कहेगा कि छठे महाशयजी को ५० दिने पर्युषणा करनेकी बुद्धि तो हैं। इसपर मेरेको

इसमाही कहना है कि ५० दिने पर्युषणा करनेकी शुद्धि है सो फिर जानते हुवे भी भोले आभिनिवेशिक मिथ्यात्वके कारणसे भी सबके पञ्चाङ्गीका प्रमाण पूर्वकके भोले जीवोंको संशयरूपी मिथ्यात्वका भ्रममें गेरे हैं और अधिकमास की गिनती सिद्ध करके स्वयं सिद्ध है सो कदापि निषेध नहीं हो सकती है जिसका खुलासा इस ग्रन्थमें अनेक जगह छपगया है इसलिये दो श्रावण होनेसे ८० दिने भाद्रपदमें अथवा दो भाद्रपद होनेसे भी ८० दिने दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणा अपनी मति कल्पनासे श्रीजिनाज्ञाविरुद्ध करी जाती है क्योंकि पचासवें दिनकी रात्रिको भी उल्लंघन करनेवालेको शास्त्रोंमें आज्ञा विराधक कहा है इसलिये ८० दिने पर्युषणा करनेवाले अवश्यही आज्ञाके विराधक है यह भी प्रत्यक्ष सिद्ध है और ८० दिने पर्युषणा करनेका कोईभी जैनशास्त्रोंमें नहीं लिखा है परन्तु ५०दिने पर्युषणा करनेका तो पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें लिखा है सो इसीही ग्रन्थमें अनेक जगह छपगया है तथापि दंभप्रियजीने अभि-निवेशिक मिथ्यात्वसे दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पांच कार्योंसे पर्युषणा धार्मिक पर्व करने संबंधी पंचांगीका पाठ पूछके भोले जीवोंको भ्रममें गेरे है सो दंभ-प्रियजीके मिथ्यात्वका भ्रमको दूर करनेके लिये और मोक्षा-भिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेके लिये इस जगह मेरेको इतनाही कहना है कि–श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठमें ५०दिने पर्युषणा करनी कही है इसलिये श्रावणमासकी वृद्धि होनेसे दूसरे श्रावणमें अथवा भाद्रपदमासकी वृद्धि होनेसे प्रथम भाद्रपदमें जहां ५०दिन पूरे होवे वहांही प्रसिद्ध पर्युषणामें

साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्योंसे वार्षिकपर्व कर-नेका समझना चाहिये क्योंकि जहां प्रसिद्ध पर्युषणा वहांही वार्षिक कृत्यादि करनेका नियम है सो तो श्रीकल्पसूत्रकी नव (९) व्याख्यायोंमें श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके सबी टीकाकारोंने खुलासा पूर्वक लिखा है इसका विस्तार इसीही ग्रन्थकी आदिसे लेकर पृष्ठ २० तक छप गया है और उन्ही टीकाओंमें पचास दिने भाद्रपद शुक्ल पञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्योंसे वार्षिक पर्वरूप प्रसिद्ध पर्युषणा करनी कही है सो तो मास वृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें नतु मासवृद्धि होते भी अभिवर्द्धित संवत्सरमें क्योंकि प्राचीनकालमें भी पौष अथवा आषाढ़ मासकी वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें बीश दिने श्रावणशुक्ल पञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्योंसे प्रसिद्ध पर्युषणा जैनपञ्चाङ्गानुसार करनेमें आती थी इस बातका निर्णय श्रीकल्पसूत्रकी टीकाओंमें तथा इसीही ग्रन्थमें अनेक जगह और विशेष करके पृष्ठ १०३ से ११३ तक छप गया है परन्तु इस वर्त्तमान कालमें बीश दिने पर्युषणा करनेका कल्पविच्छेद होनेसे तथा जैन पञ्चाङ्गके अभावसे और लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेके कारणसे ५० दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा वार्षिक कृत्यादिसे करनेकी शास्त्रोंकी तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वज पूर्वाचार्योंकी मर्य्यादा है सो तो इस ग्रन्थकी आदिसेही लेकर ऊपर तकमें अनेक जगह छप गया है और न्यायमें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीके नामकी सभी जगेमें भी छपेगा (और वर्त्तमानमें श्रीतपगच्छादिके लिखेही

श्रावण करके दिनोंकी गिनतीमें पर्युषणा करनेका श्रीजिनेश्वर गणधरादि महाराजोंने पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक कहा है) इस लिये इस वर्तमान कालमें दूसरे श्रावण में अथवा प्रथम भाद्रपदमें ५० दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्यों सहित अवश्यही निश्चय करके करनी चाहिये सो पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके प्रमाणानुसार तथा युक्तिपूर्वक स्वयं सिद्ध है सो तो ऊपरके लेखको तथा इस ग्रन्थको आदिसें अन्ततक वाचेंगे महाशयोंके लेखको पक्षपातके पढ़नेवाले मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे तथा बडे महाशयजी आप भी हृदयमें विवेक बुद्धि लाकरके न्याय दृष्टिसें पढ़कर अच्छी तरहसें विचारो और आप सत्यवादी महाव्रतधारी आत्मार्थी होवो तो पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाणानुसार और खास आपके गच्छके भी पूर्वाचार्योंकी मर्यादानुसार ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पाँच कृत्योंसें प्रसिद्ध पर्युषणा पर्व करनेका उपरोक्त प्रत्यक्ष न्यायानुसार तथा युक्तिपूर्वक शास्त्रोंके प्रमाणको ग्रहण करो और शास्त्रोंके प्रमाण बिना तथा युक्तिके विरुद्ध मिथ्या कदाग्रहको छोड़ो और ५० दिने पर्युषणापर्व करनेका निषेध करने सम्बन्धी जितनी कुतर्कें करनी है सो सबीही संसारवृद्धिकी हेतुरूप तथा भोले जीवोंको सत्यबात परसें श्रद्धा भ्रष्ट करके गच्छ कदाग्रहके मिथ्यात्वका भ्रममें गेरनेके लिये अपने विद्वत्ताकी हांसी करानेवाली है सो भवभीरु मोक्षाभिलाषी आत्मार्थियोंको करनी उचित नही है तो फिर बडे

महाशयजीने शास्त्रानुसार ५० दिने पर्युषणा पर्व करने वालोंको मिथ्या आज्ञाभङ्गका दूषण लगाके उत्सूत्र भाषण-रूप ८० दिने पर्युषणा करनेका पुष्टकिया जिसकी आलोचना लिये विना कैसे आत्मका सुधारा होगा सो न्यायदृष्टि वाले सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे ;—

अब छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीने दूसरे गुजराती भाषाके लेखमें मिथ्यात्वके झगड़ेको बढ़ानेके लिये जो लेख लिखा है उसीका नमूना यहाँ लिख दिखा करके पीछे उसीकी समीक्षा करता हूं—नवेम्बर मासकी ३वीं तारीख सन् १९०९ गुजराती आश्विन वदी १ हिन्दी कार्त्तिक वदी १ वीर संवत् २४३५ का जैनपत्रके ३१ वा अङ्कके पृष्ठ पांचमा की आदिमें ही लिखा है कि,—

[वन्दे वीरम्—लेखक मुनि वल्लभविजय मु॰ पालणपुर

सावधान ! सावधान !! सावधान !!!

आचार्य्य सावधान ! उपाध्याय सावधान ! पन्यास सावधान ! गणी सावधान ! साधुसाध्वी सावधान ! यतीवर्ग सावधान ! श्रावक श्राविका सावधान ! शेठीआओ सावधान ! कोन्फरन्स सावधान ! वकील प्लीडर सावधान ! बेरिस्टरओटली सावधान ! भाका कोयडी सावधान ! लागता वलगता सावधान ! कागज कलम सावधान ! खड़ीओ रुशनाई सावधान ! सावधान ! सावधान !! सावधान !!! तपगच्छमान धरावनार सावधान ! खरतरगच्छीय सावधान !]

छठे महाशयजीके इन अक्षरों पर मेरेको बड़ाही आश्चर्य उत्पन्न होता है कि श्रीवल्लभविजयजीकी विवेक

भारी कर्मोंके बंध किये हैं और श्रीजैनशासनके निन्दकोंको भी उसी रस्ते पहुंचानेके लिये नरकादि अधोगतिका मार्गवाह (कुंदनमल ढूंढक) बना है और पुस्तक प्रगट कराई हैं जिसमें छठे महाशयजीके गुरुजीकी तथा उन्होंके सम्प्रदाय वालोंकी भी निन्दा करी हैं तथा खास छठे महाशयजी वगैरहको भी अनेक शब्द लिखते तीनवार धीक्कार भी लिख दिया हैं और श्रीजैनशासनकी निन्दा करके मिथ्यात्व बढ़ानेका कारण किया–उसीको तो छठे महाशयजीनें कुछ जवाब भी न दिया और सर्व श्रीमन्तोंको तथा वकील, बेरिस्टर वगैरहको सावधान करके कोर्ट कचेरीमें श्रीजैनशासनके निन्दक कुंदनमलको शिक्षा दिलानेकी किञ्चिन्मात्र भी बहादुरी न दिखाई परन्तु श्री खरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके आपसमें वृथाही कोर्ट कचेरीमें झगड़ा फैलानेके लिये और मिथ्यात्व बढ़ानेके लिये, वकील, बेरिस्टर, वगैरेको सावधान करके बड़ीही बहादुरी दिखाई हैं सो बड़ीही आश्चर्यकी बात है कि श्रीजैनशासनके दुश्मन निन्दकोंसे तो मुख छिपाते हैं और आपसमें झगड़ा करनेकी बहादुरी दिखाते कुछ लज्जा भी नही पाते है,—

अब छठे महाशयजीको मेरा (इस ग्रन्थकारका) इतनाही कहना है कि–आप सम्यक्त्वी और श्रीजैनशासनके प्रेमी होवो तो प्रथम श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके आपसमें न्यायानुसार शास्त्रार्थ पूर्वक अन्तरका पक्षपात छोड़कर सत्य असत्यका निर्णय करके असत्यको छोड़के सत्यको ग्रहण करो और श्रीजैनशासनके निन्दक कुंदनमलके

और आगे फिर भी उठे महाशयजीनें लिखा है कि (अमो महोता धारताके महात्मा मुनि मोहनलालजीना काल पछी ओहयो पण काल आवशे के जे आपसमां जंजाल फेलावी फालमारी पायमालकरी हाल बेहाल करी देशे पण भवितव्यताने कोण रोके) इत्यादि अनेक तरहके अनुचित शब्द लिखके श्रीमोहनलालजी पर तथा उन्होंके समुदाय वालोंपर द्वेषबुद्धिसें सूग्रही कटाक्ष करके नाटकरूपसें कितनीही बातोंमें उन्होंको कलङ्क लगाया है उसीका भी युक्ति पूर्वक जवाब यहां लिखनेसें बहुतही विस्तार होजावे इस लिये श्रीमोहनलालजीके तथा उन्होंके संप्रदायके पूर्णप्रेमी और गुरुभक्त (पन्यासजी श्रीजसमुनिजी, पन्यासजी श्रीहर्षमुनिजी, और पन्यासजी श्रीकेशरमुनिजी वगैरह मंडली के साधुओंमेंसे) जो महाशय होवेंगे सो दंभप्रियजीके लेखका जवाब लिखके श्रीमोहनलालजीका तथा उन्होंकी समुदाय वालोंका कलङ्कको दूर करेगा।

और इसके आगे फिर भी लिखा है कि (प्रश्नोत्तरमालिका नामे ओक चोपडी रतलाममां वीरसंवत् २४३१ नाकारतक सुदीपाँचमें बेरिस्टरमुखोटु नाम लखी छपावामां आवेल छे जेमां तपगच्छ उपर कुमलोकर्या सिवाय बीजु कांई पण मालम पडतु नथी कारणके जेजे सवालो लख्याछे प्रायःघणांना उत्तरो कलकत्ता थी प्रगट थयेल चोपडीमा उत्तर रूपे जैनसिद्धान्त समाचारी नामे भावनगरनी जइन धर्मप्रसारक सभा तरफ थी छपायेल चोपडीमां आवी गयेल छे) उठे महाशयजीके ऊपरका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो-प्रश्नोत्तरमालिका,

नामा छोटीसी पुस्तकको देख करके छठे महाशयजी
विजयजी और श्रीकलकत्तानिवासी लक्ष्मीचन्दजी
वगैरह महाशय कहते फिरते हैं कि–देखो प्रथम वा
का कारण खरतरगच्छवालोंकी तरफसें होता है
नमूनारूप प्रश्नोत्तरमालिका नामा पुस्तक लोगोंको
हैं परन्तु प्रश्नोत्तरमालिका पुस्तक बननेका कारण
विना द्वेष बुद्धिसें मिथ्या भाषण करके प्रथम वाद
कारण करनेका श्रीखरतरगच्छवालोंको झूठा दूषण ल
क्योंकि प्रथम रतलामसें श्रीतपगच्छके श्रावक बुद्धि
छोगालालजी गांधीनें श्रीहैदराबादमें चौमासा ठा
न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीको पत्र द्वारा,
कल्याणकादि सम्बन्धी कितने ही सवाल पुछे जिसके
सप्टेम्बर मासकी २१ वी तारीख सन् १९०८ आश्विन
२ वीर संवत् २४३४ के जैनपत्रका २५ वां अङ्कके पृष्ठ ४
हैं उसीमें श्रीखरतरगच्छवालोंको श्रीवीरप्रभुके छ कल्या
सम्बन्धी पुछा तब उसीके निमित्त कारणसें उसीका
रूपमें श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकसम्बन्धी शास्त्रोंके
सहित कितनेही शास्त्रानुसार सवालों पूर्वक—प्रश्नो
मालिका नामा पुस्तक छपी है इसलिये प्रश्नोत्तरमा
छपनेके निमित्त कारण श्रीशान्तिविजयजी हैं जो श्री
विजयजी श्रीखरतरगच्छवालोंको श्रीवीरप्रभुके छ कल्या
सम्बन्धी नही पुछते तो श्रीखरतरगच्छवालोंको ज
जवाबरूपमें प्रश्नोत्तरमालिका छपा करके प्रगट कर
कोई जरुरत नही थी परन्तु प्रथम जो कोई सवाल पु
उसीका जवाब तो शास्त्रानुसार अवश्यही देना सो

योलके, संसार वृद्धिका कारण करे तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं है तैसेही छठे महाशयजी दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजीने भी किया, अर्थात्–प्रश्नोत्तरमालिका पुस्तकमें शास्त्रोंके पाठ दिखाये और शास्त्रानुसार कितनीही बातें भी लिखी हैं उसको प्रमाण करना तो दूर रहा परन्तु तपगच्छ ऊपर हुमलो (जुलम) करनेका ठहरा करके श्रीजैनशास्त्रोंकी बातोंके अवर्णवाद लिखे सो तो उन्होंकेही कर्मोंका दोष है ;—

और आगे फिर भी प्रश्नोत्तरमालिका सम्बन्धी छठे महाशयजी लिखते हैं कि (जे जे सवालो लख्या छे प्रायः सर्वना उत्तरो कलकत्ता थी प्रगट थयेल चोपड़ीना उत्तररूपे जैनसिद्धान्त समाचारी नामे भावनगरनी जइनधर्मप्रसारक सभा तरफ थी छपायेल चोपड़ीमां आवी गयेल छे) इस लेख पर भी प्रथमतो मेरेको इतनाही कहना है कि–कलकत्तेसें चोपड़ी (पुस्तक) प्रगट होनेका जो छठे महाशयजी लिखते हैं सो तो भूलसें मिथ्या है क्योंकि कलकत्तेसें पुस्तक प्रगट नही हुई थी किन्तु (न्यायाम्भोनिधिजीकेही उत्सूत्र भाषणके अन्यायपर) मकसूदाबादके श्रावकने मुंबईमें छपवाकर 'शुद्ध समाचारी प्रकाश' नामा पुस्तक प्रगट किई है उसीमें श्रीतीर्थंङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्यजी महाराजोंकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके पाठार्थो सहित जो जो बाते लिखनेमें आई है उसीका और प्रश्नोत्तरमालिकामें भी जो जो शास्त्रोंकी बातें लिखके सवाल पूछनेमें आये हैं। उसीके एक सवालका भी जबाबमें उत्सूत्र भाषणके सिवाय शास्त्रार्थ पूर्वक कुछ भी जबाब जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें नही लिखा है।

और (ढूंढ़िओओे पण याद राखवुं सामायिक लेतां प्रथम इरियावहिया केहवी अने पछी करेमिभंतेनो पाठ केहवो १, श्रीमहावीर स्वामिना पांच कल्याणक २, वगेरे वातोमां तो तमोने पण बाधाज आवशे माटे तपगच्छ उपरयपेल आक्षेप जोई फुलीने फालका न थाशो आवावतमां तो तमो पण जवाब दारजशो) इन अक्षरों करके छठे महाशयजी अपना मन्तव्य स्थापन करनेके लिये इस जगह ढूंढ़ियोंको भी अपने सामिल मिलाते हुये उन्होंकाही सरणा ले करके सामायिक सम्बन्धी तथा कल्याणक सम्बन्धी श्रीखरतरगच्छवालोंके साथ वाद विवादरूप युद्ध करना चाहते हैं और बहुत वर्षोंका गच्छसम्बन्धी विवाद दबा हुवा था, उसीको भी पीछाही सरू करके शुद्धसमाचारी प्रकाशकी सत्य बातोंका उत्तररूपमें जैनसिद्धान्तसमाचारी नामक, परन्तु वास्तविकमें उत्सूत्र भाषणके संग्रहकी-पुस्तकको आगे करके अपना मन्तव्यको पुष्ट किया इसलिये इस जगह—ऊपरकी दोनुं पुस्तकोकी सब बातोंके सत्य असत्यका निर्णय करके मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोंको दिखाना मेरेको उचित है परन्तु बहुत विस्तार हो जानेके कारणसें नमूनारूप थोड़ीसी बातोंका निर्णय करके संक्षिप्तसें दिखाता हुं, जिसमें प्रथम शुद्धसमाचारी प्रकाशमें सामायिकका अधिकार है तथा जैनसिद्धान्तसमाचारी नामक पुस्तकमें भी प्रथम सामायिकका अधिकार है और छठे महाशयजी भी ढूंढ़ियोंका साथ करके प्रथम सामायिक सम्बन्धी लिखते हैं इसलिये मैंभी इस जगह प्रथम सामायिक सम्बन्धी शास्त्रार्थ पूर्वक थोड़ासा लिखता हुं :—

श्रावकके सामायिक करनेकी विधिमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करना ऐसे कोई भी शास्त्रोंमें नहीं कहा है किन्तु प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसें इरियावही करना श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार है और पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें भी कहा है सोही दिखाता हुं :—

श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्री आवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीमान् महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध १४४४ ग्रन्थकार श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें २, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीतिलकाचार्य्यजी कृत श्रीआवश्यकजीसूत्रकी लघुवृत्तिमें ३, श्रीयशोदेव उपाध्यायजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी विवरणरूप वृत्तिमें ४, श्रीपार्श्वनाथस्वामिजी की परम्परामें श्रीउकेशगच्छके श्रीदेवगुप्तसूरिजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ५, पुनः श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ६, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रीश्रावकधर्म प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्री अभयदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी वृत्तिमें ८, श्रीवड़गच्छके श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णिमें ९, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीविजयसिंहाचार्य्यजीकृत श्री श्रावकप्रतिक्रमणसूत्रकी चूर्णिमें १०, श्रीपूर्णतल्लीयगच्छके कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारक महान्‌विद्वान् सुप्रसिद्ध तीन क्रोड़ श्लोकोंकी रचनासें अनेक ग्रन्थकर्ता श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्रीयोगशास्त्रकी वृत्तिमें ११, श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीकथाकोष ग्रन्थमें १२, श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत

साम्प्रतमष्टादशं सत्कार द्वारमाह ॥ ततो वैकालिकानन्तरं विकालवेलायामन्तर्मुहूर्तरूपायां तामेवव्यनक्ति अस्तमिते दिवाकरे अर्द्धबिम्बाद्‌र्वाक् इत्यर्थः ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाकृत्वेति शेषः । पुनर्वन्दते जिनोत्तमान् । प्रसिद्ध चैत्यवन्दनविधिनेति ॥२२८॥ अथैकोनविंशतिवन्दनकोपलक्षितमावश्यकद्वारमाह ॥ ततस्तृतीयपूजानन्तरं श्रावकः पौषधशालाङ्गत्वा यतनया प्रमार्ष्टि ततो नमस्कारपूर्वकं व्यवहित तुशब्दस्यैवकारार्थत्वात्। स्थापयित्वैव तत्र सूरिं स्थापनाचार्य्यं। ततो विधिना सामायिकं करोति ॥ २२९ ॥ अथ तत्र साधवोऽपि सन्ति । श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं । ततोऽसौ साधुसमीपे गत्वा किं करोति इत्याह । साधुसाक्षिकं, पुनः सामायिकं कृत्वा । ईर्य्यां प्रतिक्रम्यागमनमालोचयेत् । तत आचार्य्यादिन् वन्दित्वा। स्वाध्यायं काले चावश्यकं करोति॥२३०॥

देखिये ऊपरके पाठमें सांमको पूर्वोक्त विधिसे श्री जिनराजकी पूजा करके प्रसिद्ध विधिसें चैत्यवन्दन करे बाद पौषधशालामें जाकर यतना पूर्वक प्रमार्जना करके गुरु अभावसें नमस्कार पूर्वक स्थापनाचार्य्यजीकी स्थापना करके तिस विधिसें अर्थात् श्रीआवश्यकादि शास्त्रोक्त विधिसें सामायिक करे और पौषधशालामें श्रीगुरुजी महाराज होवे और अपने घरसें सामायिक करके पौषधशालामें गया होवे तो फिर भी गुरु साखि करेमिभंतेका उच्चारण करके पीछे इरियावही पड़िक्कमके आचार्य्यादि महाराजोंको वन्दना करे और स्वाध्याय करे पीछे अवसर होनेसें प्रतिक्रमण करे—

निविष्टः, शृणोति, पठति, पृच्छति वा, एवं चैत्यभवनेऽपि द्रष्टव्यं,यदा तु पौषधशालायां स्वगृहे वा सामायिकं गृहीत्वा तत्रैवास्ते तदागमनं नास्ति यस्तु राजादि महर्द्धिकः स गन्धसिन्धुरस्कन्धाधिरूढ़ श्छत्रचामरादिराज्यालंकृतो हास्तिकाश्वीयपादातिकरथकाद्या परिकरितो भेरीझांकारभरिताम्बरतलो बन्दिवृन्दकोलाहलाकुलीकृतनभस्तलोऽनेकसामन्तमण्डलेश्वराहमहमिकासंप्रेक्ष्यमाणपादकमलः पौरजनैः सश्रद्धमङ्गुल्योपदर्श्यमानो मनोरथैरुपस्पृश्यमानस्तेपामेवाञ्जलिबन्धान् लाजाञ्जलिपातान् शिरःप्रणामाननुमोदमानः अहो धन्यो धर्मो य एवंविधैरुपसेव्यते इति प्राकृतजनैरपि श्लाघ्यमानोऽकृतसामायिक एव जिनालयं साधुवसतिं वा गच्छति तत्र गतो राजककुदानि छत्रचामरोपानन्मुकुटखड्गरूपाणि परिहरति आवश्यकचूर्णौ तु मउडं न अवणेइ कुंडलाणि णाम मुद्दं च पुप्फतंबोलपावारगमादि वोसिरइत्ति भणितं जिनार्चनं साधुवन्दनं वा करोति यदि त्वसौ कृतसामायिक एव गच्छे तदा गजाश्वादिभिरधिकरणं स्यात्तच न युज्यते कर्त्तुं तथा सामायिकेन पादाभ्यामेव गन्तव्यं तच्चानुचितं भूपतीनां आगतस्य च यद्यसौ श्रावकस्तदा न कोऽप्यभ्युत्थानादि करोति अथ यथा भद्रकस्तदा पूजा कृतास्तु इति पूर्वमेवासनं मुञ्चति आचार्य्याश्च पूर्वमेवोत्थिता आसते मा उत्थानानुत्थानकृता दोषा भूवन्निति आगतश्चासौ सामायिकं करोतीति पूर्ववत्,—

देखिये ऊपरके पाठमें श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णि १, श्री यशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णि २, तथा

कलिकालसर्वज्ञ बिरुद-धारक श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्री योगशास्त्रकी वृत्ति ३, और आदिशब्दसें श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार-सामायिक करने वाले दो प्रकारके श्रावककी विधिमें खुलासा पूर्वक प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछे सें इरियावहीका प्रतिक्रमण करना अच्छीतरहसें स्पष्ट करके लिखा है। और श्रावक अपने घरमें या गुरु अभावसें पौषध शालामें सामायिक करे वहां 'जाव नियमं पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे और श्रीगुरुजी महाराजके सामने सामायिक करे वहां 'जावसाहू पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे और श्रीजिनमन्दिरमें सामायिक करे वहां 'जावचेईय पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे—इसका ऊपरोक्त शास्त्रोंमें खुलासे पाठ है।

और भी श्रीतपगच्छके श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमणवृत्ति (श्रीवन्दीत्ता सूत्रकी अर्थदीपिका टीका) में भी श्रावकके नवमा सामायिक व्रताधिकारे ऊपर मुजब ही पाठ है और उसीका भाषान्तर श्रीमुम्बईवाले श्रावक-भीमसिंह माणकनें निर्णयसागर प्रेसमें श्रीजैनकथा रत्नकोष भाग चौथा (४) में छपवाया है जिसके पृष्ठ ३३१ सें ३३८ तक देख लेना :—

और ऊपरोक्त अनेक शास्त्रोंके पाठ भावार्थ सहित एक दूसरा और भी ग्रन्थ छपता है उसीमें विस्तार पूर्वक अनेक पाठ छपगये हैं जिसका भेद आगे खोलुंगा—

अब मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही सज्जन पुरुषोंको इस जगह विचार करना चाहिये कि-श्रीतीर्थंकर गणधरादि

महाराजोंकी आज्ञानुसार पूर्वधरादि श्रीप्राचीनाचार्य्योंने तथा सर्वोही गच्छोंके पूर्वाचार्य्योंमें और श्रीतपगच्छके भी प्रभाविक पुरुषोंने अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसें इरियावही कही है सो आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य है तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक प्रायः करके सर्वोही श्रावक महाशयोंको ऊपर मुजब वर्तना तो दूर रहा परन्तु ऊपर मुजब श्रद्धा भी नहीं रखते है और उलटे उन शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अपनी मतिकल्पनासें वर्त्तते हैं उन्हींको श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक तथा खास अपनेही गच्छके प्रभाविक पुरुषोंकी आज्ञाके आराधक और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंपर श्रद्धारखनेवाले कैसे कहे जावें और अनेक शास्त्रोंके प्रत्यक्ष प्रमाणकी विधिको छोड़ करके अन्य परम्परासें गड्डरीह प्रवाहवत् उन्ही शास्त्रोंके विरुद्ध वर्त्तने वालोंकी क्रिया भी कैसे सफल होगा—और श्रीजैनशास्त्रोंके एक पद पर अथवा एक अक्षर पर भी जो पुरुष श्रद्धा नही रखे वह प्राणी जमालिकी तरह निन्हव, मिथ्यादृष्टि कहा जाता है सो तो अनेक शास्त्रोंमें प्रसिद्ध बात है तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक जो जो मुनि महाशय और श्रावक महाशय ऊपरोक्त अनेक शास्त्रों पर तथा उन शास्त्रोंके कर्त्ता श्रीजैनशासनके प्रभाविक पुरुषोंके वचनों पर और खास अपनेही गच्छके पूर्वज पुरुषोंके वचनों पर श्रद्धानहींरखते हैं उन्हींको—पक्षग्राही, दृष्टिरागी, शास्त्रोंकी श्रद्धा रहितके सिवाय और सम्यक्त्वी कौन कहेगा सो तत्त्वग्राही पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और इस वर्त्तमान कालमें सुप्रसिद्ध न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी अनेक शास्त्रोंके अवलोकन करनेवाले गीतार्थ कहलाते थे इसलिये श्रीपूर्वधर महाराज कृत श्री आवश्यक चूर्णि वगैरह २१ शास्त्रोंके प्रमाण सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सम्बन्धी ऊपरमेंही पृष्ठ ३१०-३११ में छपे है उन्हीं शास्त्रोंके पाठोंको सामायिक सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें बांचे है लोगोंको सुनाये है और उन्हीं शास्त्रकार महाराजोंकी श्रीजैनशास्त्रोंके अतीव गहनाशयको समझनेवाले, बुद्धिनिधान, प्रभाविक, श्री-जिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक, सत्यवादी, पर उपगारी, मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी, और भव्य जीवोंको मोक्षसाधनका श्रीजिनाज्ञाके आराधनरूप रस्ताको दिखाने वाले गीतार्थ उत्तमपुरुष मानते थे लोगोंको भी कहते थे और उन्हीं महाराजोंके बनाये उपरोक्त पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंको नहीं माननेवालोंको मिथ्यात्वी ठहरा करके उन्हीं महाराजोंकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीकी श्रद्धारहित जैनाभास संसारगामी कहते थे और शास्त्रोंके पाठोंको छुपा करके अथवा आगे पीछेके सम्बन्धको छोड़ करके शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उलटे तात्पर्य्य भोले जीवोंको दिखाने वालोंको संसारमें परिभ्रमण करनेवाले ठहराते थे सोही खास न्यायाम्भोनिधिजीके बनाये 'चतुर्थस्तुतिनिर्णयः' वगैरह ग्रन्थोंसें प्रत्यक्ष दिखता है तथापि बड़ेही अफसोसकी बात है कि दूरभवि बहुलकर्मी मिथ्यात्वीकी तरह पञ्चाङ्गीके उपरोक्तादि अनेक शास्त्रोंके पाठोंपर श्रीआत्मारामजीकी अन्तरमें श्रद्धा नही

महाराजोंकी आज्ञानुसार पूर्वधरादि श्रीप्राचीनाचार्य्योंने तथा सबीही गच्छोंके पूर्वाचार्य्योंने और श्रीतपगच्छके भी प्रभाविक पुरुषोंने अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसें इरियावही कही है सो आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य है तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक प्रायः करके सबीही श्रावक महाशयोंको ऊपर मुजब वर्तना तो दूर रहा परन्तु ऊपर मुजब श्रद्धा भी नहीं रखते है और उलटे उन शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अपनी मतिकल्पनासें वर्त्तते हैं उन्होंको श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक तथा खास अपनेही गच्छके प्रभाविक पुरुषोंकी आज्ञाके आराधक और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंपर श्रद्धारखनेवाले कैसे कहे जावें और अनेक शास्त्रोंके प्रत्यक्ष प्रमाणकी विधिको छोड़ करके अन्ध परम्परासें गडुरीह प्रवाहवत् उन्ही शास्त्रोंके विरुद्ध वर्त्तने वालोंकी क्रिया भी कैसे सफल होगा—और श्रीजैनशास्त्रोंके एक पद पर अथवा एक अक्षर पर भी जो पुरुष श्रद्धा नही रक्खे वह प्राणी जमालिकी तरह निन्हव, मिथ्यादृष्टि कहा जाता है सो तो अनेक शास्त्रोंमें प्रसिद्ध बात है तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक जो जो मुनि महाशय और श्रावक महाशय ऊपरोक्त अनेक शास्त्रों पर तथा उन शास्त्रोंके कर्त्ता श्रीजैनशासनके प्रभाविक पुरुषोंके वचनों पर और खास अपनेही गच्छके पूर्वज पुरुषोंके वचनों पर श्रद्धानहींरखते हैं उन्होंको-पक्षग्राही, दृष्टिरागी, शास्त्रोंकी श्रद्धा रहितके सिवाय और सम्यक्त्वी कौन कहेगा सो तत्त्वग्राही पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ;—

महाराजोंकी आज्ञानुसार पूर्वधरादि श्रीप्राचीनाचार्यों
तथा सबीही गच्छोंके पूर्वाचार्योंने और श्रीतपगच्छके
प्रभाविक पुरुषोंने अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक साम
यिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछे
इरियावही कही है सो आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य
तथापि श्रीतपगच्छके वर्तमानिक प्रायः करके सबीही श्राव
महाशयोंको ऊपर मुजब वर्तना तो दूर रहा परन्तु ऊप
मुजब श्रद्धा भी नहीं रखते है और उलटे उन शास्त्रोंके विरु
द्धार्थमें अपनी मतिकल्पनासें वर्त्तते हैं उन्होंको श्रीजिने
श्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक तथा खास अपनेही
गच्छके प्रभाविक पुरुषोंकी आज्ञाके आराधक और पञ्चा
ङ्गीके शास्त्रोंपर श्रद्धारखनेवाले कैसे कहे जावें और अनेक
शास्त्रोंके प्रत्यक्ष प्रमाणकी विधिको छोड़ करके अन्ध
परम्परासें गड्डरीह प्रवाहवत् उन्ही शास्त्रोंके विरुद्ध वर्त्तने
वालोंकी क्रिया भी कैसे सफल होगा—और श्रीजैनशास्त्रोंके
एक पद पर अथवा एक अक्षर पर भी जो पुरुष श्रद्धा नही
रक्खे वह प्राणी जमालिकी तरह निन्हव, मिथ्यादृष्टि कहा
जाता है सो तो अनेक शास्त्रोंमें प्रसिद्ध बात है तथापि
श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक जो जो मुनि महाशय और
श्रावक महाशय ऊपरोक्त अनेक शास्त्रों पर तथा उन
शास्त्रोंके कर्त्ता श्रीजैनशासनके प्रभाविक पुरुषोंके वचनों
पर और खास अपनेही गच्छके पूर्वज पुरुषोंके वचनों
पर श्रद्धानहीं रखते हैं उन्होंको—पक्षग्राही, दृष्टिरागी,
शास्त्रोंकी श्रद्धा रहितके सिवाय और सम्यक्त्वी कौन कहेगा
सो तत्त्वग्राही पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और इस वर्तमान कालमें सुप्रसिद्ध न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी अनेक शास्त्रोंके अवलोकन करनेवाले गीतार्थ कहलाते थे इसलिये श्रीपूर्वधर महाराज कृत श्री आवश्यक चूर्णि वगैरह २१ शास्त्रोंके प्रमाण सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सम्बन्धी ऊपरमेंही पृष्ठ ३१७-३११ में छपे हैं उन्ही शास्त्रोंके पाठोंको सामायिक सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीने बांचे हैं लोगोंको सुनाये हैं और उन्ही शास्त्रकार महाराजोंको श्रीजैनशास्त्रोंके अतीव गहनाशयको समझनेवाले, बुद्धिनिधान, प्रभाविक, श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक, सत्यवादी, पर उपगारी, मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी, और भव्य जीवोंको मोक्षसाधनका श्रीजिनाज्ञाके आराधनरूप रस्ताको दिखाने वाले गीतार्थ उत्तमपुरुष मानते थे लोगोंको भी कहते थे और उन्ही महाराजोंके बनाये ऊपरोक्त पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंको नही माननेवालोंको मिथ्यात्वी ठहरा करके उन्ही महाराजोंकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीकी श्रद्धारहित जैनाभास संसारगामी कहते थे और शास्त्रोंके पाठोंको छुपा करके अथवा आगे पीछेके सम्बन्धको छोड़ करके शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उलटे तात्पर्य्य भोले जीवोंको दिखाने वालोंको संसारमें परिभ्रमण करनेवाले ठहराते थे सोही खास न्यायाम्भोनिधिजीके बनाये 'चतुर्थस्तुतिनिर्णयः' वगैरह ग्रन्थोंमें प्रत्यक्ष दिखता है तथापि बड़ेही अफसोसकी बात है कि दूरभवि बहुलकर्मी मिथ्यात्वीकी तरह पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि अनेक शास्त्रोंके पाठोंपर श्रीआत्मारामजीकी अन्तरमें श्रद्धा नही

थी इसलिये श्रीपूर्वधरादि महाराजोंके बनाये श्रीआवश्यक-चूर्णि वगैरह पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंपर उन्होंको संशयरूपी मिथ्यात्वका भ्रम रहा अथवा अपनी विद्वत्ताके अभिमानसें संसार वृद्धिका भय नही करते अभिनिवेशिकमिथ्यात्वके अधिकारी बनके ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंके तात्पर्य्यको जानते हुवे भी प्रमाण नही करे और भोले जीवोंको भी पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि शास्त्रोंके पाठोंकी शुद्ध श्रद्धा रहित बनानेके लिये 'जैनसिद्धान्त समाचारी' नामक पुस्तकमें पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अन्य अन्य विषयोंके अधिकारवाले अधूरे अधूरे पाठ लिखके उसीका भी उलटा तात्पर्य्य बालजीवोंको दिखा करके (उत्सूत्र भाषणरूप अनेक जगह लिखके) अपनी समुदायवालोंको तथा अपने गच्छ-वालोंको संशयरूपी मिथ्यात्वके भ्रममें गेरे हैं और श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाका आराधनरूपी मोक्षसाधनका रस्ताकी सत्यबातोंका निषेध करके संसार वृद्धिके कारणरूप मिथ्यात्वको फैलानेवाली अपनी मतिकल्पनाकी मिथ्या बातोंकी स्थापन करी है जिसका विस्तारसें शास्त्रार्थ पूर्वक इस जगह निर्णय करनेसें बड़ाही विस्तार होजावे तथापि न्यायाम्भोनिधिजी का (अपनी समुदायवालों पर तथा अपने गच्छवालों पर) गेरा हुवा मिथ्यात्वका भ्रमको अवश्यही दूर करके मोक्षा-भिलाषी सत्यग्राही मध्यस्थजीवोंको शुद्ध श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नकी प्राप्तिके उपगारके लिये सत्य बातोंका दर्शाव भी जरूरही होना चाहिये इसलिये जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके सतरहमें '[illegible]' नामा प्रश्न उसका भी जब होगया है जिसमें न्यायाम्भोनिधि-

जीने जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें जो जो उत्सूत्र भाषण किये हैं जिसका अच्छीतरहसें विस्तार पूर्वक निर्णय छप रहा है परन्तु इस जगह भी न्यायदृष्टिवाले आत्मार्थी भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेकेलिये सामायिकाधिकार-सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीमें जो जो उत्सूत्र भाषण किये हैं उसीका निर्णयके साथ संक्षिप्तसें दिखाता हुं—

१ प्रथम—सामायिकाधिकारे पहिले करेमिभंतेका उच्चारण कियेपीछे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना अनेक शास्त्रोंमें कहा है सो ऊपरमेंही छपगया है और सामायिकाधिकार सम्बन्धी कोई भी शास्त्रोंमें पूर्वापर विरोधी विसंवादी वाक्य नही है याने कोई भी शास्त्रमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण किसी भी पूर्वाचार्य्यजीमें नहीं कहा है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी 'जैनसिद्धान्तसमाचारी' नामक पुस्तकके पृष्ठ ३७ के मध्यमें सामायिकविधि सम्बन्धी अनेक शास्त्रोंके आपसमें पूर्वापर विरोध विसंवाद ठहराते हैं सो उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः' नामा ग्रन्थके पृष्ट ३ सें ७ तक छप गया है और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सभी शास्त्रोंमें कही है जिसके विषयमें श्रीपूर्वधरादि प्रभाविक पुरुषोंके बनाये ग्रन्थोंमें तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोंने भी ऊपर मुजबही कहा है उसीके अनेक पाठ अर्थ सहित 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः' के पृष्ठ ७ में २६ तक खुलासा पूर्वक छपगये हैं परन्तु सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते किसी भी शास्त्रमें नही लिखी है सोही दिखाता हुं :—

२ दूसरा—श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्म स्वामीजी कृत श्रीमहानिशीथ सूत्रके तीसरे अध्ययनमें उपधानके अधिकारमें चैत्यवन्दनादि सम्बन्धी विस्तार पूर्वक खुलासे पाठ है जिसके सम्बन्धवाले आगे पीछेके सब पाठको छोड़ करके थोड़ासा अधूरा पाठ न्यायाम्भोनिधिजीनें जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके पृष्ठ ३० वामें लिख करके गणधर महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार पूर्वक निर्णय संपूर्ण पाठार्थ सहित 'आत्माभ्रमोच्छेदन-भानुः' नामा ग्रन्थके पृष्ठ २१ के अन्तसें पृष्ठ ३७ तक अच्छी तरहसें छपगया है।

३ तीसरा—श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीदशवैकालिकजी सूत्रके चूलिकाकी ७वीं गाथाकी बृहद्वृत्तिमें साधुके उपदेशाधिकारमें गमनागमनादि कारणमें इरियावही करके स्वाध्यायादि करने सम्बन्धी विस्तार पूर्वक खुलासे पाठ है (श्रीदशवैकालिकजी मूलसूत्र, अवचूरि, भावार्थ, दीपिका, और बृहद्वृत्ति सहित छपी हुई प्रसिद्ध है जिसके पृष्ठ ६७९। ६८०।६८१ में छपगया है) जिसके सम्बन्धवाले सब पाठको छोड़ करके सिर्फ एकपद मात्रही न्यायाम्भोनिधिजीने जैन० नामक, पुस्तकके, पृष्ठ ३१ की आदिमें लिखके वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामयिकाधिकारे प्रथम इरियावही स्थापी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार पूर्वक निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः' के पृष्ठ ३८ से ४८ तक छपगया है।

४ चौथा—श्रीतपगच्छके श्रीधर्मघोषसूरिजी कृत श्री

श्रीदाबारागारव वृत्तिमें दृष्टांत सहित श्रावकके चैत्य-
वन्दनकीविधि कथाओं सहित कही है जिसमें सामायिकमें
सामायिक संस्थार मुनि प्रमार्जन करके इरियावही पूर्वक
चैत्यवन्दन करने सम्बन्धी पुस्तकी श्रावककी कथा कही है
उसमें भी आगे पीछेके सब पाठको छोड़ करके बीचका
अधूरा पाठ न्यायां० ने 'जैन० सा० पुस्तकके' पृष्ठ ३१ में
लिखके ग्रन्थकार महाराजको गुरुविरोधीका दूषणके अधि-
कारी ठहरा करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामा-
यिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र
भाषण है इसका भी निर्णय सपूर्ण पाठ सहित ग्रन्थकार
महाराजके अभिप्राय पूर्वक 'आत्मभ्रमो०के' पृष्ठ ५८ से ६८
तक छपगया है ।

५ पांचमा—श्रीतपगच्छनायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत
श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्तिमें स्वाध्याय करने सम्बन्धी विस्ता-
रसे पाठ है जिसमें भी एक गाथा न्यायां० ने 'जैन० सा०
पुस्तकके' पृष्ठ ३१ के मध्यमें लिखके उसी गाथामें दो जगह
दो मात्रा भी बाढ़ा लगाके अर्थ भी उलटा करा और अपने
पूर्वजोंकोही विसंवादीका दूषण लगा करके वृत्तिकार महा-
राजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापी
सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तारसें निर्णय
'आत्म० के' पृष्ठ ६९ सें ७७ तक छपगया है ।

६ छट्टा—श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमण-
सूत्रकी वृत्तिमें आवश्यकचूर्णि वगैरह अनेक शास्त्रोंके प्रमा-
णानुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरिया-
वही खुलासे कही है उसी शास्त्रोंकी विधि 'मुख्य श्रावक

अपने घरसें सामायिक करके पौषधशालामें गुरुमहाराजके पास प्रतिक्रमण करनेके लिये आये यहां इरियावही पूर्वक षडावश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेके सम्बन्धमें पाठ है जिसका सम्बन्ध छोड़कर ग्रन्थकार महाराजको भी विसंवादके दूषित ठहरानेके लिये उलट पुलट अधूरा पाठ, न्यायां० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३४ के आदिमें लिखके ग्रन्थकार महाराजकेविरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापनकरी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका निर्णय, 'आत्म०के' पृष्ठ ७७ सें ८३ तक छपगया है ।

७ सातमा—श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजीकी चूर्णिमें सामायिक विधिके विषे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसें इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासे लिखा है उसी पाठको तो छुपा दिया और पौषधविधि सम्बन्धी पाठको न्या०ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३४ के अन्तमें लिखके चूर्णिकार महाराजको विसंवादीका दूषण लगाके उन्ही महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिककी विधिमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ८४।८५।८६ में छपगया है ।

८ आठमा—श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीविवाहचूलिया सूत्रमें सिंहनामा श्रावकने इरियावही पूर्वक चार प्रकारका पौषधकरा उसी सम्बन्धी खुलासे पाठ है तथापि न्यायांभोनिधिजीने पौषध सम्बन्धी पाठको तोड़ करके अधूरा पाठ 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३५ की आदिमें लिखके सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका निर्णय 'आत्म०' के पृष्ठ ८७।८८।८९ तक छपगया है ।

९ नवमा--श्रीतपगच्छके श्रीजयचन्द्रसूरिजी जो कि श्री आवश्यकवृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार तथा अपने ही गच्छके नायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिके और खास अपने काका गुरुजी श्रीकुल-मण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थके अनुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही श्रद्धापूर्वक मान्य करने वाले थे उन्ही महाराजकृत श्रीप्रति-क्रमणगर्भहेतुनामा ग्रन्थमें साधु और पौषधवाला श्रावक दोनोंके वास्ते इरियावही पूर्वक राई प्रतिक्रमण करनेका खुलासा पाठ है जिसमें भी प्रतिक्रमणके सम्बन्धी सब पाठको छोड़ करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें न्याय०ने 'जैन०सा० पुष्के' पृष्ठ ३५ या के मध्यमें थोड़ासा अधूरा पाठ लिखके फिर भी मूल पाठके बिना भावार्थमें सामायिक शब्दका ज्यादा प्रयोग करके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्मभ० के' पृष्ठ ९०।९१।९२ तक छपगया है।

१० दशमा--श्रीपञ्चम गणधर महाराजकृत श्रीभगवतीजी मूलसूत्रके तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरीजी कृत तद्वृत्तिके बारहवें शतकके प्रथम उद्देशमें पौषधके अधिकारमें पुष्कली नामा श्रावक सम्बन्धी इरियावही कही है (सो छपी हुई श्रीभगवतीजीके पृष्ठ ९९१।९९२ में अधिकार है) जिसके भी आगे पीछेके पौषध अधिकार-वाले पाठको छोड़ करके न्याय०ने 'जैन० सा० पु०' के पृष्ठ ३५ के अन्तमें थोड़ासा अधूरा पाठ लिखके श्रीसूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम

इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ ९३ से ९६ के मध्य तक छपगया है ।

११ इग्यारहमा–श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावहीका खुलासा पूर्वक पाठ है तथापि उस पाठको छुपा करके अथवा लुप्त करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें मिथ्यात्वरूप रोगके उदयसें किसी भारी कर्मी प्राणीने अपनी मति कल्पना मुजब नवीन पाठ बना करके समाचारी ग्रन्थमें लिख दिया है उसीकोही न्यायाम्भोनिधि जीनें जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके पृष्ठ ३६ में लिखके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी है सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार पूर्वक निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु.' नामा ग्रन्थके पृष्ठ ९६ के अन्तसें पृष्ठ १०४ तक छपगया है ।

१२ बारहमा--श्रीखरतरगच्छवाले सामान्य विशेष पाठ को, तथा श्रीआवश्यक बृहद्वृत्तिके, और चूर्णिके, पाठको मान्य करते हैं तथापि न्या० ने 'जैन० सा० पु० के' पृष्ठ ३८ में सामान्य पाठको तथा श्रीआवश्यक बृहद्वृत्तिके और चूर्णिके पाठको तुम मान्य नही करते हो ऐसें लिखके श्रीखरतर गच्छवालोंको मिथ्या दूषण लगाया सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १०७ से १११ तक छपगया है ।

१३ तेरहमा--खास न्यायाम्भोनिधिजी अपनी बनाई 'चतुर्थ स्तुतिनिर्णय' नामा पुस्तकके पृष्ठ ८८ के मध्यमें श्री०

जिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा समाचारी ग्रन्थके पाठ को नहीं माननेवालोंको मिथ्या दृष्टि ठहराते हैं परन्तु आप 'जैन० सा० पु० के' पृष्ठ३८ में इन्हीं महाराज कृत उन्हीं ग्रन्थके पाठको नहीं मानते हुये द्वेषबुद्धिसें आक्षेप करके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य बात परसें भोले जीवोंकी श्रद्धाभङ्ग करनेका कारण किया हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १११ के अन्तसें पृष्ठ ११५ तक छपगया है।

१४ चौदहमा–श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजनें श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें श्रावकके नवमा सामायिक व्रतमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसें इरियावही खुलासे लिखी हैं जिसको श्रीजिनाज्ञाके आराधक सबी आत्मार्थी श्रीजैनाचार्य्यादि महाराजोंने श्रद्धापूर्वक प्रमाणकरी है और श्रीहरिभद्रसूरिजी, श्रीदेवगुप्तसूरिजी, श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीयशोदेवसूरिजी, श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी, श्रीविजयसिंहाचार्य्यजी, श्रीदेवेन्द्रसूरिजी, श्रीतिलकाचार्य्यजी, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजी, श्रीकुलमण्डनसूरिजी, श्रीरत्नशेखरसूरिजी, श्रीमानविजयजी (कृत वृत्ति शुद्धकर्ता श्रीयशोविजयजी) आदि महाराजोंनें अपने अपने बनाये ग्रन्थोंमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासे लिखी है उसी मुजब मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी प्राणियोंको श्रद्धापूर्वक मञ्जूर करनी चाहिये तथापि न्यायाम्भोनिधिजी 'जैन० सा०' पु० के पृष्ठ ४१-४२में पूर्वधर महाराजकृत श्रीआवश्यक चूर्णिके पाठ पर और

उत्तमपुरुषोंके बनाये ग्रन्थों पर श्रद्धा नही रखते हुवे अपने अन्तरके मिथ्यात्वको प्रगट करके भोले जीवोंको भी शुद्ध श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नसें भ्रष्ट करनेका कार्य्य किया सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तारसें निर्णय 'आत्मο के' पृष्ठ ११८ सें पृष्ठ १५५ तक छपगया है।

१५ पंदरहमा–श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने चैत्य-वन्दनादिके सूत्रोंके उपधान कहे है तथा खास न्यायां-म्भोनिधिजी भी अपना बनाया 'तत्त्वनिर्णय प्रासाद' नामा ग्रन्थके पृष्ठ ४५७ सें ४६४ तक उपधानकी व्याख्या उपर मुजबही करी है और श्रीभगवतीजीमें सामायिकको स्वयं आत्मा कहा है इसलिये आत्माके उपधान नही होते हैं और किसी भी शास्त्रमें सामायिकके उपधान नही लिखे है तथापि 'जैनο नाο' पुο के पृष्ठ ४३ में सामायिकके उप-धान ठहराते हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्मο के' पृष्ठ १५६सें १६९ तक छपगया है।

१६ सोलहमा–श्रीदशवैकालिकजी सूत्रकी चूलिकामें श्री-सीमंधरस्वामीजी महाराजने साधुकेही अधिकारका वर्णन किया है सो प्रसिद्ध है तथापि न्याο ने 'जैनο नाο पुο के' पृष्ठ ४४-४५ में श्रीहरिभद्रसूरिजीकृत वृहद्वृत्तिके पाठको अगाड़ी का पिछाड़ी और पिछाड़ीका अगाड़ी उलट पुलट करके भी अधूरा लिखके फिर पृष्ठ ४५ के अन्तमें साधुके अधिकार वाले पाठको श्रावकके अधिकारमें स्थापन करनेके लिये वृथाही परिश्रम किया है सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्मο के' पृष्ठ १७० सें १९१ तक छपगया है।

१७ सतरहमा–श्रीजैनधर्माचार्य्यजी पूर्वापर विरोध

रहित अविसंवादीपने ग्रन्थ रचना करते हैं तथापि न्या०ने जैन० ना० पु० के पृष्ठ ४३ में श्रीखरतरगच्छनायक श्रीनवाङ्गी वृत्तिकार सुप्रसिद्ध श्रीमदभयदेव सूरिजी महाराजको और श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमद्देवेन्द्रसूरिजी महाराजको विसंवादी पूर्वापर विरोधि लिखनेवाले ठहराये हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तारसें निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ १८१ से २१६ तक छपगया हैं ।

१८ अठारहमा—श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजीने आचारदिनकर नामा ग्रन्थमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासा पूर्वक लिखी है जिसका तात्पर्य्य समझे विना न्या०ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ४८ के आदिमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करने के लिये परिश्रम करके लिखा है सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ २१९।२२०।२२१ तक छप गया है ।

१९ एकोनवीशहमा—श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी महान् परम्परानुसार श्रीखरतरगच्छमें प्रथम करेमिभंतेके उच्चारण करनेका अखण्डित व्यवहार आज तक चला आता है तथापि न्या० ने 'जैन० ना० पु०' के पृष्ठ ४८ के मध्यमें प्रथम इरियावहीकी परम्परा ठहराई हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका निर्णय 'आत्म० के पृष्ठ' २२३—२२४ में छपगया है ।

२० वीशहमा—श्रीआवश्यकचूर्णि, वृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति, श्रीपञ्चाशकवृत्ति, चूर्णि, श्रीयोगशास्त्रवृत्ति, वगैरह अनेक शास्त्रोंकी सामायिक विधिको न्या०ने 'जैन० ना० पु० के'

पृष्ठ ४८ के मध्यमें तुच्छ शब्दसें लिखके (शास्त्रों की त
शास्त्रकार श्रीपूर्वधरादि महाराजोंकी आशातना करके
निषेध करी हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्त
'आत्म०के' पृष्ठ २२५ सें छपना सरू है।

२१ एकवीशहमा–श्रीजैनशास्त्रोंमे सर्व जगह सामायि
सम्बन्धी प्रथम करेमिभंते करनेकी एकही विधि है तथा
न्याय० ने जैन० ना० पु० के पृष्ठ ४८ अन्तमें सामायि
सम्बन्धी पूर्वापर विरोधी दो विधि स्थापन करी
सो भी उत्सूत्र भाषण है उसका निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेद
भानुः' नामा ग्रन्थमें छपना सरू है।

ऊपर मुख्य २१ प्रकारके उत्सूत्र भाषण न्यायाम्भोनिधि
जीनें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लि
लिखे हैं और कितनी जगह मायावृत्तिरूप, कितनीही
जगह प्रत्यक्ष मिथ्या, कितनीही जगह अन्याय कार
कितनीही जगह श्रीजैनशास्त्रोंके अतीव गहनाशयको समझे
बिना उलटा भी लिख दिया है इत्यादि अनेक तरहसे
अनुचित लेखों करके सामायिकमें प्रथम इरियावही
(श्रीजैनशास्त्रोंके तथा श्रीजैनाचार्योंके विरुद्ध) स्थाप-
नेके लिये अपने तथा अपने पक्षधारियोंके संसार
वृद्धिके निमित्तभूत खूबही परिश्रम किया है उसीके सबका
निर्णय देखनेकी इच्छा होवे तो 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः'
में शास्त्रार्थपूर्वक युक्ति सहित अच्छी तरहसें होगया है
को पढ़नेसें सर्व खुलासा हो जायेगा–और पर्युषणासम्बन्धी
यह ग्रन्थ प्रसिद्ध होये बाद थोड़ेही दिनोंमें 'आत्मभ्रमो-
च्छेदनभानुः' भी प्रगट होनेका सम्भव है।

अब सत्यग्राही सज्जनपुरुषोंको निष्पक्षपाती हो करके विचार करना चाहिये कि–एक सामायिक विषयमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सम्बन्धी २१ शास्त्रोंके प्रत्यक्ष प्रमाणोंको न्यायके समुद्र हो करके भी श्रीआत्मारामजीने छोड़ दिये और आप उन्हीं शास्त्रोंके पाठोंकी श्रद्धा रहित बनकरके उन्हीं शास्त्रोंके तथा उन्हीं शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लिये ऊपरोक्त कैसा अनर्थ करके–कहीं उपधानसम्बन्धी, कहीं साधुके जाने आने सम्बन्धी, कहीं चैत्यवन्दनसम्बन्धी, कहीं स्वाध्यायसम्बन्धी, कहीं षड़ावश्यकरूप प्रतिक्रमणसम्बन्धी, कहीं पौषधसम्बन्धी, इत्यादि अनेक तरहके अन्य अन्य विषयोंके सम्बन्धमें शास्त्रकार महाराजोंने इरियावही कही है जिसके बदले उन्हीं शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लिये आगे पीछेके पाठोंको छोड़ करके अधूरे अधूरे पाठ लिखते न्यायाम्भोनिधिजीको पर भवका कुछ भी भय नहीं लगा और इस लौकिकमें भी अपनी विद्वत्ताकी हासी करानेके कारणरूप इतना अन्याय करते कुछ शर्म भी नहीं आई इसलिये सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सभी गच्छोंके प्रभाविक पुरुषोंने अनेक शास्त्रोंमें प्रत्यक्ष पने अविसंवादरूप खुलासा पूर्वक लिखी है जिसको जानते हुये भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके जोरसे श्रीहरिभद्रसूरिजी, श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीदेवेन्द्रसूरिजी वगैरह प्रभाविक पुरुषोंको विसंवादीका मिथ्या दूषण लगा करके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापनेका विसंवाद-

रूपी मिथ्यात्वको बढ़ाने वाला झगड़ा (अविसंवादी श्री-जैनशासनमें इस वर्त्तमान कालके बालजीवोंको श्रद्धाभ्रष्ट करनेके लिये) श्रीआत्मारामजीने अपनी विद्वत्ताके अभिमानसें खूबही फैलाया है ;—

और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण करनेका निषेध करके प्रथम इरियावही स्थापन करने सम्बन्धी ऊपरोक्त जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें जैसे उत्सूत्र भाषणोंसें मिथ्यात्व फैलाया है तैसेही श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणक निषेध करके पाँच कल्याणक स्थापन करने वगैरह कितनी बातोंमें भी खूबही उत्सूत्र भाषणोंसे मिथ्यात्व फैलाया है जिसका खुलासा आगे लिखुंगा—

और श्रीआत्मारामजीको अपने पूर्व भवके पापोदयसें पहिले ढूंढियोंके मिथ्या कल्पित मतमें दीक्षा लेनी पड़ी थी वहाँ भी अपने कल्पित मतके कदाग्रहकी बात जमानेके लिये अनेक शास्त्रोंके उलटे अर्थ करते थे तथा अनेक शास्त्रोंके पाठोंको छोड़के अनेक जगह उत्सूत्र भाषण करके संसार वृद्धिका भय न करते हुये भोले दृष्टिरागियोंको मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें गेरते थे और मिथ्यात्वरूप रोगके उदयसें श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा मुजब सत्य बातोंको कल्पित समझते थे और श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा विरुद्ध अपने मत पक्षकी कल्पित मिथ्या बातोंको सत्य समझते थे और हजारों श्रीजैन शास्त्रोंका उत्थापन करके सत्य बातोंके निन्दक शत्रु बनते थे इत्यादि अनेक तरहके कार्य्योंसें अपने ढूंढक मतकी मिथ्या कल्पित बातोंको पुष्ट करके अपने मतको चलाते थे परन्तु कितनेही वर्षोंके बाद अपने पूर्व भवके महान् पुण्योदय होनेसें ढूंढकमतके पाष-

भाषण भी लिखे हैं जिसके नमूनारूप एक सामायिक विष
सम्बन्धी संक्षिप्तसे ऊपरमेंही लिखनेमें आया है, और पर्युषणा
विषयमें भी अनेक जगह उत्सूत्र भाषण किये है उसकी भी
समीक्षा इसही ग्रन्थके पृष्ट १५१ से २१६ तक छप गई है सो
पढ़नेसे निष्पक्षपाती सत्यग्राही सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे।

और 'शुद्धसमाचारी'की पुस्तकमें पौषधाधिकारे, विधिमार्गमें
उत्सर्गसे-अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा और अमावस्या इनच्यारों
पर्वतिथियोंमें पौषध करनेसम्बन्धी श्रीसूयगडांगजी, उत्तराध्ययन
जी,उववाईजी, धर्मरत्नप्रकरण वृत्ति, योगशास्त्र वृत्ति, धर्मबिन्दु
वृत्ति, नवपद प्रकरण वृत्ति, समवायांग वृत्ति, पंचाशक वृत्ति,
आवश्यक चूर्णि, तथा बृहद् वृत्ति, और श्रीभगवतीजीसूत्र वृत्ति,
वगैरह शास्त्रोंके पाठ दिखाये थे जिसका तात्पर्यार्थको समझे
बिना शास्त्रोंके विरुद्ध होकर हमेशां पौषधकरनेका ठहरानेके लिये
श्रीआवश्यकसूत्रकी चूर्णिमें तथा बृहद्वृत्तिमें और लघुवृत्तिमें
और श्रीप्रवचनसारोद्धार वृत्तिमें, श्रीसमवायांगजीसूत्रकी वृत्तिमें
श्रीपंचाशकजीकी चूर्णिमें तथा वृत्तिमें और श्रीउपाशकदशांग
वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रोंमें श्रावककी ११ पडिमाके अधिकारमें
पांचवी पडिमाकी विधिमें "श्रावक दीनमें ब्रह्मचर्य व्रत पाले
और रात्रिको नियम करे" ऐसे खुलासे पाठ हैं तिसपरभी न्यायां-
भोनिधिजीने अन्धपरंपरासे विवेक शून्यहोकर शास्त्रकार महा-
राजोंकेविरुद्धार्थमें अपनी मतिकल्पनासे श्री आवश्यक वृत्ति वगैरहके
पाठका "दिवसको ब्रह्मचर्यपाले रात्रिको कुशीलसेवे" ऐसा ओत्सू-
त्रीत अर्थ करके मैथुन सेवनकी हिंसाका उपदेश करनेका शास्त्र-
कारोंको झूठा दूषण लगाके महामायी अनर्थ करके [illegible]
तक पुस्तकमें दुर्लभबोधिका कारण किया है

और न्यायाम्भोनिधिजीने श्रीजैनतत्त्वादर्शमें, अज्ञान तिमिर भास्करमें, और श्रीजैनधर्म्मविषयिक प्रश्नोत्तर,नामा पुस्तकमेंजो उत्सूत्रभाषणरूपलिखाहै जिसकेसम्बन्धमें आगे लिखनेमें आवेगा

और इस तरहसे अनेक शास्त्रोंकेपाठोंकी भङ्गारहित तथा शास्त्रोंके आगेपीछेके सम्बन्धवालेपाठोंको छोड़करके शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठलिखके उलटे वीपरीत अर्थ करनेवाले और शास्त्रकारमहाराजोंको विसंवादोका-मिथ्या दूषण लगानेवाले और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार सत्यबातोंका उत्थापन करके अपनी मतिकल्पनासे अन्धपरम्पराकी मिथ्या बातोंको स्थापन करते हुवे। अविधिरूप उन्मार्गके पाखण्डको फैलानेमें सार्थवाहकी तरह आगेवान बननेवाले और अपनेही गच्छके प्रभावक पुरुषों को दूषित ठहरानेवाले और बाल जीवोंको सत्य बातोंके निन्दक बना करके दुर्लभबोधिके कारणसे संसारकीखाड़मे गेरनेवाले ऐसे ऐसे महान् अनर्थ करनेवालेको गच्छपक्षकादृष्टिरागसे-गीतार्थ, न्यायाम्भोनिधिजी (न्यायके समुद्र) और युगप्रधान, कलिकाल सर्वज्ञ समान जैनाचार्य्य वगैरहकी लम्बी लम्बी ओपमाओंके ऐसे उत्सूत्री गाड़कदाग्रहियोंकी महिमा बड़ा करके आईबरसे भोले जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें फँसानेके लिये उत्सूत्रभाषणोंके महान् अनर्थका विचार न करके उपरोक्त मिथ्या गुण लिखने-वालोंकी क्यागतिहोगी तथा कितनासंसारबढ़ावेंगे औरसम्यक्त्व रत्न कैसे प्राप्तकर सकेंगे सो तो श्रीज्ञानीजीमहाराज जाने।

अब श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषोंको मेरा इतनाही कहना है कि उपरके लेखको पढ़के दृष्टिरागके पक्षपातको न रखते हुये संसार वृद्धिकी

संसार बढ़ाया इस न्यायानुसार आपके गुरुजी न्यायाम्भो-
निधिजीने इतने उत्सूत्र भाषणोंसे कितना संसार बढ़ाया
होगा सो तो आप लोगोंको भी न्याय दृष्टिसे हृदयमें
विचार करना उचित है और अब आप लोग भी उसी
तरहके उत्सूत्र भाषणोंसे मिथ्या झगड़ा करते हुए श्रीजिने-
श्वर भगवान्की आज्ञानुसार मोक्षमार्गको हेतुरूप सत्य-
बातोंका निषेध करके श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध संसार वृद्धिकी हेतु-
भूत मिथ्या कल्पित बातोंको स्थापन करके बाल जीवोंको
सत्यबात परसे श्रद्धाभ्रष्ट करते हो और मिथ्यात्वको बढ़ाते
हो सो कितना संसार बढ़ावोगे सो तो श्रीज्ञानीजी महा-
राज जाने–यदि आपको संसार वृद्धिका भय होवे और
श्रीजिनाज्ञाके आराधन करनेकी इच्छा होवे तो जमालिके
शिष्योंकी तरह आपभी करो तथा न्यायाम्भोनिधिजीके
समुदायवालोंको भी ऐसेही करना चाहिये क्योंकि जमा-
लिके उत्सूत्र परूपनाकी उन्हके शिष्योंको जबतक मालूम
नही थी तबतक तो जमालिके कहने मुजबकी सत्य माना
परन्तु जब अपने गुरुकी श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध उत्सूत्र परू-
पनाकी मालूम होगई तब उसीको छोड़ करके श्रीवीर-
प्रभुजीके पास आकर सत्यग्राही होगये तैसेही न्यायाम्भो-
निधिजीके शिष्यवर्गमें भी जो जो महाशय आत्मार्थी सत्य
ग्राही होवेंगे सो तो दृष्टिरागका पक्षको न रखके अपने
गुरुकी उत्सूत्र भाषणकी बातोंको छोड़कर शास्त्रानुसार सत्य
बातोंको ग्रहण करके अपनी आत्माका कल्याण करेंगे और
भव्यजनोंको करावेंगे ।

इति छठे महाशयजीके लेखकी संक्षिप्त समीक्षा समाप्ता ।

निर्मूलता समूलताका विचार छोड़ अपनी परम्परा प
आरूढ़ होकर धर्मकृत्योंको करते हैं) इस लेखको देखते
मेरेको बड़ाही विचार उत्पन्न हुवा कि–सातवें महाशयजी
श्रीधर्मविजयजी और उन्होंकी समुदायवाले साधुजी बहुत
वर्षोंसें काशीमें रह करके अभ्यास करते हैं इसलिये
विद्वान् कहलाते हैं परन्तु श्रीजैनशास्त्रोंका तात्पर्य्य उन्होंको
समझमें नही आया मालूम होता हैं क्योंकि आत्मार्थी
प्राणियोंको निर्मूलता समूलता इन दोनुंका विचार
अवश्यमेव करना उचित है और निर्मूलता, याने–शास्त्रोंके
प्रमाण विना गच्छ कदाग्रहके परम्पराकी जो मिथ्या बात
होवे उसीको छोड़ देना चाहिये और समूलता, याने
शास्त्रोंके प्रमाणयुक्त कदाग्रह रहित गच्छ परम्पराकी
जो सत्य बात होवे उसीको ग्रहण करना चाहिये और
हेय, ज्ञेय, उपादेय, इन तीनो बातोंकी खास करके
प्रथमही विचारनेकी आवश्यकता श्रीजैनशास्त्रोंमें खुलासा
पूर्वक दर्शाई है, इसलिये निर्मूलता, हेय त्यागने योग्य
होनेसें और समूलता, उपादेय ग्रहण करने योग्यहोनेसें
दोनुं का विचार छोड़ देना कदापि नही हो सकता है
और आत्मकल्याणाभिलाषी निर्मूलता त्यागने योग्यका
तथा समूलता ग्रहण करने योग्यका विचार जबतक नही
करेगा तबतक उसीको श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध वर्त्तनेका अथवा
श्रीजिनाज्ञा मुजब वर्त्तनेका, बन्धका अथवा मोक्षका,
मिथ्यात्वका अथवा सम्यक्त्वका, संसार वृद्धिका अथवा
आत्मकल्याणके कार्य्योंका, भेदभावके निर्णयको प्राप्त नही
हो सकेगा और जबतक ऊपरकी बातोंकी भिन्नताको नही

समझे था तबतक उन्होंको आत्म कल्याणकारकता भी नही मिले था तो फिर साव करके श्रीजिनाज्ञा मुजब श्रावकधर्म और साधुधर्म कैसे बनेगा याने-निर्मूलता समूलताका विचार छोड़ करके धर्मकृत्योंके करनेवालोंको मोक्ष साधन नही हो सकेगा है क्योंकि उन्होंका धर्मकृत्य तो तत्त्वा-तत्त्वका उपयोगशून्य होजाता है इसलिये आत्मार्थी प्राणि-योंको निर्मूलता समूलताका विचार करना अवश्यही युक्त है तथापि सातवें महाशयजीने दोनुंका विचार छोड़नेका लिखा हैं सो जिनशास्त्रोंके विरुद्ध होनेसें मिथ्यात्वका कारणरूप उत्सूत्र भाषण है इस बातको तत्वज्ञ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और (अपनी परम्परा पर आरूढ़ होकर धर्मकृत्योंको करते हैं) सातवें महाशयजीके इस अक्षरों पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि-अपनी परम्परापर आरूढ होकर धर्मकृत्योंका करनेका जो आप कहते हो तब तो पर्युषणा विचारके लेखमें आपको दूसरोंका खण्डन करके अपना मण्डन करना भी नही बनेगा क्योंकि सभी गच्छवाले अपनी अपनी परम्परापर आरूढ़ होकर धर्मकृत्य करते हैं जिन्होंका खण्डन करके अपना मण्डन करना सो तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक वृथा है और परम्परा द्रव्य और भावसें दो प्रकारकी शास्त्रकारोंने कही है जिसमें पञ्चाङ्गीके प्रमाण रहित वर्त्ताव सो तो गच्छ कदाग्रहकी द्रव्य परम्परा संसार वृद्धिकी हेतु भूत होनेसें आत्मार्थियोंको त्यागने योग्य है और पञ्चाङ्गीके प्रमाण सहित वर्त्ताव सो भाव परम्परा मोक्षकी कारण होनेसें आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य हैं

और द्रव्य भाव परम्पराका विशेष विस्तार देखनेकी इच्छा होवे तो श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गी वृत्तिकार श्रीअभयदेवसूरिजीकृत श्रीआगम-अष्टोत्तरी नामा ग्रन्थ 'आत्म-हितोपदेश-नामा पुस्तकमें' गुजराती भाषा सहित श्रीअहमदाबादसें छपके प्रसिद्ध होगया है सो पढ़नेसें अच्छी तरहसें मालूम हो जावेंगा।

और श्री सर्वज्ञ कथित श्रीजैनशासन अविसंवादी होनेसें श्रीतीर्थङ्कर भगवानोंके जितने गणधर महाराज होते हैं उतनेही गच्छ कहे जाते हैं उन्ह सबीही गच्छवाले महानुभावोंकी ऐकही परूपना तथा एकही वर्ताव होता है और इस वर्तमान कालमें तो बहुतही गच्छवालोंके आपसमें अनेक तरहके विसंवाद होनेसें जुदी जुदी परूपना तथा जुदा जुदा वर्ताव है और बहुतही गच्छवाले अपने अपने गच्छकी परम्परा मुजब धर्मकृत्य करते हुवे आप श्रीजिनाज्ञाके आराधक बनते हैं और दूसरे गच्छवालोंको झूठे ठहरा करके निषेध करनेके लिये-राग, द्वेष, निन्दा, ईर्षासें खण्डन मण्डन करके, आपसमें बड़ाही भारी विसंवादसें मिथ्यात्वको बढ़ानेवाला झगड़ा करते हैं इसलिये वर्तमान कालमें अपनी अपनी परम्परापर दूढ़ रहने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्यात्वका कारणरूप उत्सूत्र भाषण है क्योंकि अपनी अपनी परम्परा पर आरूढ़ होकर धर्मकृत्य करने वाले सबी गच्छवाले श्री जिनाज्ञाके आराधक हो जावेंगे तो फिर अविसंवादी श्री जैनशासनकी मर्यादा कैसें रहेगा इसलिये वर्तमान कालमें अपने अपने गच्छपरम्पराकी बातोंका पक्षपात न रखते

देखिये सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीने शास्त्र-विशारदकी पदवीको अङ्गीकार करी है तथापि पर्युषणा विचारके लेखकी आदिमेंही श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझे बिना निर्मूलता समूलताका विचार छोड़ने सम्बन्धी और अपनी२ परम्परा पर आरूढ़ होकर धर्मकार्य कहने सम्बन्धी दो उत्सूत्रभाषण प्रथमही बालजीवोंको मिथ्यात्वमें फँसानेवाले लिख दिये और पूर्वापरका कुछ भी विचार विवेक बुद्धिसें हृदयमें नही किया इसलिये शास्त्रविशारद पदवीको भी लजाया—यह भी एक अलौकिक आश्चर्य्य-कारक विद्वत्ताका नमूना है, खैर—अब पर्युषणा विचारके आगेका लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाता हूं—

पर्युषणा विचारका प्रथम पृष्ठके मध्यमें लिखा है कि—(पक्षपाती जन परस्पर निन्दादि अकृत्योंमें प्रवर्तमान होकर सत्यधर्मकी अवहेलना करते हैं) इस लेखपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सातवें महाशयजीने अपने कृत्य मुजब तथा अपने अन्तरगुण युक्तही ऊपरका लेख में सत्यही दर्शाया है क्योंकि खास आपही अपने पक्षकी कल्पित बातोंको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनाज्ञा मुजब सत्यबातोंको निषेध करके सत्यबातोंकी तथा सत्यबातोंको माननेवालोंकी निन्दा करते हुये कुयुक्तियोंसे बालजीवों को मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेके लियेही पर्युषणा विचारके लेखमें उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके अविसंवादी श्रीजिन-शासनमें विसंवादका झगड़ा बढ़ानेसें श्रीजिनशासनरूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करनेमें कुछ कम नहीं किया है सो

तो पर्युषणाविचारके लेखकी मेरी लिखी हुई सब समीक्षाको पढ़नेवाले सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और आगे फिरभी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके प्रथम पृष्ठकी पंक्ति १५वीं में पंक्ति१८ वीं तक लिखा है कि (क्षयोपशमिक मतिज्ञानवान् और श्रुतज्ञानवान् पुरुष से युक्ति प्रयुक्ति द्वारा अपने अपने मन्तव्यके स्थापन करने के लिये अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुए मालूम पड़ते हैं) सातवें महाशयजीका यह लिखना उपयोगशून्य ताके कारणसें है क्योंकि क्षयोपशमिक मतिज्ञानवान् और श्रुतज्ञानवान् पुरुष से युक्तिप्रयुक्ति द्वारा अपने अपने मन्तव्य को स्थापन करनेके लिये अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले सातवें महाशयजी ठहराते हैं तो क्या वर्त्तमान कालमें साधु और श्रावक श्रीजिनाज्ञाकी सत्यबातरूपी अपना मन्तव्य स्थापन करनेके लिये और श्रीजैनशासनके निन्दक ढूंढिये और तेरहा पन्थी लोगोंको तथा अन्यमतियोंको भी समझानेके लिये युक्ति प्रयुक्ति करनेवाले सबीही अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले ठहर जावेंगे सो कदापि नहीं इसलिये सातवें महाशयजीका ऊपरका लिखना उत्सूत्र भाषणरूप भूलका भरा हुवा है क्योंकि जो जो कल्पित बातोंको स्थापन करनेके लिये जानते हुवे भी कुयुक्तियें करके भोलेजीवोंको मिथ्यात्वमें गेरेंगे सो अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले ठहरेंगे किन्तु सब नही ठहर सकते हैं परन्तु यह बात तो सत्य है कि 'जैसा खावे अन्न—तैसा होवे मन' इस कहावतानुसार अपने पक्षकी कल्पित बातें जमानेके लिये खास आप अनेक बातोंमें

मासवृद्धिके अभावमें पचास दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही है नतु मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ।

और आगे फिर भी पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी ३ री पंक्तिसें १८॥ वीं पंक्ति तक लिखा है कि (वासाणं सवी-सइराइ मासे वइक्कंते सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं इत्यादि समवायाङ्गसूत्रके पाठका पूर्वभाग 'सवीसइ राइमासे वइ-क्कंते' पकड़कर उत्तर पाठकी क्या गति होगी इसका विचार न रख मूलमन्त्रको अलग छोड़कर दूसरे श्रावण के सुदीमें पर्युषणापर्वके पाँचकृत्य 'संवत्सरप्रतिक्रान्ति र्लुञ्चनं चाष्टमं तपः । सर्वार्हद्भक्तिपूजा च सङ्घस्य क्षामणं मिथः' ॥ १ ॥ अर्थात् १ सांवत्सरिकप्रतिक्रमण, २ केशलुञ्चन, ३ अष्टमतपः, ४ सर्वमन्दिरमें चैत्यवन्दन पूजादि, ५ चतुर्विध सङ्घके साथ क्षामणा करते हैं और भक्तोंको कराते हैं) ।

सातवें महाशयजीनें ऊपरके लेखमें दूसरे श्रावण शुदी में पांचकृत्यों सहित पर्युषणा करनेवालोंकी श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्तर भागको छोड़ करके पूर्वभागको पकड़ने वाले ठहराये है सो अज्ञातपनेसें मिथ्या है क्योंकि श्रीसम-वायाङ्गजी सूत्रका पाठ मासवृद्धिके अभावमें श्रीजैनपञ्चाङ्गा-नुसार चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें चन्द्रसंवत्सर-सम्बन्धी प्राचीनकालाश्रयी है और वर्त्तमानकालमें श्री-कल्पसूत्रके मूल पाठानुसार तथा उन्हीकी अनेक व्याख्या-ओंके अनुसार आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती हैं इसलिये श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्तरभागको छोड़कर पूर्वभागको पकड़ने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है ।

और (उत्तरपाठकी क्या गति होगी) सातवें महाशयजीका यह लिखना भी विद्वत्ताके अजीर्णताका है क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ चार मासके वर्षाकाल सम्बन्धी होनेसें चार मासके वर्षाकालमें उसी मुजब वर्त्ताव होता है परन्तु सातवें महाशयजी श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्मस्वामीजी कृत श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका तथा श्रीअभयदेव सूरिजी कृत तद्वृत्तिके पाठका अभिप्रायः जाने बिना सूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें दो श्रावणादि होनेसें पाँच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें उसी पाठको आगे करके बालजीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरते हुये उत्सूत्र भाषणरूप कदाग्रह जमाते हैं सो क्या गति होगी सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने।

देखिये बड़ेही आश्चर्यकी बात है कि अपना कदाग्रहकी उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित बातको जमानेके लिये (उत्तरपाठकी क्या गति होगी) ऐसा तुच्छ शब्द लिखके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठ पर आक्षेप करते कुछ लज्जा भी नही पाते हैं यह भी एक कलयुगी विद्वत्ताका नमुना है।

और (मूलमन्त्रको अलग छोड़कर) यह लिखना भी 'चोर दंडे-कोटवालको' इस न्यायानुसार सत्य सातवें महाशयजी आप अनेक बातोंमें मूलमन्त्ररूप अनेक शास्त्रोंके मूलपाठोंको अलग छोड़ते हैं फिर दूसरोंको मिथ्या दूषण लगाते हैं सो उचित नहीं है क्योंकि दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवाले श्रीकल्पसूत्रका मूलमन्त्ररूपी पाठके अनुसारही करते हैं और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ चार मासके वर्षाकाल सम्बन्धी होनेसें उसी मुजबही मानते हैं इसलिये दूसरे

और भी अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करने सम्बन्धी
अनेक शास्त्रोंके प्रमाण आगे भी लिखनेमें आवेंगे इसीसे
अनुसार और कालानुसार युक्तिपूर्वक श्रीजिनाज्ञाके आरा-
धन करने वाले आत्मार्थियोंको अधिकमासको गिनती
निश्चय करके प्रमाण करनी चाहिये तथापि सातवें महा-
शयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करते हुवे श्री-
अनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उत्थापन
करके पञ्चाङ्गीके मूलमन्त्ररूपी प्रत्यक्ष पाठोंको जानते हुवे
भी अलग छोड़ते हैं और श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि
महाराजोंकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणों सहित
कालानुसार और सत्य युक्तिपूर्वक अधिकमासको गिनती
प्रमाण करते हैं जिन्होंको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगा
करके निषेध करते हैं इसलिये शास्त्रानुसार अधिक मासको
प्रमाण करने वालोंकी वृथाही निन्दा करके श्रीजिनाज्ञारूपी
सत्यधर्मकी अवहेलना करनेवाले भी सातवें महाशयजी हैं।

३ तीसरा—श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने (श्री
आचाराङ्गजी सूत्रकी चूलिकाके मूलपाठमें तथा श्रीस्थानाङ्ग
जी सूत्रके पांचवें ठाणेके मूलपाठमें और श्रीकल्पसूत्रके मूल
पाठ वगैरह) पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके मूलमन्त्ररूपी पाठोंमें
चरम तीर्थंकर श्रीवीरप्रभुके ६ कल्याणकों को खुलासापूर्वक
कहे हैं (इसका विशेष निर्णय शास्त्रोंके पाठों सहित आगे
लिखनेमें आवेगा) इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पञ्चाङ्गीके
शास्त्रोंकी श्रद्धावाले आत्मार्थी पुरुषोंको प्रमाण करने योग्य
तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व
सेवन करते हुवे अनेक शास्त्रोंके पाठोंको मूलमन्त्ररूपी

है कि--खास सातवें महाशयजीकेही परमपूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविक श्रीदेवेन्द्रसूरिजीने श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिमें, श्रीकुलमण्डनसूरिजीने श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थमें, श्रीरत्नशेखरसूरिजीने श्रीवन्दीता सूत्रकी वृत्तिमें, और श्रीहीरविजय सूरिजीके सन्तानीये श्रीमानविजयजीने तथा श्रीयशोविजयजीने श्रीधर्मसंग्रहकी वृत्तिमें खुलासा पूर्वक सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करना कहा है इन महाराजोंको सातवें महाशयजी शुद्ध-परूपक आत्मार्थी श्रीजिनाज्ञाके आराधक बुद्धि निधान कहते हैं जिसमें भी विशेष करके श्रीयशोविजयजीके नाम से श्रीकाशी (बनारसी) नगरीमें पाठशाला स्थापन करी है तथापि उन महाराजोंके कहने मुजब सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेको प्रमाण नही करते हैं फिर उन महाराजोंको पूज्य भी कहते हैं यह तो प्रत्यक्ष उन महाराजोंके कहने पर तथा पञ्चाङ्गीके शास्त्रों पर श्रद्धा रहितका नमूना है । यदि सातवें महाशयजी अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोंके कहने मुजब तथा श्रीयशोविजयजीके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उन महाराजके कहने मुजब वर्तने-वाले, तथा उन महाराजोंके पूर्णभक्त, और पञ्चाङ्गीके शास्त्रों पर श्रद्धा रखने वाले होवेंगे, तब तो सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेको प्रमाण करके अपने भक्तोंसे जरूरही करावेंगे तो सातवें महाशयजीको आत्मार्थी समझनेमें आवेंगा । सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते २१ शास्त्रोंमें लिखी है परन्तु प्रथम इरियावही किसी भी शास्त्रमें नही लिखी है इसका

पूर्वक निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ३१० से ३२९ तक

भपरमेंही छपगया है उसीको पढ़ करके भी सातवें महाशय जी अपने कदाग्रहके वश होकरके शास्त्रानुसार सत्यबात को प्रमाण नही करेंगे तो अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोंके वाक्य पर तथा श्रीधर्मविजयजीके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उन महाराजके वाक्य पर और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठों पर श्रद्धा रखनेवाले आत्मार्थी है ऐसा कोई भी विवेकी सज्जन पाठकवर्ग नहीं मान सकेगा जिसके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उसी महाराजके वाक्य मुजब प्रमाण नहीं करना यह तो विशेष लज्जाका कारणहै

इत्यादि अनेक बातोंमें सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुये मूलसूत्रादि पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंको जानते हुये भी अलग छोड़ करके शास्त्रोंके प्रमाण बिना अपनी मतिकल्पनासें कुयुक्तियोंका सहारासे करके उत्सूत्र भाषणमें पड़ते हैं और पञ्चाङ्गीके प्रमाण सहित शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक ऊपरोक्तादि अनेक बातोंको प्रमाण करने वालोंको झूठे ठहरा करके मिथ्या दूषण लगा कर ऊपरोक्त बातोंको निषेध करते हैं इसलिये श्रीजिनेश्वरभगवान्की आज्ञानुसार वर्त्तने वालोंकी वृथा निन्दा करके शास्त्रानुसार ऊपरोक्तादि बातोंके विरुद्ध अविसंवादी श्रीजिनशासनमें विसंवादरूपी मिथ्यात्वका झगड़ा बढ़ानेसें अविसंवादी श्रीजैनशासनरूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करने वाले भी सातवें महाशयजीही है। और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंको प्रत्यक्ष देखते हुये भी प्रमाण नहीं करते है और अपना कदाग्रहकी कल्पित कुयुक्तियोंको आगे करके दृष्टिरागी भूढे पक्षग्राही बालजीवोंको मिथ्यात्वमें गेरते हैं

इसलिये सत्यपक्षका निरादर करके असत्य पक्षका स्थापन करनेवाले भी सातवें महाशयजी है इस बातको निष्पक्ष पाती आत्मार्थी विवेकी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठानुसार तथा उन्होंकी अनेक व्याख्यानुसार आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालों पर द्वेष बुद्धि करके आक्षेपरूप सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी १८ वीं पंक्ति में २० वीं पंक्ति तक लिखा है कि (वस्तुतः तो भगवान्‌की आज्ञाके आराधक भद्रजीवों पर कल्पित दोषोंका आरोप करके अपने भक्तोंको भ्रमजालमें फँसाकर संसार बढ़ाते हैं)

सातवें महाशयजीका इस लेखको देखकर मेरेको बड़ाही आश्चर्य्य सहित खेद उत्पन्न होता है कि जैसे ढुंढिये तेरहा पन्थी लोग अपने कदाग्रहकी कल्पित बातोंको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञानुसार वर्त्तने वाले पुरुषोंकी झूठी निन्दा करके संसार वृद्धिका कारण करते हैं तैसेही सातवें महाशयजी भी इतने विद्वान् कहलाते हुवे भी अपने कदाग्रहकी कल्पित बातको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञानुसार वर्त्तनेवाले पुरुषोंकी झूठी निन्दा करके संसार वृद्धिका कारण करते हैं क्योंकि–श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, वृत्ति और प्रकरणादि अनेक शास्त्रमें प्रगटपने आषाढ़ चौमासीसें दिनोंकी गिनतीके हिसाबसें ५० दिने निश्चय करके श्रीपर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है उसीके अनुसार श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठ

संसारवृद्धिके फल तो मिलनेका दिखता है इस बातको श्रीजैनशास्त्रोंके तत्वज्ञ पुरुष अच्छी तरहसे विचार लेवें ;—

और भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी ८।९।१० पंक्तियोंमें लिखा है कि (अधिक मासको लेखामें गिनकर पर्युषणा पर्व करनेवाले महानुभावोंको नीचे लिखे हुए दोषों पर पक्षपात रहित विचार करनेकी सूचना दी जाती है)।

इस लेखको देखकर मेरेको बड़ेही खेदके साथ लिखना पड़ता है कि सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीने श्रीजैन-शास्त्रोंके तात्पर्य्यको बिना समझे ऊपरके लेखमें इन्होंने श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और खास अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी आशातनाका कारण रूप संसार वृद्धिके हेतुभूत खूबही अज्ञतासें अनुचित लिखा है क्योंकि अनन्ते काल हुवे श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने अधिकमासको लेखामें गिन करही पर्युषणा करते आये हैं तथा वर्त्तमान इस पञ्चम कालमें भी श्रीजिनाज्ञाके आराधक सबीही आत्मार्थी जैनाचार्य्योंने अधिक मासको लेखामें गिन करही पर्युषणा करी है और आगे भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराज जो जो होवेंगे सो सबीही अधिक मासको गिनतीमें ले करही पर्युषणा करेंगे और अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको गिनतीमें लेकरही पर्युषणा करनी लिखी है इसलिये अधिक मासको गिनतीमें लेकरके जो पर्युषणा करते हैं सोही श्रीजिनाज्ञाके आराधक है और अधिक मासको गिनतीमें नीषेध करके पर्युषणा करते हैं सोही श्रीजिनाज्ञाके विराधक

श्रीगच्छाचारपयन्नाकी वृत्तिमें १६ इत्यादि शास्त्रोंमें मासवृद्धिके अभावमें चन्द्रसम्वत्सरमें चारमासके १२० दिन का वर्षाकालमें ५० दिने पर्युषणा करनेमें पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक ७० दिन रहते हैं जिसके सम्बन्धमें इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ८४ तथा ९९ और ११० । १११ वगैरहमें कितनीही जगह पाठ भी छप गये हैं और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें जैनपञ्चाङ्गानुसार आषाढ़ चौमासीसे बीश दिने पर्युषणा करनेमें आती थी तब भी पर्युषणा के पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन रहते थे इसका भी विशेष खुलासा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १०१ से १११ तक छप गया है और वर्त्तमान कालमें जैनपञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होती तो भी ५० दिनेही पर्यु-षणा करनेकी मर्य्यादा है सो भी इसीही ग्रन्थकी आदिमें पृष्ठ ३० तक और छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके नाम की समीक्षामें पृष्ठ २८६ से ३०० तक छप गया है इसलिये वर्त्तमानकालमें दो श्रावणादि होनेसे पांच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन रहते हैं सो भी शास्त्रानु-सार और युक्तिपूर्वक होनेसे कोई भी दूषण नहीं है इसका भी विशेष निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १०० से १४० तक और पृष्ठ १०१ से आगे १६१ तक छप गया है इसलिये दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रहने चाहिये और १०० दिन होनेसे दूषण बतानेके वास्ते सातवें महाशयजीने लिखना सो दूषण और उत्सूत्र भाषण है, सो पाठकवर्ग विचारलेवेंगे.

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी २०वीं पंक्तिसें चौथे पृष्ठकी दूसरी पंक्ति तक लिखा है कि (दूसरा दोष—भाद्रशुदीमें पर्युषणा पर्व कहा हुवा है तत्सम्बन्धी पाठ आगे कहेंगे अधिक-मास माननेवाले श्रावण शुदीमें पर्युषणा करते हैं शास्त्रानु-कूल न होनेसें आज्ञाभङ्ग दोष है) इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जनपुरुषों मास वृद्धिके अभावसें चन्द्रसंवत्सरमें भाद्रपदमें पर्युषणा होनेका दोनुं चूर्णिकार महाराजोंने कहा है तथापि सातवें महा-शयजीनें वर्त्तमानकालमें मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये आगे पीछेके सम्बन्ध वाले पाठोंको छोड़ करके दोनुं चूर्णिकार महाराजोंके विरुद्ध थोड़ासा अधूरा पाठ मायावृत्तिसें आगे लिखा है जिसकी समीक्षा मैंभी आगेही करूंगा। परन्तु इस जगह तो दो श्रावण होनेसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालों को सातवें महाशयजीने शास्त्र विरुद्ध ठहरा करके आज्ञा भङ्गका दूसरा दूषण लगाया है सो शास्त्रोंके प्रमाणपूर्वक वर्त्तने वालोंको झूठे ठहरा करके मिथ्यादूषण लगाया है तथा उत्सूत्र भाषणसें सत्य बातका निषेध करके मिथ्यात्व बढ़ाया है और अपने विद्वत्ताकी हांसी भी कराई है क्योंकि अधिकमासको गिनतीमें लेनेका श्रीजैनशास्त्रानुसार तथा कालानुसार लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब और युक्तिपूर्वक निश्चय करके स्वयं सिद्ध है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध नही हो सकती है इसका विशेष विस्तार छहों महाशयोंके लेखोंकी समीक्षामें अच्छी तरहसें छप गया है

और आषाढ़ चौमासीसें पचास दिने अवश्यही पर्युषणा पर्व करनेका सर्वत्र शास्त्रोंमें कहा है जिसका भी विशेष विस्तार इसीही ग्रन्थकी आदिसें लेकर ऊपर तकमें अनेक जगह छप गया है इसलिये वर्तमान कालमें ५० दिनके हिसाबसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करना सो शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक सत्य होनेसें उसी मुजब वर्तनेवालोंको भी सातवें महाशयजीने दूषण लगाया है सो निःकेवल संसार वृद्धिके हेतुभूत उत्सूत्र भाषण किया है इस बातको निष्पक्षपाती पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे। और देखिये बड़ेही आश्चर्यकी बात है कि सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजी इतने विद्वान् कहलाते हैं और हरवर्ष गांव गांवमें श्रीकल्पसूत्रका मूल पाठको तथा उन्होंकी वृत्तिको व्याख्यानमें वांचते हैं उसी में ५० दिने पर्युषणा करनेका लिखा है उसी मुजबही दूसरे श्रावणमें ५० दिने पर्युषणा करते हैं जिन्होंको अपनी मति कल्पनासें आज्ञाभङ्गका दूषण लगाना सो विवेकशून्य कदाग्रही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी और अपनी विद्वत्ताकी हांसी करानेवालेके सिवाय दूसरा कौन होगा सो भी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे ;—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषणा विचारके चौथे पृष्ठकी तीसरी पंक्तिसें चौदह वीं पंक्ति तक लिखा है कि (अधिक मासके मानने वालोंको चौमासी क्षमापनाके समय 'पंचण्हं मासाणं दसण्हं पक्खाणं पञ्चासुत्तरसयराइंदिआणमित्यादि' और सांवत्सरिक क्षमापनाके समय 'तेरसण्हं मासाणं छव्वीसण्हं पक्खाणं' पाठको कल्पना करनी पड़ेगी । यदि ऐसा करोगे तो कल्पित आचार

होनेसे फलसे वञ्चित रहोगे, क्योंकि शास्त्रमें तो 'चहुवहं मासाणं अट्ठपहं पक्खाणं' इत्यादि तथा 'बारसण्हं मासाणं चउवीसण्हं पक्खाणं' इत्यादि पाठ है इसके अतिरिक्त पाठ नहीं है उसके रहने पर यदि नई कल्पना करोगे तो कल्पना-कुशल, आज्ञाका पालन करनेवाला है या नहीं, यह पाठक स्वयं विचार कर सकते हैं)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों सातवें महाशयजीके ऊपरका लेखको देखकर मेरेको बड़ाही आश्चर्य उत्पन्न होता है कि सातवें महाशयजीके विद्वत्ताकी विवेक बुद्धि (ऊपरका लेख लिखते समय) किस जगह चली गई होगी सो मासवृद्धिके अभावकी बातको मासवृद्धि होतेभी बाल जीवोंको लिख दिखाकरके अपनी बात जमानेके लिये दूसरोंको मिथ्या दूषण लगाते हुवे उत्सूत्र भाषणसें संसार वृद्धिका भय हृदयमें क्यों नहीं लाते हैं क्योंकि जिस जिस शास्त्रमें सांवत्सरिक क्षामणाधिकारे बारह मास, चौवीश पक्ष लिखे हैं सो तो निश्चय करके मासवृद्धिके अभावसे चन्द्र संवत्सर संबंधी है नतु मास वृद्धि होतेभी अभिवर्द्धित संवत्सर में क्योंकि मास-वृद्धि होनेसें तेरह मास और छवीश पक्ष व्यतीत होने पर भी बारह मास और चौवीश पक्षके क्षामणा करना ऐसा कोई भी शास्त्रमें नहीं लिखा है ।

और श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्रमें १, तथा तद्वृत्तिमें २, श्रीसूर्य्य-प्रज्ञप्ति सूत्रमे ३, तथा तद्वृत्तिमें ४, श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ५, तथा तद्वृत्तिमें ६, श्रीनिशीथचूर्णिमें ७, श्रीजंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति सूत्रमें ८, तथा तीनकी पांच वृत्तियोंमें १३, श्रीप्रवचन-

सारोद्धारमें १४, तथा तद्वृत्तिमें १५, श्रीज्योतिष्करण्ड-
पयन्नामें १६, तथा तद्वृत्तिमें १७, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें
मास वृद्धि होनेसें अभिवर्द्धित संवत्सरके १३ मास, २६ पक्ष
खुलासा पूर्वक लिखे हैं और लौकिकपञ्चाङ्गमें भी अधिक
मास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षका वर्ष लिखा जाता
है और सब दुनिया भी धर्मकर्मके व्यवहारमें अधिकमासके
कारणसें तेरह मास छवीश पक्षको मान्य करती है इसी
मुजबही सब जैनी लोग भी वर्त्तते हैं इसलिये अधिक
मासके होनेसें तेरह मास, छवीश पक्षका धर्म्म, पापको
गिनतीमें लेकर उतनेही महिनोंके धर्म्मकार्योंकी अनुमोदना
और पाप कार्योंकी आलोचना लेनी शास्त्रानुसार और
युक्तिपूर्वक है क्योंकि अधिक मास होनेसे तेरह मास छवीश
पक्षमें धर्म्म, और अधर्म्म, करके धर्मकार्योंकी गिनती नहीं
करना और पापकार्योंकी आलोचना नहीं करना ऐसातो
कदापि नहीं हो सकता है।

और जब श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने
अधिकमासको गिनतीमें प्रमाण किया है और अभिवर्द्धित
संवत्सर तेरह मास छवीश पक्षका कहा है तो फिर भी
तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध अपनी कल्पना-
सें बारह मास चौवीश पक्ष कहके एक मासको ही वर्जित
कर देना और श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंका
कहा हुवा अभिवर्द्धित संवत्सरके मासका खंडन करना युक्ति-
[illegible] ऐसे [illegible] कदापि नहीं। और श्रीअनन्त तीर्थंकर
गणधरादि महाराजोंने अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया
[illegible] महाराजोंकी [illegible] [illegible] होता है [illegible]

निषेध करनेके लिये कटिबद्ध तैयार है तो फिर तेरह मास छवीस पक्ष कहेंगे ऐसा तो संशय ही नहीं हो सकता है। जब अधिक मासको गिनतीमें लेनेको ही जिन्हको लज्जा आती है तो फिर तेरह मास छवीश पक्ष कहना तो विशेष उन्हको लज्जाकी बात होवे तो कोई आश्चर्य नहीं है।

और सातवें महाशयको शास्त्रोंके पाठ मंजूर करने वाले होवें तो फिर अधिक मासको श्रीअनंत तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने प्रमाण किया है जिसका अधिकार इसी ही ग्रन्थके पृष्ठ ३२ में ४८ तक वगैरह कितनी ही जगह छप गया है और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते का उच्चारण किये पीछे इरियावही करनी वगैरह अनेक बातें शास्त्रोंमें विस्तारपूर्वक कही है जिसको तो प्रमाद न करते हुवे उलटा उत्थापन करते हैं फिर शास्त्रके पाठकी बात करना सो कैसी विद्वत्ता कही जावे इस बातको पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं।

शंका—अजी आप ऊपरमें अनेक शास्त्रोंके प्रमाणोंमें और युक्तियों में तेरह मास छवीश पक्षकी गिनती करके उतनोंही आलोचना लेकर उतनेही खामणे सांवत्सरिक प्रतिक्रमणमें करनेका दिखाते हो परन्तु सांवत्सरिक प्रतिक्रमणकी विधिमें १३ मास, २६ पक्षके, खामणे करके उतने ही मासोंकी आलोचना लेनी किसी शास्त्रमें क्यों नहीं लिखी है।

समाधान—भो देवानुप्रिय! सांवत्सरिक प्रतिक्रमणकी विधि में १३ मास, २६ पक्ष के खामणे करके उतने ही मास पक्षोंकी आलोचना लेनी किसी भी शास्त्र में नहीं लिखी है यह तेरा कहना अज्ञात सूचक है क्योंकि श्रीआव-

श्यक चूर्णि में१ तथा वृहद्वृत्ति में २, और लघुवृत्ति में ३ श्रीप्रवचन सारोद्धार में ४, तथा वृहद्वृत्ति में ५, और लघुवृत्तिमें ६, श्रीधर्मरत्न प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीअभयदेव सूरिजीकृत समाचारी ग्रन्थ में ८, श्रीजिनप्रभसूरिजीकृत विधि प्रपा समाचारी में ९, श्रीजिनपति सूरिजीकृत समाचारी में १०, श्रीसमाचारी शतकनामा ग्रन्थ में ११, श्रीषडावश्यक ग्रंथ में १२, श्रीतपगच्छ के श्रीजयचन्द्र सूरिजीकृत प्रतिक्रमण गर्भहेतुनामा ग्रंथ में १३, श्रीरत्नशेखरसूरिजीकृत श्रीश्राद्धविधि वृत्ति में १४, प्राचीन प्रतिक्रमण गर्भहेतुनामा ग्रंथमें १५, और श्रीपूर्वाचार्योंके बनाये समाचारियोंके चार ग्रंथोंमें १९, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें देवसी और राइ प्रतिक्रमणके अनंतर पाक्षिक प्रतिक्रमणके मुजबही चौमासी और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण की विधि कही है और चौमासी सांवत्सरिक शब्दका नामांतर करके चौमासी में २०, लोगस्स का कायोत्सर्ग तथा पांच साधुओंको क्षमानेकी और सांवत्सरिक में ४० लोगस्सका कायोत्सर्ग तथा ७ या ९ वगैरह साधुओंको क्षमाणेकी भिन्नता दिखाई है और क्षमाणा के अवसर में संवच्छर शब्द का ग्रहण करने में आता है। संवत्सर कहो। सांवत्सरी कहो। संवच्छरी कहो। वार्षिक कहो। सबका तात्पर्य एक है और संवत्सर शब्द यद्यपि-नक्षत्र संवत्सर १। ऋतु संवत्सर २। सूर्य संवत्सर ३. चंद्र संवत्सर ४. और अभिवर्द्धित संवत्सर ५ इन पांच प्रकार के अर्थों में ग्रहण होता है परन्तु क्षामणा के अवसर में तो दो अर्थ ग्रहण करने में आते हैं जिसमें प्रथम मास वृद्धि के अभावसे चन्द्र संवत्सर के बारह मास और चौवीश पक्ष अनेक शास्त्रों में कहे हैं और दूसरा मास

वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरके तेरह मास और छवीश पक्ष भी अनेक शास्त्रोंमें कहे हैं इसलिये सांवत्सरिक क्षामणेमें मास वृद्धिके अभावमें चंद्रसंवत्सर संबन्धी बारह मास चौवीस पक्ष कहने चाहिये और मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सर सम्बन्धी तेरह मास छवीश पक्ष कहने चाहिये और जिस शास्त्रमें बारह मास चौवीश पक्ष लिखे होवें सो चन्द्रसंवत्सर सम्बन्धी समझने चाहिये। इतने पर भी मासवृद्धि होनेसे तेरह मास छवीश पक्ष व्यतीत होने पर भी बारह मास चौवीश पक्ष जो बोलते हैं सो कोई भी शास्त्र के प्रमाण बिना अपनी मति कल्पनाका वर्ताव करके श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा अभिवर्द्धित संवत्सरके नामको लंघन करके उत्सूत्र भाषणसें संसार वृद्धिका कारण करते हुये गुरुगम रहित श्रीजैनशास्त्रों के तात्पर्यको नहीं जाननेवाले हैं क्योंकि देखो सर्वत्र शास्त्रों में साधुके विहारकी व्याख्यामें नव कल्पि विहार साधुको करनेका कहा है सो मासवृद्धि के अभावसें होता है परन्तु शीतकालमें अथवा उष्णकालमें मासवृद्धि होनेसे अवश्य करके १० कल्पिविहार करनेका प्रत्यक्ष बनता हैं तथापि कोई हठवादी शीतकालमें अथवा उष्णकालमें मास वृद्धि होतेभी नवकल्पि विहार कहनेवालेको माया मिथ्या का दूषण लगता है क्योंकि जैसे कार्त्तिक पीछे साधुने विहार किया और मास कल्पके नियम मुजब विचरता है उसी समय शीतकाल में अथवा उष्णकाल में अधिक मास होगया तो उस अधिक मास में अवश्य करके दूसरे गांव विहार करेगा परन्तु एकही गांव में दो मास तक कदापि

नहीं ठहरेगा जब अधिक मास में विहार करके दूसरे गां
जायेगा तब उसीको दश कल्पि विहार हो जावेगा क्योंकि
चारमास शीतकालके चारमास उष्णकालके तथा एक अधिक
मासका और एक वर्षाऋतुके चारमासका इस तरहसे अवश्य
करके दसकल्पि विहार होता है तथापि नव कल्पि कहने-
वाला तो प्रत्यक्ष माया सहित मिथ्याभाषण करनेवाला
ठहरेगा सो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं और जैसे मास
वृद्धि होनेसे दसकल्पि विहार करने में आता है तैसेही मा-
सवृद्धि होनेसें तेरह मास छवीश पक्षोंकी गिनती करके
उतनेही क्षामणे करने में आते हैं सो आत्मार्थी श्रीजिने-
श्वर भगवान् की आज्ञाके आराधक सत्यग्राही भव्यजीव
तो मंजूर करते हैं परन्तु उत्सूत्र भाषक कदाग्रही विद्वत्ता
के अभिमानको धारण करनेवालोंकी तो वातही जुदी है।
और अधिक मासकी गिनती श्रीतीर्थंकर गणधरादि महा-
राजोंकी कहीहुई है जिसको संसारगामी मिथ्यात्वी श्रीजि
नाज्ञाका विराधकके सिवाय कौन निषेध करेगा और
अधिक मासको माननेवालों को दूषण लगाकरके फिर आप
निर्दूषण भी बनेगा। सो विवेकी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे।
और अधिक मासके कारणसे ही तेरह मास छवीश पक्षका
अभिवर्द्धित संवत्सर श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महा-
राजोंने कहा है इस लिये अवश्य करके पांच मासका एक
अभिवर्द्धित चौमासा भी मानना चाहिये ।

(शङ्का) अधिक मासके कारणसें पांच मासका अभि-
वर्द्धित चौमासा किस शास्त्रमें लिखा है ।

(समाधान) भो देवानुप्रिय! ऊपर ही ३६३, ३६४ पृष्ठ में

१३ शास्त्रोंके प्रमाण अधिक मासके कारणसें तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित संवत्सर संबंधी कहे हैं तैसे शास्त्रोंमें तथा युक्तियोंमें और प्रत्यक्ष अनुभवसें भी अधिक मासके कारणसें पांच मासका अभिवर्द्धित चौमासा प्रत्यक्ष सिद्ध होता है क्योंकि शीतकालके, उष्णकालके, और वर्षाकालके चार चार मासका प्रमाण है परन्तु जैन पंचांगानुसार और लौकिक पंचांगानुसार जिस ऋतुमें अधिक मास होवे उसी ऋतुका अभिवर्द्धित चौमासा पांच मासके प्रमाणका मानना स्वयं सिद्ध है इस लिये अधिकमासके कारणसें चौमासामें पांचमास दशपक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीशपक्षका अवश्य करके व्यवहार करना चाहिये।

शङ्का—अभी आप अधिक मासके कारणसें चौमासामें पांच मास, दशपक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीश पक्षका व्यवहार करना कहते हो सो खामणाके अवसरमें तो हो सकता है, परन्तु मुहपत्ती (मुखवस्त्रिका)की प्रतिलेखना करते, वांदणा देते, अतिचारोंकी आलोचना करते वगैरह कार्योंमें चौमासीमें पांच मास, दश पक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीश पक्षका व्यवहार कैसे हो सकेगा।

समाधान—भो देवानुप्रिय—जैसे मास वृद्धिके अभावसें चौमासीमें चार मास, आठ पक्षका और सांवत्सरीमें बारह मास, चौवीश पक्षका, अर्थ ग्रहण करनेमें आता है और मुखवस्त्रिकाकी प्रतिलेखनामें, वांदणा देनेमें, अतिचारोंकी आलोचना वगैरह कार्योंमें उतने ही मास पक्षोंकी भावना होती है,तैसे ही मास वृद्धि होनेके कारणसें चौमासीमें पांच मास,दश पक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीस पक्षका

अर्थ ग्रहण होता है इसलिये चौमासीमें और सांवत्सरिक कार्यों में भी उतने ही मास पक्षोंकी भावना करनेमें आती है,

और जैसे चंद्रसंवत्सरमें-सांवत्सरिक प्रतिक्रमणमें क्षामणाधिकारे 'बारसण्हं मासाणं चउवीसण्हं पक्खाणं तिन्निसयसट्ठी राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके बारह मास, चौवीश पक्ष, तीन सौ साठ (३६०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है और चौमासी प्रतिक्रमणमें 'चउण्हं मासाणं अट्ठण्हं पक्खाणं वीसुत्तरसय राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके चार मास, आठ पक्ष, एक सौ वीश रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है, तैसे ही अभिवर्द्धित संवत्सरमें भी सांवत्सरिक क्षामणाधिकारे 'तेरसण्हं मासाणं छव्वीसण्हं पक्खाणं तिन्निसयणउइ राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके तेरह मास, छवीश पक्ष, तीन सौ नब्बे (३९०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है और अभिवर्द्धित चौमासेमें भी 'पंचण्हं मासाणं दसण्हं पक्खाणं पंचासुत्तरसय राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके पांच मास, दश पक्ष एक सौ पचास (१५०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है।

ऊपरमें श्रीआवश्यकचूर्णि, श्रीप्रवचनसारोद्धार, श्रीधर्मरत्नप्रकरणवृत्ति और श्रीअभयदेवसूरिजीकृत समाचारी वगैरह शास्त्रोंके प्रमाण प्रतिक्रमण संबंधी लिखनेमें आये हैं, इन्हीं शास्त्रोंके अनुसार (संवच्छर) संवत्सर शब्दके ऊपरोक्त न्यायानुसार चंद्र, अभिवर्द्धित इन दोनुं संवत्सरोंका अर्थ ग्रहण होनेसे क्षामणा संबंधी ऊपरका पाठ ऊपरोक्त शास्त्रोंके अनुसार ही समझना।

पूर्व पक्ष-अभी आप ऊपरोक्त शास्त्रोंके अनुसार चन्द्र संवत्सरका और अभिवर्द्धित संवत्सरका अर्थ ग्रहण करके चंद्रमें बारह मासादिसें और अभिवर्द्धितमें तेरह मासादिसें सांवत्सरीमें खामणा करनेका लिखतेहो परन्तु किसी भी पूर्वाचार्यजीने कोई भी शास्त्रमें ऐसा खुलासा क्यों नहीं लिखा है।

उत्तर पक्ष-भो देवानुप्रिय ! तेरेमें श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्यार्थको समझनेकी गुरुगम बिना विवेक बुद्धि नहीं है इसलिये बालजीवोंको मिथ्यात्वमें फँसानेके लिये वृथा ही ऐसी कुतर्क करता है क्योंकि जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने संवत्सर शब्दके चद्र और अभिवर्द्धितादि जुदे जुदे अर्थ कहे हैं जिसमें चन्द्रके बारह मास, चौवीस पक्ष और अभिवर्द्धितके तेरह मास, छवीश पक्ष खुलासे कह दिये है, इसलिये पूर्वाचार्योंने संवत्सर शब्दको ही ग्रहण करके व्याख्या करी है और यह तो अल्पबुद्धिवाला भी समझ सकता है कि जब अधिक मासकी गिनती शास्त्रोंमें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने प्रमाण करी है और प्रत्यक्षमें वर्त्तते हैं इसलिये पापकृत्योंकी आलोचनामें तो जरूर ही अधिक मास गिनतीमें लेना सो तो न्यायकी बात है परन्तु विवेकशून्य हठवादी होगा सो ऐसी कुतर्क करेगा कि—अधिक मासकी आलोचना कहां लिखी है जिसको यही कहना चाहिये कि अधिक मासको गिनतीमें लेकर फिर आलोचना नहीं करनी कहां लिखी है इसलिये ऐसी वृथा कुतर्कोंके करनेसें मिथ्यात्व बढ़ानेके सिवाय और कुछ भी लाभ नहीं उठा-सकेगा, क्योंकि जब अधिक मासकी गिनती मंजूर है तो फिर

आलोचना तो स्वयं मंजूर हो चुकी और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा तथा प्रमाण भी करा हुवा अधिक मासको उत्सूत्र भाषण करके निषेध करते हैं और प्रमाण करने वालोंको दूषण लगाते हैं सो पुरुष अधिक मासकी आलोचना नहीं करे तो उन्होंके मति कल्पनाकी बातही जुदी है परन्तु श्रीतीर्थङ्करगणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार अधिक मासकी गिनती प्रमाण करने वालोंको तो अवश्य ही अधिक मासकी आलोचना करना उचित है। इतने पर भी जो नहीं करने वाले हैं सो श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक हैं।

और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा परंपरानुसार चंद्रसंवत्सरका और अभिवर्द्धित संवत्सरका यथोचित अवसर पर जुदा जुदा अर्थ ग्रहण करके सांवत्सरीमें क्षामणा करनेकी अनुक्रमे अखंडित मर्यादा चली आती है इसलिये पूर्वाचार्यों ने अधिक मासकी गिनती करनेकी तो जगह जगह व्याख्या करी है परन्तु क्षामणा सम्बन्धी संवत्सरीमें लिखा है जिसका कारण यही है कि अधिक मास प्रमाण हुआ तो क्षामणे करनेका तो स्वयं प्रमाण हो चुका, जब नन्देतो साधु नाम लिया, तब महाव्रतधारी तो स्वयं सिद्ध हो चुका। जब श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की मूर्तिको श्रीजिन सदृश मान्य करी तब उसीका वंदना पूजना तो स्वयं सिद्ध होगया। जब व्याख्यान बांचना मंजूर कर लिया, तब व्याख्यानकार तो स्वयं सिद्ध होगया। ऐसे ऐसे अनेक दृष्टान्त प्रत्यक्ष हैं सो विवेकी पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं।

और श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्यको नहीं जानने वाले

इत्यादी पुरुषोंके तो श्रीप्रवचनसारोद्धार, तथा वृत्ति, और श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्ति, और श्रीअभयदेवसूरिजी वगैरह पूर्वाचार्योंके बनाये समाचारियोंके ग्रन्थ और प्रतिक्रमण गर्भ हेतु, श्रीश्राद्धविधिवृत्ति, वगैरह शास्त्रोंके अनुसार सांवत्सरीमें बारह मास चौवीश पक्षके खामणा करनेका ही नहीं बनेगा क्योंकि इन शास्त्रोंमें तो बारह मास चौवीश पक्ष भी नहीं लिखे हैं तो फिर बारह मासादिका अर्थ ऊपरके शास्त्रोंके अनुसार कैसे मान्य करेंगे और पांचोंही प्रतिक्रमणोंकी विधि ऊपरके शास्त्रोंमें कही है इसलिये ऊपर कहे सो शास्त्रोंके अनुसार पांच प्रतिक्रमणोंकी विधिको तो मान्य करनीही पड़ेगी और सवरसर शब्दसे बारह मासका अर्थ ग्रहण करोंगे तो मासवृद्धि होनेसे तेरह मासका भी अर्थ ग्रहण करनाही पड़ेगा सो तो न्यायकी बात हैं और पहिलेके कालमें ऐसी कुतर्क करनेवाले विवेकशून्य कदाग्रही पुरुष भी नहीं थे नहीं तो पूर्वाचार्यजी जरूर करके विस्तारसें खुलासा लिख देते क्योंकि जिस जिस समयमें जैसी जैसी कुतर्क करनेवाले पूर्वाचार्योंके समयमें जो जो हठवादी पुरुष थे जिन्होंको समझानेके लिये वैसे वैसेही खुलासा पूर्वाचार्योंने विस्तारसे किया है जैसे कि ईश्वरवादी, नास्तिक, वगैरहोंके लिये और श्रीजिनमूर्तिको तथा जिनमूर्तिकी पूजा सम्बन्धी शास्त्रोक्त विधिकी वर्णन करी हैं, परन्तु मूर्तिके और पूजाके सम्बन्धमें वर्त्तमान समय जैसी युक्तियां लिखनेकी जरूरत नहीं थी जिसका कारण कि–उस समय श्रीजिनमूर्तिके तथा उसीकी पूजाके निषेधक ढूंढिये, तेरहपन्थी, वगैरह

यद्यपि विवेकशून्य हठवादी कोई ऐसी कुतर्क करे कि— अमुक शास्त्रमें मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसम्वत्सरके लिये बारह मासके क्षामणे कहे हैं परन्तु मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सम्वत्सरके लिये तो कुछ नही कहा है, ऐसी कुतर्क करने वालेको अज्ञानीके सिवाय, तत्त्वज्ञ पुरुष और क्या कहेंगे क्योंकि एकके उद्देश्यसे जो व्याख्या करी होवे उसीके ही अनुसार दूसरेके लियेही यथोचित समझनेकी श्रीजैनशास्त्रोंमें मर्य्यादा है इसलिये जूदे नाम उद्देश्य करके जूदी जूदी व्याख्या शास्त्रकार नहीं करते हैं परन्तु जो सत्यग्राही विवेकी आत्मार्थी होवेंगे सो तो सद्गुरुकी सेवासे श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझके सत्यबात ग्रहण करेंगे और विवेक रहित हठवादी होगें जिसके कर्मोका दोष नतु शास्त्रकारोंका, जैसे—श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यायोंमें प्रसिद्ध बात है कि-कोई साधु स्थंडिले जङ्गलमें गयाथा सो कुछ ज्यादा देरीमें गुरु पास आया तब उस साधुको गुरु महाराजने देरीसे आनेका कारण पूछा तब उस साधुने रस्तेमें नाटकीये लोगोंका नाटक देखनेके कारण देरीसे आना हुवा सो कहा, तब गुरु महाराजने नाटकीये लोगोंका नाटक देखनेकी साधुको मनाई करी तब विवेकी बुद्धिवाले चतुर थे वे तो नाटकणी लुगाइयोंका नाटकवर्जनेका भी स्वयं समझ गये, और विवेक विनाके थे सो तो नाटकणी लुगाइयोंका नाटक देखनेको खड़े रहे, तब गुरु महाराजके कहने पर विवेक रहित होनेसे बोलेकी आपने नाटकीये लोगोंका नाटक देखनेकी मनाई करीथी परन्तु नाटकणी लुगाईयों का नाटक देखनेकी तो मनाई नही करी थी तब गुरु महा-

राजने कहा कि जब नाटकणीयें लोगोंका नाटक वर्जन किया तब नाटकणी लुगाइयोंका नाटक तो विशेष रागका कारण होनेसें स्वयं वर्जन समझना चाहिये तब उन्होंनेगुरु महाराजके कहने मुजबही मंजूर किया—और हठवादी मूर्ख थे सो तो गुरु महाराजकोही दूषित ठहराने लगे कि आपने नाटकीये लोगोंका नाटक वर्जन किया तो फिर नाटकणी लुगाइयोंका नाटक क्यों वर्जन नहीं किया—

ऊपरके लेखका क्षामणाके सम्बन्धमें तात्पर्य्य ऐसा है जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने संवत्सर शब्दके चन्द्र, अभिवर्द्धितादि जूदे जूदे भेद प्रमाण सहित कहे हैं और सांवत्सरिक क्षामणाके अधिकारमें संवत्सर शब्दसें व्याख्या करी है जिसमें मासवृद्धिके अभावसें चन्द्रसंवत्सरमें बारह मासादिसें क्षामणा करनेमें आते हैं उसीकेही अनुसार विवेक बुद्धिवाले चतुर होवेंगे सो तो मासवृद्धि होनेसें तेरह मासादिसें क्षामणा करनेका स्वयं समझ लेवेंगे और विवेक रहित होवेंगे सो शास्त्रोंके अनुसार युक्तिपूर्वक गुरु· महाराजके समझानेसें मान्य करेंगे और विवेक रहित हठवादी होवेंगे सो तो शास्त्रोंका प्रमाण और युक्ति होने पर भी शास्त्रकार महाराजोंकोही उलटे दूषित ठहरावेंगे कि अधिक मासको गिनतीके प्रमाण करके तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित संवत्सरको शास्त्र· कार लिख गये तो फिर अधिकमास होनेसें तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे करनेका क्यों नहीं लिख गये, इस तरहसें अपनी वक्र जड़ता प्रगट करके बालजीवोंको भी मिथ्यात्वमें फंसावेंगे, पर भवका भय नहीं रखेंगे,

और शास्त्रकारोंको मिथ्या दूषण लगाके,फिर आप निर्दूषण को बनेंगे, सो तो कलियुगकाही प्रभावके सिवाय और क्या होगा सो तत्त्वज्ञ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे।

प्रश्नः—श्रीजैनशास्त्रोंमें चन्द्रसंवत्सरके ३५४ दिनका और अभिवर्द्धित संवत्सरके ३८३ दिनका प्रमाणकहा है फिर सांवत्सरी सम्बन्धी चन्द्रसंवत्सरमें ३६० दिनके और अभिवर्द्धित संवत्सर में ३९० दिनके क्षामणे करनेका आप कैसे लिखते हो।

उत्तरः—भो देवानुप्रिय, श्रीजिनेन्द्र भगवानोंका कहा हुआ नयगर्भित श्रीजिन प्रवचनकी शैली गुरुगम और अनुभव बिना प्राप्त नहीं हो सकती है क्योंकि यद्यपि श्रीजैनशास्त्रोंमें चन्द्रसंवत्सरके ३५४ दिन, ११ घटीका, और ३६ पलका प्रमाण कहा है और अभिवर्द्धित संवत्सरके ३८३ दिन, ४२ घटीका, और ३४ पलका प्रमाण कहा है सो चन्द्रके विमानकी गतिके हिसाबसें निश्चय नय संबन्धी समझना चाहिये और जो चन्द्रसंवत्सरमें ३६० दिनके और अभिवर्द्धितमें ३९० दिनके क्षामणे करनेमें आते हैं सो दुनियाकी रीतिसें, व्यवहार नय करके, लोगोंको सुखसें उच्चारण हो सके इसलिये बहुत अपेक्षासें समझना चाहिये। और व्यवहार नयसें चन्द्रसंवत्सरमें ३६० दिनका और अभिवर्द्धित संवत्सरमें ३९० दिनका उच्चारण करके क्षामणे करनेमें आते हैं परन्तु निश्चय नय करके तो जितने समयसें सांवत्सरीमें क्षामणे करनेमें आवेंगे उतनेही समय तकके पापकृत्योंकी आलोचना हो सकेगी सो विशेष पाठकवर्ग भी स्वयं विचार लेवेंगे और चौमासी पाक्षिक देवसीराइ प्रतिक्रमण सम्बन्धी भी निश्चय नयकी और व्यवहार

नयकी अपेक्षा केलिये आगे लिखुंगा—

अब सत्यग्राही तत्वज्ञ पुरुषोंको न्यायदृष्टिसें विचार करना चाहिये कि अधिक मासके कारणसें चौमासीमें पांच मासादिसें और सांवत्सरिमें १३ मासादिसें क्षामणे करनेका अनेक शास्त्रोंके प्रमाणानुसार युक्तिपूर्वक और प्रत्यक्ष अनुभवसें स्वयं सिद्ध है सो तो मैंने ऊपरमें ही लिख दिखाया है परन्तु सातवें महाशयजी कोई भी शास्त्रके प्रमाण बिना पांच मास होते भी चार मासके क्षामण करने का और तेरह मास होते भी १२ मासके क्षामणे करनेका लिख दिखाके फिर शास्त्रानुसार पांच मासके और तेरह मासके क्षामणे करने वालोंको दूषण लगाते हैं सो अपने विद्वत्ताकी हांसी करा करके, संसार वृद्धिके हेतुभूत उत्सूत्र भाषणके सिवाय और क्या होगा सो पाठकवर्गको विचार करना चाहिये।

और भी आगे पर्युषणा विचारके चौथे पृष्ठकी १५ वीं पंक्तिसें २१वीं पंक्ति तक लिखा है कि-(दूसरी बात यह है किसी समय सोलह (१६) दिनका पक्ष होता है और कभी चौदह दिनका पक्ष होता है उस समय 'एक पक्खाणं पन्नरसण्हं दिवसाणं' इस पाठको छोड़कर क्या दूसरी पाठकी कल्पना करते हो यदि नही करते तो एक दिनका प्रायश्चित्त बाकी रह जायगा जैसे तुम्हारे मतमें 'तेरसण्हं मासाणं' इत्यादि पाठ कहनेसें अधिकमासका प्रायश्चित्त रह जाता है)—

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों सातवें महाशयजीके ऊपरका लेखको देखकर मेरेको बड़ाही विचार उत्पन्न होता है कि—सातवें

महाशयजी इतने विद्वान् कहलाते हैं तथापि श्रीजैन शास्त्रों के तात्पर्य समझे बिना अपने कदाग्रहके कल्पित पक्षको स्थापन करनेके लिये वृथाही बर्यो उत्सूत्र भाषण करके अपनी अज्ञता प्रगट करी है क्योंकि लौकिक ज्योतिषके गणित मुजब वर्तमानिक पञ्चाङ्गमें तिथियोंकी हानी और वृद्धि होनेका अनुक्रमे नियम है और अधिकमासकी तो सर्वथा करके वृद्धि ही होनेका नियम है परन्तु तिथिकी हानी होनेमें १४ दिनका पक्षकी तरह, मासकी हानी होकर ११ मासका वर्ष कदापि नहीं होता है इसलिये तिथिकी हानी अथवा वृद्धि होवे तो भी दुनियाके व्यवहारमें १५ दिनका पक्ष कहा जाता है जिससे क्षामणे भी १५ दिनके करनेमें आते हैं और मासकी तो हानी न होते, सर्वथा वृद्धिही होती है इसलिये दुनियाके व्यवहारमें भी तेरह मासका वर्ष कहा जाता है परन्तु मासवृद्धि होते भी बारह मासका वर्ष कोई भी बुद्धिमान विवेकी पुरुष नहीं कहते हैं जिससे मासवृद्धि होनेसें क्षामणे भी १३ मासकेही करनेमें आते हैं, परन्तु मासवृद्धि होते भी बारह मासके क्षामणे करनेका कोई भी बुद्धिवाले विवेकी पुरुष नहीं मान्य कर सकते हैं। इसलिये तिथियोंकी हानि वृद्धि होनेका नियम होनेसें और मासकेसदा वृद्धि होनेका नियम होनेसे दोनुंका एक सदृश व्यवहार होनेका शास्त्रसें महाशयजी ठहराते हैं सो कदापि नहीं हो सकता है।

और निश्चय व्यवहारादि नय करके श्रीजिन प्रवचन चलता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें १६ दिनका अथवा १४ दिनका पक्ष होते भी व्यवहार नयकी अपेक्षासें १५ दिनके क्षामणे करनेमें आते हैं परन्तु निश्चय नयकी अपेक्षासे तो

...के जितने समय तक जितने पुण्य
... करनेमें आये होवे उतनेही पुण्य कार्योंकी
... और पापकार्योंकी आलोचना करनेमें आवेगी,
... व्यवहार अर्थात् देवसी और राइप्रति-
... और मयेरमें चार चार पहरका काल कहा है
... कारण योग संध्या समय देवसी प्रतिक्रमण न
... रात्रिका बारह बजे (मध्यानरात्रि) के समय तक
... करनेका अवसर मिलनेसे करनेमें आवके तब
... करके तो छ पहरके पाप कार्योंकी आलोचना
... परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षामें चार पहरके अर्थ-
... देवसी शब्द ग्रहण करके देवसी क्षामणे करनेमें आवेंगे
... इसलिये अर्द्धरात्रि तक छ पहरमें प्रतिक्रमण करके भी
...हार नयसे चार पहरके अर्थवाला देवसी शब्द ग्रहण
...नेमें आवे और पुनः कारण योगे पहर रात्रि शेष रहते ह
...नेंही दूसरीवार राइ (रात्रि) प्रतिक्रमणकरनेका कारण
... गया तो एक पहर अथवा सवा पहरमें रात्रि प्रतिक्रमण
...ती समय निश्चय नय करके तो उतनेही समय तकके
...पकार्योंकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयसे चार
...हरके अर्थवाला राइ शब्दही ग्रहण करनेमेंआवेगा तैसेही
...किक पंचाङ्ग मुजब १४ दिने किंवा १५ दिने अथवा १६ दिने
पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आवे तो निश्चय नय करके तो
उतनेही दिनोंके पापकार्योंकी आलोचना करनेमें आवेगी
... व्यवहार नयकी अपेक्षामें १५ दिनका पक्ष कहनेमें
... है इसलिये १५ दिनके अर्थवाला पाक्षिक शब्द ग्रहण
क्षामणे भी ... हैं, परन्तु व्यवहार नयका

भङ्गके दूषणमें डालनेवाले अन्य कल्पना कदापि नहीं करेंगे सो विवेकी सज्जन स्वयंविचार लेवेंगे ।

और सातवें महाशयजी १६ दिनका पक्षमें १५ दिनके क्षामणे करनेसें एक दिनका प्रायश्चित बाकी रहने संबंधी और १४ दिनका पक्षमें भी १५ दिनके क्षामणे करनेसें एकदिन का बिना पाप किये भी प्रायश्चित ज्यादा लेने सम्बन्धी ऊपरके लेखसे ठहराते हैं सो निःकेवल अज्ञातपनसे व्यवहार नयका भङ्ग करते हैं जिससे श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लंघन रूप उत्सूत्र भाषक बनते हैं सो भी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे ।

और यद्यपि श्रीजैनपञ्चाङ्ग की गिनतीसें तिथि की वृद्धि होनेका अभाव था तथा पौष और आषाढ़ मासकी वृद्धि होनेका नियम था परन्तु लौकिक पञ्चाङ्गमें तिथि की वृद्धि होनेका गिनती मुजब नियम है और हरेक मासोंकी वृद्धि होनेका भी नियम है । जब जैन पञ्चाङ्गके बिना लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब तिथिकी वृद्धिको सातवें महाशयजी मान्य करके सोलह (१६) दिनका पक्षको मंजूर करते हैं तो फिर लौकिक पञ्चाङ्गानुसार श्रावण भाद्रपदादि मासोंकी वृद्धि होती है जिसको मान्य नहीं करते हुये उलटा निषेध करनेके लिये पर्युषणा विचारके लेखमें वृथा क्यों परिश्रम करके निष्पक्ष-पाती विवेकी पुरुषोंसे अपनी हांसी करानेमें क्या लाभ उठाया होगा सो मध्यस्थ दृष्टिवाले सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे—

और (जैसे तुम्हारे मतमें 'चउण्हं मासाणं' इत्यादि पाठ कहनेसें अधिक मासका प्रायश्चित रह जाता है) सातवें महाशयजीके ऊपरके लेखपर मेरेको इतनाही कहना है कि—

१६ दिनके अथवा १४ दिनके जितने समय तक जितने पुण्य पापादि कार्य करनेमें आये होवे उतनेही पुण्य कार्योंकी अनुमोदना और पापकार्योंकी आलोचना करनेमें आवेगी, देवसी राइ प्रतिक्रमणवत् अर्थात् देवसी और राइप्रतिक्रमणका सांझ और सवेरमें चार चार पहरका काल कहा है परन्तु कोई कारण योग संध्या समय देवसी प्रतिक्रमण न होसके तो रात्रिका बारह बजे (मध्यानरात्रि) के समय तक भी प्रतिक्रमण करनेका अवसर मिलनेसे करनेमें आवके तब निश्चय नय करके तो छ पहरके पाप कार्योंकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षासें चार पहरके अर्थवाला देवसी शब्द ग्रहण करके देवसी क्षामणे करनेमें आवेंगे सब देखिये अर्द्धरात्रि तक छ पहरमें प्रतिक्रमण करके भी व्यवहार नयसे चार पहरके अर्थवाला देवसी शब्द ग्रहण करनेमें आये और पुनः कारण योगे पहर रात्रि शेष रहते ६ बजेमेंही दूसरीवार राइ (रात्रि) प्रतिक्रमणकरनेका कारण पड़ गया सो एक पहर अथवा सवा पहरमें रात्रि प्रतिक्रमण करती समय निश्चय नय करके तो उतनेही समय तकके पापकार्योंकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयसे चार पहरके अर्थवाला राइ शब्दही ग्रहण करनेमेंआवेगा तैसेही लौकिक पंचाङ्ग मुजब १४ दिने किंवा १५ दिने अथवा १६ दिने पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आवे तो निश्चय नय करके तो उतनेही दिनोंके पापकार्योंकी आलोचना करनेमें आवेगी परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षासें १५ दिनका पक्ष कहनेमें आता है इसलिये१५ दिनके अर्थवाला पाक्षिक शब्द ग्रहण करके क्षामणे भी करनेमें आते हैं, परन्तु व्यवहार नयका

मासको गिनतीमें ले करकेही पर्युषणा करनेका कहा है तथापि सातवें महाशयजी पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैनशास्त्रों के तात्पर्य्यको समझे बिना अज्ञात पनेसें उत्सूत्र भाषक होकरके अधिक मासका निषेध करनेके लिये गच्छपक्षी बाल-जीवोंको मिथ्यात्वमें फँसाने वाली अनेक कुतर्कोंका संग्रह करते भी अपने मंतव्यको सिद्ध न करसके तब लौकिक व्यवहारका सरणा लिया तथापि लौकिक व्यवहारमें भी उलटे वर्तते हैं क्योंकि लौकिक जन (वैष्णवादि लोग) सो अधिक मासमें विवाहादि संसारिक कार्य्य छोड़कर संपूर्ण अधिक मासको बारहमासोंमें विशेष उत्तम मान करके 'पुरुषोत्तम अधिक मास' नाम रखके दान पुण्यादि धर्मकार्य्य विशेष करते हैं और अधिक मासके महात्मकी कथा अपने अपने घर घरमें ब्राह्मणोंसें बंचाकर सुनते हैं। अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि-लौकिकजन भी जैसे बारह मासोंमें संसारिक व्यवहारमें वर्त्तते हैं तैसेही अधिक मास होनेमें तेरह मासोंमें भी वर्तते हैं और बारह मासोंसे भी विशेष करके दानपुण्यादि धर्मकार्य्य अधिक मासमें ज्यादा करते हैं और विवाहादि मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य्य नहीं करते हैं परन्तु बिना मुहूर्त्तके धर्मकार्यौंकों तो नही छोड़ते हैं और सातवें महाशयजी लौकिक जनकी बातें लिखते हैं परन्तु लौकिक जनसें विरुद्ध हो करके धर्मकार्यौंमें अधिक मासको गिनती का सर्वथा निषेध करते कुछ भी विवेक बुद्धिसें हृदयमें विचार नहीं करते है क्योंकि लौकिक जन की बात सातवें महाशयजी लिखते हैं तबतो लौकिकजन की तरहही सातवें महाशयजीको भी वर्त्ताव करना चाहिये सो तो नही वर्त्ते

अधिक मासको मानने वालोंके मतमें तो अधिक मास होने से पांच मासहोते भी चार मास कहनेसें पांचवा अधिक मासका प्रायश्चित्त बाकी रह जाता है इसलिये अधिकमास होनेसें पाँच मास जरूर बोलने चाहिये सो तो बोलतेही हैं इसका विशेष निर्णय ऊपरमें हो गया है, परन्तु पाँच मास होते भी चार मास बोलनेसें पाँचवा अधिक मासका प्रायश्चित्त उसीके अन्तर्गत आजानेका ऊपरके अक्षरोंसें सातवें महाशयजीने अपने मतमें ठहरानेका परिश्रम किया है सो कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना प्रत्यक्ष मायावृत्तिसें मिथ्यात्व बढ़ानेके लिये अज्ञ जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेका कार्य्य किया है क्योंकि अधिक मास होनेसें पांचमासके दश पक्ष प्रत्यक्ष में होते हैं और खास सातवें महाशयजी वगैरह भी सब कोई अधिक मासके कारणसें पाँच मासके दश पाक्षिकप्रतिक्रमण भी करते हैं फिर पांचमास दश पक्ष नहीं बोलते हैं सो यह तो 'मम वदने जिह्वा नास्ति' की तरह बाललीलाके सिवाय और क्या होगा सो विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे;—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके पाँचवें पृष्ठकी प्रथम पंक्तिसें छट्ठी पंक्तितक लिखा हैं कि (अब लौकिक व्यवहार पर चलिए लौकिक जन अधिक मासमें नित्यकृत्य छोड़कर नैमित्तिककृत्य नहीं करते जैसे यज्ञोपवीतादि अक्षयतृतीया दीपालिका इत्यादि, दिगम्बर लोग भी अधिक मासको तुच्छ मानकर भाद्रपद शुक्लपञ्चमी से पूर्णिमा तक दश लाक्षणिक पर्व मानते है)—

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों-श्रीजिनेन्द्र भगवानोंने तो अधिक

मासको गिनतीमें ले करकेही पर्युषणा करनेका कहा है तथापि सातवें महाशयजी पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैनशास्त्रों के तात्पर्य्यको समझे बिना अज्ञात पनेसें उत्सूत्र भाषक हो करके अधिक मासका निषेध करनेके लिये गच्छपक्षी बाल-जीवोंको मिथ्यात्वमें फँसाने वाली अनेक कुतर्कोंका संग्रह करते भी अपने मंतव्यको सिद्ध न करसके तब लौकिक व्यव-हारका शरणा लिया तथापि लौकिक व्यवहारसें भी उलटे वर्तते हैं क्योंकि लौकिक जन (वैष्णवादि लोग) तो अधिक मासमें विवाहादि संसारिक कार्य्य छोड़कर संपूर्ण अधिक मासको बारहमासोंसें विशेष उत्तम जान करके 'पुरुषोत्तम अधिक मास' नाम रखके दान पुण्यादि धर्मकार्य्य विशेष करते हैं और अधिक मासके महात्मकी कथा अपने अपने घर घरमें ब्राह्मणोंसें बंचाकर सुनते हैं। अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–लौकिकजन भी जैसे बारह मासोंमें संसारिक व्यवहारमें वर्त्तते हैं तैसेही अधिक मास होनेसें तेरह मासोंमें भी वर्तते हैं और बारह मासोंसे भी विशेष करके दानपुण्यादि धर्मकार्य्य अधिक मासमें ज्यादा करते हैं और विवाहादि मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य्य नहीं करते हैं परन्तु बिना मुहूर्त्तके धर्मकार्योंको तो नही छोड़ते हैं और सातवें महाशयजी लौकिक जनकी बातें लिखते हैं परन्तु लौकिक जनसें विरुद्ध हो करके धर्मकार्योंमें अधिक मासके गिनती का सर्वथा निषेध करते कुछ भी विवेक बुद्धिसें हृदयमें विचार नहीं करते है क्योंकि लौकिक जन की बात सातवें महाशयजी लिखते हैं तबतो लौकिकजन की तरहही सातवें महाशयजीको भी वर्त्ताव करना चाहिये सो तो नही करते

और श्रावणशुदीमें दीपालिकादि सम्बन्धी आगे लिखनेमें आवेगा। और (दिगम्बर लोग भी अधिक मासको शुन्य मानकर भाद्रपदशुक्ल पञ्चमीसे पूर्णिमा तक दशलाक्षणिकपर्व मानते हैं) सातवें महाशयजीका इस लेखपर मेरेको इतनाही कहना है कि-दिगम्बर लोग तो--केवलीको आहार, स्त्रीको मोक्ष, साधुको वस्त्र, श्रीजिनमूर्त्तिको आभूषण, मध्याह्नी पूजा वगैरह बातोंको निषेध करते हैं और श्वेताम्बर मान्य करते हैं इसलिये दिगम्बर लोगोंकी अधिक मास सम्बन्धी कल्पनाको श्वेताम्बर लोगोंको मान्य करने योग्य नहीं है क्योंकि श्वेताम्बरमें पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाण अधिक मासको गिनतीमें करने सम्बन्धी मौजूद हैं इसलिये दिगम्बर लोगोंकी बातको लिखके सातवें महाशयजीने अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेको उद्यम करके बालजीवोंको कदाग्रहमें गेरे हैं सो उत्सूत्र भाषणरूप है और सातवें महाशयजी दिगम्बर लोगोंका अनुकरण करते होंगे तब तो ऊपरकी दिगम्बर लोगोंकी बातें सातवें महाशयजीको भी मान्य करनी पड़ेंगी यदि नहीं मान्य करते होवें तो फिर दिगम्बर लोगोंकी बात लिखके वृथा क्यों कागद काले करके समयको खोया सो पाठकवर्ग विचार लेवेंगे—

और आगे फिर भी पर्युषणा विचारके पाँचवे पृष्ठकी ७ वीं पंक्तिसे छट्ठे पृष्ठकी पाँचवीं पंक्ति तक लिखा है कि—[अधिकमास भंगी पञ्चेन्द्रिय नहीं मानते, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है क्योंकि एकेन्द्रिय वनस्पति भी अधिक मासमें नहीं फलती। जो फल श्रावण मासमें उत्पन्न होने—

मिथ्या है क्योंकि वनस्पतिका फलना और फूलोंका, फलोंका उत्पन्न होना सो तो समय, हवा, पानी, ऋतुके, कारणसें होता है इसलिये वनस्पतिकी समय (स्थिति) परिपाक न हुई होवे तथा हवा भी अच्छी न होवे जलका संयोग न मिले तो अधिक मासके विना भी वनस्पति नहीं फूलती है और फल भी उत्पन्न नही होते हैं और अधिक माससें भी स्थिति परिपक्क होनेसें हवा अच्छी लगनेसें जलका संयोग मिलनेसें फलती है और फूलोंकी, फलोंकी उत्पत्ति भी होती है।

और जैसे बारह मासोंमें उत्पन्न होना, वृद्धि पामना, फूलना, फलना, नष्ट होना, वगैरह वनस्पतिका स्वभाव है तैसेही अधिक मास होनेसें तेरह मासोंमें भी है सो तो प्रत्यक्ष दिखता है।

और 'जो फल श्रावण मासमें उत्पन्न होनेवाला होगा सो पहिले श्रावणमें न होते दूसरे श्रावणमें होगा' ऐसा भी सातवें महाशयजीका लिखना अज्ञातमूलक और मिथ्या है क्योंकि जैन पञ्चाङ्गमें और लौकिक पञ्चाङ्गमें अधिक मासका व्यवहार है परन्तु मुसलमानोंमें, बङ्गालमें, अंग्रेजोंमें, तो अधिकमासका व्यवहार नहीं है किन्तु अनुक्रमसें मासोंकी तारीख मुजब व्यवहार है जब लौकिकमें अधिक मास होनेसें अधिक माससें वनस्पतिका फूलना, फलना नही होनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं तो क्या लौकिक अधिकमासमें जो मुसलमानोंकी, बङ्गालकी और अंग्रेजोंकी ३० तारीखोंके ३० दिन व्यतीत होवेंगे उसीमें भी वनस्पतिका फूलना फलना न होनेका सातवें महा-

मासको गिनतीमें लेनेका सातवें महाशयजीने निषेध किया है सो भी निःकेवल गच्छपक्षके आग्रहसे और अपनी विद्वत्ता के अभिमानसें दृष्टिरागी अज्ञजीवोंको मिथ्यात्वमें फँसाने के लिये निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायको जाने बिना वृथाही परिश्रम किया है क्योंकि निर्युक्तिकार महाराज चौदह पूर्वधर श्रुतकेवली थे इसलिये श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा और गिनतीमें प्रमाण भी करा हुवा अधिक मासको निषेध करके उत्सूत्र भाषण करने वाले बनेंगे यह तो कोई अल्पबुद्धि वाला भी मान्य नहीं करेगा तथापि सातवें महाशयजीने निर्युक्तिकी गाथासे अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करके चौदह पूर्वधर श्रुतकेवली महाराजको भी दूषण लगाते कुछ भी पूर्वापरका विचार विवेक बुद्धिसें हृदयमें नहीं किया यह तो बड़ेही अफसोसकी बात है ।

और खास इसीही श्रीआवश्यक निर्युक्तिमें समयादि कालकी व्याख्यासे अधिक मासको प्रमाण किया है उसी निर्युक्तिकी गाथा पर श्रीजिनदासगणि महत्तराचार्य्यजीने चूर्णिमें, श्रीहरिभद्र सूरिजीने वृहद्वृत्तिमें, श्रीतिलकाचार्य्यजीने लघुवृत्तिमें, और मलधारी श्रीहेमचन्द्रसूरिजीने श्रीविशेषावश्यकवृत्तिमें, खुलासा पूर्वक व्याख्या करी है उसीसे प्रगट पने अधिक मासको गिनती सिद्ध है सो इस जगह विस्तारके कारणसे ऊपरके पाठोंको नहीं लिखता हूं परन्तु जिसके देखनेकी इच्छा होवे सो निर्युक्तिके चौवीसथा–अध्ययनके पृष्ठ ५१में, वृहद् वृत्तिके पृष्ठ २८६ में और विशेषावश्यककी वृत्तिके पृष्ठ ४८५ में देख लेना ।

अब इस जगह विवेकी पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–खास निर्युक्तिकार महाराज अधिकमासको प्रमाण करने वाले थे तथा खास श्रीआवश्यक निर्युक्तिमेंही अधिक मासको प्रमाण किया है सो तो प्रगट पाठ है तथापि सातवें महाशयजीने गच्छपक्षके कदाग्रहसें दृष्टि-रागियोंको मिथ्यात्वके झगड़ेमें गेरनेके लिये निर्युक्तिकार चौदह पूर्वधर महाराजके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप अपनी मति कल्पनासें, निर्युक्तिकी गाथा लिखके उसीके तात्पर्य्यको समझे विनाही अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेका वृथा परिश्रम किया सो कितने संसारकी वृद्धि करी होगी सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने और तत्त्वज्ञ पुरुष भी अपनी बुद्धिसें स्वयं विचार लेवेंगे।

अब इस जगह पाठकवर्गको निःसन्देह होनेके लिये निर्युक्तिकी गाथाका तात्पर्य्यार्थको दिखाता हूं।

श्रीनिर्युक्तिकार महाराजने श्रीआवश्यक निर्युक्तिमें छ (६) आवश्यकका वर्णन करते प्रतिक्रमण नामा चौथा आवश्यकमें "पडिक्कमणं १ पडिअरणा २, पडिहरणा ३ वा-रणा ४ नियत्तिय ५ ॥ निंदा ६ गरहा ७ सोही ८, पडिक्कमणं अट्ठहा होइ" ॥ १ ॥ इस गाथासे आठ प्रकारके नाम प्रतिक्रमणके कहे फिर अनुक्रमसे आठोंही नामोंके मिसेरीका वर्णन किया हैं और भव्यजीवोंके उपगारके लिये "अद्धाणे १ पासए २ दुद्धकाय ३ विसभोयणा तलाए ४ ॥ दोकन्ना ५ चित्तपुत्ति ६ पइमारियाय ७ वत्थेय ८ अट्ठगय" ॥ १२ ॥ इस गाथासे प्रतिक्रमण सम्बन्धी आठ दृष्टांत दिखाये जिसमें पांचवा विपत्ति अर्थात् निवृत्ति सो कन्याओंसे दृढ़ करते

सम्मार्गमें प्रवर्तने मत्सरभी दो कन्याका एक दृष्टांत दिखाया है जिसको चुर्णिकारने, वृहद् वृत्तिकारने और लघुवृत्तिकारने खुलासा पूर्वक, व्याख्या करी है और द्रव्य निवृत्ति पर दृष्टांत दिखाके, फिर भाव निवृत्ति पर उपनय करके दिखाया है, उसीके सब पाठोंको विस्तार के कारणसे इस जगह नहीं लिखता हूं परन्तु जिसके देखनेकी इच्छा होवे सो चुर्णिके २६४ पृष्ठमें, तथा वृहद् वृत्तिके २३३ पृष्ठमें देखलेना। और पाठकवर्गको लघुवृत्तिका पाठ इस जगह दिखाता हूं श्रीतिलकाचार्यजी कृत श्री आवश्यक लघुवृत्तिके १९९ पृष्ठे यथा—

एकत्र नगरे शाला, पतिः शालासु तस्य च ॥ धूर्त्तावमंति मेर्च्यको, धूर्तो मधुरगी सदा ॥१॥ कुविंदस्य सुता तस्य,तेन सार्द्धंमयुज्यत॥ तेनोचे याव गच्छामो, यावद्वेत्ति न कश्चनः ॥२॥ तयोचेमे वयस्यास्ति, राजपुत्री तया समं ॥ संकेतोऽस्ति यथा द्वाभ्या, पतिरेक करिष्यते ॥३॥ सामप्यानयतेत्योचे, साथ तामप्यचालयत् ॥ तदा प्रत्यूषे महति, गीतं केनाप्यदः स्फुटं ॥ ४ ॥ "जइ फुल्ला कणियारया, चूअगअहि मासयंमिघुट्ठंमि ॥ तुह न खमं फुल्लेउ, जइ पच्चंता करिंति डमराइं" ॥ "नरामं मयुक्तं प्रत्यंता नीचकाः डमराणि विप्लवरूपाणि शेषं स्पष्टं" ॥ श्रुत्वैवं राजकन्या सा दध्यौ चूतं महातरूम् ॥ उपालब्धो वसंतेन, कर्णिकारोऽधमस्तरूः ॥५॥ पुष्पितो यदि किं युक्तं, तवोत्तमतरोस्त्वया ॥ अधिक मास घोषणा, किं न श्रुतेत्यस्यगीः शुभा ॥६॥ चेत्कुविंदी करोत्येवं, कर्त्तव्यं किं मयापि तत् ॥ निवृत्ताथामिपाद्रत्न,करंडोमेऽस्ति विस्मृतः ॥ ७ ॥ राजभूः कोपि तत्राहि, गोत्रजैस्त्रासितो

भिजैः ॥ तज्ज्ञातं शरणी चक्रे, प्रदत्ता तेनतस्य सा ॥८॥ तेन श्वशुर साहाय्यान्निर्जित्य निजगोत्रजान् ॥ पुनर्लेभे निजं राज्यं, पट्टराज्ञी बभूव सा ॥ ९ ॥ निवृत्तिर्द्रव्यतोभावि, भावे चोपनयः पुनः ॥ कन्यास्थानीया मुनयो, विषया धूर्त सन्निभाः ॥१०॥ योगीति नानाचार्योपदेशास्तेभ्यो निवर्तते ॥ सुगतेर्भोजनं तस्या, दुर्गतेस्त्वपरः पुनः ॥ ११ ॥

अब विवेकी तत्त्वज्ञपुरुषोंको इस जगह विचार करना चाहिये कि राज्यकन्या उन्मार्गमें प्रवर्तने लगी तब उसी को समझानेके लिये कविने चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा ले कर "जइ फुल्ला" इत्यादि गाथा कही है सो तो व्याख्या-कारोंने प्रगट करके कहा है तथापि सातवें महाशयजी निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायको समझे बिनाही राज-कन्याके दृष्टान्तका प्रसङ्गको छोड़ करके बिना संबंधकी एक गाथा लिखके अधिक मासमें वनस्पतिको नहीं फूलनेका ठहराया परन्तु दीर्घ दृष्टिसे पूर्वापरका कुछ भी विचार न किया क्योंकि समस्त ऋतु मुखसे बोलके आम को ओलम्भा देती नहीं, तथा आम सुनता भी नहीं और जैन ज्योतिषके हिसाबसे बसंत ऋतुमें अधिक मास होना भी नहीं, और अधिक मास होनेसे वनस्पतिका कोई सू-चना करके सुनाता भी नहीं है । परन्तु यह तो ग्रन्थ-कार महाराजने अपनी उपदेशरूप चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा ले करके प्रासङ्गिक उपदेशके लिये कहा है इसलिये वास्तवमें अधिक मासही उपलक्षण आमको सुना करके समस्त ऋतुके ओलम्भा देने वावतकी नहीं समझना चाहिये क्योंकि वर्तमानिक ऋतुओंमें चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़,

श्रावणादि मासोंकी वृद्धि होनेसे उन अधिक मासोंके समयमें देशदेशान्तरे माघ वृक्षादिका फूलना, फलना और आमोंका उत्पत्ति होना प्रत्यक्ष देखनेमें और सुननेमें आता है और किसी देशमें माघ, फाल्गुन मासमें तो क्या परंतु हरेक मासोंमें भी आम फूलते हैं और अधिक मासके विना भी हरेक मासोंमें कणियर भी फूलता रहता है इसलिये शास्त्र-कार महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध और कारण कार्य्य तथा आगे पीछेके सम्बन्धकी प्रस्ताविक बातको छोड़ करके अधूरा सम्बन्ध लेकर शब्दार्थ ग्रहण करनेसे तो बड़ेही अनर्थका कारण होजाता है, जैसे कि–श्रीसूयगड़ाङ्ग-जीमें वादियोंके मत सम्बन्धकी बातको, श्रीरायप्रश्नेणीमें परदेशी राजाके सम्बन्धकी बातको श्रीआवश्यकजीकी और श्रीउत्तराध्ययनजीकी व्याख्यायोंमें निन्हवोंके सम्बन्धकी बातको, और श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यायोंमें श्रीआदिजिने-श्वर भगवान्के वार्षिक पारणेके अवसरमें दोनुं हाथोंका विवादके सम्बन्धकी बातको इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें सैकड़ो जगह शब्दार्थ और होता है परन्तु शास्त्र कार महाराजका अभिप्राय औरही होता है इसलिये उस जगहकी व्याख्या लिखते पूर्वापरका सम्बन्ध रहित और शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध निःकेवल शब्दार्थको पकड़ करके अन्य प्रसङ्गकी अन्य प्रसङ्गमें अधूरी बातको लिखने वाला अनन्त संसारी मिथ्या दृष्टि निन्हव कहा जावे, तैसेही श्रीआवश्यक निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें शब्दार्थको पकड़ करके विना सम्बन्धकी और अधूरी बात लिखके जो सातवें महाशयजीने बालजीवों–

को मिथ्यात्वमें फँसानेका उद्यम किया है सो निःकेवल उत्सूत्र भाषण रूप होनेसे संसार वृद्धिका हेतुभूत है सो विवेकी तत्त्वज्ञ पुरुष अपनी बुद्धिसे स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और फिर भी श्रीआवश्यकनिर्युक्तिकी गाथाकी बातपर सातवें महाशयजीने अपनी चातुराई भोले जीवोंको दिखाई है कि (कुशाग्र बुद्धि आज्ञा विरुद्ध इत्य आचार्योंने अधिक मासको गिनतीमें नहीं लिया है तैसी तरह तुम्हे भी लेखामें नहीं लेना चाहिये जिससे पूर्वोक्त अनेक दोषोंसे मुक्त होकर आज्ञाके आराधक बनोगे)

सातवें महाशयजीका यहभी लिखना अपनी विद्वत्ताके अजीर्णतासे संसार वृद्धिका हेतु भूत उत्सूत्र भाषण है क्योंकि निर्युक्तिकी गाथामें तो अधिक मासकी गिनती निषेध करने वाला एक भी शब्द नहीं है परन्तु श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंने अनन्ते कालसे अधिक मासको गिनतीमें लिया है इस लिये तत्त्वज्ञ बुद्धिवाले श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक जिनमें आत्मार्थी उत्तमाचार्य्य हुवे है सब सभी महानुभावोंने अधिक मासको गिनतीमें लिया है और आगे भी लेवेंगे इसलिये इसकलियुगमें जो जो अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेवाले हो गये हैं तथा वर्तमानमें सातवें महाशयजी वगैरह है सो सबीही पञ्चाङ्गीकी श्रद्धा रहित श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक है क्योंकि अधिक मासको गिनतीमें करने सम्बन्धी ४२ शास्त्रोंके प्रमाणतो इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २१,२८ में छप गये हैं और श्रीभगवतीजीमें २१, तथा नन्दिसूत्रमें २४, श्रीअनुयोगद्वारमें २१, तथा

तद्वृत्तिमें २६, श्रीव्यवहारवृत्तिमें २७, श्रीआवश्यकनिर्युक्तिमें २८, तथा चूर्णिमें २९, बृहद्वृत्तिमें ३०, लघुवृत्तिमें ३१, और श्रीविशेषावश्यकवृत्तिमें ३२, श्रीकल्पसूत्रमें ३३, तथा श्रीकल्पसूत्रकी सात व्याख्यायोंमें ४०, श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिमें ४१, तथा श्रीजम्बूद्वीप प्रज्ञप्तिकी पांच व्याख्यायोंमें ४६, श्रीगच्छाचार पयन्नाकी वृत्तिमें ४७, श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नामें ४८, तथा तद्वृत्तिमें ४९, श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी चूर्णिमें ५०, श्रीविधिप्रपामें ५१, श्रीसन्देहलप्रकाशमें ५२, सेन प्रश्नमें ५३, और नवतत्त्वकी चार व्याख्यायोंमें ५७, और श्रीतत्त्वार्थकी वृत्तिमें ५८, इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके प्रमाणोंसे अधिक मासकी गिनती स्वयं सिद्ध है।

इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पञ्चाङ्गीकी श्रद्धावाले आत्मार्थी प्राणियोंको तो अधिक मासकी गिनती अवश्यमेव प्रमाण करना चाहिये जिससे कुछ भी दूषण नहीं लग सकता है परन्तु निषेध करने वाले हैं सो और पञ्चाङ्गी मुजब अधिक मासका प्रमाण करनेवालोंको अपनी कल्पनासे मिथ्या दूषण लगाते हैं सो संसारमें परिभ्रमण करने वाले उत्सूत्र भाषक और अनेक दूषणोंके अधिकारी हो सकते है सो तो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं।

और पञ्चाङ्गीके एक अक्षरमात्रको भी प्रमाण न करने वालेको तथा पञ्चाङ्गीके विरुद्ध थोड़ीसी बातकी भी परूपना करने वालेको मिथ्या दृष्टि निह्नव कहते है सो तो प्रसिद्ध बात है तो फिर पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रानुसार अधिक मासकी गिनती सिद्ध होते भी, नहीं मानने वालेको और इसने पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध परूपना

करने वालेको मिथ्या दृष्टि महानिह्नव कहनेमें कुछ हरजा होवेतो तत्त्वज्ञपुरुषोंको विचार करना चाहिये।

अब अनेक दूषणोंके अधिकारी कौन हैं और जिनाज्ञाके आराधक कौन हैं सो विवेकी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और भी आगे पर्युषणा विचारके छट्ठे पृष्ठकी ६ पंक्तिसे १८ वीं पंक्ति तक लिखा है कि (वादीकी शङ्का यहां यह है कि अधिक मासमें क्या भूख नहीं लगती, और क्या पापका बन्धन नहीं होता, तथा देवपूजादि तथा प्रतिक्रमणादि कृत्य नहीं करना? इसका उत्तर यह है कि क्षुधावेदना, और पापबन्धनमें मास कारण नहीं है, यदि मास निमित्त हो तो नारकी जीवोंको तथा अढाईद्वीपके बाहर रहने वाले तिर्यञ्चोंको क्षुधावेदना तथा पापबन्ध नहीं होना चाहिये। वहां पर मास पक्षादि कुछ भी कालका व्यवहार नहीं है। देवपूजा तथा प्रतिक्रमणादि दिनसे बद्ध है मासबद्ध नहीं है। नित्यकर्मके प्रति अधिक मास हानिकारक नहीं है, जैसे नपुंसक मनुष्य स्त्रीके प्रति निष्फल है किन्तु लेना दे जाना आदि गृहकार्य्यके प्रति निष्फल नहीं है उसी तरह अधिक मासके प्रति जानों)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों सातवें महाशयजीने प्रथम वादीकी तरफसे शङ्का खड़ा करके समीक्षा उत्तर देनेमें खूबही अपनी अज्ञता प्रगटकरी है क्योंकि क्षुधा लगना सो तो वेदनी कर्मके उदयसे सर्व जीवोंको होता है और वेदनी कर्म अधिक मासमें भी समय समय में बन्धाता है तथा उदय भी

जाता है और उसकी निवृत्ति भी होती है इसलिये अधिक मासमें सुधा लगती है और उसीकी निवृत्ति भी होती है। और पाप बन्धनमें भी मन, वचन, कायाके योग कारण है उसीसे पाप बन्धन रूप कार्य्य होता है और मन, वचन, कायाके, योग समय समयमें शुभ वा अशुभ होते रहते हैं जिससे समय समयमें पुन्यका अथवा पाप का बन्धन भी होता है और समय समय करकेही आवलिका, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, संवत्सर, युगादिसें यावत् असंख्य काल व्यतीत होगये हैं तथा आगे भी होवेंगे इसलिये अधिक मासमें पुन्य पापादि कार्य्य भी होते हैं और उसीकी निवृत्ति भी होती है और समयादि कालका व्यतीत होना अढ़ाई द्वीपमें तथा अढ़ाई द्वीपके बाहरमें और ऊर्द्ध लोकमें, अधोलोकमें सर्व जगहमें है इसलिये यहांके अधिक मासका कालमें वहां भी समयादिसें काल व्यतीत होता है इसीही कारणसें यहांके अधिक मासका कालमें यहांके रहने वाले जीवोंकी तरहही वहांके रहनेवाले जीवोंको वहां भी सुधा लगती है और पुन्य पापादिका बन्धन होता है और यद्यपि वहां पक्षमासादिके वर्तावका व्यवहार नहीं है परन्तु यहांभी और वहां भी अधिक मासके प्रमाणका समय व्यतीत होना सर्वत्र जगह एक समान है इसीही लिये चारोंही गतिके जीवोंका आयुष्यादि काल प्रमाण यहांके संवत्सर युगादिके प्रमाणसें गिना जाता है जिससे अधिकमासके गिनतीका प्रमाण-संवत्सर, युग, पूर्वांङ्ग, पूर्व, पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी, वगैरह सभी कालमें साथ f
जाता है तथापि सातवें महाशयजी अ

कालमें नारकी जीवोंको तथा अढ़ाई द्वीपके बाहेर रहने वाले जीवोंको क्षुधा वेदना तथा पापबन्धन नहीं होनेका लिखते हैं सो अज्ञताके सिवाय और क्या होगा सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और (देवपूजा प्रतिक्रमणादि दिनसे बद्ध है मास बद्ध नही है नित्य कर्मके प्रति अधिकमास हानि-कारक नही है) सातवें महाशयजीका यह भी लिखना मायावृत्तिसे बालजीवोंको भ्रमानेके लिये मिथ्या है क्योंकि देवपूजा प्रतिक्रमणादि जैसे दिनसे प्रतिबद्धवाले हैं तैसेही पक्ष, मासादिसे भी प्रतिबद्ध वाले हैं इसलिये पक्ष, मासादिमें जितनी देव पूजा और जितने प्रतिक्रमणादि धर्मकार्य्य किये जावे उतनाही लाभ मिलेगा और पुण्य अथवा पापकार्य्य से आत्माको जैसे दिवस लाभकारक अथवा हानिकारक होता है तैसेही पक्ष मासादिमें पुण्य अथवा पाप होनेसे पक्ष मासादि भी लाभकारक अथवा हानिकारक होता है इसलिये पक्ष मासादिकके पुण्यकार्य्योंकी अनुमोदना करके उन पक्ष मासादिकों अपने लाभकारी माने जाते हैं तैसेही पक्ष मासादिमें पापकार्य्य हुवे होवे उनोंका पश्चात्ताप करके उन्होंकी आलोचना लेनेमें आती है और उनी पक्ष मासादिकोंको अपने हानिकारक समझे जाते हैं और एक पक्षके १५ रात्रि तथा १५ देवसी और एक पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आता है तैसेही एक मासमें ३० रात्रि तथा ३० देवसी और दो पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आते हैं सो तो प्रगट अनुभवसे प्रसिद्ध है इसलिये एक मासके ३० दिनोंमें सब प्रकार व्यवहार और पूजा पाठादि कार्य्य होनेका कार्य

महाशयजी उसीकी गिनतीका निषेध करते हैं सो तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक वृथा है इस बातको पाठकवर्ग भी स्वयं विचार सकते हैं और तीनो महाशयोंने भी ऊपरकी बात संबन्धी बाललीलाकी तरह लेख लिखा था जिसकी भी समीक्षा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १४२।१४३ में छप गई है सो पढ़नेसें विशेष निःसन्देह हो जावेगा ;—

और (जैसे नपुंसक मनुष्य स्त्रीके प्रति निष्फल है किन्तु लेना देना आदि गृहकार्य्यके प्रति निष्फल नहीं है उसी तरह अधिक मासके प्रति जानों) इन अक्षरों करके सातवें महाशयजीने देवपूजा मुनिदान आवश्यकादि ३० दिनोंमें धर्मकार्य्य होते भी पर्युषणादि धर्मकार्य्योंमें ३० दिनोंका एक मासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये अधिक मासको नपुंसक ठहरा करके बालजीवोंको अपनी विद्वत्ताकी चातुराई दिखाई है सो तो निःकेवल उत्सूत्रभाषण करके गाढ मिथ्यात्वसे संसार वृद्धिका हेतु किया है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंने जैसे मन्दिरजीके ऊपर शिखर विशेष शोभाकारी होता है उसी तरह कालका प्रमाणके ऊपर शिखररूप विशेष शोभाकारी कालचूलाकी उत्तम ओपमा अधिक मासको दिई है और अधिकमास को गिनतीमें शामिल ले करकेही तेरह मासोंका अभिवर्द्धित संवत्सर कहा है जिसका विस्तारमें खुलासा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ४८ सें ६५ तक छपगया है तथापि सातवें महाशयजीने श्रीअनन्त तीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घनरूप तथा आशातना कारक और पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणोंको छोड़ करके अधिक मासको नपुंसककी

ओपमा लिखके अधिक मासकी हिलना करी और
वृद्धिका कुछ भी भय न किया सो बडेही अफ
बात है;-

और वैष्णवादि लोग भी अधिकमासको दानपु
धर्मकार्योंमें तो बारह मासोंसे भी विशेष उत्तम "पु
त्तम अधिक मास" कहते हैं और उसीकी कथा सु
और दानपुण्यादि करते हैं और पञ्चाङ्गमें भी तेरह
वर्षीय पत्रका वर्ष लिखते हैं सो तो दुनियामें प्र
तथापि सातवें महाशयजी अधिक मासको नपुंसक
उसको गिनतीमें निषेध करते हुये, तेरहमा अधिक म
गधैयाही बना देते हैं और दुनियाके भी विरुद्धका कु
भय नहीं करते हैं सो भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वका
है क्योंकि सातवें महाशयजी काशीमें बहुत वर्षोंसे ठ
और अधिक मास होनेसे पुरुषोत्तम अधिक मासके मा
की कथा काशीमें और सब शहरोंमें अनेक जगह बंगा
सो तो प्रसिद्ध है और जैनशास्त्रानुसार तथा लौकिक शा
नुसार धर्मकार्योंमें अधिक मास श्रेष्ठ है, तथापि स
महाशयजी नपुंसक ठहराते हैं सो तो ऐसा होता है कि

किसी नगरमें एक सेठ रहता था, सो रूपलावण्य
युक्त और धर्मात्मा था इसलिये उसीने परस्त्री गम
और वेश्याके गमनका वर्जन किया था, सो सेठ किसी अवश्य
कार्यके रस्तेसे चला जाता था उसी रस्तेमें कोई व्य
चारिणी स्त्रीका और वेश्याका मकान आया, तब वह
स्त्रीका मकानके सामने हो करके जानेको चला तथा
स्त्रीके मकानपर न गया तब उस सेठको देखकर

व्यभिचारिणी स्त्री और वेश्या कहने लगी कि, यह तो
नपुंसक है इसलिये हमारे पास नहीं आता है ।

अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–जैसे उस
व्यभिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका मनोरथ उस शेठसे
परिपूर्ण न हुवा तब उसीको नपुंसक कहके उसीकी निन्दा
करी परन्तु जो विवेकबुद्धि वाले न्यायवान् धर्मी मनुष्य
होवेंगे सो तो उस शेठको नपुंसक न कहते हुवे उत्तमपुरुष
ही कहेंगे, तैसेही सातवें महाशयजी भी अधिक मासको
गिनतीमें लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषणरूप
अनेक कुयुक्तियोंका संग्रह करके भी अपना मनोरथको सिद्ध
नहीं कर सके तब नपुंसक कहके अधिक मासकी निन्दा
करी और श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा
उल्लङ्घन होनेसे संसार वृद्धिका भय न किया परन्तु जो
विवेक बुद्धि वाले न्यायवान् धर्मी मनुष्य होवेंगे सो तो
अधिक मासको नपुंसक न कहते हुवे श्रीतीर्थंकर गणधरादि
महाराजोंकी आज्ञानुसार विशेष उत्तमही कहेंगे सो तत्त्वज्ञ
पाठक वर्ग स्वयं विचार लेवेंगे;—

और अधिक मासको नपुंसक कहके पर्युषणादि कार्योंमें नि-
षेध करनेके लिये चौथे महाशयजीने भी उत्सूत्र भाषण-
रूप कुयुक्तियोंके संग्रहवाला लेख लिखके बाल जीवोंको
मिथ्यात्वमें गेरनेका कारण किया था जिसकी भी समीक्षा
इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २०८से २१४ तक अच्छी तरहसे खुलासा पूर्वक
छप गई है सो पढ़नेसे विशेष निःसन्देह हो जावेगा;—

और जैसे धर्मी पुरुषोंको घर बैठे इतनेमें आवे
लाभ होना चाहिये परन्तु देव गुरुके दर्शन करनेमें

चार आंख वालेकी तरह हो जाना चाहिये
यह श्रेठ पुरुष है परन्तु पर स्त्रीके गमनका और वे
गमनका वर्जन करनेवाला धर्मावलम्बी होनेसे उनके
मैथुन सेवन करनेमें तो नपुंसककी तरह हैं परन्तु
नियमका प्रतिपालन करके ब्रह्मचर्य धारण करने
समर्थ होनेसे उत्तम पुरुषकी तरह है अर्थात् अ
उस गुणसे उत्तम पुरुष हैं इसी न्यायानुसार यद्यपि अ
मास भी गिनतीके प्रमाणका व्यवहारमें तो बारह म
बरोबरही पुरुष रूप है उसीमें वैष्णव लोग
पुरुषादि विशेष करते हैं और उसीके महात्म्यकी कथा
हैं इसीलिये उसीको पुरुषोत्तम अधिक मास कहते

और प्राचीन शास्त्रोंमें भी मन्दिरके शिखरवत् का
प्रमाणके शिखर रूप उत्तम ओपमा अधिक मासको
उसीमें मुहूर्त नैमित्तिक क्रियादादि आरम्भ वाले
रिक कार्य्य नहीं होते हैं परन्तु धर्मकार्य्य तो विशेष है
इसलिये उपरोक्त न्यायानुसार मुहूर्त नैमित्तिक आ
वाले संसारिक कार्योंमें तो अधिक मास नपुंसककी तर
परन्तु धर्म कार्योंमें तो विशेष उत्तम होनेसे सबसे अधि
इसलिये इसका अधिक मास ऐसा नाम भी सार्थक है तथ
धर्म कार्योंमें और गिनतीका प्रमाणमें इसीको नपुंसक
करके अधिक मासकी निन्दा करते हुए उसीको गिनती
करते हैं सो यह व्यभिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका अनु
[illegible] पाठकगणों विचार लेंगे और इस बातमें
[illegible] इसकी समीक्षा करते पाठक वर्गको दिखा
[illegible] पृष्ठकी १० वीं पंक्तिसे आगे

चौथी पंक्ति तक लिखा है कि-(जैन पञ्चाङ्गानुसार तो एक युगमें दो ही अधिक मास आते हैं अर्थात् युगके मध्यमें आषाढ़ दो होते हैं और युगान्तमें दो पौष होते हैं। दो श्रावण दो भाद्र और दो आश्विन वगैरह नहीं होते। इस बातकी सूचना देने वाली पाठ देखो:— "जई जुग मज्झे तो दोपोसा जई जुग अन्ते दो आसाढा" यद्यपि जैन पञ्चाङ्गका विच्छेद हो गया है तथापि युक्ति और शास्त्र लेख विद्यमान है) सातवें महाशयजीका इस लेख पर मेरेको इतनाही कहना है कि–शास्त्रके पाठसे एक युगमें दो अधिक मास होनेका आप लिखते हो सो यह दोनों अधिक मास जैन शास्त्रानुसार गिनतीमें लिये जाते थे तो फिर ऊपरमेंही "कुशाग्रह बुद्धि आशा-निबद्ध हृदय आचार्योंने अधिक मासको गिनतीमें नहीं लिया है" ऐसे अक्षर लिखके पर्युषणा विचारके सब लेखमें अधिक मासकी गिनती निषेध क्यों करते हो क्या आपको शास्त्रकी वाक्य प्रमाण नहीं है, यदि है तो आपका निषेध करना संसार वृद्धिका हेतु भूत उत्सूत्रभाषण होनेसे बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें फँसाने वाला है सो विवेकी पाठक वर्ग स्वयं विचार सकते हैं ;—

और शास्त्रके पाठमें तो युगके मध्यमें दो पौष और युगान्तमें दो आषाढ़ खुलासे कहे हैं तथापि सातवें महाशयजी युगके मध्यमें दो आषाढ़ और युगान्तमें दो पौष लिखते हैं सो तो बहुत वर्षोंसे काशीमें अभ्यास करते हैं इसलिये विद्वत्ताके अजीर्णतासे उपयोग शून्यताका कारण है ;—

अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करना चाहिये परंतु मास वृद्धि दो श्रावण होतेभी ८० दिने भाद्र शुदीमें पर्युषणा करके भी निर्दूषण बननेके लिये अधिक मासके ३० दिनोंको गिनतीमे छोड़करके ८० दिनके ५० दिन गच्छवासी वाल जीवोंके आगे कहके आप आज्ञाके आराधक बनना चाहते है सो कदापि नहीं हो सकते है क्योंकि श्रीभगवतीजी श्रीअनुयोगद्वार श्रीज्योतिषकरंडपयन्न और नव तत्व प्रकरणादि शास्त्रानुसार तथा इन्होंकी व्याख्यायोंके अनुसार समय, आवलिका, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मासादिसे जो काल व्यतीत होवे उसी कालका समय मात्रभी गिनतीमें निषेध नहीं हो सकता है तथापि निषेध करनेवाले पंचांगीकी श्रद्धारहित और श्री जिनाज्ञाके उत्थापक निन्हव, मिथ्या दृष्टि-संसार गामी कहे जावे, तो फिर एक मासके ३० दिनोंको गिनतीमें निषेध करने वालेको पंचांगीकी श्रद्धा रहित और श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी कहनेमें कुछ भी तो दूषण मालूम नहीं होता है इसलिये अधिक मास के ३० दिनोंकी गिनती निषेध करने वाले मिथ्या पक्षग्राहियोंकी आत्माका कैसे सुधारा होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने । इसलिये दो आश्विन होनेसे भाद्र शुदी चौथसे कार्तिक तक १०० दिन होते है जिसके ७० दिन अपनी मति कल्पनासे बनाने वाले और दो श्रावण होनेसे भाद्र तक ८० दिन होते हैं जिसके तथा दो भाद्र होनेसे दूसरे भाद्र तक ८० दिन होते हैं जिसके भी ५० दिन अपनी मति कल्पनासे बनाने वाले अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी होनेसे आत्मार्थियोंको उन्होंका पक्ष छोड़ करके इस ग्रन्थको सम्पूर्ण पढ़

कर सत्य बातको ग्रहण करना चाहिये जिसमें आत्मकल्याण है नतु अधिक मासके गिनतीका निषेध रूप अंध परंपराका मिथ्यात्वमें;—

और इसके आगे फिरभी मासवृद्धि होतेभी भाद्र पदमें पर्युषणा ठहरानेके लिये पर्युषणा विचारके सातवें पृष्ठके अन्तसे आठवें पृष्ठ तक लिखाहै कि-(पर्युषणाकल्पचूर्णि, तथा महानिशीथचूर्णिके दसवें उद्देशेमें इसी तरहका पाठ है,

"अन्नया पज्जोसवणादिवसे आगए अज्जकालगेण सालवाहणो भणिओ, भद्दवयजुण्हपञ्चमीए पज्जोसवणा" इ०

तथा "तत्थ य सालवाहणो राया, सो अ सावगो, सो अ कालगज्जं इतं सोऊण निग्गओ, अभिमुहो समणसंघो अ, महाविभूईए पविट्ठो कालगज्जो, पविट्ठे हिंअभणिअं भद्दवयसुद्ध पञ्चमीएपज्जोसविज्जइ समणसंघेण पडिवण्णं ता रण्णाभणिअं तद्दिवसं मम लोगानुवत्तीए इंदो अणुजाणेयव्वो होहिति साहू चेइए अणुपज्जुवासिहत्तं, तो छट्ठीए पज्जोसवणा किज्जइ, आयरिएहिं भणिअं, न वट्टिदति अतिक्कमित्तुं, ताहे रण्णा भणिअं, ता अणागए चउत्थीए पज्जोसविति, आयरिएहिं भणिअं, एवं भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोसवियं, एवं जुगप्पहाणेहिं कारणे चउत्थी पवत्तिआ, सा चेवाणुमता सव्वसाहूणमित्यादि" ।

ऊपरकी पाठ साक्षात् सूचित करती है कि भाद्र शुदी चौथको सांवत्सरिक प्रतिक्रमण वगैरह करना चाहिये। किन्तु जब दो श्रावण आवें तो ,श्रावण शुदी चौथके रोज सांवत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्धान्तमें नहीं है तो आग्रह करना क्या ठीक है ? दो भाद्र आवेंतो

उत्कृष्टसे १८० दिनके छ मासका कल्प कहा है और म
वृद्धिके अभावसे आषाढ़ चौमासीसे पांच पांच दिनकी
करते दसवे पञ्चकमें पचासवें दिन भाद्र पद शुक्ल पञ्चमी
पर्युषणा करनेमें आती थी परंतु कारणसे श्रीकालकाचा
जीने एकौन पञ्चाशवें (४९) दिन भाद्र शुदी चौथको पर्यु
करी है जिसका संबंधभी विस्तार पूर्वक दोनुं चूर्णिमें कह
सो दोनुं चूर्णिके पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारवाले दोनुं
भावार्थ सहित इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ९२ से लेकर १०४ तक
गये है सो पढ़नेसे सर्व निर्णय हो जावेगा । परन्तु बड़े
अफसोसकी बात है कि सातवें महाशयजी दोनुं चूर्णिके अ
पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके फिर मास वृद्धिके अभा
४९ वे दिने पर्युषणा करनेवाले पाठको मास वृद्धि दो श्रा
होते भी लिखके दोनों चूर्णिकार महाराजोंके विरुद्धा
थावत् ८० दिने पर्युषणा स्थापन करनेके लिये बाल जीवों
अधूरे पाठ लिख दिखाते कुछ भी लज्जा नहीं पाते हैं सो
कलयुगि विद्वत्ताका नमूना है इसलिये मास वृद्धिके अभा
विस्तार वाले सब पाठोंको छोड़ करके मास वृद्धि होते
उसीमेंसे अधूरेपाठ सातवेंमहाशयजीने लिखे है सो अ
निवेशिक मिथ्यात्वसे शास्त्रविराधक उत्सूत्र भाषणका
गुण प्रगट दिखाये है सो तो विवेकी पाठक वर्ग स्वयं विच
लेवेंगे,–और सुप्रसिद्ध विद्वान् तीसरे महाशयजी श्रीवि
विजयजीने भी, पण्डितहर्षभूषणजीकी और धर्मसागरजी
धूर्ताईमें पड़कर अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे ऊपरको दो
चूर्णिके अधूरे पाठ श्रीसुखबोधिका वृत्तिमें लिखे है
तरहसे वर्तमानमें सातवें महाशयजीने भी किया प

पर भक्का और विद्वानोंके आगे अपने नामकी हांसी करानेका कुछ भी पूर्वापरका विचार न किया, अन्यथा अन्ध परम्पराके मिथ्यात्वको पुष्टीकारक शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें ऐसे अधूरे पाठ लिखके और कुयुक्तियोंका संग्रह करके बाल जीवोंको मत्य बातपरसे श्रद्धा भ्रष्ट करनेके लिये कदापि परिश्रम नहीं करते, सो तो निष्पक्षपाती सज्जनोंको विचार करना चाहिये;—

और "जब दो श्रावण आवे तो श्रावण सुदी चौथके रोज सांवत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्धान्तमें नहीं है तो क्या आग्रह करना ठीक है" यह भी सातवें महाशयजीका लिखना गच्छपक्षी बाल जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेके लिये अज्ञताका अथवा अभिनिवेशिक मिथ्यात्वका सूचक है क्योंकि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करना ऐसा तो किसी भी शास्त्रमें नहीं लिखा है तो फिर दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका वृथा क्यों पुकारते है और दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना सो तो श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठानुसार तथा उन्होंकी अनेक व्याख्यायोंके अनुसार और युक्तिपूर्वक स्वयं सिद्ध है सो तो इसी ग्रन्थकी आदिमेंही विस्तारसे लिखनेमें आया है और खास सातवें महाशयजी भी श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठको तथा उसीकी वृत्तिको हर वर्ष पर्युषणामें वांचते हैं उसीमें तिन पञ्चाङ्गके अभावसे "जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते च आषाढ एव वर्द्धते नान्येमासास्तट्टिप्पनकंतु अधुना सम्यग् न ज्ञायतेऽतः पञ्चाशद् भिर्दिनैः पर्युषणा सङ्गते-युक्तेति वृद्धाः—" ऐसे अक्षर किरणावली ...

तथा दीपिका वृत्तिमें और सुखबोधिका वृत्तिमें अपने ही गच्छके विद्वानोंने खुलासा पूर्वक लिखे हैं सो सातवें महाशयजी अच्छी तरहसे जानते हैं और दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें ५० दिन पूरे होते हैं इसलिये "जब दो श्रावण आवे तो श्रावण सुदी चौथके रोज सांवत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्धान्तमें नहीं है तो आग्रह करना क्या ठीक है" सातवें महाशयजीका यह लिखना मायावृत्तिसे अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको प्रगट करनेवाला प्रत्यक्ष सिद्ध होगया सो पाठकवर्ग भी विचार लेवेंगे,—

और (दो भाद्र आवे तो किसी तरह पूर्वोक्त पाठका समर्थन करोगे परन्तु उत्तर दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करना चाहिये) सातवें महाशयजीके इस लेखपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि-दो भाद्रआये तब पूर्वोक्त पाठके अभिप्रायसे ५० दिनकी गिनती करके प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो तो न्यायकी बात है परन्तु दो भाद्र होते भी पिछाडीके ७० दिन रखनेके लिये दूसरे भाद्रमें पर्युषणा करनेवालोंकी बड़ी भूल है क्योंकि पूर्वोक्त पाठमें कारण योगे ४९ वें दिन पर्युषणा करी है परन्तु ५१ वें दिन भी नहीं करी है इस लिये दो भाद्र होनेसे दूसरे भाद्रमें पर्युषणा करने वालोंको ८० दिन होते हैं इसलिये श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध बनता है और चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे पिछाडी ७० दिन रहनेका दोनु चूर्णिके पाठमें खुलासा पूर्वक कहा है सो तो इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ८४ और ८ वेमें पाठ छप गये हैं इसलिये मास वृद्धि होते भी पिछाडीके ७० दिन रखनेका आग्रह करने वाले महानिर्वोधी

पंक्तिमें गिनने योग्य है सो तो इस ग्रन्थको संपूर्ण पढ़नेवाले विवेकी सज्जन स्वयं विचार सकते हैं :—

और दो श्रावण तथा दो भाद्रपद और दो आश्विन हो तोभी आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनी चाहिये जिससे पिछाड़ी १०० दिने चौमासी प्रतिक्रमण करनेमें आवे तो कोई दूषण नहीं है किन्तु शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इसका विशेष विस्तार पहिलेही छप चुका है। और नवमे पृष्ठके मध्यमें तिथिसंबंधी लिखा है जिसकी तो समीक्षा आगे लिखुंगा परन्तु आठवें पृष्ठके अन्तमें तथा नवमे पृष्ठके आदि अन्तमें और दशवे पृष्ठकी आदिमें छट्ठी पंक्ति तक लिखा है कि— (जैसे फाल्गुन और आषाढकी वृद्धि होनेपर दूसरे फाल्गुनमें और दूसरे आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमणादि करते हो, उसी तरह अन्य अधिक मासमें भी दूसरेहीमें करना वाजिब है। वैसा नहीं करोगे तो विरोधके परिहार करनेमें भाग्यशाली नहीं बनोगे। एक अधिकमासमाननेसे अनेक उपद्रव खड़े होते हैं और अधिकमासको गिनतीमें न लेनेवालेको कोई दोष नहीं है। उसी तरह तुम भी अधिक मासको निःसत्व मानकर अनेक उपद्रव रहित बनो।

इस रीतिकी व्यवस्था रहते हुए कदाग्रह न छूटे तो भले स्वपरम्परा पालो परन्तु स्वमन्तव्यमें विरोध न आवे ऐसा वर्त्तावकरना बुद्धिमानपुरुषोंका काम है। जैसे फाल्गुनके अधिक होनेपर दूसरे फाल्गुनमें नैमित्तिक कृत्य करते हो उसी तरह अन्य अधिकमास आनेपर दूसरे महीनेमें नैमित्तिक कृत्योंके करनेका उपयोग रखो कि जिसमें कोई

रोष न रहे । दो श्रावण हो,अथवा भाद्र हो तथा दो आ
श्विन होतेभी कोईविरोध नहीं रहेगा । तीर्थंकर महा
णकी आज्ञा सम्यक् प्रकारसे पलेगी)

ऊपरके लेखमें सातवें महाशयजीने अधिक मास
निःसत्व मान कर गिनतीमें निषेध किया तथा गिनती
लेनेवालोंको अनेक उपद्रव दिखाये और गिनतीमें न
लेनेवालोंको दूषण रहित ठहराये फिर मास वृद्धि होने
दूसरे मासमें नैमित्तिक कृत्य करनेका भी ठहराया इस
मेरेको बड़ेही आश्चर्य सहित खेदके साथ लिखना पड़
है कि सातवें महाशयजीके विद्वत्ताकी विवेक बुद्धि कि
लाड़में चली गई होगी सो ऊपरके लेखमें विवेक शू
होकर पूर्वापरका विचार किये बिनाही अटपटांग लि
दिया क्योंकि देखो सातवें महाशयजी यदि अधिक मास
निःसत्व मान करके गिनतीमें नहीं लेते होवे तबतो
श्रावण, दो भाद्र, दो आश्विन, दो फाल्गुन और दो आ
षाढ़ मासोंका उच्चारोंका लिखनाही बन्ध्याके पुत्र समान
जाता है और मास वृद्धि होनेसे दो श्रावणादि लिखते हैं तथ
उसी मुजबही वर्ताव करते हैं तब तो अधिक मासको
निःसत्व मान करके गिनतीमें निषेध करना (गिनतीमें
नहीं लेना) सो [illegible] समान बालकोंकी
तरह दिखाता है क्योंकि दो श्रावणादि लिखके उसी मुजब
वर्ताव करना फिर मास वृद्धिको गिनती निषेध करना
यह तो विवेक शून्यके सिवाय और कौन होगा क्योंकि
दो श्रावणादि लिखके उसी मुजब वर्ताव करते हैं इसलिये
[illegible] गिनतीका निषेध करना तथा गिनतीमें लेवे

वालोंको अनेक उपद्रव दिखाने और आप दोनुं मासों को लिखके उसी मुजब वर्त्ताव करते भी, उसीको गिनतीमें न लेते हुये प्रत्यक्ष माया वृत्तिसे दूषण रहित बनना सो भव्य बाल जीवोंको कदाग्रहमें फंसाकर उत्सूत्र भाषणसे संसार परिभ्रमणका हेतु है सो तो निष्पक्षपाती तत्त्वज्ञ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और मास वृद्धि होनेसे मास तिथि नियत सब नैमित्तिक कृत्योंको दूसरे मासमें करनेका मातवें महाशयजी ठहराते हैं सो भी अज्ञताका सूचक है क्योंकि वर्त्तमानमें मास वृद्धि होनेसे मास तिथि नियत कृत्य, आगे पीछे दोनों मासमें करनेमें आते हैं याने कृष्ण पक्षके तिथि नियत कृत्य प्रथम मासके प्रथम कृष्ण पक्षमें करनेमें आते हैं और शुक्ल पक्षके तिथि नियत कृत्य दूसरे मासके दूसरे शुक्ल पक्षके करनेमें आते हैं :—

मित्रवत् न्यायसे अर्थात्–एक नगरमें सज्जनादि गुणयुक्त व्यवहारिया रहता था उसीने अपने भोजनकी तैयारी करी उसी समय उसीके मित्रका आगमन हुआ तब दूसरा भोजन बनानेका अवसर न होनेसे अपने भोजनमेंसे आधा मित्रको दिया और आधा आपने ग्रहण किया, उसी दृष्टान्तके न्यायसे एक नगर रूपी संवत्सर उसीमें सज्जनादि गुणयुक्त व्यवहारियावत् मास उसीके भोजन रूपी नैमित्तिक कृत्य और अधिक मास रूपी मित्रका आगमन होनेसे आधे आधे नैमित्तिक कार्य बांट लिये समझो जैसे दो कार्त्तिक होवेंगे तब श्रीसंभवनाथस्वामीके केवल ज्ञान कल्याणकके श्रीपद्म-प्रभुजीके जन्मकल्याणकके तथा दीक्षाकल्याणकके, श्रीने-

आश्विन होनेसे भाद्रपद प्रथम आश्विनमें और दशहरा दूसरे आश्विनमें, इसी तरहसे सब अधिक मासोंके कारणसे सास नैमित्तिक कार्य आगे पीछे दोनोंमें मानते हैं। परन्तु सातवें महाशयजी नैमित्तिक कार्य केवल दूसरे मासमें ही करनेका निश्चय करके दो कार्तिक होवे तब दिवाली वगैरह कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य दूसरे कार्तिकमें तथा दो पौष होवें तब श्रीचन्द्रप्रभुजीके, श्रीपार्श्वनाथजीके जन्म, दीक्षादि कल्याणक दूसरेपौषमें और दो चैत्रहोनेसे श्रीपार्श्वनाथजीके केवल ज्ञान कल्याणकको दूसरे चैत्रमें इसी तरहसे कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य भी दूसरे मासमें ठहराते हैं से। शास्त्रविरुद्ध होनेसे अज्ञताका कारण है क्योंकि ऊपरोक्त लेखानुसार ऊपर के कार्य प्रथम मासके प्रथम कृष्णपक्षमें होने चाहिये से। तो न्याय दृष्टि वाले विवेकी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे;—

और उपरोक्त नैमित्तिक कार्योंके लेखसे दे। भाद्रपद होनेसे पर्युषणा भी दूसरे भाद्रपदके दूसरे शुक्लपक्षमें सातवें महाशयजी ठहराते हैं से। भी मिथ्केवल अपनी अज्ञानता को प्रगट करते हैं क्योंकि सास नैमित्तिक कार्य अधिक मास होनेसे आगे पीछे दोनों मासमें करनेमें आते हैं परन्तु पर्युषणा तैसे नहीं हो सकती है क्योंकि पर्युषणा तो दिनोंके प्रतिबद्ध होनेसे अषाढ़ चौमासीसे ५० दिनकी गिनतीसे अवश्य करके करनेका अनेक शास्त्रोंमें प्रगट पाठ है इसलिये दे। भाद्रपद होनेसे पर्युषणा दूसरे भाद्रपदमें नहीं किन्तु प्रथम भाद्रपदमें ५० दिनकी गिनतीसे शास्त्रोंको प्रमाण करने वाले आत्मार्थियोंको करनी चाहिये और प्राचीन कालमें जैन पञ्चांगानुसार मास वृद्धि होनेसे श्रावणमें

इसकी प्राप्ति होती है तो फिर दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्यु-
षणा करना सो तो कदापि श्रीजिनाज्ञामें नहीं आ सकता
है सो भी विवेकी पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे;—

और शास्त्रानुसार शास्त्रपरंपरा करके तथा युक्तिपूर्वक और
लौकिक व्यवहार मुजब अधिक मास होनेसे नैमित्तिक
कार्य आगे पीछे दोनों मासमें करनेमें आते हैं सोतो सातवें
महाशयजीके पूर्वजने भी लिखा है जिसका पाठ ऊपरही
लिखनेमें आया है तथापि सातवें महाशयजी प्रथम मासको
छोड़करके दूसरे मासमें नैमित्तिक कार्य करनेके लिये
"वैसा नहीं करोगे तो विरोधके परिहार करनेमें भाग्य-
शाली नहीं बनोगे" ऐसे अक्षर लिखके प्रथम मासमें
नैमित्तिक कार्य करने वालोंको विरोध दिखाते हैं सो कोई
भी शास्त्रके प्रमाण बिना अपनी मति कल्पनासे भोले
जीवोंको भ्रममें गेरनेके लिये अपने पूर्वजके वचनको भी
विरोध दिखाने वाले सातवें महाशयजी जैसे कलियुगि
विनीत प्रगट हुवे है सो तो अपने पूर्वजोंको खोटे ठहरके
आप भले बनते हैं इसलिये आत्मार्थियोंको इन्होंकी कल्पित
बात प्रमाण करने योग्य नहीं है,—

और (कदाग्रह न छूटे तो भले गच्छपरंपरा पालो) सातवें
महाशयजीका यह भी लिखना भोले जीवोंको कदाग्रहमें
फंसाकर मिथ्यात्वको बढ़ानेवाला है सो तो इसीही ग्रंथके
पृष्ठ ११९ से १४२ तकका लेख पढ़नेसे मालूम हो सकेगा परंतु
सातवें महाशयजीने ऊपरके लेखमें अपने अन्तरके भावका
सूचन किया मालूम होता है क्योंकि सातवें महाशयजी बहुत
वर्षोंसे काशीमें रहकर अपनी विद्वत्ता प्रगट कर रहे

भी मेरेको इतनाही कहना है कि—यह भी सातवें महाशयजीका लिखना अज्ञाताका सूचक है क्योंकि श्रीजिनेश्वर भगवान्‌का कथन करा हुआ श्रीजिन प्रवचन अविसंवादी होनेसे सब गणधरोंके सबगच्छोंकी एकही समाचारी होती है परन्तु इस वर्तमान कालमें तो सब गच्छ वालोंकी भिन्न भिन्न समाचारी है और शास्त्रोंके प्रमाण विनाही अन्ध परम्परासे कितनीही बातें चल रही है इसलिये शास्त्र प्रमाण विनाकी द्रव्य परम्परा पालने वालोंको तो श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध महान् विरोध प्रत्यक्ष दिखता है तथापि अपने अन्ध परम्परा के कदाग्रहको नहीं छोड़ते हैं फिर कुयुक्तियोंसे अपना कदाग्रहके मंतव्यको पुष्ट करके विरोध रहित (सातवें महाशयजीकी तरह) बनना चाहते है सो तो बुद्धिमान पुरुष नहीं किन्तु अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी पक्के कदाग्रही कहे जाते हैं इसलिये अपने आत्म साधनमें विरोध नही चाहनेवाले तत्वज्ञ पुरुषोंको तो शास्त्र विरुद्ध अपनी परम्पराको छोड़ करके शास्त्रानुसार सत्य बातको ग्रहण करनाही परम उचित है;—

और पर्युषणा विचारके दशवें पृष्ठकी सातवीं पंक्तिसें दशवीं पंक्ति तक लिखा है कि (हित बुद्धिसे लिखे हुए विषय पर समालोचना करना हो तो भले करो किन्तु शास्त्र मार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखना समालोचनाकी समालोचना शास्त्र मर्यादा पूर्वक करनेको लेखक तैयार है) सातवें महाशयजीके इस लेखपर भी मेरेको इतना ही कहना है कि—जैसे कितनेही ढूंढिये तेरहा पंथी वगैरह कदाग्रही मायाचारिवाले धूर्त लोग अपने कदाग्रहके मतकी

बढ़ानेके लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे बिना सम्बन्धके अधूरे पाठके फिर उलट अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोंसे तथा कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंको सत्य बातों परसे श्रद्धा भ्रष्ट करके अपने मिथ्यात्वके पाखण्डमें गेरके संसार वृद्धिका कारण करते हैं तो भी हितोपदेशसे अच्छा किया ऐसाअज्ञताके कारणसे वृथा पुकार करते हैं ।

तैसेही पर्युषणा विचारके लेखकने भी किया, अर्थात्— अपने कदाग्रहमें मुग्ध जीवोंको फंसानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णि वगैरह शास्त्रोंके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें बिना सम्बन्धके अधूरे पाठ लिखके उलटे अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोंकी तथा कुयुक्तियोंकी कल्पनायोंका पर्युषणा विचारके लेखमें संग्रह करके भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे हित बुद्धिसे विषय लिखनेका ठहराते हैं सो कदापि नहीं ठहर सकता है क्योंकि हितबुद्धिकेबहाने मिथ्यात्वकेपाखण्डकी वृद्धिका कारण किया है इसलिये भव्यजीवोंके उपकारके लिये पर्युषणा विचारके लेखकीशास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक समालोचना करनी मेरेको उचित थी सो करी है जिसपर भी शास्त्रमार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखनेका सातवें महाशयजी लिखते हैं इसपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि— खास आपही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे(शास्त्रानुसार युक्ति, पूर्वक अधिक मासकी गिनती प्रमाण तथा श्रावण वृद्धिसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा और मासवृद्धिसे १३ मासके, खामणे वगैरह) सत्य बातोंको ग्रहण नहीं करते हुए

कदाग्रहकी कल्पनाको स्थापन करनेके लियेऔर सत्यबाते
का निषेध करनेके लिये पर्यु षणा विचारके लेखमें उत्सूत्र भाष
णोंको और कुयुक्तियोंके विकल्पोंके प्रत्यक्ष मिथ्या गप्पोंक
लिखके भी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक लिखनेवालेको शास
मार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी दिखाते हैं सो तं
प्रत्यक्ष धूर्ताचारोका लक्षण है इसको पाठक वर्ग स्व
विचार लेवेंगे;—

और (समालोचनाकी समालोचना शास्त्र मर्यादा पूर्वक
करनेको लेखक तैयार है) सातवें महाशयजीके इस लेख पर
भी मेरेको इतनाही कहना है कि–पञ्चांगीकी श्रद्धा रहित
कदाग्रहमें आगेवान, अनभिनिवेशिक मिथ्यात्वकी सेवन
करने वाले तथा अन्यायमें प्रवर्तने वाले होकरकेभी शास्त्रा-
नुसार युक्ति पूर्वक मेरे सत्य लेखो की समालोचना आप
कैसे कर सकोगे क्योंकि जो आप पञ्चांगीकी श्रद्धा वाले
आत्मार्थी तथा न्यायमें प्रवर्तने वाले होवो तबतो जो जो
मैंने पर्यु षणा विचारके लेखकी पंक्ति पंक्तिकी शास्त्रानुसार
युक्ति पूर्वक समालोचना करके आपके लेखोकी उत्सूत्र
भाषण रूप प्रत्यक्ष मिथ्या ठहराये है और सत्य बातोंको
प्रगट करी है उसीको आद्यन्त पर्यंत पढ़के अपनी उत्सूत्र
भाषणोंकी और प्रत्यक्ष मिथ्या लेखोंके भूलोंकी श्रीचतुर्विध
संघ समक्ष आलोचना लेकर शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सत्य
बातोंको ग्रहण करो पीछे मेरे लेखकी समालोचना करनेकी
आपमें योग्यता प्राप्त होवे तब मेरे लेखकी समालोचना
करनेको तैयार होना चाहिये। इतने परभी पर्यु षणा विचार
के सब लेखोंको आप सत्य समझते होवें तो पंक्ति पंक्तिके

सब लेखोंको शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सिद्धकर दिखावो नहीं दिखाओ तो सभीकी आलोचना लेकर सत्य बातोंको ग्रहण करो और अपने सब लेखोंको शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सिद्ध नहीं करोगे तथा अपनी भूलोंकी आलोचना भी नहीं लेवोगे औरसत्य बातोंको ग्रहण भी नहीं करोगे तबतक मेरे लेखकी समालोचना करनेकी आपमें योग्यता प्राप्त नहीं हो सकेगी तथापि आप केवल अपनी विद्वत्ताकी धर्म-केमारे, लौकिक लज्जासे अपनी उत्सूत्र भाषणोंकी तथा प्रत्यक्ष मिथ्या (पर्युषणा विचारके) लेखोंकी भूलोंको छुपा करके शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सत्य बातोंके सम्बन्धका सब लेखको छोड़ करके बिना सम्बन्धका अधूरा लेखकी कुयुक्तियोंके विकल्पों से समालोचना करके शास्त्र मर्य्यादा पूर्वकके बहाने मुग्ध जीवोंको मिथ्यात्वमें फंसानेके लिये पर्युषणा विचार के लेखकी तरह फिर भी उद्यम करोगे तो उसीके भी सबकी समालोचना करके आपके अन्यायके पापबहको, शांत करनेके लिये मेरेको जलदीसे लेखनी चलानी ही पड़ेगी इसमें फरक नहीं समझना ;—

और पर्युषणा विचारके दशवें पृष्टकी ११ वीं पङ्क्तिसे दशवें पृष्ठके अन्त तक लिखा है कि (पाठक महाशयोंको पक्षपात शून्य होकर निम्न देखने की सूचना दी जाती है दृष्टिरागके वश होकर असत्यको सत्य नहीं मानना और गतानुगतिक नहीं बनना तत्त्वान्वेषी बनकर जल्दी शुद्ध व्यवहारको स्वीकार करके भगवान्‌की आज्ञानुसार भाद्र शुदी चौथके दिन सांवत्सरिक वगैरह पांच कृत्योंका आराधनकरके थोड़ेभवमें पञ्चमज्ञानके भागीबनो इसतरह

का धर्मलाभ पाठकवर्गके प्रति लेखकदेताहै) इस रीतिसे सातवें महाशयजीने पर्युषणाविचारके लेखको पूर्ण किया है। अब ऊपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि—गच्छके पक्षपातका दृष्टिरागसे असत्यको सत्यमान करके गतानुगतिक गड्डरीह प्रवाहवत् अन्ध परम्पराकोही मानने वाले मिथ्या दृष्टि कहे जाते हैं इसलिये सत्यान्वेषी बन करके शास्त्रानुसार युक्ति सम्मत सत्य बातोंका निर्णयपूर्व्वक ग्रहण करना सोआत्मार्थियोंका काम है इसलिये पक्षपात रहित पर्युषणा विचारके निबन्धको पढ़ा तों साफ मालूम हुआ कि पर्युषणा विचारके लेखकने अपनी अज्ञानताके कारणसे अपने गच्छका पक्षपात करके अन्ध परम्पराका मिथ्यात्वको बढ़ानेके लिये पं० हर्षभूषणजीकी धर्मसागरजीकी और विनयविजयजी वगैरहोंकी, उत्सूत्र भाषणोंकी कल्पनायोंको सत्य मानकर श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञाको उत्थापन करके पर्युषणा विचारके लेखमें केवल शास्त्रोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणोंकी कल्पनायें भरी हुई होनेसे गच्छ पक्षके मिथ्या आग्रह करनेवाले बालजीवोंको श्रीजिनाज्ञासे भ्रष्टकरके मिथ्यात्वमें फंसाने वाला और खास पर्युषणा विचारके लेखकको संसार वृद्धिका हेतु भूत प्रत्यक्ष देखनेमें आया इसलिये पर्युषणा विचारके लेखकके तथा अन्य आत्मार्थियोंके उपकारके लिये उसीकी समालोचना करके निष्पक्षपाती पाठकगणको सत्यबात दिखाई है सो इसको पढ़कर पर्युषणा विचारके लेखक वगैरह यदि आत्मार्थि होवेंगे तब तो गच्छके पक्षपातका आग्रहको न रखके असत्यको छोड़कर सत्यको ग्रहण करके अपनी भूलोंको सुधारेंगे और अपनी विद्वताके

पक्षमें लाल आप पर्युषणा करते हैं और ८।१०।१५।२०।३०।४०।४५ दिनके उपवासोंकी तपस्याकी गिनतीमें अधिक मासके ३० दिनको बराबर गिनते हैं। तो अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि लाल आप अधिक मासके दिनोंको तपश्चर्याकी गिनतीमें लेते हैं तथा अधिक मासमेंही पर्युषणा करते हैं तथापि उसीको नपुंसक निःसत्व ठहराकर दृष्टि-रागी भोले भाले जीवोंको मोजिनाज्ञासे भ्रष्ट करते हैं सो अभिनिवेशिक मिथ्यात्व से कितने संसार वृद्धिका हेतु है सो तत्त्वज्ञ स्वयं विचार लेवेंगे,—

और पर्युषणा विचारका छपाई खर्चा और टपाल खर्चा श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाके सम्बन्धसे लगा है सो तो यहांके दलीपसिंहजी कोठारीके पास काशी की पाठशालालासे उदयराज कोचरका पोष्टकार्ड आया है उसी से तथा और भी कितनेही कारणोंसे सिद्ध होता है उसका विशेष विस्तार अवसर होनेसे पुनरावृत्तिमें लिखने में आवेगा और पर्युषणा विचारका लेख काशीमें उसी पाठ-शालेसें प्रगट भी हुआ है तथापि सातवें महाशयजी अपनी निन्दाकेभयसे श्री यशोविजयजी की पाठशालाके नामसे पर्युषणा विचारके लेखको प्रगट न कराते उदयराज कोचरके नामसे प्रगट कराया और श्रीकाशी (वाणारसी) का नाम भी न लिखाते प्रत्यक्ष मिथ्या फलोधीका नाम लिखाके मायावृत्ति से फलोधीके नामसे प्रगट कराया तो फिर अनुमान २० जगह उत्सूत्र भाषणोंवाला तथा १० जगह प्रत्यक्ष मिथ्यालेखवाला और सत्य बात का निषेध करके अपनी कल्पनाकी मिथ्या बातको स्थापने

पर्यायमें अधिक मुनिमहाराजी वगैरह सब कोई आराधे हैं इसलिये सबको धर्मलाभ देनेकी पर्युषणा विचारके लेखकको ताकत नहीं होते भी देता है तो बुद्धिकी अजीर्णताके क्या न्यूनता रही है सो विवेकीजन स्वयंविचारलेवेंगे; और सातवें महाशयजीने पर्युषणाविचारकेलेखमें अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये इतना परिश्रम किया है परन्तु अधिक मास किसको कहते हैं जिसकी भी तो उनको मालूम नहीं है क्योंकि, देखो दुनियाके व्यवहारमें लिखि बुद्धिकी तरह दूसरेको अधिक मास कहते हैं। तथा जैनशास्त्रोंमें भी दूसरेकोंही अधिकमास कहा है॥ और लौकिक पञ्चाङ्गमें दोनों मासके मध्यमें संक्रान्ति रहितको अधिकमास कहते हैं परन्तु दिनोंकी गिनतीमें दोनों मासके ६० दिनोंको बराबर सब कोई लेते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोंकी गिनती निषेध नहीं हो सकती है।

और सातवें महाशयजी अधिक मासके ३० दिनोंको गिनतीमें नहीं लेनेका लिख करके भोले जीवोंको बहकाते हैं परन्तु आप आपही अधिक मासके ३० दिनोंको गिनतीमें ले करके सर्व व्यवहार करते हैं सो तो प्रत्यक्ष दीखता है तथापि अधिक मासके ३० दिनोंके गिनतीमें नहीं लेनेका लिख करके भोले जीवोंको बहकाते हैं सो तो [illegible] [illegible] प्रत्यक्ष पूर्वापर विरुद्ध है सो तो विवेकी जन स्वयं विचार लेंगे।

और सातवें महाशयजीने अधिकमासके संबन्ध [illegible] [illegible] गिनतीमें [illegible] लिखा है परन्तु [illegible] [illegible] अधिक मास [illegible]

की कुयुक्तियों वाला और श्रीजिनाज्ञा मुजब वर्तने-
वालोंको जूठी कल्पनासे दूषण लगाके अनन्त संसारका
हेतु भूत मिथ्यात्वको बढ़ानेवाला पर्युषणा विचारके लेखमें
अपना नाम प्रगट करते लज्जा आवे तो निज शिष्यविद्या
विजयजीका नाम लिख देवें तोभी कुछ विशेष आश्चर्य नहीं
है सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे,—

और काशीनिवासी शास्त्रविशारद महाशयजी जैनतत्त्वदिग्दर्शन,
आत्मोन्नति दिग्दर्शन, जैनशिक्षादिग्दर्शन वगैरह छोटे
छोटे लेखोंको तो अपने नामसे प्रगट करते हैं तथा विद्या-
विजयजीभी अपने गुरुजीका लम्बा चौड़ा नाम समेत जैन-
पत्रमें अपना लेख प्रगट करते हैं और छोटी छोटी पुस्तकें
भी श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाके नामसे प्रगट करनेमें आती
है परन्तु पर्युषणा विचारके लेखमें न तो शास्त्रविशारद महाशयजीका
नाम लिखा तथा विद्याविजयजीनेभी अपने गुरुजीका
नाम भी नहीं लिखा और अपना निवास ठिकाना भी
नहीं लिखा और श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाका नाम
भी नहीं लिखा इसपर भी बुद्धिजन विचार करें तो स्वयं
मालूम हो सकेगा कि शास्त्रविशारद महाशयजीने दुनियामें अपनी
निन्दाकी शर्मके मारे गुपचुप प्रगट कराया है क्योंकि इतने
विद्वान् ऐसे प्रसिद्ध आदमी होकरके भी गच्छके पक्षपातसे
...मा असत्य क्यों लिखा इसका भेद न खुलनेके वास्ते पाठ
...शालाका तथा पाठशालाके संस्थापकका नाम नहीं लिखा
परन्तु विवेकी बुद्धिजनोंके आगे तो ऐसी धूर्तता नहीं
...र सकती है,—

और जैनपत्रका अधिपति आठवा महाशय श्रावकनाम धारक भगुभाई फतेचन्दने सेप्टेम्बर मासकी २२वीं तारीख सन् १९०९ दूसरे श्रावण वदी ११, परन्तु हिन्दी भाद्रपद कृष्ण १३ वीर संवत् २४३५ के जैनपत्रका २३ वा अङ्कको आदिमें ही 'पर्युषणा विषे विचार' नामसे जो लेख प्रगट करा है सो तो सातवें महाशयजीके पर्युषणा विचारके लेखको ही गुजराती भाषामें लिखकी प्रगट किया है इसलिये जैनपत्रवालेके लेखको तो सातवें महाशयजीके लेखकी तरह ऊपर मुजबही समीक्षा समझ लेना और जैनपत्रवाला संप पुकारता है परन्तु एकएककी निन्दा करके कुसंपकी वृद्धि करता है तथा गच्छके पक्षपातसे सत्य बातोंका निषेध करके अपना मिथ्यापक्षको स्थापन करनेके लिये उत्सूत्रभाषणोंसे दुर्गतिका रस्ता लेता है और अज्ञानी जीवोंकोभी वहांही पहुंचानेके लिये उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह जैनपत्रमें प्रगट करता है और कान्फरन्स सुकृत भण्डारादिसे शासनोन्नतिके कार्योंमें विघ्नकारक गच्छोंके खण्डनमण्डनका झगड़ा एक-वार नहीं किन्तु अनेकवार जैनपत्रमें उठाया है क्योंकि देखो पर्युषणा सम्बन्धी भी प्रथमही छठे महाशयजीकी मिथ्या कल्पनाका उत्सूत्र भाषणका लेखको जैनपत्रमें प्रगट करके झगड़ेकी नीव रोपन करी तथा सातवें महाशयजीके भी उत्सूत्र भाषणोंके संग्रहवाला लेखका भाषान्तर प्रगट करके उत्सूत्रभाषणोंके भयङ्कर विपाक लेनेके लिये दुर्गतिका रस्ता लिया और फिर भी छठे महाशयजी की तरफसे श्रीखरतरगच्छ वालोंकी निन्दावाले तथा कोर्ट कचेरीमे झगड़ा लड़ाके दीर्घकाल पर्य्यंत कुसंपकी वृद्धि करनेवाले दो

लेखोंको प्रगट करके अपनी पूर्ण मूर्खता प्रगट करी औ
पर्युषणा, सामायिक, कल्याणक, वगैरह बातोंका झग
बढ़ाया है (जिसका निर्णय तो इस ग्रन्थके पढ़नेसे माल
हो सकेगा) इसलिये जैनपत्रवाले आठवें महाशयको जे
संसारवृद्धिसे दुर्गतिमें परिभ्रमणका भय होवे तो उत्सूत्र भाष
णोंका मिथ्या दुष्कृत देकर श्रीचतुर्विध संघ समक्ष उसीकी
आलोचन लेवे तथा फिर कभी खण्डन मण्डन करके दूसरे
की निन्दासे गच्छका झगड़ा न उठावे और असत्यको छोड़का
सत्यको ग्रहण करे नहीं तो पक्षपातसे उत्सूत्रभाषणके विपाक
तो भोगे विना कदापि नहीं छुटेंगे ।

और मेरेको बड़ेही खेदके साथ बहुतही लाचार हो
करके लिखना पड़ता है कि—अधिक मासके ३० दिनोंकी
गिनती निषेध करनेवाले उत्सूत्र भाषक मिथ्या हठग्राही
अभिनिवेशिक मिथ्यात्वियोंकी विवेक बुद्धि कैसी नष्ट हो
ई है सो पूर्वापरका विचार किये विनाही अधिक मासके
० दिनोंमें सर्वकार्य्य करते भी पक्षपातके आग्रहसे गड्डरीय
वाहकी तरह मिथ्यात्वकी अन्ध परम्परासे एक एककी
खादेखी तात्पर्य्यार्थके उपयोग शून्य होकरके उसीकोही
कड़कर उसीकी पुष्टि करते हैं परन्तु श्रीजिनाज्ञा
त्थापन करके बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें फंसानेसे अपनी
आत्मघातका कुछ भी भय नहीं करते हैं क्योंकि पञ्चाङ्गी
माण पूर्वक और युक्ति सहित श्रीजिनेश्वर भगवानकी
ज्ञाके आराधक सबी आत्मार्थी जैनाचार्य्य वगैरह अधिक
सके दिनोंकी गिनती प्रमाण करतेही प्राचीन कालमें
णधरादि महाराज भी पर्युषणा करते थे तथा वर्तमानमें भी

गच्छ कोई आत्मार्थि जन अधिक मासकी गिनती प्रमाण करकेही पर्युषणा करते हैं और आगे भी ऐसेही करेंगे परन्तु शासननायक श्रीवर्द्धमानस्वामीके मोक्ष पधारे बाद अनुमान एक हजार वर्ष व्यतीत हुए पीछे उत्सूत्र भाषणोंमें आगेवान गच्छ कदाग्रही शिथिलाचारी धर्मधूर्त जैनाभास पासत्थी चैत्य वासियोंने पञ्चाङ्गी प्रमाणपूर्वक प्रत्यक्षसिद्ध होते भी कितनीही सत्य बातोंका निषेध करके अपनी मति कल्पनासे उत्सूत्र भाषणरूप कुयुक्तियों करके श्रीजिनाज्ञाविरुद्ध कल्पित बातोंकी प्ररूपणा करी और अविसंवादी श्रीजैन शासनमें विसंवादके मिथ्यात्वको बढ़ाया था जिसमें शास्त्रानुसार तथा युक्ति पूर्वक अधिक मासकी गिनती तथा आषाढ चौमासीसे ५० दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेका प्रत्यक्ष दिखते हुए भी लौकिक पञ्चाङ्गमें मासवृद्धि दो श्रावणादि होनेसे प्रत्यक्ष शास्त्रोंके तथा युक्तिके भी विरुद्ध होकर यावत् ८० दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेका सरू करके श्रीजिनाज्ञाका उत्थापनसे मिथ्यात्व फैला था और निर्दूषण बननेके लिये अधिक मासकी गिनती निषेध करके उत्सूत्र भाषणोंकी कुयुक्तियोंसे अज्ञानीजीवोंको अपने मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें फसानेके लिये धर्मधूर्ताई करनेमें कुछ कम नहीं किया था सो तो श्रीसंघपट्टककीव्याख्याओंके अवलोकनकरनेसे अच्छी तरहसे मालूम हो सकताहै ।

और कितनेही भारी कर्मी प्राणी तो उपरोक्त मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें फसकर अन्धपरम्परासे उसीकोही पुष्ट करते हुए बाल जीवोंको अपने फंदमें फसाते रहते थे उसी मिथ्यात्वकी अन्धपरम्पराकेही अनुसार पं० श्रीहर्षभूषणजी

और धर्मसागरजी वगैरह जो जो लेख लिख गये हैं और वर्त्तमानमें 'शास्त्र विशारद जैनाचार्य्य' की उपाधिधारक शातवें महाशयजी श्रीधर्म विजयजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् कहलाते भी उसी अन्धपरम्परासे मिथ्यात्वके कदाग्रहको पकड़कर अज्ञ जीवोंको उसीमें फसानेके लिये उसीको विशेष पुष्ट करनेका उद्यम करते हैं परन्तु श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाका उत्थापन करके प्रत्यक्ष पञ्चाङ्गी प्रमाण विरुद्ध प्ररूपणा करते हुए अभिनिवेशिकमिथ्यात्वसे सज्जन पुरुषोंके आगे हास्य काहेतु करनेका कारण करते भी कुछ लज्जा नहीं पाते हैं सो तो इस कलियुगमें पाखण्ड पूजा नामक अच्छेरेका प्रभावही मालूम पड़ता है। इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोंको ऐसे उत्सूत्र भाषकोंकी कुयुक्तियोंके भ्रममें न पड़ना चाहिये और निष्पक्षपातसे इस ग्रन्थको आदिसे अन्त तक बांचकर असत्यको छोड़के सत्यको ग्रहण भी करना चाहिये परन्तु गच्छके आग्रहसे उत्सूत्र भाषणकी बातोंको पकड़कर उसीमें नहीं रहना चाहिये।

और भी श्रीधर्मसागरजीकी तथा श्रीविनयविजयजीकी धर्मधूर्ताई का नमूना पाठक वर्गको दिखाहूं, कि देखो श्रीविनयविजयजीने श्रीलोकप्रकाश नामा ग्रन्थ बनाया है सो प्रसिद्ध है उसीमें अधिक मासकी गिनती प्रमाण करी है अर्थात् समयादि सूक्ष्मकालसे आवलिका मुहूर्तादिककी व्याख्या करके ३० मुहूर्तोंका एक अहोरात्रि रूप दिवस, सो १५ दिवसोंसे एकपक्ष, दो पक्षोंसे एकमास बारह मासोंसे चन्द्रसंवत्सर और अधिक मास होनेसे तेरह मासोंका अभिवर्द्धित संवत्सर इन पांचों संवत्सरोंसे

एक युगके १८३० दिनोंके ५४९०० (चौपन हजार नौ सौ)
मुहूर्तोंकी व्याख्या श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रके अनुसार श्रीवि-
नय विजयजी लोकप्रकाशमें स्वयं लिखते हैं तैसेही श्रीधर्म-
सागरजीने भी जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिकी वृत्तिमें ऊपर मुजबही
पांचवर्षोंके दो अधिकमासोंके दिनोंकी तथा पक्षोंकी और
मुहूर्तोंकी गिनती पूर्वक एक युगके १८३० दिनोंके ५४९००
मुहूर्त खुलासा पूर्वक लिखे हैं। तथापि बड़ेही खेदकी बात
है कि इन दोनों महाशयोंने गच्छकदाग्रह का पक्ष करके उत्सूत्र-
भाषणसे संसार वृद्धिका भय न रक्खा और बालजीवोंको
श्रीजिनाज्ञाकी सत्य बात परसे श्रद्धाभ्रष्ट करनेके लिये श्रीक-
ल्पसूत्रकी कल्पकिरणावलीवृत्तिमें तथा सुखबोधिका वृत्तिमें
चाल चलाके यहांसे दोनों अधिक मासके ६० दिनोंकी
गिनती निषेध करके अपने स्वहस्तसे एक युगके दो अधिक
मासोंके दिनोंकी मुहूर्तोंकी गिनती पूर्वक १८३० दिनोंके
५४९०० मुहूर्तोंकी श्रीतीर्थंकर गणधर महाराजकी आज्ञानुसार
लिखे हैं उन्होंका भङ्गकारक दो अधिक मासके ६० दिनोंके
अनुमान १८०० मुहूर्तोंके कालका व्यतीत होना प्रत्यक्ष होते
भी उन्होंकी गिनती में से सर्वथा उड़ादेकर श्रीतीर्थंकरगण-
धर महाराजके कथनका प्रमाणमें भङ्ग डालने वाले लेख
लिखते पूर्वापरका विवेकबुद्धिसे कुछ भी विचार न किया
और उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके कुयुक्तियोंसे अज्ञानीजी-
वोंको भ्रमानेका कारण किया इसलिये इन दोनों महाशयोंकी
धर्मधूर्त्ताईमें कुछ कम होवे तो न्यायदृष्टिवाले विवेकीसज्जन
स्वयं विचार लेवेंगे।

और इन दोनों महाशयोंके अधिक मासके निषेध

चातुर्मासिकमपि सिद्धांते कुर्वंति सत्यं परमधिकमासोऽस्मा भिर्गण्यमानोस्ति एवं चेत्तर्हि अस्माभिरपि यदाधिकः श्रावणो भाद्रपदोवावर्द्धते तदा मण्यते तेनाशीतिदिनानि पञ्चाशद्दिनान्येवेत्यादि ।

अब पं० हर्षभूषणजीके ऊपरका लेखको मध्यस्थ पुरुष निष्पक्षपातसे विचारेंगेतो प्रत्यक्षपने उनके भ्रमजालका परदा खुल जावेगा क्योंकि युक्ति और आगम इनके बहाने उत्सूत्र भाषणाका संग्रह करके कुयुक्तियोंकी भ्रमजालमें बालजीवोंको गेरनेका कारण किया है सो तो प्रत्यक्ष दिखता है क्योंकि ८० दिने पर्युषणा करनेका किसी भी शास्त्रमें नहीं कहा है परन्तु श्रावण भाद्रपदादि अधिक होनेसे पंचमासके १० पक्षोंके १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा तो प्रत्यक्षपने अनुभवसे देखनेमें आता है इसलिये निषेध नहीं हो सकता है और अधिक मासको गिनतीमें निषेध करके दूसरे श्रावण के ३० दिनोंको गिनतीमें छोड़कर ८० दिनके ५० दिन अपनी मतिकल्पनासे बनाते हैं सो निष्केवल उत्सूत्र भाषण है क्यों कि शास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वकसे तो ८० दिनके ५० दिन कदापि नहीं हो सकते हैं सो तो इस ग्रन्थको पढ़नेवाले स्वयं विचार लेवेंगे ।

और फिर आगे । ननु 'अभिवड्ढियंमि वीसा इयरेसु सवीसइमासो' निशीथभाष्ये इत्यत्राधिकमासोगणितो-ऽस्ति । इस तरहसे अधिक मासको गिनती सम्बन्धी पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें–'आसाढ़ पुण्णिमाए पविठा' इत्यादि निशीथ चूर्णिका अधूरा पाठसे अज्ञात पर्युषणाकी और 'वीसदिणेहिंकप्पो'इत्यादि बिनाही प्रसङ्गको विच्छेद

इत्यादि बाता लिखके अनुक्त भावनासे मिथ्यात्वका कारण
किया है जिस का निर्णयभी चौथे और पांचवें महाशयजी
के लेखकी समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ २२५ से २३८ तक और
३२५ से ३७५ तक सविस्तार छपगया है सो पढ़नेसे हर्षभूषणजी
की शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्धताका दर्शन अच्छीतरहसे होजावेगा।

और श्रीनिशीथ तथा श्रीदशवैकालिकवृत्तिके नामसे
मासवृद्धिसंबंधीनिषेध अधूरा पाठ लिखके उसीपर अपनी मतिसे
कुविकल्परूप कुतर्क कालचूलाके बहाने अधिक मासकी गिनती
उत्सूत्र भाषणरूप निषेध करके बाल जीवोंके आगे धर्म
ठगाई फैलाई है जिसका निर्णयभी 'जैनसिद्धांत समाचारी'के
लेखकी समीक्षामें इसही ग्रन्थ के पृष्ठ ५८ से ६५ तक और
पांचवें महाशयजी के लेखकी समीक्षामें पृष्ठ २७ से २२३ तक
छपगया है सो पढ़नेसे मालूम होजावेगा। और रत्नकोष ज्यो-
तिष ग्रन्थका १ श्लोक लिखके अधिक मासमें मुहूर्त नैमि-
त्तिक विवाहादि संसारिक कार्य नहीं होनेका दिखाकर
बिनामुहूर्तका पर्युषणादि धर्म कार्यभी अधिकमासमें नहोने
का दिखाया सोभी उत्सूत्र भाषण है इस बातका निर्णय चौथे
महाशयके लेखकी समीक्षामें पृष्ठ १८४ से २०४ तक छप गया है।

और भी इसीही तरहसे अधिक मासके ३० दिनों
को गिनतीमें निषेध करके ८० दिनके ५० दिन बालजीवोंके
आगे सिद्ध करनेके लिये कुयुक्तियोंके विकल्पोंका और
उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके भी फिर जोजो मासवृद्धिके
अभाव सम्बन्धी श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णि, निशीथचूर्णि,पर्युषणा
कल्पटिप्पण और संदेहविषौषधिवृत्तिके सविस्तार वाले सब
पाठों को छोड़करके उन्हीके पूर्वापरका संबंध बिनाके और

फल्पमम्बन्धीयातलिखके वालजीवोंको भ्रममेंगेरे और अधिक मासकी गिनती निषेध दिखा कर अपनी विद्वत्ताकी चातुराई विवेकी तत्वज्ञ पुरुषोंके आगे हास्यकी हेतु रूप प्रगट करी है क्योंकि निशीथचूर्णिमेंही खास अधिक मासको गिनती प्रमाण करीहै और अज्ञात तथा ज्ञात पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारसे व्याख्या की है सो पाठ भाषा सहित तीनों महाशयों के लेखों की समीक्षामें इनही ग्रन्थके पृष्ट ८५ से १०४ तक छपगयाहै इसीलिये आगे पीछेके प्रसंग वाले सब पाठको छोड़कर विना सम्बन्धके अधूरे पाठसे बाल जीवोंको भ्रममें गेरने सोभी उत्सूत्र भाषण है ।

और आगे फिर भी अधिक मासमें क्या क्षुधा नहीं लगतीहै तथा सूर्योदय नही होताहै और देवसिक पाक्षिक प्रतिक्रमण, देवपूजा मुनिदानादि क्रिया शुद्ध नहीं होतीहै सो गिनतीमें नहीं लेतेहो इस तरहका पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें पांचमासके चौमासेमें तुमभी चारमास कहतेहो इत्यादि अज्ञानतासे प्रत्यक्ष मिथ्या और उटपटांग लिखाहै सोतो वृथाही हास्य का हेतु कियाहै । और श्रीउत्तराध्ययनजीके २६ अध्ययनका पौरुष्याधिकारे मासवृद्धिके अभाव सम्बन्धी सविस्तर पाठको छोड़कर "असाढमासे दुप्पया" सिर्फ इतनाही अधूरा पाठ लिखके उत्सूत्र भाषणसे भोले जीवोंको भ्रमानेका कारण कियाहै इसका निर्णयतो तीनों महाशयों के लेखोंको समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ १३६ । १३७ में छपगयाहै ।

और श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका तात्पर्यार्थको समझे विना तथा प्रसंगकी बातको छोड़कर 'सइकुआ'

यद्याधिक मासो भवत्यत्रे पौषाषाढस्य लौकिक मासे-
षु श्रावणादिवर्द्धमानेषु मासवृद्धौ नियुक्तिनिर्युक्तिन
मासोत्तर विकल्पेष्वपृच्छनं । यदुक्तं दशकालिकस्य चूलिक-
मासं । यद्यपि द्वादशमासप्रमाणेऽपि सौमनानि कर्माणि
पदिदर्शन्यानिघुषैः सर्वाधिकपुनर्वचनानि ॥ नहि अधिकमासे
प्रतिष्ठा सौभाग्यं निद्देशयं न कल्पन्ति किं कारणं यत
अधिकमासो देव नामो नपिवर्जनि सोऽधिमासपर्यं नवोपति
मासो नामोऽलमतिपेद इति वृहत्कल्प चूः पत्र १२५ प८३ ।
पुनः । जम्हा अभिवड्डिय वरिसे गिम्हे चेवमोसामो अदृष्ट्वा
सर्द्धाति दिवा मणभिगद्दियंकीरइ निशी० चू० उ० १० पत्र
३१७ इत्यस्य विशीष पर्युषणद्वयाभविद्याभिगृहीतगृहस्थ
ज्ञातावस्थान इत्यतिरिक्तेषु कार्येषु वर्षाव्यधिकमासको
मासगहणं प्रमाणीकृतो न दृश्यते इति ।

अब श्रीकुलमंडनसूरिजी कृत उपरके लेखको देखकर
मेरेको बड़ीही अफसोसके साथ लिखना पड़ता है कि—ऐसे
सुप्रसिद्ध विद्वान् पुरुष आचार्यपदकेधारक होकरके भी स्वगच्छर
पदृष्टा पक्षपात करके उत्सूत्र भाषणोंसे संसारवृद्धिकाभय न
करते हुये कुयुक्तियोंका संग्रहसे बालजीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें
गेरनेका उद्यम किया है सो श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि
महाराजोंके वचनका उत्थापनरूप है क्योंकि पांच वर्षोंके
एकयुगमें तीसरे तथा पांचवें वर्ष जो पौष तथा आषाढको
अधिकमास जैनशास्त्रोंमें कहा है उसीकोही मंदिरोंके शिखर
वत् तथा मेरुचूलिकावत् और दशवैकालिकजी आचा-
रांगजी की चूलिकावत् कालचूलाकी उत्तम श्रेष्ठ ओपमा
देकर दिनोंमें पक्षोंमें मासोंमें गिनती करके वर्ष तथा युगादि

संबंधी श्रीकुलमंडनसूरिजीका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या है।

और जैन पंचांगानुसार पौष तथा आषाढ की वृद्धि होती थी तबती उसीके दिनोंको पर्युषणादि सब धर्म कार्यों में गिनती करतेथे सोतो उपरमेंही श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिके पाठसे प्रत्यक्षदिखता है परन्तु वर्तमानकाले जैन पंचांगके अभावसे लौकिक पंचांगानुसार वर्ताव करने में आताहे उसीमें चैत्रादि मासोंकी वृद्धि होतीहै उसी के ३० दिनोंमें दुनियांका सब व्यवहार तथा धर्म व्यवहार प्रत्यक्षपनेहोताहै इसलिये उसीके दिनोंकी गिनती निषेध नहीं होसकती है तथापि जो संक्रांति रहित मलमास केबहानेसे अधिक मासके दिनोंकी गिनती निषेध करतेहै सो अपनी पूर्ण अज्ञानतासे भोले जीवोंको गच्छकदाग्रहमें गेरनेका कार्य करतेहैं क्योंकि संक्रांति रहित अधिक मास को मलमास कहा है तैसेही दो संक्रांति वाले क्षय मासको भी मलमास कहा है परन्तु अधिक मासके तथा क्षय मास के दिनोंकी गिनती बरोबर करतेहैं। तथाहि कमलाकर भट विरचित (लौकिक धर्मशास्त्र) निर्णय सिंधीनामा ग्रंथे ।

तत्र संसर्पतःकालः षोढा–अब्दीयनमृतुर्मासः पक्षदिवस इति ॥ पुनस्तत्र. वक्षमाणैः श्रावणादि द्वादश मासै स्तद्वर्द्द । मलमासेतुषति यद्विदिमासकः एको मासो द्वादश मासत्वमविरुद्धमिति ॥ तथाच व्यासः षट्मासु दिवसैमांसःकथितो बादेरायणैः–इति ॥ अथ मलमास क्षयमास निर्णय । अथ मल मासः तत्रैकमात्र संक्रांति रहितःसिता-. दिद्यांदो मासो मल मासः एकमात्र संक्रांति ... तित्वेन संक्रांति द्वयत्वेनच भवतिइति । मल ...

कका प्रमाणश्रीअनन्ततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने कहाहै तथा श्रीदृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिमें निश्चय अधिक मासको गिन करके बीशदिने ज्ञात पर्युषणा कहीहै तथापि श्रीकुलमंडनसूरिजीने पर्युषणाधिकारे कालचूलाके बहाने अधिक मासको गिनतीमें निषेध किया सो श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजों की आज्ञा उत्थापन रूप उत्सूत्र भाषण है ।

और 'आसाढमासे दुप्पया,संबंधी तो उपरमेंही इयंभूषणजीके लेखका उत्तर में सूचना करनेमें आगईहै । और स्थिवीर कल्पियोंके अधिकमासहोतेभी नवविभागक्षेत्र याने नवकल्पि विहारकालिखासोभी प्रत्यक्षमिथ्या है क्योंकि १० कल्पिविहारप्रत्यक्षपने होताहै इसका निर्णय तथा दीवाली अक्षय तृतीयादि लौकिक संबंधी लिखाहै जिसका निर्णय और श्रीजिनेश्वर भगवान्के कल्याणक संबंधी लिखा है जिसका भी निर्णय तो सातवें महाशयजीके लेखकी समीक्षामें होगया है ।

और एक युगके दोनों अधिक मासोंके दिनोंकी गिनती पूर्वक १८३० दिनोंमें सूर्यचारके दश [१०] अयण श्रीतीर्थंकरगणधरादि महाराजोंने कहेहैं सो श्रीचंद्रपन्नति श्रीसूर्यपन्नति श्रीजंबूद्वीपपन्नति श्रीज्योतिषकरंडपयन्न तथा इनही शास्त्रोंकी व्याख्याओं में और श्रीदृहत्कल्पवृत्ति, मंडल प्रकरणादि अनेकशास्त्रमें प्रगटपाठहै और लौकिकमेंभी अधिकमासहोनेसे उसीकेदिनोंकीगिनतीपूर्वक १८३ दिने दक्षिणायणसे उत्तरायणमें सूर्यमंडलहोनेका प्रत्यक्षदेखनेमें आता है इसलिये ६ मासके अयणकाप्रमाणमें अधिकमास नही गिनने

और अधिक तथा क्षय संज्ञा वाले मास समुच्चयके व्यवहारमें तो संयोगिक मासके सामिल गिनेजाते हैं परंतु भिन्न भिन्न व्यवहारमें तो दोनों मासोंके दिनोंकी गिनती जूदी जूदी करनेमें आतीहै सो अधिक मास संबंधी तो ऊपरमें तथा इसग्रन्थमें लिखनेमें आगयाहै परंतु क्षयमास संबंधी थोड़ासा लिखदिखाताहूं कि जब कार्तिक मासका क्षय होवे तब उसीके दिनोंकी गिनतीपूर्वक ओलियोंकी आश्विन पूर्णिमा से १५ दिने दीवाली तथा श्रीवीरप्रभुके निर्वाण कल्याणक तथा २० वे दिन ज्ञानपञ्चमी और ३० वें दिन कार्तिक पूर्णिमा से चौमासा पूरा होनेसे मुनि विहार होताहै इस तरहसे मार्गशीर्ष पौषका भी क्षय होवे तब मौन एकादशी, पौष दशमी वगैरह पर्व तथा और श्रीजिनेश्वर भगवान् के जन्मादि कल्याणकोंकी तपश्चर्यादि कार्य करनेमें आतेहैं ।

अब श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषोंको न्याय दृष्टिसे विचार करना चाहिये कि–क्षयमास के दिनोंमें दीवाली वगैरह धार्मिक पर्व किये जातेहैं उसी मुजबही श्रीतपगच्छके सबी महाशय करतेहैं इसलिये क्षय मासके दिनोंकी गिनती निषेधकरनेकातो किसीभी महाशय जीने कुछभी परिश्रम न किया । और पर्युषणामें तथा पर्युषणासंबंधी मासिक देढमासिक तपश्चर्यादि कार्यों में अधिक मासके दिनोंकी गिनती प्रत्यक्षपने करते हुवेभी दूसरे गच्छ वालोंसे द्वेषबुद्धि रखके अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषणोंसे कुयुक्तियोंका संग्रह करनेका श्रीतपगच्छके अनेक महाशयोंने खूबही परिश्रम कियाहै सो तो प्रत्यक्षपने स्वगच्छाग्रहके हटवाद का नमूनाहै सो इस

अधिक मासः क्षयमासश्चेति । तदुक्तं काठक गृह्ये । यस्मिन् मासे न संक्रांति । संक्रांति द्वयमेववा मलमासः। स विज्ञेयो मासः स्यात् त्रयोदशः॥ तथा चोक्तं हेमाद्रि नागर खंडे । नभो वा नभस्योवा मलमासो यदा भवेत् सप्तमः पितृ पक्षस्यादन्यत्रैवतु पंचमः ॥

अब देखिये उपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंसे लौकिक शास्त्रों में अधिक मासके दिनोंकी गिनती करीहै इसलिये निषेध करने वाले गच्छकदाग्रहसे अज्ञानता करके प्रत्यक्ष मिथ्या भाषण करने वाले बनतेहैं सोतो पाठक वर्ग स्वयं विचार सकतेहैं।

और अधिक मासको बारह मासोंसे जूदा गिनके तेरह मासोंका वर्षकहे तथा अधिक मासको जूदा न गिनके संयोगिक मासके साथ गिने तो ६० दिवसका महिना मान के बारह मासका वर्षकहे तोभी तात्पर्यार्थसेतो दोनें तरह करके अधिक मासके दिनोंकी गिनती लौकिक शास्त्रोंमें प्रगटपने कही है इस लिये निषेध नही होसकतीहै।

और संक्रांति रहित अधिक मासको मलमास कहा तैसेही दो संक्रांति वाले क्षयमासको भी मलमास कहाहै सो चैत्रसे आश्विन तक सात मासोंमें से हरेक अधिक मास होतेहैं तैसेही कार्तिकसे पौष तक तीनमासोंमें से हरेक मास क्षयभी होतेहैं और जैसे तीसरे वर्ष अधिक मास होताहै सो प्रसिद्धहै तैसेही कालांतरमें क्षय मासभी होताहै सो लौकिक शास्त्रोंमें प्रसिद्धहै ।

औरमासवृद्धिकेअभावमें आषाढ़चौमासीसेपंचम पितृपक्ष होताहै परतु श्रावण भाद्रपद मासकी वृद्धि होनेसे अधिक मासके दोनोंपक्षोंकी गिनती पूर्वक सप्तम पितृपक्ष लिखा है ।

पंचमीको ज्ञात पर्युषणा वार्षिककृत्यादिपूर्वक करनेमें आती थी, उसीको वर्षाकालकी स्थितिरूप गृहस्थी लोगोंके आगे कहने मात्रही वार्षिककृत्योंरहित ठहरानेके लिये और अभिवर्द्धितमें भी ५० दिने भाद्रपदमें वार्षिक कृत्यों सहित पर्युषणाको ठहरानेकेलिये चूर्णिकारादि महाराजोंके अभिप्रायको समझे बिनाही उलटा विरुद्धार्थमें और अधिक मास संबंधी पूर्वापरकी सब व्याख्याके पाठोंको छोड़करके अधिकरण दोषोंके तथा उपद्रवादिके संबंध वाले अधूरेपाठ लिखके फिर चंद्रसम्वत्सर में ५० दिन की तरह अभिवर्द्धितसंवत्सर में २० दिने ज्ञात पर्युषणा दिखाकरके ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणामें तो वार्षिक कृत्य करनेको सिद्ध करतेहैं परंतु २० दिनकी ज्ञात पर्युषणाको अवमोमतिकल्पनासे गृहस्थी लोगोंके आगे वर्षास्थितिरूप ठहराकर वार्षिक कृत्योंको निषेध करतेहैं सो कदापि नहीं होसकताहै क्योंकि ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्योंकी तरह २० दिनकी ज्ञात पर्युषणामें भी वार्षिक कृत्य शास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वक स्वयं सिद्ध है इसका सविस्तार निर्णय तीनों महाशयोंके लेखोंकी समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ १०७ से ११७ तक अच्छी तरहसे छपगया है इस लिये जो श्रीकुलमंडन सूरिजीने २० दिनकी पर्युषणाको वार्षिक कृत्यों रहित ठहरानेके लिये मास वृद्धि के अभाव संबंधी पाठोंको मास वृद्धिहोती भी अधूरे अधूरे लिखके बाल जीवोंको दिखायेहै सो आत्मार्थिपनेका लक्षण नहींहै। सोतो न्यायदृष्टिवाले सज्जन स्वयंविचार लेवेंगे।

और अभिवर्द्धितमें वीश दिने ज्ञात पर्युषणा वार्षिक कृत्यों पूर्वक करनेसे। प्रथम चौथे वर्षे ११। ११ मासे तथा

यातको इस ग्रन्थके पढनेवाले सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे।

और अधिक मासको कालचूला कहते हुए भी नपुंसक लिखते हैं सोभी श्रीअनन्ततीर्थंकरगणधरादि महाराजोंकी आशातना करनेके बरोबरहै तथा विवाहादि मुहूर्तनैमित्तिक संसारिककार्योंके लियेभी उपरमेंही हर्षभूषणजीके लेखमेंसूचना करनेमें आगई हैं।

और पीशदिनकी बात पर्युषणाके सिवाय और कार्योंमें अधिकमासको प्रमाण करनेका नही दिखता है यह लिखना भी श्रीकुलमंडनसूरिजी का प्रत्यक्षमिथ्या है क्योंकि दिनों की पक्षोंकी मासोंकी गिनतीका कार्यमें, चौमासेके वर्षके युगके प्रमाणकी गिनतीका कार्यमें, क्षामणोंके कार्यमें, सामायिक प्रतिक्रमण पौषध देवपूजा उपवास शीलव्रतादि नियमोंका प्रत्याख्यानोंके गिनतीका कार्योंमें चौमासी छमासी वर्षी तथा वीसस्थानकजीके और पर्युषणादि तप केदिनों की गिनतीके कार्योंमें और आगमोंके योग वहनादि कार्योंमें, अधिक मासके दिनोंकी गिनती को प्रमाण गिननेमें आतीहै सो तो प्रत्यक्ष अनुभव की प्रसिद्ध बात है। और एकजगह अधिकमासको कालचूलालिखते हैं दूसरी जगह नपुंसक लिखते हैं तथा एक-जगह श्रीबृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिकेपाठोंसे 'सेव' निश्चय अधिकमासको गिनतीकरनेका लिखते हैं दूसरी जगह नही गिननेका लिखते हैं इसतरहसे बालजीवोंको धर्ममें गेरनेवाले पूर्वापरविरोधि (विसंवादी) लेखलिखते कुछभीविचार न किया सोभी कलयुगीविद्वत्ताका नमूना हैं।

और आगे फिरभी जो जैन पंचाङ्गानुसार प्राचीन कालमें अभिवर्द्धितसम्वत्सरमें वीशदिने अर्थात् श्रावणशुदी

इनेमें आतीहै जिसका विस्तार पूर्वक इस ग्रन्थमें छपगया है इसलिये कालचूला वगैरहके बहाने करके कुयुक्तियों से उसीके दिनो की गिनती निषेध करने वाले श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाके लोपी उत्सूत्रभाषक बनते हैं, सो तो इस ग्रन्थको पढ़ने वाले तत्वज्ञ स्वयं विचार सकते हैं इसलिये श्रीजिनेश्वरभगवान्‌की आज्ञाके आराधन करनेकी इच्छावाले जो आत्मार्थी सज्जन होवेंगे सो तो अधिकमासके दिनोंकी गिनती निषेध करनेका संसारवृद्धिका हेतुभूत उत्सूत्र भाषणका साहस कदापि नहीं करेंगे, और भव्यजीवोंको इस ग्रन्थको पढ़ करके भी अधिकमासके निषेध करने वालोंका पक्ष ग्रहण करके अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे बालजीवोंको कुयुक्तियोंके भ्रममें गेरनेका कार्य करनाभी उचित नही है और गच्छका पक्षपात छोड़कर न्याय दृष्टिसे इस ग्रन्थका अवलोकन करके अधिकमासके दिनोकी गिनती पूर्वकही पर्युषणादि धर्म व्यवहारमें वर्ताव करना सोही सम्यक्त्वधारी आत्मार्थियोंको परम उचित है इसलेपरभी जो कोई अपने अन्तर मिथ्यात्व के जोरसे अज्ञ जीवोंको भ्रमानेके लिये अधिक मासकी गिनती निषेध संबंधी कुयुक्तियोंका संग्रह करके पूर्वापरका विचार किये विनाही मिथ्यात्वका कार्य करेगा तो उसीका निवारण करनेके लिये और भव्य जीवोंके उपकारके लिये इस ग्रन्थ कारको तैयारही समझना ।

अब पर्युषणासंबंधी लेखकी समाप्तिके अवसरमें पाठक गणको मेरा इतनाही कहना है कि श्रीतपगच्छके विद्वान् कहलाते जो जो महाशय जी श्रीअनंततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें पंचांगीके अनेक प्रमाणोंको प्रत्यक्षपने

उत्थापनकरके उत्सूत्रभाषणोंसे कुयुक्तियोंके संग्रहपूर्वक अधिकमासको कालचूला वगैरहके बहानेसे निषेधकरने संबंधी-कल्पकिरणावली तथा सुखबोधिकावृत्तिवगैरहके लेखोंको हरवर्ष श्रीपर्युषणापर्वके दिनोंमें बांचतेहैं जिसको गच्छकदाग्रही पक्षपाती अज्ञानीय श्रद्धापूर्वक सत्यमानतेहैं ऐसे उपदेशक तथा श्रोता श्रीजिनाज्ञाके आराधक पंचांगीकी श्रद्धावाले सम्यक्त्वी आत्मार्थी हैं ऐसा कोइभी विवेकीतत्वज्ञ तो नही कहसकेंगे। क्योंकि श्रीअनंत तीर्थंकर गणधरादि महराजोंका प्रमाण कियाहुवा कालचूलाकी श्रेष्ठ ओपमा वाला अधिकमासको निषेधकरने वालोंमें प्रत्यक्षपने श्रीजिनाज्ञाका विराधकपना होनेसे मिथ्यात्वसिद्ध होताहै सो तत्वज्ञ स्वयं विचार सकतेहैं। इसलिये मिथ्यात्वसे संसारमें परिभ्रमण करनेका भय करने वाले तथा श्रीजिनाज्ञानुसार वर्तनेकी इच्छा करने वाले विवेकियोंको तो श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध उपरोक्त कार्य करना तथा उसी मुजब श्रद्धा रखना उचितनही है किंतु श्रीजिनाज्ञानुसार पर्युषणाके व्याख्यान सुनने वाले भव्यजीवोंके आगे अधिक मासकी गिनती करनेका शास्त्र प्रमाणपूर्वक सिद्धकरके दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करना तथा दूसरोंसे कराना सोही आत्महितकारीहै सो तत्वदृष्टिसे विचारना चाहिये।

इति अधिक मासके निषेधक उत्सूत्र भाषी कुयुक्तियों
करनेवाले सातवें महाशयजी वगैरहोंके पर्युषणा
सम्बन्धि अज्ञ जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके
लेखोंकी संक्षिप्त समीक्षा समाप्त.॥